

रहीम का नीति-काव्य

सागर विश्वविद्यालय द्वारा पी एच डी की उपाधि के लिए
स्वीकृत शोध प्रबंध का रहीम सम्बन्धी भाग



देवाचन निरत अब्दुरहीम खानखाना

(भारत सरकार, पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के सौजन्य से)

भूमिका - डॉ. विजयेन्द्र स्नातक

रहीम
की
गीति-
काव्य

डॉ. बालकृष्ण 'अकिंचन'

१९७२

तीसरे दशके मात्र

प्रकाशक
अनन्तर प्रकाशन
१९९६ भीम सि-सी २१

© डॉ० बालकृष्ण अकिन्चन

मुद्रक
अनन्तर प्रकाशन
तीसरे दशके मात्र सि-सी २२

RAHEEM KA NITI KAVYA

By
Dr. BALAKRISHNAN AKINCHIAN
LISHER ALANKAR PRAKASHAN DELHI 51

स्व० आचार्य नन्दुलारे वाजपेयी
की
पुण्य स्मृति मे
सश्रद्ध ।

प्राक्कथन

‘तुलसी के वचना के समान रहीम के वचन भी, हिंदी भाषी भू भाग में सबसाधारण के मुह पर रहने है। इसका कारण है जीवन की सच्ची परिस्थितिया का मार्मिक अनुभव।’ —आचाय प० रामचंद्र गुकल के य शब्द मैंने बहुत पहले पढ़े थे, किंतु तब इनकी सच्चाई और गहराई को उनना न आंक सका था। लगभग दस वर्षों तक काय करने के पश्चात, अब मैं निस्सकोच रूप से कह सकता हूँ कि हिंदी साहित्य के मध्यकाल में ही नहीं अपितु समग्र हिंदी जगत में, रहीमतर् एसा कोई अन्य व्यक्ति व उत्पन्न नहीं हुआ जो सफल सेनापति प्रकृष्ट प्रशासनाधिकारी कुशल-कला पारखी गुणी जन-कल्प तरु तथा रससिद्ध कवि आदि, सभी कुछ एक साथ है। वस्तुतः रहीम व्यक्ति नहीं सत्सा थे, इकाई नहीं समान थे हिंदी नीति काव्य के तो मंदिर मस्जिद, पुजारी और भक्त सब कुछ थे ही। हिंदी और हिन्दुस्तान से बाहर भी उनकी प्रतिभा समादत थी, माय थी। सच पूछिए तो विविध भाषा जान उदार कायाश्रय तथा मुक्कहस्त दान में, व अपने युग की सावभौमिक विभूति थे। उस युग की बात न कर यदि आज की परिस्थितिया को देखा जाए तो घमनिरपेक्षता के वतमान परिवेश में, रहीम हमारे राष्ट्र के आदश कवि सिद्ध होते हैं। भारतीय नतिक मूल्यों सांस्कृतिक जीवनादर्शों तथा धार्मिक नीति सदर्थों की जसी निष्ठापूर्ण लोकोपयोगी अभिव्यक्ति इस मुसलमान के काव्य में हुई है वंसी सस्कार गूँय कोटि कोटि हिंदुआ में मिलना दुर्लभ है। यही कारण है कि उनका काय विगत तीन चार शताब्दिया से हिंदी भाषा भाषी जनता का कण्ठहार बना हुआ है। अनुभवसिद्ध तथ्या की भावानुभूत मार्मिकता ने उनकी काव्याभिव्यक्ति को कुछ ऐसी समथ भाषा प्रदान की है जिसे न विद्वान भुला सके है और न सामान्य जन। समसामयिक एवं परवर्ती कवि ही नहीं आधुनिक युग के साहित्यकार भी उनकी प्रभाव छाया से अछूते नहीं हैं। इसीलिए आचाय नन्ददुलारे वाजपेयी ने एक साहित्य गोष्ठी में रहीम के अध्ययन अध्यापन पर बल देते हुए उदू फारसी के जानकार अनुमधित्सुआ को रहीम काव्य के उच्च स्तरीय अनुशीलन परिशीलन गोध एवं अनुमधान की ओर प्रेरित किया था। मेरे विषय चयन का मूल, आचाय नन्ददुलारे वाजपेयी की वही प्रेरणा है।

रहीम सम्बन्धी अध्ययन में मेरा स्थानीय एवं पारिवारिक सस्कार भी सहायक सिद्ध हुआ है। मेरे पितामह, प० कहेयालाल जी, यूनानी हकीम होने के कारण सस्कृत हिंदी से भी अधिक रुचि उदू फारसी काय में रखते थे। हमारे ब्राह्मण परिवार में रामायण। भागवत के साथ उदू फारसी की भी

खूब चर्चा रहती थी। मेरा जन्म-स्थल 'धामपुर' (बिजनौर) हिंदू मुस्लिम सस्त्रुतिया एव उदू हिंदी भाषाभाषा का समन्वय-स्थल है। आचार्य जी ने भी इस विरासत की जानकारी पाकर, मेरे रहीम सम्बन्धी विषय को सहज स्वीकृति प्रदान की थी। हाँ साथ ही 'नीति काव्य परम्परा को धीरे जोड़ लेने का आदेश दिया था। 'आना गुरणाह्यविचारणीया' के अनुसार शोध-काय सम्पन्न होता रहा। किन्तु टकित प्रबन्ध के सम्पूर्ण आकार प्रकार को देखकर उद्धान रहीम सम्बन्धी भाग को पृथक् से प्रकाशित कराने का परामश दिया। मेरे शोध प्रबन्ध के रहीम सम्बन्धी भाग का प्रस्तुत प्रकाशन उसी सत्परामश का शुभ परिणाम है।

प्रस्तुत कृति में रहीम के मूल पाठ के लिए मैं न ५० भाषाणकर यानिक की 'रहीम रत्नावली (१९२८) को अपना आधार बनाया है। वहाँ-वहाँ पर बाबू ब्रजरत्नदास जी के रहिमान विलास (१९४९) से भी छद्द लिए गए हैं। पुस्तकात्त में उद्धृत रहीम काय के अथ छोटे छोटे सग्रहो को भी देखने का अवसर मिला है। रहीम के जीवन क्रम के लिए मूल फारसी ग्रंथा के अतिरिक्त मु० देवीप्रसाद के दुष्प्राप्य खानखानानामे तथा डा० समर बहादुरसिंह के (इतिहास विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत) शोधप्रबन्ध के रहीम खानखाना शीषक से प्रकाशित हिंदी रूपांतर की सहायता ली गई है। यद्यपि इस पुस्तक में डा० सिंह ने रहीम के व्यक्तित्व और कृतिया पर भी कुछ पृष्ठ जोड़ दिए हैं किन्तु रहीम की जीवनी के ऐतिहासिक व्यवस्था क्रम में ही उसकी सफलता सन्निहित है।

शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करने के पश्चात् राष्ट्रीय जीवन चरित्र माला प्रकाशन योजना के अन्तगत डा० सिंह के ही सुमंगलप्रकाश कृत अनुवाद रूप में, लगभग सवा सौ पृष्ठों की एक अथ जीवनी देखने में आई है। तभी श्रीयुत देवेन्द्रप्रताप सोलंकी द्वारा लिखित रहीम की राष्ट्रीयता पुस्तक पढ़ने का अवसर मिला जिसका उद्देश्य साहित्य समीक्षा न होकर प्रवृत्ति विशेष का उद्घाटन मात्र है। कही-कही तो लेखक ने स्वरचित दोहे भी बीच में वियस्त कर दिए हैं। अतः पुस्तक पढ़ते समय बड़ी सावधानी बरतने की आवश्यकता पडी है। साहित्य समीक्षा की दृष्टि से हिंदी साहित्य के इतिहासो एव विविध शोध प्रबन्धों की लघु टिप्पणियों के अतिरिक्त कोई कृति हमारे देखने में नहीं आई। स्थिति यह है कि रहीम-काय की समीक्षा पर समग्र हिंदी जगत में एक साथ चालीस पचास पृष्ठ भी प्राप्त नहीं हात। प्रस्तुत प्रकाश उसी साहित्यिक अभाव की अकिंचन पूति है।

इस अथ में रहीम के जीवन पथ को उतनी प्रधानता नहीं दी गई जितनी कि उनके सजक रूप का। जीवन सम्बन्धी प्रथम तथा द्वितीय अध्यायो में कवल उहीं घटनाओं अथवा उपलक्षियों का वर्णन है, जिनसे रहीम के व्यक्तित्व का कोई विशेष अंग उभरकर सामने आता है। साथ ही हमने ऐसे अंतरालों को खोज निकाला है जिनकी परिस्थितिया साहित्य रचना के अनुकूल थीं। फलतः इस भान्त धारणा का सप्रमाण सडन हो गया है कि रहीम को काव्य प्रणयन के लिए अवकाश नहीं था। तृतीय अध्याय में रहीम की सभी प्राप्त रचनाओं को

भाषा प्रौढता के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। इस वर्गीकरण को पूव निर्देशित श्रवकाशांतराली से मिलाकर तथा बाह्याभ्यन्तर सकेतो का आधार लेकर रहीम की वृत्तियों का काल निर्धारण किया है जो रहीम-काव्य के क्षेत्र में अपने प्रकार का प्रथम प्रयास है। चतुर्थ अध्याय स १०वें अध्याय तक रहीम काव्य का साहित्य शास्त्रीय निष्पन्न पर बसने का प्रयत्न भी इस साध प्रबन्ध में सम्भवतः पत्नी द्वार हो रहा है। ११व तथा १२वें अध्याय में पूर्वापर प्रभाव तथा उपसहार दंत के पश्चात् हमन फारसी नीति-काव्य के इतिहास क्रम को परिशिष्ट में प्रस्तुत किया है। इस अध्ययन में प्रमाणित हो जाता है कि रहीम के नीति-काव्य का फारसी से रच मात्र भी सम्बन्ध नहीं है। वह सस्कृत से प्रभावित भारतीय नीति काव्य परम्परा की एक विगुद्ध एवं अविच्छिन्न कड़ी है।

इस अध्ययन में मुझे जिन पुस्तकालयों एवं संस्थाओं का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में सहयोग प्राप्त हुआ है मैं उन सभी का अनुगृहीत हूँ। व्यक्तिगत वृत्तवृत्ता प्रकाशन की दृष्टि से मेरा ध्यान सबप्रथम अपने परिवार पर जा रहा है। प्रिय अनुज त्रिनोक पाल का सौहाद तथा सहर्षमिणी शारदा जी का सहयोग मुझे विस्मृत नहीं हो सकता। इन्होंने परिवार के विभिन्न उत्तरदायित्वों को अपने उदारशय में समेटकर मुझे अनुमोधान काम में प्रवृत्त रहने की परिस्थितियाँ प्रदान कीं। मित्र श्री सुरेशचन्द्र भट्ट (के श्रीय सरकार प्रशाकार नई दिल्ली) तथा आदरणीय डा० अजहर साहिव (नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) ने हिन्दी एवं फारसी के अनन्त दुर्लभ ग्रंथों को जुटाने में मुझे अनन्य सहयोग दिया है। मैं इनका हृदय में अभ्यर्ण हूँ। अध्ययन काल में समादरणीय डा० रामलाल सिंह (इनाहाबाद), डा० राममूर्ति त्रिपाठी (उज्जैन) डा० शिवकुमार मिश्र (सागर) तथा डा० ओमप्रकाश शास्त्री (दिल्ली) आदि अपने विद्वान प्राध्यापकों से मैं प्रेरित, पानवर्धित एवं अनुत्साहित होता रहा हूँ। अतः छात्रमुलभ श्रद्धा से उनका साधुवाद करना मेरा पुनीत कर्तव्य है। आचार्य प्रवर डॉ० नगेन्द्र ने अनेक शास्त्रीय शकाया का समाधान कर मुझे अपने वचस्व में इस विषय में गहरी पठ करने की सामर्थ्य प्रदान की है। मैं उनके प्रति परम विनम्र रूप से श्रद्धावन्त हूँ।

अध्ययन एवं अनुमोधान में भी अधिक कठिन काय प्रकाशन का है। लेखक को चूमने की प्रवृत्ति तथा आकाश को छूत हुए पुस्तक के मूल्य राष्ट्रव्यापी समस्या बन गए हैं। भरे प्रकाशकों ने इस वृत्ति को प्रवर्धित कर उचित मूल्य में पाठकों को सुलभ करने का प्रयास किया है। अतः वे निश्चित ही धनवाद का पान हैं। इस काय में मुझे आदरणीय डॉ० चन्द्रहस पाठक मुहूद डा० रमण मिश्र, स्नेही महेशचन्द्र जन आदि अनेक विद्वानों एवं मित्रों का सहयोग प्राप्त हुआ है, किन्तु उनका धनवान् अपना ही धनवाद होगा। बिना जित्दें बंधे प्रथम पर ही हिन्दी जगत के दीपत्य विद्वानों ने अपनी गुणगानाएँ प्रदान करने की महती अनुकम्पा की है। स्थानाभाव से उन सबका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। उन सभी विपश्चिता

और विशेषतः परम श्रद्धेय आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र, आचार्य भगीरथ मिश्र, आचार्य विनयमोहन शर्मा, डा० सरनामसिंह डॉ० श्रजेश्वर वर्मा, डा० अमीर हुसन अब्दुदी तथा डा० यूनस जाफरी आदि महान विद्वानों को मैं अपनी विनम्र प्रणति प्रस्तुत करता हूँ। बवालहुसन सिद्दीकी न देवाचन निरत रहीम के दुलभ चित्र की सूचना दी थी। इसके लिए मैं उनका भी आभारी हूँ।

श्रद्धेय डा० विजयद्र सनातक जैसे गम्भीर विद्वान न अपनी अमूल्य भूमिका लिखकर इस कृति को गौरवान्वित किया है। वस्तुतः वे आनुलोप एव अवडर दानी प्रोफेसर हैं। उनका यत्किंचित प्रसाद पाकर मैं भी धन्य हो गया हूँ। उनका कृतपता ज्ञापन निश्चित ही छोटे मुह बड़ी बात होगी। अतः मैं मुझे इस शोध प्रबन्ध के निर्देशक (विक्रम विश्वविद्यालय के उपकुलपति) अपने कीर्तिशेष गुरु, आचार्य नन्दलाले बाजपेयी का स्मरण हो रहा है। उस शिष्यवत्सल ऋषि के स्नेह पाथेय बरदहस्त एव माग दशन के बिना मुझे अकिंचन का विद्या वारिधि में सतरण असम्भव ही था। उनकी दिवगत आत्मा के प्रति मेरी करुणारुद्ध बाणी अपने मौन ही में मुखर है। इस श्रद्धा सुमन का समर्पण उनके अतिरिक्त और कहे भी किसे—

दीन मौन विन पच्छ के, कहू रहीम कह जाँय।

—बालकृष्ण अकिंचन

हस्तिनापुर कालिज

मोती बाग नई दिल्ली २३

डॉ० बालकृष्ण अक्किचन का यह वाय सचदा मौलिक और अंतर दृष्टि मूलक है। इस विषय में इससे पहले इतना गम्भीर एवं गवर्नागूण अध्ययन देखने में नहीं आया। अक्किचा जी इसके लिए सचदा बर्पाई के पात्र हैं।

राजनीति और अरवारी वातावरण में जीवना का अधिवांग समय बिताने वाले इस मौलिक प्रतिभा के कवि के मानस का निरूपण डॉ० बालकृष्ण ने बड़ी योग्यता और क्षमता के साथ करके मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य के एक महत्वपूर्ण पक्ष का उद्घाटन करते हुए वास्तव में एक विस्मृत और उपरिगत अध्याय को प्रस्तुत किया है। एक अन्य विषयना यह है कि इसमें अध्ययन अपनी विवेचना शक्ति का ही परिचय गरी किया बल्कि बर्णानिक साध दुर्लभ का भी एक प्रशस्त उदाहरण प्रस्तुत किया है।

मुझे विश्वास है कि इस गोप-नाय के द्वारा हिन्दी के अन्य उपरिगत पक्षों का उद्घाटन करने की प्रेरणा मिलेगी।

डा० अजेवर धर्मा

प्रोफसर के डीय हिन्दी संस्थान आगरा

डॉ० बालकृष्ण शर्मा अक्किचन ने रहीम के नीति-वाक्य पर प्रथम लिखकर बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया है। उनके विचारों में मौलिक उद्भावनाओं के साथ सचयन भी है किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि डा० अक्किचन ने अपनी विचार-सम्पदा को बड़े श्रम से प्रस्तुत किया है। उनका प्रस्तुतीकरण सतकतापूर्ण तथा शैली बड़ी दीप्तिमयी है।

अक्किचन जी मरे साधुवाद के पात्र हैं।

डा० सरनामसिंह शर्मा अरुण

आचार्य एवं अध्यक्ष
हिन्दी विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर

अक्किचन साहिब ने अरुणहीम खानखाना पर तहकीकी काम करके सिर्फ हिन्दी ही को मालामाल नहीं किया बल्कि फारसी अक्षरों के मुताबिल करने वाले की मालूमता में भी इजाफा किया है। आखिर में फारसी के मुताबिल जो कुछ लिखा गया है वह भी निहायत पुरमग्न और काबिल कद्र है। हिन्दी के लिए यह हिस्सा मालज (रेफ़ेस) का काम करेगा। मैं

डा० अक्किचन को इस आला किताब के लिए दिली मुवारिकबाद देता हूँ।

डा० अमीर हसन आबिदी

प्रोफसर एवं अध्यक्ष अरवी फारसी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली

भूमिका

नवाब अदुरहीम खानखाना अपने समय के वीर-बहादुर यादवा, कुशल राज-नानिवत्ता और भारतीय साम्प्रतिक समर्थन का आग्रह प्रस्तुत करने वाले मर्मी कवि थे। युद्ध-कला का वर्णन उन्हें अपने पिता बरमन्दा म बिरामन्दा के रूप में मिला था और राजनीति का पाठ उन्होंने सम्राट अकबर की पाठशाला में पढ़ा था। काव्य-कला उनकी निम्न मिद्ध प्रतिभा का पुष्प फल था जिम्का उपयोग उन्होंने स्वान्त मुन्दाय तक ही सीमित न रखकर जन-जीवन की सामूहिक चेतना का प्रबुद्ध वर्णन में किया।

रहीम का जीवन-वृत्त एक सुप्रसिद्ध एतिहासिक महापुरुष के रूप में अकबर और जहांगीर के गामन-काल में लिखे गए अनन्त ग्रथा में विस्तार के साथ उपलब्ध होता है। अष्टन बाकी न 'मघामिरे रहीमी' नाम से रहीम की विस्तृत फारसी जीवनी लिखी है। इस जीवनी में रहीम के लौकिक एवं साहित्यिक जीवन पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। अकबरी दरबार के इतिहास लेखक अबुल फत्तन और अशुत क़ादिर बदाउनी ने भी अपने इतिहास ग्रथा में रहीम का एक वीर बहादुर यादवा के रूप में वर्णन किया है और साथ ही उनकी साहित्यिक प्रतिभा का भूरि भूरि प्रशंसा की है। जहांगीर ने अपने 'तुजुक जहांगीरी' में उन प्रशंसा की भी चर्चा की है जिनका लेकर जहांगीर और रहीम के बीच कुछ समय तक मनोमालिन्य चलता रहा था। अशुत इतिहास लेखका की दृष्टि भी रहीम की बिलम्बन प्रतिभा पर पड़ी और प्रायः सभी न उन्हें उदार योद्धा के रूप में चित्रित किया। आधुनिक युग में स्वर्णिय मुगी देवीप्रसाद ने हिन्दी में 'खानखाना नामा' लिखकर रहीम के जीवन-वृत्त का सब प्रकार से परिपूर्ण बना दिया है। रहीम के जीवन पर इतनी व्यापक दृष्टि न किसी अन्य भाषा में कोई पुस्तक नहा है। इस सुन्दर जीवनी के अतिरिक्त रहीम की काव्य-भाषना और कला पर प्रकाश डालने वाली छोटी-छोटी लगभग दो दशक में ऊपर पुस्तकें हिन्दी में यथा विधि प्रकाशित हो चुकी हैं। यह सब बात का प्रमाण है कि रहीम का स्मरण विगत चार शताब्दियाँ से केवल एतिहासिक पुरुष के रूप में ही नहा बरन् भारतमाना के सच्च सपून के रूप में होना आ रहा है।

अदुरहीम खानखाना का जन्म सन् १६१३ (ई० सन् १५५०) में इतिहास-प्रसिद्ध बरमन्दा के घर लाहौर में हुआ था। सम्राट अकबर उस समय मिकन्दर सूर के आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए मन्थ सहित लाहौर में उपस्थित थे। बरमन्दा के यहां पुत्रावृत्ति का समाचार पाकर वे स्वयं बहा पहुँच और उन्होंने नवजात शिशु का नाम 'रहीम' रखा। रहीम का जीवन-वृत्त प्रस्तुत करने वाले सभी ग्रथा में उपयुक्त तिथि का ही जन्म-सन्वत् के रूप में स्वीकार किया गया है। रहीम के पिता बरमन्दा का हुमायूँ के समय से ही मुगल दरबार में बड़ा सम्मान था। बहादुरी एवं बुद्धिमत्तापूर्ण अनन्त कार्यों से बरमन्दा ने हुमायूँ पर गहरा प्रभाव जमाया हुआ था।

इसी कारण हुमायूँ ने युवराज अकबर की शिक्षा-शिक्षा का भार उग सौंपा था और अपने जीवन के अंतिम समय में राज्य प्रवचन भी अकबर को देकर अकबर का अभिभावक नियुक्त किया था। अकबर को न अपनी गुलाल नीति से अकबर का राज्य को सुदृढ़ बनाने में पूरा योग दिया किन्तु दुर्भाग्य से अकबर के सिद्धान्तानुद्ध होने के बाद दोनों में मतभेद हो गया और अकबर ने विद्रोह करना चाहा। अकबर को विद्रोह को दबाकर अकबर ने अपने उस्ताद की मान रखा करत हुए यही चाहा कि वे अपने जीवन को गतिपूर्ण बनाने के लिए हज़रत अकबर की प्रतिभा से प्रभावित होकर अपने यही किया किन्तु मांग में एक पठान ने अपने किसी पुराने अकबर का प्रतिभा से प्रभावित होकर अपने पतलस्वरूप उनका वध कर दिया। उस समय अकबर की आयु बहुत कम थी। अकबर की माँ अकबर को जन्म देकर मृत हो गई जहाँ से लोग अकबर को अकबर के नाम से जानते हैं। अकबर को जब अकबर की स्थिति का पता चला तो उसने तत्काल उस आगरा बुला भेजा। उसने अपनी देह देकर अकबर की शिक्षा का पूरा प्रवचन किया और उसे गहरी खानदान के अनुसूचक मिर्जाणा का लिताव दिया। अकबर के यहाँ रहकर विद्याभ्यास करत समय अकबर ने दुर्लभ अकबर की शिक्षा जून ही अकबर से अकबर का अध्ययन किया। अपने अकबर में ही ग्यारह वष की आयु में अकबर बिना किसी गुरु से छंद और काव्य की शिक्षा लिए कविता करना प्रारम्भ कर दिया। मन्नासिरे अकबर ने यह स्पष्ट लिखा है कि कविता की ओर स्वाभाविक प्रवृत्ति होने से अकबर ने किसी उस्ताद की शरण नहीं ली और अपनी नसर्गिक प्रतिभा को ही अपना गुरु समझा। शिक्षा समाप्त होने पर अकबर ने अपनी धार्य की बटी माहाजानों से अकबर का विवाह कर उसी परम्परा का निर्वाह किया जो इनके पिता ने अकबर के विवाह से प्रारम्भ की थी।

सालह सत्तरह वष की आयु में ही अकबर को गुजरात में प्रारम्भ हुए उपद्रव को गति करने जाना पडा और उसमें विजयी होने में उपलक्ष्य में अकबर ने अकबर गुजरात की सूवेदारी प्रदान की। इसके बाद कुम्हलमर और उदयपुर को विजय करने के कारण आप अकबर की दृष्टि में बहुत ऊँचे उठ गये। अकबर ने अकबर की काय कुशलता योग्यता और विश्वासपात्रता से प्रसन्न होकर अकबर को सूवेदारी और रणयन्त्रों का लिता और अकबर प्रदान किया। इसके बाद अकबर की सूवेदारी और रणयन्त्रों का लिता भी अकबर उपहार स्वरूप शाही दरवार से प्राप्त हुआ। अकबर को अकबर पर बसा ही विश्वास था जसा कि हुमायूँ को अकबर पर था। अकबर ने अकबर की शिक्षा के लिए अकबर को बस ही नियुक्त किया उस अकबर पिता हुमायूँ ने अकबर के लिए अकबर का किया था। इसी बीच गुजरात में पुन अकबर प्रारम्भ हुआ और अकबर को अकबर लिए उपयुक्त सेनापति समझकर गुजरात भेजा गया। इस बार का युद्ध अकबर का कयाकि प्रतिपक्षी मुजफ्फर का पास अकबरवाला का इलाका था जिसे जीतना अकबर ही कया किसी भी सरदार के लिए सरल काम न था। किन्तु अकबर का मोर्चे पर स्वयं तलवार लकरी मदान में आये और अपने प्राणा का सकट में डालकर इस अकबर पराजय से लडे कि मुजफ्फर को जगला में भागने के सिवाय कोई और

ठिकाना न रहा। इस विजय ने रहीम की ह्म्याति म चार चाँद लगा दिए। उन्हें अकबर के दरबार म वही पद प्राप्त हुआ जो कभी उनके पिता बरमखा को प्राप्त था। किन्तु रहीम ने इस विजय को अपन अहवार और दप का विषय नहीं बनाया, उसने नि चय किया कि इस विजय के उपलभ्य मे वे अपना सब कुछ दीन-दुखिया की सहायता के लिए अर्पित कर देंगे। कहते हैं कि अपनी सम्पत्ति का अन्तिम प्रतीक 'कलम-दान भी आपन एक याचक को देकर अपार शान्ति एव सुन का अनुभव किया था। अकबर ने इनकी अद्भुत योग्यता और उदारता को दग्, इह जौनपुर का इलाका तथा मुगल दरबार का सर्वोच्च 'वकील' का पद, जो राजा टोडरमल की मृत्यु स खाली हुआ था प्रदान किया।

अकबर की मृत्यु के बाद जहागीर के शासनकाल के प्रारम्भिक पन्द्रह वर्षों तक रहीम का वसा ही सम्मान रहा जसा अकबर के समय मे था। किन्तु नूरजहाँ के पक्षपातपूर्ण रवय से असन्तुष्ट होकर रहीम ने बादशाह के विरुद्ध शाहजहा के उपद्रव मे साथ दिया, जिसके परिणाम स्वरूप उह अपने पद, सम्मान, धन वमय सभी से श्राय धाना पडा। रहीम स्वभाव के भोले और उदार हृदय व्यक्ति थे। कभी-कभी धूर्त और धोखेवाज व्यक्तियां पर भी अपनी सहज उदारता के कारण विश्वास कर लेते थे। और उनके विश्वासघात करने पर इहे भयकर कष्ट सहने पन्त थे। जहाँगीर की नाराजगी म भी इसी प्रकार की भूल आपसे बन पडी थी। रहीम को अपने बुढापे म इस प्रकार के भीषण आघात से कडी चोट पहुँची और वे जीवन से विरक्त होकर विश्रकूट मे तपस्वी की भाँति रहने लगे। शाहजहा ने कुछ समय बाद उह फिर से कन्नौज की सूबेदारी और अजमर की जागीर देकर अपने दरबार म सम्मानपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित किया। रहीम अपने जीवन के अन्तिम दिन तक युद्ध और सघप के कोलाहल पूण वातावरण से मुक्ति नहीं पा सके थे। अन्तिम समय म भी महावतला पर चढाई करने की तैयारी के दौरान आपकी मृत्यु हो गई। उस समय आपकी आयु ७१ वष की थी।

युद्ध और सघप के कालाहल पूण जीवन के साथ रहीम का पारिवारिक जीवन भी कष्ट और मानसिक याननामा म कटा। पिता की हत्या तो उनकी चार वष की आयु म ही हो गई थी। प्रौढवस्था म वगम भी परलोक सिधार गइ। सत्ताल प तीन पुत्र और एक पुत्री थी। इन चारा की मृत्यु भी रहीम को अपने जीवन काल म ही दखनी पडी। बेटी का वधय भी आपन अपनी आखा स देखा। चञ्चल लक्ष्मी ी अपार कृपा और भीषण अट्टहास, दाना इनके जीवन म अपनी चरम सीमा पर पहुँच। जो रहीम सबस्व दान करत समय याचक को मुह मागा दान देकर सुख लाभ करते थ, उही का अपनी जीवन-यात्रा के लिए दूमरा पर निर्भर होना पन्। रहीम न विना किसी घटना विगष का सकत किंइ इस स्थिति का अपने टोहा म मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। मृत्यु और विनाग के इस भीषण ताडक को देखते हुए भी रहीम ने कमा धय नहीं छोडा और न कभी मर्यादा का उल्लघन ही किया। वे कष्टा से कभी परास्त नहीं हुए और दुखा की घन्िया मे यही कहत रहे—

रहिमन बिपदा हूँ भली, जो थोड़े दिन होय ।
 हित अनहित या जगत मे जानि पडत सब कोय ॥
 रहिमन चुप हूँ बठिये देखि दिनन क फर ।
 जब नीके दिन आइहैं बनत न लगिहै बेर ॥

रहीम का घटना सकुल जीवन ही उनके "यत्तित्व के विकास म योग देने वाल सिद्ध हुआ । या तो प्रत्येक "यक्ति म कतिपय विशिष्ट जन्मजात गुण होते हैं किन्तु परिस्थितिजय घात प्रतिघाता को सहकर भी मानवात्मा का विकास होता है । रहीम न अनक भाषाया का उच्चकोटि का ज्ञान उपार्जित किया था । किताबी ज्ञान के सिवा जीवन की पाठशाला म जो कुछ पठनीय एव सग्रहणीय था वह सब रहीम ने एवत्र किया । फलत उनका "यत्तित्व उन सब गुणा का निधान बन गया जो ससार के महापुरुषा म देखे जात है । प्रजा का अनुरजन करने वाला राज सेवक प्राय राज-सेवन जनता म लोकप्रिय नहीं हो पाता । विरल ही ऐसे लोकप्रिय व्यक्ति उत्पन्न होते ह जो राजा और प्रजा क इस विरोध के रहने पर भी दोनों के प्रिय पात्र बनकर समाज और शासन दोनों का हित साधन कर अक्षय कीर्ति प्राप्त करते है । रहीम सानजाना निश्चय ही इसी कोटि के सौभाग्यशाली "यक्ति थे जो अपनी उभयविध लोकप्रियता के कारण इतिहास मे ही नहीं अपितु भारतीय जनजीवन के अमिट पृष्ठो पर या शरीर स जीवित हैं ।

रहीम अपने युग के सबसे बड़े गुणग्राही "यक्ति माने जाते थे । सम्राट अकबर और जहांगीर दोनों ने ही रहीम की गुणग्राहिता की समान भाव स प्रशंसा की है और उनकी दानप्रियता की सराहना करते हुए उनके अपरिग्रह पर आश्चय प्रकट किया है । कवि तथा गुणी का सम्मान करते समय जाति धम ध्रायु का भेद न करना महानता का लक्षण है । रहीम न ऐसा भेदभाव कभी स्वप्न म भी नहीं सोचा । अरबी और फारसी के सायरो को जितना दान सम्मान लिया उसका दस गुना हिन्दी के कवियों को देकर अपनी उत्तारता का परिचय दिया । रहीम की दानशीलता की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी दरवार स कभी काई याचक साली हाथ वापस नहा गया । उनकी वनायता की प्रशंसा करने वान हिन्दी कवियों की सख्या एक दर्जन स ऊपर है । गग केरावदास सत मन्म जडा प्रसिद्ध हरिनाथ तारा अलानुली तथा मुकु द आदि अनेक ऐसे कवि थ जा उनके गीय पराक्रम और दानवारता की प्रशंसा म वाय रचना करक अपने को पाय समभन रह थ । गग ने इनकी वनायता की प्रशंसा म यह दाहा लिख भेजा—

सोमे कहां नवाय जू ऐसी देनी दन ।
 ज्या ज्यों कर ऊचो करौ त्यों त्यों नावे मन ।
 राम न सहन गालानता क साय मनका उत्तर या दिया—
 देन हार कौड और है भेजन सो तिन रन ।
 लोग भरत हम पर कर पाते नीचे नन ।

जहागीर के कोष के कारण जागीर टिन जाने पर जब आप चित्रकूट म वैभव हीन दगा म थे तब भी याचक आपके पाम निरन्तर आत रहते थ । तभी एकबार धन की आकांक्षा म आए हुए एक ब्राह्मण याचक का रहीम न रोवा नरेग क नाम यह दाहा त्रिवरर दिया—

चित्रकूट म रमि रहे रहिमन श्रवच नरेस ।

जा पर विपदा परत है सो श्रावत यहि देम ।

कहत है कि इस दाह पर मुग्ध हाकर तन्कालीन रीवा नरेग न याचक का एक नाम स्पया दसर सन्तुष्ट किया था ।

रहीम की कान्य-भावना के स्पष्टत दा आत्मा हैं । एक का आधार सामाजिक चेतना को प्रबुद्ध करन वाला लौकिक जीवन-व्यवहार का पथ है निमम नीति, धम और लोक व्यवहार का पुट है । महानुभूति की व्यापकता न उनके इम प्रथम काटि के काव्य का जीवन-गान का रूप द लिया है । दूसरी काटि की काव्य रचना जीवन के रागात्मक एव मासिक पथ का स्पग करता है । भारतीय प्रेम जीवन की मच्ची भनक प्रस्तुत करन वाला यह काय रहीम के कामल एव द्रवीभूत हाने वाले रमिक हृदय की भाकी कहा जा सकता है । लोभ मग्न की माधनावस्था और सिद्धावस्था दाहा का हृदयगम कर रहीम न काव्य रचना की है । अन जीवन की ममग्रता उनके कान्य म प्रतिबिम्बित हानी हुई स्पष्ट परिलक्षित हाती है ।

अब तक रहीम विरचिन छोट-बडे आठ कान्य-ग्रथा का पता चला है । फारसी मे भी उनकी काय रचना प्रसिद्ध है । रहीम न कुछ ग्रथा का तुर्की मे फारसी म भी अनुवाद किया था । ग्रथ विवरण इस प्रकार है—

- | | |
|------------------|--------------------|
| (१) रहीम दाहावली | (२) बरब नायिका भेद |
| (३) बरब सग्रह | (४) नगर शाभा |
| (५) मदनाच्छक | (६) गृगार सौरठा |
| (७) रहीम काव्य | (८) खेटकौतुकम् |

इन आठ ग्रथा म से वस्तुत प्रथम चार ही ग्रथ काटि म आते हैं । गेप चार तो स्फुट पत्ता का विषयानुसार सकलन मात्र हैं । अत उहू ग्रथ सना नहीं दी जा सकती । रहीम रचिन स्फुट पद भी यत्र तत्र बिगरे हुए उपलब्ध हात है । रहीम की समस्त वृत्तिया का विषय मानव जीवन ही था । ससार के विविध अनुभवा के मासिक पथ को ग्रहण करके पूरी भावुकता क साथ प्रस्तुत करना ही उनकी कला का मून उद्देश्य था ।

रहीम दाहावली गानगाना की सबसे प्रडी उपलब्ध रचना है । इमम लगभग तीन सौ दाह सगृहीत हैं । कहा जाता है कि रहीम न पूरी मनसद निनी थी किन्तु उनके अभियाना के सधपमय जीवन के कारण भिन भिन्न बाल म लिख गय दाहा का विधिवत् सकलन नहीं हो सका । जा दाह जनता म प्रचार पाकर टकमाली बना गय थ ही बनमान दोहावली म हैं गेप काल-वर्धित हा गय ।

जीवन की पाठगाना म पडे हुए पाठा का ही रहीम न दाहा क गांच म डाल-कर प्रस्तुत किया है । उपग्य और मीन को जितन सरम और आकषक रूप मे रहीम

रस सब हैं कबीर के गिया घोर कोई कवि नहीं रस सदा । दुष्कान घोर उगाहन
 से परिपूर्ण भारतीय संस्कृति की परम्परा में गुंथ हुए रहीम के आगे किम गहन्य को
 मुग्ध नहीं करत ? रहीम के दोहा का जनना में इना प्रसार घोर प्रसार हुआ कि
 छाप की हर पर स व दोह कबीर का व्याग घाति कविया की भागी में मित्रा
 दिय गये । निम्नलिखित दादा में उगाहन प्रयान्तरयाग घोर दुष्कान की गनी न
 रहीम की बना की प्राणाविकता देगने योग्य है—

बहि रहीप इर बीपतें प्रकट सब बुनि होय ।
 तन सनेह कत कुर इग बीरक जठ बीय ।
 रहिमत प्रमुखा मपन हरि त्रिप कुग प्रकट करेय ।
 जाहि निचारी गेट तें कत न भेद बहि बेय ॥
 रहिमत यों मुग होत है यज्ञत देगि निज गीत ।
 ज्यों बडरी घणिया निरगि घागिन को मुग होत ।

मुसलमान हाते हुए भी हिन्दू जीवा का अनरतम में बडार रहीम न जो मामिक तथ्य
 प्रकित किय व उनकी विनाल हृदया का परिषय दत है । हिन्दू देवी-देवताया पवों
 धामिक मापताया घोर परम्परामा का जहां कही रहीम न उ नम किया है पूरी
 जानवारी घोर ईमानदारी का साथ किया है । हिन्दू जीवन का रहीम भारतीय जीवन
 का यथाप रूप मानत थ । अत उनक काव्य में प्राचीनत यही रूप प्रतिबिम्बित हुआ
 है । पौराणिक आख्यान की गून्म बातें भी रहीम की पठैव स बाहर रही हैं । रामायण
 महाभारत पुराण गीता सभी प्रथा का बयानका का रहीम न उदाहरण के लिए चुना
 है और लौकिक जीवन का व्यवहार पम को उसा द्वारा समझान का प्रयत्न किया है ।
 नगर लामा रहीम का दूसरा दोहा प्रथ है जिसमें उन्होंने अपनी रागात्मकता
 का परिचय दत हुए रूप घोर सौन्दर्य के चित्र प्रकित किए हैं । उत्तरी भारत में
 निवास करने वाली विभिन्न जातिया की महिलाया की सौन्दर्य की प्रस्तुत करना
 ही उन दोहा का वण्य विषय है । शृंगार रस की पीठिका पर इन दोहा में जो नाय
 व्यजना हुई है उसका प्रभाव रीतिवालीन शृंगारी कविया पर भी पडा । कुछ दोहे तो
 बिहारी और मतिराम का दोहा में छोडे स परिवतन का साथ उपलप होते हैं ।

बरव नायिका भेद रहीम के भाष प्रवण अतस्तल की मामिकता का
 उदघाटन करने वाली सुप्रसिद्ध शृंगार परक रचना है जिसमें भारतीय प्रेम-जीवन की
 पूरी अभिव्यक्ति हुई है । जीवन के रागात्मक सम्बन्धों का जिस सबदना के साथ रहीम
 ने ग्रहण किया उसी की इस काव्य में यजना की गई है । महत्व सौन्दर्य से परिपूर्ण
 विदग्ध विलास ही बरव नायिका भेद का आधार है । नायिका भेद की परम्परा हिन्दी
 में संस्कृत साहित्य से आई है किंतु रहीम न अपने नायिका भेद में जो उदाहरण दिये
 हैं वे अनुवाद न होकर भारतीय प्रेम जीवन पर प्राप्त होने से एकदम नूतन और
 नके अपने हैं । दो एक उदाहरणों से यह तथ्य स्पष्ट हो जायेगा—

लहरत लहर लहरिया लहर बहार ।
 मोतिन जरी किनरिया, कियुर बार ॥

पीतम इक सुमरिनिपा, मोहि देहि जाय ।

जेइ बिधि तोर विरहवा, करव निभाव ॥

रहीम के बरव नायिका भेद का हिंदी साहित्य में इसलिए और भी अधिक महत्वपूर्ण स्थान है कि हिन्दी के नायिका भेद विषयक ग्रंथों में यह ग्रंथ आदि ग्रंथों में है। केराव दास की 'रसिकप्रिया' को छोड़कर कोई और रीति ग्रंथ रहीम के बरव से पुराना नहीं है। 'रसिक प्रिया' समसामयिक है। मतिराम ने अपने लक्षणग्रंथ में रहीम रचित बरव के उदाहरण रूप में रखकर इस ग्रंथ का महत्त्व और अधिक बढ़ा दिया है। रहीम का बरव 'सग्रह' नामक ग्रंथ इस नायिका भेद से प्रौढ़ रचना है।

'मदनाष्टक को रहीम ने हिंदी संस्कृत मिश्रित इस विलक्षण शैली से संपुक्त किया है कि आधुनिक युगीन खड़ी बोली के कवि हरिऔधजी का स्मरण ही आता है। संस्कृत के मालिनी छंद में रचित शृंगार रसपूर्ण आठ पदा को 'मदनाष्टक' नाम दिया गया है। यह काव्य रहीम की विनोदी वृत्ति और जिंदादिली का सुंदर निदर्शन है—

विगत घन निशीये चाँद की रोशनाई ।

सघन वन निकुजे काह बसी थजाई ॥

रतिपति सुत निद्रा साइया छोड भागी ।

भदन तिरसि भूय क्या बला भ्रान लागी ॥

रहीम ने पौराणिक आर्याणा के आधार पर शुद्ध संस्कृत के कुछ श्लोकों का भी निर्माण किया है। उनमें जिस निष्ठा की स्थापना हुई है वह भारतीय परम्परा के सबसे अनुकूल है। छोट कौतुकम् रहीम की ज्यातिप शास्त्र विषयक फुटकर संस्कृत मिश्रित पदा की रचना का नाम है। राजा बनने के लिए कौन से नक्षत्रों का योग होता है, इसका बणन करत हुए उन्होंने लिखा है—

यदा मुत्तरो के द्रखाने त्रिकोणे यदा धवतखाने रिपी आफताव ।

अतारिद विलगने नरो वस्तपूणस्तदा दीनबारी स्थवा बादशाह ॥

अर्थात् जिसके जन्म समय वह्न्यपति केन्द्र में अथवा त्रिकोण में, मूय छठे घर में और बुध लग्न में हो तो वह मनुष्य अपने समय का बड़ा आदमी या बादशाह होता है।

रहीम के संस्कृत पान का एक प्रमाण यह भी है कि उन्होंने अपने दोहा तथा बरवों में अनेक स्थलों पर संस्कृत के कवियों की सूक्तियों को ग्रहण किया है और उनका भावगुणाद प्रस्तुत करके उन्हें टकसाली बना दिया है। कवित्त, सवया और गय पद रचना में भी रहीम ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। यद्यपि इनकी सख्या अधिक नहीं है किंतु भाव, भाषा और गली की दृष्टि से उनके कवित्त सवय रीति-कालीन कवियों से किसी प्रकार हलके नहीं ठहरते। कवित्त सवये ब्रजभाषा माधुय के चरमात्मक के धोनक माने जाते हैं। नूर और तुलसी की पद रचना के बाद रीति-कालीन कवियों ने इन छंदों में शृंगार भावना की जमी चमत्कारपूर्ण व्यञ्जना की उसका पूर्वाभास रहीम की रचना में लभित होता है।

रहीम के काव्य में भाव वैविध्य और शली वैविध्य द्रष्टव्य है। आश्चय का विषय है कि युवावस्था के अरणोत्प से लेकर जीवन के अन्तिम दिन तक जो व्यक्ति

सतत युद्ध और सपथ व धातावरण म पला हो रणभरी और तनवारा की भांमना हू ही जिसना जीवन सगीन रहा हो यह धम नीति भविन और जीवा व माधुय पण को लवर एसी सरस गुजर रचना क्य और कस कर सता ? काव्य व माधुय और जीवा व व्यावहारिक रूप को साथ लतर चलन वाल कवि ही सोत-सग्रह और सोन रजन का समन्वय करक सोन गाना का प्रयुद्ध करन म मपन हान है । रहीम इसी कोटि व महान् कवि और महामानव थ ।

और निजारा दृष्टा रूप दग सक्त है जो जाति धम और यग व भ्रमभाय का भूाकर मानव मात्र को बघत्य व स्तर पर प्रानिगन करक गावता का महान पुजारी है परदुनकातर होतर जो अपना सवस्व अर्पित करने का सख उद्यत रहता है कला और बलावार की पूजा व लिए जो सटन भाव स भूना रहता है जिसका काय कल्पना का भूना नेल न हाकर धम और नीति का गाग कराना दृष्टा राग और प्रम व शास्वत सम्प्रदा का परिबायन है । ममस्पर्शिता रीम व काव्य का प्राण है भारतीय ससृति उसका गरीर है । मानव मानव व बीच प्रम और सोहान व स्नट सम्प्रध की स्थापना उसका उद्देश्य है । भारतीय ससृति साहित्यकला और आचार मर्यादा के गायक कवि रहीम सासृतिक समन्वय व प्रतीक व रूप म विगत चार सो वरों से वरनीय रहे हैं और भविष्य म भी भारतीय जनता उनकी बढना इसी प्रकार करती रहेगी ।

रहीम की विलक्षण काय प्रतिभा व सम्य प म अभी तन हिंदी विद्वाना ने जो कुछ लिखा पटा है वह उनकी रचनामात्र व साथ पूण गाय करने वाला नहीं है । रहीम कवल नीतिवादी या यथाथवाणी कवि ही नहा अपितु परम भावुक और सहृदय व्यक्ति थे । काव्य के माध्यम से उहाने मानव मन के भीतर गहराई स भंका था और मानवीय सवेदनामात्र को काव्य प्रतिभा से विविध रूपा म उजागर किया था । हिंदी प्रभी पाठक रहीम को जानत और मानत तो हैं किन्तु उनके काय का सही मूल्यांकन अभी तक नहीं कर सके हैं । इस दिशा म डा० बालकृष्ण अकिचन का यह प्रयास प्रथम होने के साथ श्लाघ्य भी है । डा० अकिचन न रहीम के यत्नित्व को स्पष्ट करने के साथ उनके काय का सर्वांगीण विवंचन विस्तरेपण प्रस्तुत किया है । इस विवेचन म काव्य गाल्सीय पक्ष व साथ रहीम के बहुमुखी व्यक्तित्व म सन्निविष्ट मानवीय तत्वों को भी परिधमी लखन ने सोदाहरण उद्घाटित किया है ।

कुछ शोध प्रबन्धा म प्रासंगिक रूप से रहीम व काय की चर्चा अवश्य हुई है किन्तु उस विवंचन को सर्वांगपूर्ण नहीं कहा जा सकता । प्रस्तुत समीक्षात्मक कृति का विशद फलक गभीर विवेचन शली विलपण एव प्राजल अभिनयजना सोपुव इसकी सायकता व प्रमाण है । इस ग्रथ की एक उल्लेख्य विशेषता है इसका परिगिच्छ जिमम विद्वान लेखक ने फारसी नीति काय के साथ रहीम व कृतित्व को एक विशेष दृष्टिकोण स देता है । यह दृष्टिकोण इस तथ्य के लिए स्वीकार किया गया है कि प्रदुरहीम को सामाय पाठक फारसी प्रभाव का कवि समझता है और उनक नतिक

दष्टिकोण को अन्धकार भी समझने लगता है। इस तुलना से यह स्पष्ट है कि इस्लाम से अनुप्राणित होते हुए भी, नतिबता के लिए रहीम न भारतीय जीवन दर्शन को ही प्रमाण मानता है। अपने पूर्ववर्ती अरब और फारस के कवियों से न तो उन्होंने कोई प्रभाव ग्रहण किया और न अपने काव्य में ही फारसी शायरी की मूलक आने दी है।

आशा है इस ग्रन्थ के अनुशीलन से रहीम-काव्य के अध्ययन को नई दिशा मिलेगी। मैं डॉ० अकिंचन का इस स्तुत्य काय के लिए साधुवाद देता हूँ। मुझे आशा है कि वे अपने अध्ययन को इसी प्रकार सतत बनाए रहेंगे और भविष्य में अन्य उपेक्षित कवियों के कृतित्व को भी आलावित्त करेंगे।

—डॉ० विजयेन्द्र स्नातक
 प्रोफेसर हिन्दी विभाग,
 दिल्ली विश्वविद्यालय
 दिल्ली

विषयानुक्रमिका

क्रम

पृष्ठ
१ ३०

१ रहीम का जीवन

नाम—१, माता पिता—२, रहीम का जन्म—एक शुभ शकुन—
३, रहीम की जन्मकुण्डली—४, अनाथ रहीम और अकबरी
दरवार—५, विवाह—६, प्रथम गौरव—६, द्वितीय गौरव—
गुजरात की सूबेदारी—७, हल्दीघाटी के ऐतिहासिक युद्ध में—७,
मीर अज का पद—८, अजमर की सूबेदारी—८ शाहजादे सलीम
के अतालीक—८, अतावग का पद—९, खानखाना की उपाधि—
१०, कश्मीर-परिभ्रमण—११, मुगल दरवार का उच्चतम पद—
१२ सिध विजय—१३, उत्तर के पश्चात् दक्षिण—१५ आष्टी
का अविस्मरणीय युद्ध—१५, दक्षिण से वापसी—१६, दक्षिण कमान
में पुन नियुक्ति—१७, दानियाल तथा अकबर की मृत्यु—१७,
जहाँगीर का राज्य-काल—१८, अकबाश के दो वष—१९,
दक्षिण में पुन नियुक्ति—१९, पुत्रद्वय—शाहनवाज खा तथा रहमान
दाद की मृत्यु—२१ विद्रोही गहजहा के साथ—२१, रहीम के
माथे का क्लक—२२ रहीम के साथ अमानुषीय व्यवहार—२४,
दरवार में वापसी—२५, दावारह खानखानानी—२५, महावत खा
का विद्राह—२६, रहीम पुन सेनापति—२६ रहीम का प्राणात
—२७, एक भ्रम और उसका निराकरण—२८, व्यस्त जीवन में
अकबाश के क्षण—२९ निष्पत्त—३०

२ रहीम का व्यक्तित्व

३१ ६४

सेनापति रहीम—३४ दानवीर रहीम—३९, भोजनदान—४१,
कविया के अद्वितीय आश्रयदाता—४३ कविवर रहीम—४८
रहीम और तुर्की—४८ रहीम और फारसी—४८, रहीम और
संस्कृत—५०, हिंदी और रहीम—५२, उद और रहीम—५३
रहीम और विदेशी भाषाएँ—५४, हिंदुत्व प्रेमी रहीम—५५
निष्पत्त—६२

३ रहीम की रचनाएँ और उनका समय निर्धारण

६५ ६६

मदनाष्टक—६७ नगर शोभा—७० बरबै नायिका भेद—८०
दान भेद—८०, सखी तथा सखीजन कर्म—८०, रहीमद्वारा नायिका
भेद के आधार—८२ वियोग शृंगार—८५ फुटकर बरबै—८८
शृंगार सोरठ—९३ फुटकर छंद—९६

४ रहीम दोहावली—एक विषयपरक विवेचन
 रहीम दोहावली की व्यावहारिकता—१०१ पूर्व विवेचित विषय—
 १०३ प्रश्न—१०४ लक्ष्मी और ऐश्वर्य—११० दान—१११
 सम्मान—११२ शील—११३ भिन और मित्रता—११४,
 समय—११५ कुसमय—११५ भाग्य—११८ पुरुषाय—११९
 महापुरुष—१२० नीच—१२१ कुसंग—१२३ सत्संगति—
 १२४ परोपकार—१२५ स्वाय—१२६ चिन्ता—१२६ कतिपय
 अर्थ विषय—१२७

५ रहीम के काय से भावानुभूति तथा रस
 अनुभूति प्रतिया और काव्य—१३१ अनुभूति-पक्ष के आधार—
 १३२ नीति-काव्य एक मध्यमान—१३२ धर्म नीति—१३३
 अर्थ नीति—१३४ काम नीति—१३५ मान नीति—१३७
 भाव नीति—१३८ रसानुभूति—१४० शृंगार तथा सजातीय
 भाव—१४२ शात तथा सजातीय भाव—१४६ हास्य तथा
 सजातीय भाव—१५०, अदभुत एवं सजातीय भाव—१५३ वीभत्स
 तथा सजातीय भाव—१५४ वीर—रस एक आश्चर्य—१५४

१३१ १५५

६ नतिक अनुभूति के तीन स्रोत—लोकतत्त्व भक्ति एवं प्रकृति
 लोकतत्त्व और उत्सव अंग—१५६ रहीम के काय की लोक
 सामग्री—१५७ प्रचलित भाव अंधविश्वास तथा कल्पना—१६०
 कवि-समय—१६१ कवि समय की शास्त्रीय पृष्ठभूमि—१६१
 रस के कवि समय—१६२ कवि-समय प्रयोग एवं विशेषता—
 १६२ लोकतत्त्वाभिव्यक्ति के विभिन्न प्रकार—१६३ लोकपरक
 भाषा—१६३ लोकतत्त्व सम्बन्धी निष्कण्ठ—१६४ दूसरा प्रधान
 स्रोत भक्ति—१६४ रहीम का भक्ति भाव—१६५ भक्ति भाव
 की विभाषाएँ—१६७ सत्य भक्ति—१७० दास्य भक्ति—
 १७१ गान्धि भक्ति—१७१ शृंगार भक्ति—१७१

१५६ १६६

कीर्तन स्मरण-बन्धन अथवा पाठसवन एवं गुण-बन्धन—१७२ भक्ति
 सम्बन्धी निष्कण्ठ—१७३ अनुभूति का तीसरा प्रधान स्रोत—
 प्रकृति—१७३ प्रकृति और उसका विस्तार—१७६ रहीम-काव्य
 के प्राणिक उपकरण—१७४ प्रकृति—नतिक उद्माननाम्ना का
 मान—१७५ परम्परा निवारक मौलिकता एवं मूर्धन्यता—१७६
 प्रकृति-बन्धन—१७८ उदीपनात्मक प्रकृति बन्धन—१८०
 धारात्मक प्रकृति बन्धन—१८१ परिगणनात्मक प्रकृति बन्धन—
 १८० मन्वात्मक प्रकृति बन्धन—१८० मानवीकरणनात्मक प्रकृति

वणन—१८२, अयोक्त्यात्मक प्रकृति वणन—१८३, प्रतीकात्मक प्रकृति वणन—१८३, भयात्मक प्रकृति-वणन—१८४, रक्ष्यात्मक प्रकृति-वणन—१८४, प्रकृति चित्रण सम्बन्धी निष्पत्ति—१८५

७ रहीम के नीति-काव्य में कल्पना एवं ध्वनि १८७ २११

काव्य और कल्पना—१८७ नाच और कॉलरिज—१८८, रिचर्ड के छ अर्थ—१८८ कल्पना और प्रतिभा—१८९, हिंदी विद्वानों का कल्पना विवेचन—१९० कल्पना और आस्वाद—१९०, रहीम का कल्पना-व्यापार—१९१ रहीम की मौखिकता—१९१ कतिपय सदिलिष्ट कल्पनाएँ—१९२ सरल कल्पनाएँ—१९३ पडमुखी कल्पना विधान—१९४ गद्य क्षेत्रीय कल्पना—१९४, प्रकृति क्षेत्रीय कल्पना—१९५, शरीर क्षेत्रीय कल्पना—१९६ मना विमान क्षेत्रीय-कल्पना—१९६, क्रिया व्यापार क्षेत्रीय कल्पना—१९७, पुराण क्षेत्रीय कल्पना—१९८, निष्पत्ति—१९८, ध्वनि और रहीम का नीति काव्य—१९९, ध्वनि और उसकी व्याख्या—१९९, ध्वनि की स्थापना—२००, ध्वनि और रस—२०१, ध्वनि के भेद तथा रहीम का नीति काव्य—२०२, शब्द शक्ति-समवा (अभिधामूला) सलस्यत्रमव्यग्य—२०३ अर्थशक्ति समवा सलस्यत्रम व्यग्य ध्वनि—२०५, शब्द अर्थ उभयशक्ति समवा सलस्यत्रम व्यग्य ध्वनि—२०६ वस्तु से वस्तु ध्वनि का उदाहरण—२०७, वस्तु से अलंकार ध्वनि का उदाहरण—२०७ अलंकार से वस्तु ध्वनि का उदाहरण—२०७, अलंकार से अलंकार ध्वनि का उदाहरण—२०७, अर्थान्तरसंक्रमित अविश्वकित वाच्य ध्वनि—२०८, अत्यन्त तिरस्कृत अविश्वकित वाच्य ध्वनि—२०९, काव्य काव्या और रहीम—२१०, उत्तम काव्य—२१०, मध्यम काव्य—२१० चित्रकाव्य (अधम काव्य)—२११, निष्पत्ति—२११

८ रहीम का भाषा सौष्टव एवं अभिव्यक्ति-कौशल २१२ २३८

भारतीय अक्षर सङ्कल्पना—२१२ उद्धरणिय पाश्चात्य सम्मतियाँ—२१२ मध्ययुग की साहित्यिक भाषाएँ—२१४ अवधी भाषा—२१५, ब्रजभाषा—२१६, अवधी और ब्रज की एकता—२१७, रहीम की ब्रजभाषा—२१७ तत्सम शब्द बहूला ब्रजभाषा—२१७, देगज विदेशी शब्द बहूला ब्रजभाषा—२१८, रहीम की प्रतिनिधि ब्रजभाषा—२१८ खड़ी बोली का प्रयोग—२१९ टिगल भाषा और रहीम—२२० प्रमुख तमग शब्द—२२१, प्रमुख तद्भव शब्द—२२२, प्रमुख देगज तथा विदेशी शब्द—२२२ रहीम की भाषागत विगणताएँ—२२२, मौलित-वण-योजना—२२३ सगीत एवं लय—२२३, असमस्त शब्दानी—२२४, शब्दा

- का लघु भावार—२२४, सरल शास्त्रवली—२२५, भाषास हीनता—२२५ रहीम परलिया रहीम सवरिया—२२६ भाषा सम्बन्धी निष्प—२२६, अभिव्यक्ति एव अभिव्यक्ति कीशल—२२६, भारतीयमत—रीति एव वक्रोक्ति—२२७, पाश्चात्य विचारक तथा स्टाइल—२२८, शली—एक निष्प—२२९ रहीम के नीति-वाक्य की विभिन्न शलियाँ—२२९ सर्वाधिक प्रिय दृष्टांत शली—२३०, उपदगात्मक शली—२३० तथ्यकथनात्मक शली—२३१, वणनात्मक शली—२३१, प्रश्न शली—२३२ प्रश्नोत्तर शली—२३२, समाद शली—२३२ तय शली—२३३, अलकृत शली—२३३, सत्यात्मक शली—२३४ परिगणनात्मक शली—२३४ अयोक्ति शली—२३५ प्रतीकात्मक शली—२३५ पुनरावत्यात्मक शली—२३६ एक शली की चार वार आवृत्ति—२३६ एक ही शली की तीन वार आवृत्ति—२३६ सम्बोधनात्मक शली—२३८ प्रबोधनात्मक शली—२३८ आत्मप्रबोधनात्मक शली—२३८ रहस्यात्मक शली—२३८ कूट शली—२३८ निणयात्मक शली—२३८ निष्प—२३८

- ६ छंद विधान एव अलकार सौंदर्य छंद का व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ—२३९ छंद शास्त्र का समारम्भ—
छंद का व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ—२३९ छंद शास्त्र का समारम्भ—
शेषगण्ड-कथा—२४० विंगल का आदि आचायत्व सदिग्ध—२४०
छंद शास्त्रीय परम्परा और हिन्दी—२४१, रहीम की दृष्टि म
छंद और विनोपत वरव का महत्व—२४१, वरव-लक्षण और
रहीम के वरव—२४२ मालिनी और रहीम—२४३ सवया और
रहीम—२४३ मत्तगय—सवया—२४४ मुन्दरि सवया—२४४
किरीट सवया—२४५ दुमिल सवया—२४५ धनाक्षरी और
रहीम—२४५ शृंगार धनाक्षरी—२४६ भक्ति धनाक्षरी—२४६
नीति धनाक्षरी—२४७ पद—२४७ छण्य—२४८ सोरठा—
२४९ दोहा दतिवृत्त और विनोपता—२५१ दोहा और रहीम—
२५४ रहीम काव्य का प्रधान छंद—२५४, रहीम सतसई गालिब
य खयाल अच्छा है—२५५ सतसई परम्परा और रहीम—२५५
छंद सम्बन्धी निष्प—२५६ रहीम के नीति काय का अलकार
साध्य—२५७ अलकार और अलकार शास्त्र—२५७ काव्य म
अलकारो का स्थान—२५८ रहीम द्वारा प्रयुक्त अलकार—२५९
गालकार अनुप्रास—२६० यमक अलकार—२६० श्लेष अल
कार—२६१ पुनरुक्तिप्रकाश—२६१ वीप्सा—२६२ भाषासम
अलकार—२६२ अर्थात्कार—२६३ रहीम का प्रिय अर्थात्कार
दुष्पात—२६३ उदाहरण अलकार—२६४, उपमा अलकार—

२३९ २७३

—२६४, रूपक अलंकार—२६५, निदग्ना अलंकार—२६६,
 अर्थान्तरन्यास अलंकार—२६६, स्वभावोक्ति अलंकार—२६७,
 लोकोक्ति अलंकार—२६७, दीपक अलंकार—२६७, परिकर अलंकार—२६८
 परिकराकुर अलंकार—२६८, कतिपय अर्थ अलंकार
 —२६८ सहोक्ति—२६८ असंगति—२६९, विशेषाक्ति—
 २६९, रूपकातिशयोक्ति—२६९, सार—२६९, अन्योन्य—२६९,
 परिमह्या—२६९, अनवय—२६९, अतिशयोक्ति—२७०,
 उत्प्रेक्षा—२७०, काव्यलिङ्ग—२७०, सम—२७०, विपरीत—
 २७०, तद्गुण—२७०, अतद्गुण—२७१, मीलित—२७१, उमी-
 लित—२७१, उल्लास—२७१, अनुपा—२७१, अधिक—२७१,
 उत्तर अथवा प्रश्नोत्तर—२७१, उदात्त—२७२, तनिन—२७२
 विभावना—२७२, विनोक्ति—२७२, अलंकार सप्तष्टि—२७२
 अलंकार सकर—२७३, अलंकार सम्बन्धी निष्पत्ति—२७३ ।

१० शब्द शक्ति मुहावरे तथा गुण-दोष

२७४ ३१८

शब्द शक्ति की परिभाषा—२७४, सख्या—२७५, अग्निधा और
 उसकी व्याख्या—२७६ अग्निधा के भेद—२७७, रहीम और
 अग्निधा-व्यापार—२७७, लक्षणा-लक्षण और व्याख्या—२७८
 लक्षणा के भेद—२८०, रुद्धा लक्षणा और रहीम—२८१, प्रयो-
 जनवती लक्षणा और रहीम—२८३, सारोपा गौणी प्रयोजनवती
 लक्षणा और रहीम—२८ माध्यवसाना गौणी प्रयोजनवती लक्षणा
 और रहीम—२८४, सारोपा गुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम
 —२८५, साध्यवसाना गुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम—
 २८६, अजहल्वाद्या गुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम—२८७
 रहीम के काय म व्यजना सौदय—२८८, नागेण भट्ट तथा अप्पय
 दीनित का व्यजना विवेचन—२८९, व्यजना के भेद—२९०,
 शास्त्री व्यजना—२९१, श्लेष अलंकार और शास्त्री व्यजना—
 २९१, अर्थ निश्चयन और रहीम—२९२, सयाग और विप्रसाग—
 २९३ साहचर्य और विराध—२९३, अर्थ और प्रकरण—२९३,
 शास्त्री व्यजना के भेद—२९४, अग्निधा मूला शास्त्री व्यजना और
 रहीम—२९४ लक्षणा मूला शास्त्री व्यजना और रहीम—२९८,
 आर्षी व्यजना और उसका भेद—२९५, वक्तृवगिष्टयपूण आर्षी
 व्यजना और रहीम—२९५, वाङ्मय वगिष्टयपूण आर्षी व्यजना और
 रहीम—२९५, वाङ्मय वगिष्टयपूण आर्षी व्यजना और रहीम—२९६
 शास्त्री शक्ति सम्बन्धी निष्पत्ति—२९७, मुहावरे लोकोक्तियां तथा
 रहीम का नीति-वाच्य—२९८, मुद्रावर और तथ्य मणिनाचन
 संयोग—२९८ एक छंद म एकाधिक मुद्रावर—२९९, पूरे छंद

- म मुहावर ही मुहावर—३०० मुहावर। व गमना मुछ नय
 प्रयोग—३०० मुहावर। स प्ररित विपय—३०१ कनिपय
 अय मुहावर—३०१ मुहावर सम्बन्धी निपय—३०० गुण
 और उत्तरी परम्परागत परिभाषा—३०३ गुण सन्धा—३०४
 रहीम और माधुय गुण—३०५ अोज गुण और रहीम—३०७
 प्रसा गुण और रहीम—३०८ रहीम व नीति पाय म वति एय
 रीति—३०९ रहीम के नीति काव्य म दोप—३११ गद-पाय
 और रहीम—३११ अतिरुत्व—३१२ ग्राम्यत्व—३१२
 अतमयता—३१२ अ्युतमसृति—३१२ अग्रयुक्तत्व—३१३
 प्रतिकूलवणता—३१३ अय नोप और रहीम—३१३ अपुष्टाय—
 ३१४ कष्टाय—३१४ पुनगतत्व—३१४ प्रसिद्धि विरुद्धत्व—
 ३१४ विद्या विरुद्ध—३१५ सहचर भिन्नत्व—३१५ ग्राम्यत्व
 ३१५ प्रकाशित विरुद्धता—३१५ सावाक्षा—३१५ रस दोप
 और रहीम—३१६ स्वगन्वाच्य—३१६ विभावानुभाव कष्ट
 कल्पना—३१६ परिपथरसाङ्गपरिग्रह—३१७ निष्कप—३१८
 ११ रहीम पूर्वापर प्रभाव ३१९ ३५३
 रहीम के नीति-काव्य पर सस्कृत का प्रभाव—३१९ सस्कृततर
 भाषाया का प्रभाव—३२४ पालि से भाव साम्य—३२४, प्राहुत
 स भाव साम्य—३२५, अयभ्र श कविया से भाव-साम्य—३२५,
 रहीम पर फारसी का प्रभाव—३२६ कबीरदास और रहीम—
 ३२६ महाकवि सूरदास और रहीम—३३१ तुलसीदास और
 रहीम—३३२ रहीम और व्यास जी—३३७ रसखान और रहीम
 ३३८ रहीम और बिहारी—३४० रहीम और मतिराम—३४३
 रसनिधि और रहीम—३४३ अहमद कवि और रहीम—३४५
 वद और रहीम—३४५ रसनील और रहीम—३४६ गिरिधर
 कविराय और रहीम—३४६ आधुनिक कवि और रहीम—३५२,
 प्रभाव की विशेषताएँ—३५३ ।
 ११ उपसंहार ३५४ ३६४
 नीति नीति-काय और परम्परा—३५५, हिंदी नीति काव्य पूर्व
 पीठिका तथा रहीम—३५६ एक ही युग के दो युग पुरप—३६२
 मध्ययुगीन नीति-काय परम्परा मे रहीम का स्थान—३६४ ।
 परिशिष्ट ३६५ ३७३
 पूर्व इस्लामी साहित्य—३६५ फारसी का नीति काय—३६६,
 रहीम पर फारसी प्रभाव, निष्कप—३७३ ।
 नामानुक्रमणिका
 सहायक अय ३७५ ३८४
 ३८५ ३८८

मा भारती के प्राचीन कवियों में प्रायः अधिकार का जीवन परिचय आज भी अधूरा है। सबसे बड़ा कारण कदाचित् यह है कि वे अपने सम्बन्ध में कुछ भी लिखना आत्मश्लाघा समझते थे। समसामयिक अथवा परवर्ती विद्वानों ने कथन भी जहाँ प्राप्त नहीं वहाँ समस्या और उग्र है। सीमाभ्यन्त स हमार चरित नायक के सम्बन्ध में इस प्रकार की कठिनाइयाँ उत्पन्न नहीं हैं। इसके चार कारण हैं—

१ रहीम द्वारा लिखे गये कतिपय पत्र तथा उनके लिए लिख गये प्रत्युत्तर एवं गाथी फरमान प्राप्त हैं।

२ आश्रित तथा भ्रान्तीय कवियों द्वारा, उनके सम्बन्ध में लिखित फुटकर कविताएँ एवं पूर्ण काव्य-कृतियाँ इधर उधर बिखरी मिल जाती हैं।

३ उनके साथ युद्धादि में भाग लेने वाले व्यक्तियों, सम्राट अकबर के मुशियों तथा विभिन्न प्रांतों के समसामयिक लेखकों के इतिहास में उल्लेख हैं।

४ समसामयिक विद्वानों के अतिरिक्त परवर्ती लेखकों के इतिहास में भी उल्लेख हैं।

इन चारों प्रकार की कृतियों में रहीम के जीवन में सम्बन्धित उल्लेख यत्र-तत्र हुए हैं। किसी में एक घटना का विवरण है किसी में दूसरी का। कभी कभी एक ही घटना को उनके सहयोगी एवं विरोधी इतिहासकारों ने विभिन्न मूल्या के आधार पर भिन्न भिन्न दृष्टिकोण से वर्णित किया है। अतः उनके द्वारा दी गई सामग्री में सत्य का वास्तविक अन्वेषण निकालना तथा इतस्ततः बिखरी सामग्री का एक सूत्र में पिरो देना ही हमारी प्रमुख समस्या है। उसी के निराकरण स्वरूप रहीम की जो जीवनी तैयार होती है, उसका सन्निपत्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है—

नाम

हिन्दी जगत रहीम के नाम से चिर-परिचित है। उन्होंने कविता में अपने लिए रहीम या रहिमान का प्रयोग किया है। यह उनके पिता द्वारा दिए गए 'अब्दुल रहीम' नाम का लघु रूप है। फारसी भाषा के अनुसार अब्दुल रहीम कहने की अपेक्षा अब्दुरहीम कहना अधिक शुद्ध है। खानखाना जिसका अर्थ राजाघरा का राजा या राजाधिराज होता है, उनकी तथा उनके पिता की उपाधि थी, जो दोना को पृथक पृथक काल में, शीघ्र प्रदत्तनादि के कारण प्राप्त हुई थी। आज यह उपाधि

उनके नाम का अविभाज्य अंग बन गई है। यही कारण है कि वे इतिहास एवं काव्य जगत में अदुरहीम खानखाना नाम से प्रख्यात है। खानखाना की उपाधि प्राप्त होने से पूर्व उनके नाम के पहले मिर्जा शब्द जोड़ा जाता था। यह भी उनके नाम का पूर्वसंधि था। चार वर्ष की अवस्था में जब रहीम का सम्राट अकबर के दरबार में लाया गया तब अकबर ने उनका नाम मिर्जा खान खान जोड़कर उन्हें मिर्जा कार इसी मिर्जा शब्द को बाद तक भी उनके नाम के साथ जोड़कर उन्हें मिर्जा अदुरहीम खानखाना कहकर पुकारते रहे।^१ अपने युग के सर्वाधिक धनी मानी साम्राज्य में से हाने तथा दानादि में अक्षय उदारता बनाये रखने के कारण लोग इसे नवाब या नवाब कहकर भी पुकारा करते थे। हिंदी के विद्वान आरम्भिक इतिहास में रहीम के साथ नवाब शब्द जोड़ते रहे हैं।^२

कुछ स्थानों पर इतिहासिका में मिर्जा अदुरहीम बरम अथवा मिर्जा अदुरहीम इने बरम नाम का भी उल्लेख किया है। वस्तुतः यह टर्कोपसियन परिपाटी का अनुसरण है। इसके अनुसार नाम के साथ पिता का नाम भी इन (= पुत्र) लगाने के पश्चात् जोड़ दिया जाता है।^३ इस प्रकार रहीम के नाम के साथ पूर्वपर शब्द का जोड़कर एक लम्बा नाम—नवाब मिर्जा अदुरहीम खानखाना बरम (या इने बरम) बनता है। हिंदी साहित्य के विद्यार्थी होने के कारण हम उनका छोटा सा नाम रहीम ही अधिक प्रिय है। इसी का प्रयोग हम अपनी पुस्तक में करेंगे।

रहीम के माता पिता

हुमायूँ बादशाह की मृत्यु के समय जलालुद्दीन अकबर की आयु केवल तरह- तरह के चार माह के लगभग थी। राज्य की सुरक्षा के लिए अकबर का राज्यारोहण तो अनिवार्य था किन्तु सवा तेरह वर्ष के कुमार के लिए राज्य संचालन एक प्रकार से असम्भव ही था। इसीलिए दिल्ली के अधिकारियों ने १४ फरवरी १५५६ को अकबर के नाम का कुतबा पढ़ने पर अतालीकी शासन की व्यवस्था कर दी थी।^४ इतिहास साक्षी है कि अतालीकी शासनकाल की भयंकर राजनतिक परिस्थितियों के

१ अकबरनामा—अबुलफत्त अल्लामी (अग्रजी अनुवाद १९०७) जिल्द २ पृ० २०४
२ आइने अकबरी—अबुल फत्त अल्लामी (एच० ब्लाकमन द्वारा अग्रजी अनुवाद १९२७) पृ० ३५४

३ हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास—डा० सर जाज अब्राहम प्रियसन (अनुवाद किंगारीलाल गुप्त १९५७ वाराणसी) पृ० १०८

४ मुगलकालीन भारत—बाबर (अनु० सत्यद अतहर अन्वास रिखवी, अलीपढ़ १९६०) पृ० १८

५ अतालीकी का अर्थ है राजकुमार का शिक्षक

बावजूद भी मुगल साम्राज्य ने अभूतपूर्व मफनता प्राप्त की थी^१ और इका श्रेय था अतालीक बरमखा^२ खानखाना का। बरम खा पहले से ही साम्राज्य के भक्त तथा हुमायूँ के अंतरंग सखा थे।^३ वे युद्ध में अद्वितीय याद्धा सभा में दूरदर्शी मनी तथा सर सपाटा आदि के समय कविता आदि द्वारा हुमायूँ का मनोरंजन करने वाले मित्र थे। यह सत्य है कि भारत में मुगल साम्राज्य की नींव डालने वाला बाबर था किंतु उस राज्य को विस्तृत करने एवं दृढ़ बनाने का श्रेय बरम खा का ही प्राप्त है। सच पूछिये तो हुमायूँ की मृत्यु के पश्चात् कुछ काल तक भारत में उन्हीं का शासन चला। अकबर का नाम मात्र का वादशाह था।

यही बरम खा खानखाना रहीम के पिता थे। बरम की रानिया ता कई थी किंतु सतान किसी से भी न थी। साठ वर्ष की बड़ा आयु में हुमायूँ की इच्छा से बरम ने अपना विवाह आधुनिक हरियाणा प्रांत के (राजपूत कुटुम्ब से सद्य परिवर्तित) जमालखा मवानो की सुंदरी एवं गुणवती कन्या सुल्ताना बगम से किया था। रहीम जस महान व्यक्ति का जन्म देन का श्रेय इसी महिला को प्राप्त है। यह उल्लेखनीय है कि रहीम की माँ की सगी बड़ी बहन का विवाह सघाट हुमायूँ से हुआ था। इस रिश्ते में हुमायूँ तथा बरम का एक दूसरे का साहू बना दिया था।

रहीम का जन्म—एक शुभ शकुन

हिजरी सन् ९६४ में बरमखा का प्रताप अपने पूरे जीवन पर था। उन्होंने हेमू का पानीपत के द्वितीय युद्ध में पराजित करके समाप्त कर डाला था। अतः वे इस आर से निश्चित थे। पारिवारिक निश्चिन्तता प्राप्त करने के लिए उन्होंने अपनी भगवती बगम तथा परिवार के अन्य सदस्यों का पहल ही लाहौर भेज दिया था। हमू-द्रमन के पश्चात् राज्य के उत्तरी भाग में शांति स्थापित करने तथा सिक्खंदर सूर के उत्पात का दबाव के लिए पंजाब की ओर चल पड़े थे। तभी लाहौर में आया हुआ यह शुभ समाचार प्राप्त हुआ कि खानखाना की पत्नी ने एक पुत्र का जन्म दिया है। उनकी यह पत्नी मवात के खान परिवार में से थी।

१ 'चार वर्ष तक बरम खा अल्पवयस्क मुगल वादशाह का अनालीक रहा। इस समय के भीतर भीषण परिस्थितियों पर विजय ही प्राप्त नहीं हुई अपितु मुगल सेनाएँ यथेष्ट आगे भी बढ़ सकीं। काबुल में जौनपुर तक उत्तरी पंजाब की पहाड़ियाँ से अजमेर तक, अकबर का प्रभुत्व मान्य हुआ। खालिफ़ जीन लिया गया और रणथम्भीर तथा मालवा जितने के अनवरत्न प्रयत्न किए गए। गवकर भी मुगल वादशाह का प्रभुत्व मानने का विवग हुए। प्रकट है कि बरम की शक्ति और गौरव को सर्वोपरि पद प्राप्त था।' —मुगल साम्राज्य का उत्थान और पतन—डा० रामप्रसाद त्रिपाठी (अनुवाद कानिगास कपूर) पृ० १४३

२ बरम का तुर्की भाषा में अर्थ है 'उत्सव'।

३ आइने अकबरी—पृ० ३३०

बालक का जन्म गुरुवार १७ दिगम्बर सन् १५५६ ई० का हुआ था। इस तिथि का नाम रखा गया 'अदुरहीम'। 'शृणु भट्ट' नामगाना जन्म के समय सम्बन्ध भी दिए हैं। 'जन्म लग्न' देवदार बालक के अद्भुत उज्ज्वल भविष्य की समाधान प्रकाश का गई थी। अतः इस समाचार को बरम की सेवा में एक महान् शुभ 'गरुड' रूप में गृहण किया। ब्रह्मावस्था में पुत्र प्राप्त कर बरम की की कितना ध्यान हुआ होगा इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। अतः गार्ही दावता के साथ ही मुक्त हस्त रूप भी लुटाया गया था।

१ अक्षर नामा भाग २, पं० ७६

२ एक शृणु पण्डित का नाम आइने अक्षरी में भी धाता है। ये रहीम नामगाना के आश्रित मानूँ पढ़ते हैं। उनके दिए सम्बन्ध—

(क) श्रीधरत वाराह कल्प प्रहृत माता १६७२६४८६१७

(ख) शृष्टितो गतादगण १८५५८८४६१७

(ग) गत कलि ४६१०

(घ) विश्वमय राज्याहतादगण १६१३

(ङ) गार्गिवाहन गार्गा १४७८

(च) अज्ञ तुला गता ३७३

(छ) कर्पा हगण ७२०६३६१४३६५६

(ज) सुप्तरहगण ७१४४०२६२०८६६

(झ) कलेरहगण १७०१२४२

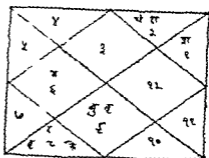
(ञ) अज्ञतुलाहगण १३५६०४

खानखाना नामा—मुनी देवीप्रसाद (कलकत्ता, स० १६६६) पृ० १२०

३ मुंशी देवी प्रसाद जी ने अपनी खोज में प्राप्त तीन जन्म कुण्डलिया का उद्धृत किया इनमें से पहली और तीसरी में चार पहर का अन्तर है। कदाचित् यन् अन्तर दिल्ली के पचाग के कारण उपस्थित हुआ क्योंकि मुंशी जी के पास स० १६०५ से अद्यावधि पचाग एकत्रित थे। ये पचाग गुजरातादि में प्रचलित चण्डू ज्योतिषी (स १५४० से १६२२ वि०) द्वारा प्रचारित पचाग थे। उनकी गणना स अन्तर गुह्य ही जाता है—

सवत् १६१३ ग० १६७८ मागशीघ्र
गुल १४ चन्द्रम० १५ पत्र ३७ परत
शुक्रिमा कृत्तिक नक्षत्रे घ० २६/४६
शिव योगे घ० २४/२० इह शिवसे
सूर्योन्य गत घटी २८/१६ रात्रि गत
घ० २/५५ मिथुन लग्ने लाभ पुरे
खानखाना महाशया नाम जन्मभूता।

—वही, पं० १२६



अनाथ रहीम और अकबरी दरबार

रहीम के जीवन में चढ़ाव उतार विघाता ने आरम्भ से ही लिख लिये थे। वे केवल चार वर्ष के थे कि जीवन तम पर विपत्ति की काली घटा धिर आई। राजनतिक उखाड़ पछाड़ के पश्चात्, पूर्ववत् सम्मान प्राप्त करने वरम खा हज करने के लिए मक्का जाते हुए गुजरात की राजधानी पाटन में ठहरे और एक दिन महाराज जयसिंह द्वारा निर्मित प्रसिद्ध सहस्रलिंग सरोवर में नौका विहार के पश्चात् तट पर उतरे। तभी भेंट करने के बहाने आये हुए अफगान सरदार मुबारक खा लोहानी ने वृद्ध वरम का वध कर लिया। यह घटना ३१ जनवरी, १५७१ की संध्या की है।^१ कहते हैं कि मुबारक ने, माछीवाड़े के युद्ध में मरे^२ अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए ऐसा किया था।

वरम का सारा परिवार अनाथ हो गया। हत्यारा ने अत्यधिक लूट पाट की। किंतु विधवा सुलताना बेगम, बड़ी कठिनाई से बाबा जम्बूर आदि कुछ स्वामिभक्त सेवकों के साथ बचकर अहमदाबाद आ गई। माग में अकबर का संदेश मिला और वह दरबार में आ गई। अकबर ने बड़ी उदारता से इनको शरण दी और रहीम के लिए कहा—इसे सब प्रकार में प्रेम न रखा। इसे यह पता न लग कि खान बाबा सिर पर नहीं हैं। बाबा जम्बूर! यह हमारा बेटा है। इस हमारी दृष्टि के सामने रखा करो।^३ आजाद साहिब ने अपने ग्रंथ दरबारे अकबरी में इस घटना का बड़ा काव्यमय वर्णन किया है। आगे तुक परिवार को अकबर ने सब प्रकार का सम्मान और मुल सुविधा प्रदान की। रहीम का पालन पापण तो एकदम धर्म पुत्र की भांति किया गया थोड़े समय के पश्चात् ही अकबर ने रहीम की पुवती माता विधवा सुलताना बेगम से विवाह कर लिया था।^४ शीघ्र ही सम्राट ने रहीम को मिजा खा का खिताब देकर सम्मानित किया था।^५ उसकी शिक्षा दीप्ता भी अकबर की उदार धर्म निरपक्ष नीति के अनुकूल ही हुई थी। कदाचित इसीलिए रहीम का काय आज भी हिंदू जनता के गले का कण्ठ हार है। दिनकर जी ने उचित ही कहा है—अकबर ने दीन इलाही में हिंदुत्व को जो स्थान दिया होगा, रहीम ने कबिताशा में उसे उससे भी बड़ा स्थान दिया। अतएव यह समझना अधिक उपयुक्त है कि रहीम ऐसे मुसलमान हुए हैं जो धर्म से मुसलमान और सच्चे तसे युद्ध

१ तारीखे फरिश्ता के अनुसार दुघटना का समय प्रातः काल का था जबकि वदायूनी के अनुसार घटना साय को घटी। यही अधिक समीचीन बात है।

२ इसी युद्ध में अफगानों को हराकर वरम ने हुमायूँ से खानखाना का खिताब पाया था।
—अकबर राहुल साहू-पायन पृ० १७६

३ अकबरी दरबार—मो० आजाद (अनु० रामचंद्र वर्मा, स० १९६३) पृ० २२५

४ कश्मिर हिस्ट्री आफ इण्डिया खण्ड ६, स० रिचर्ड वन, पृ० ७८

५ अकबरनामा भाग २, पृ० २०४

भारताय ध ।^१

दुर्भाग्य से यह तथ्य स्पष्ट नहीं कि वह कौन स्वनाम धर्म ध्यति था जिसने रहीम का ऐसी शिक्षा दी कि वह अरब, फारस, तुर्की, सस्कृत तथा हिन्दी भाषा भाषाओं के जानकार ही नहीं, नमक बवि बन नक और मास ही उपोत्तिष, काश्म शास्त्र भाषा पर भी अधिकार प्राप्त कर सक। रहीम की ऐतिहासिक जीवना पर प्रामाणिक षथ प्रस्तुतकर्ता डा० समर बहादुर प्रलवर्तनी तथा अयुन फरन क पश्चात् भारतीय शास्त्रा तथा सस्कृत का विगद एव सन्तुष्टिपूर्ण अध्ययन करने वाले मुसलमानों में मर्यादायम में तृतीय पण्डित रहीम को ही मानते हैं।^२ वैसे रहीम की माना भी विदुषी महिला थी। राजपूतो से परिचरित परिवार की होन क कारण वे उदार भी कम न थी। अत रहीम की गिना में उनका योगदान भी कम न रहा होगा कि तु इतनी उच्च शिक्षा दीना का प्रधान श्रेय, अरब की उर नीति का हा अधिक है चाह वह कितनी ही राजनीति प्रेरित रही ता।

विवाह

राजनैतिक दृष्टि से, अकबर, उमक पिता तथा पितामह विवाह सम्बन्ध का विशय मन्व देने थे। विवाह सम्बन्धों के कारण वे विरोधियों में भल करा दिया करत थे। रहाम क विवाह के सम्बन्ध में भी यही चाल खेली गई। उनका विवाह, बरम क विरोधा, मिजा अजीज काका की बहन माहवानो से सम्पन्न करारकर अकबर ने अकबर विरोध एव विद्रोप का सदाव क लिए समाप्त कर दिया। विवाह अयन सफन रहा। विवाह कितनी आयु में हुआ यह तो निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता किन्तु १६ वय की अवस्था तक रहीम का विवाह हा चुका था।^३

प्रथम गौरव

रहाम ज म से ही कुशाग्र बुद्धि थे। अकबर उन्हें बड़े से बड़े काय सौपता था तथा योग यह देखकर आश्चर्यचकित रह जाते थे कि रहीम अपनी आयु और अनुभव की अपेक्षा कहीं अधिक कुशलता से उन कार्यों को सम्पन्न कर लत थे। अगस्त १५७३ ई० में गुजरातिया में जब सर उठाया तो अकबर ६०० मील की दूरी वायु वेग से पार करके बवल नौ दिन में वहाँ पहुँचा। इस अवसर पर उसने सेना क मध्य भाग का कमान देकर रहीम का गौरवावित किया। स य संचालन का प्रथम शिवाङ्कक अनुभव रहीम को यहाँ प्राप्त हुआ। विजयभी मुगला क हाथ रही और २ सितम्बर १५७३ का वह विद्रोह प्रबल पराक्रम के साथ दबा दिया गया। ५ अगस्त १५७३ का जब विजयो अकबर नीकरी (जिसका नाम इसी उपलक्ष्य में

१ भारतीय सस्कृति के चार अध्याय—डा० रामधारी सिंह दिनकर पृ० ३५६

२ अकबरुद्दौलत खानखाना—डा० समर बहादुरसिंह (प्र० सं०), प० १५

३ मद्रासिन् उल उमरा—शाहनवाज खा—भाग २ (अनु० अजरतनदास, सम्बत १६६५), प० १८३

फतहपुर सीकरी कर दिया गया था) लौटा ता रहीम को बहुत बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ। सम्मान के साथ ही रहीम को पर्याप्त धन और यश की प्राप्ति भी हो चुकी थी। बड़ी बात यह थी कि अल्हद तख्तगार्द म भी वे किसी दुव्यसन के शिकार न थे, जोकि इस युग के अमीरजादों का एक अनिवाय दुभाग्य था। अकबर धन देकर लागा की हरकत का अध्ययन किया करता था।^१ रहीम इस अग्नि परीक्षा में भी खरे उतरे।

द्वितीय गौरव—गुजरात की सूबेदारी

गुजरात विजय के पश्चात् रहीम ने तीन वर्ष, सरस्वती एवं लक्ष्मी की धाराधना में एक साथ व्यतीत किये। सुख सम्मान एवं ऐश्वर्य का तो कहना ही क्या था। किंतु समय धीरे धीरे बढ़ा। गुजरात के प्रशासक खान आग्रम को दरबार में बुला लिया गया। अतः बहा का स्थान रिक्त हो गया। धन जन की दृष्टि से यह प्रांत अकबर के लिए कामधेनु था। राजा टोडरमल की १५७५ ई० की नवीन कर व्यवस्था के अनुसार इस राज्य से शाही खजाने में पचास लाख रुपये की वार्षिक रकम आया करनी थी। अतः इस राज्य के प्रशासन के लिए सर्वाधिक योग्य और सब प्रकार से विश्वासपात्र व्यक्ति की आवश्यकता थी। अकबर ने खूब सोच विचार कर अपने प्रिय मित्र खान का ही गुजरात की सूबेदारी के लिए चुना।

हल्दीघाटी के ऐतिहासिक युद्ध में

रहीम बहुत दिनों सूबेदारी न कर पाये क्योंकि सम्राट ने उसी वर्ष बीर केसरी राणा प्रताप का पराजित करने की योजना बनाकर अपने योग्यतम सरदारों का उसमें भाग दिया था। वह रहीम को कुशल शासक से अधिक कुशल सेनापति बनाना चाहता था। अतः राणा के साथ जून १५७६ ई० के हल्दी के समान पीली मिट्टी की उस भयंकर घाटी में हानि वाला ऐतिहासिक युद्ध के लिए रहीम को भी बुला लिया गया। कन्नल टाड के अनुसार केवल २२ हजार बीर राजपूत हल्दीघाटी की रक्षा करने के लिए उपस्थित थे किंतु विनाल तापखाना और बेगुमार गद्दी लक्ष्मण भी उन पर नियंत्रण न पा सका। हाँ वहाँ केवल आठ हजार रणबाहुरे। इतने भीषण युद्ध का भी निष्णायक न देख, ४ अप्रैल, १५७६ को गद्दीवाजखाने के नेतृत्व में कोमलमेर के राजपूतों द्रुग पर भयंकर आक्रमण हुआ। किंतु बीर राणा ने तब भी घातम समर्पण न किया। रहीम ससय इस आक्रमण में थे। यहाँ कपी सुराही करकी इत्यादि जयगकर प्रसाद की पत्तियाँ बरबस याद आ जाती हैं। किंतु इतना निश्चित है कि रहीम २१-२२ वर्ष की अवस्था में लगभग २ वर्ष उस बीर भूमि में रहे और उन्होंने अनुभवों मुगल सेनापतियों तथा अजय राजपूतों से बहुत कुछ सीखते हुए, शाही सेना की विलक्षण सवाएँ की। अतः ही कि उत्तपुर का इहाने ही जीता था।^२

१ अकबरनामा भाग २ पृ० १६६

२ रहीम रत्नावली—प० मायाशंकर यालिक, भूमिका भाग पृ० ५

मीरमज्र का पद

अवधगी दरबार में कुछ एक पद थे जो विशिष्ट अमीरों को ही नियुक्त किए जाते थे। मीरमज्र का पद भी उन्हीं में से था। मीरमज्र के लिए आवश्यक था कि वह मझान तथा जनता दोनों का ही विश्वासपात्र हो। कारण उस जनता की शिकायतें तथा शिकायतों मझान तक पहुँचा कर गाँधी नियुक्त से जनता का अवगत कराना होता था। मझान दारो दारो से एक दालिन के लिए किसी बड़ मीर को नियुक्त कर रहते थे कि तु एक दालिन में ही वह इतनी रिश्वत प्राप्त कर लेता था जिसका कुछ हिस्सा नहीं। अतः इस पद का कार्य सुचारु रूप से चलता था मझान ने विश्वासपात्र एक सच्च अमीर रहीम को मुस्तजिल (स्थायी) मीरमज्र नियुक्त कर दिया। दरबारी कुछ कुछकर रहे थे कि तु मझान की कृपा और योग्य रहीम का इमानगारी, कोई बड़ ही क्या करता था / यह घटना १५८० की है।

अजमेर की सूबेदारी

यह पद आराम का था कि तु रहीम के भाग्य में—प्रत्येक कमठ व्यक्ति की भाँति—आराम था ही नहीं। तभी अजमेर के उपद्रव का समाचार आया। रहीम का नाम अकबर की जवान पर तथा काम उसके मन पर चला हुआ था। अकबर ने रहीम को ही अजमेर का सूबेदार नियुक्त किया और रणथम्भौर का किला जागीर में देकर उन्हें अजमेर भेज दिया।^१ रणथम्भौर का किला बड़ी ऐतिहासिक किला है जिसे अकबर युद्ध में जय नहीं लेते दस राजा मानसिंह के साथ साठी उठाने वाला था बगलकर गया था। इस तथ्य का विवरण मुसलमान इतिहासकारों ने तो नहीं कनल टाड तथा विसेंट स्मिथ महोदय ने विस्तृत रूप से दिया है।^२ उन्होंने बताया है कि बड़ी ही महती तथा नाममात्र की सधि की शर्तों में अकबर ने लगभग दस वर्ष पूर्व यह किला प्राप्त किया था; विद्रोह भयानक हो सकता था। अतः अकबर ने अपने सबसे योग्य सरदार रहीम को इस कार्य के लिए चुना। रहीम विश्वास के अनुकूल सिद्ध हुए उन्होंने एक वर्ष ही में स्थिति पर प्रायः पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लिया।

सहजादा सलीम के अनालीक

शह सलीम चिन्ती के आशीर्वाद से प्राप्त सतान का न केवल नाम सलीम रखा गया था अपितु उसे प्यार में 'नेत्र बाबा' भी कहा जाता था।^३ मुलताना सलीम अकबर की दासी तथा स्वयं मझान के अतिरिक्त दुतार के कारण सलीम पिशा के पति उदासीन तथा डोट जा गया था। मीरकला और अहमद कुतुबुद्दौल अतया यह तक कि अकबरके जसे विद्वान भी राजकुमार के प्रशिक्षण में असफल सिद्ध हुये थे। अकबर का यह स्वभाव बन गया था कि जो कार्य सल मुलताना उस रहीम का सौंप करता था। अतः बारह वर्षीय राजकुमार के प्रशिक्षण

१ अकबरनामा, भाग ३ पृ ६८०

२ अकबर द ग्रेट मुगल—विसेंट स्मिथ (१८५८) पृ ७० ७१

मझाने अकबरी पृ ३२२

के लिए भी उसकी दृष्टि रहीम पर गड़। निश्चित ही उस समय तक रहीम ने अपनी यादगना, शास्त्र पान तथा कतिपय रचनाया स सघाट को प्रभावित कर लिया हागा। सत्ताइस वर्षीय नवयुवक रहीम यह गौरव प्राप्त कर, अतवृत्य हो गए।^१ अकबर ने रहीम ही नहीं उमकी वेगम तक को बगकीमती पोगाक उपहार के रूप म दी। रहीम की रक्षा करन वाले अरम के बफालार मवका को भी इम अवतर पर विगय रूप स पुरस्ृत किया गया।^२ रहीम ने भी सघाट के सम्मान में एक अभूतपूर्व भाज का आयोजन किया।

दरबारे अकबरी म लिता है कि बादशाह भी वनी पघारे। पानी को वर सना, नदी का बहना और घरम के लडक का उगारता बोन सिवावे। उमन किले से लकर अपने घर तक चानी साने क फूल लुटाय। जय घर पाम आया तब मोती बरसाय। पर पोछने का जगह मलमल और जरी के काम के कपडे विछाय। घर मे सवा लाख रुपय का चबूतरा बनाया। उस पर बादशाह को बठाकर मेंट दी। वह चबूतरा लुटवा दिया। अमीरा का भी उनक पद और मघाटा क अनुमार अनेक विलक्षण पनाय मेंट करक प्रसन्न किया और सब काम करक मय्य प्रमन्न हुआ।^३

अतावेग का पद

अतालीक (राजकुमार क शिक्षक) का काय उत्तरदायित्वपूर्ण होते हुए भी, आराम का था। सघाट भी यह जानत थ। अत अकबर ने एक अय उच्च पद का भार रहीम को सौंप दिया। इसका अधिकारी उस समय अतावेग कहलाता था। लाग अतावेगी का द्यूत बडे गौरव का पद मानत थ। इस पद पर नियुक्त व्यक्ति को गाही घाडा की व्यवस्था तथा अस्तबल की देख रख करनी हाती थी।^४ दोना पदा पर काय करत हुए भी रहीम आराम मे रह सकने थे किन्तु वह समय आराम का न था। उदार धम भावना तथा सुधारवाणी दृष्टिकाण क कारण अकबर न कट्टर हिू तथा कट्टर मुसलमान दाना का फटकारें बताई थी।^५ साथ ही फिरगी मिगन भा अस लुष्ट हा गया था।^६ इस कारण जनता म एक अनभिवाच्छित धार्मिक विज्ञान उत्पन्न हो गया था। अन अधिकारी बग का बडी सावधानी म काय करना पड रहा था। तभी जल से भागे हुए मुजफ्फर द्वारा ४ अप्रैल १५८३ को गुजरात जीतकर, वहाँ की राज धानी अहमदाबाद का अपने अधिकार म कर लेने का दुषद सप्तावार मिला। अकबर की दृष्टि पुन रहीम पर गई और उस २२ सितम्बर १५८३ के सि सेनापति बनाकर गुजरात विजय के लिए रवाना कर दिया गया।

१ घाइने अकबरी पृ० ३५८ तथा मघातिर उल उमरा प० १८३

२ अकबरनामा, भाग ३ प० ५८३

३ अकबरीदरबार भाग ३ प० २४५

४ अकबरनामा भाग ३ प० ५८५

५ जुबततूततवारीख—नूरुल हक (कलियट भाग ६) पृ० १८२

६ अकबर द ग्रेट मुगल—वि सेट स्मिथ, प० १४८

खानखाना की उपाधि

रहीम ने माग में घनेवालेक अगुम समाचार सुने । यह सब का गौरव करना रहा । ३१ अक्टूबर को रात ११ बजे पर मरणांश में उगे बहुत अधिक हुआमाश्रित किया किन्तु वह उलाही नयमुयक बिना निगी की पि ११ दिन, १६ फरवरी १९८३ को अहमदाबाद के निरुत्तर गरीब के मंगल में था हुआ । उस समय गांधी जी का जन्म ११ साल की अवधि में हुआ था । उमर ११ साल की थी । मोर नाम पर दोनन गाँव लोधी गाँव में मंगला करके उसने अज्ञान नाम जी के का था । ११ मरना के बाद अगुमर समझा और जिग राग जीगत का परिषद किया । वह धरम नाम रजोम की ही घोष था । चोगुनी गाँव राग लूण भी मुजगवर बुरी तरह न हाव कर सम्मान की धार भाग गया । विजय पर अहमदाबाद विधानिया न दीशानी माराई तथा रहीम न मुद्र के स्थान पर पर बहुत बड़ा उपाधि लगवाया जिगका नाम राग 'ननहाव' । इनो विजय के उपन १ म, रहीम न अज्ञान जितनी भी सम्पत्ति थी वह सब अमवा उमक मूल्य का द्रव्य दीन दुनिया को दान कर दिया ।—जायक गवत अजायक कोह । खलवार के पानी के साथ उसकी उपाधि का मुयन भा मारा धार पन गया । खडव से भाग बरसान वाली रहीम की भुजा का कल्पनक बनाने वाली मुद्रा कवि की पत्थि के का उल्लेख यहाँ अग्रसारिका न हुआ—

कमल पीठ पर कोल कोल पर कन कनिद फन ।
 फन पति फन पर पट्टमि पट्टमि पर दिगन दीप मन ॥
 सप्त दीप पर दीप एक जय जय तिरियय ।
 कवि मुकुन्द तह भरत खडव उप्परहि विसिदियय ॥
 खानखाना धरम तनम तिहि पर तुष भुज कल्पतह ।
 जगमर्गाहि लग भुज अग पर, लग अग स्वामित बर ॥^१

मुजफ्फर हार ता गया कि तु उसने हिम्मत न छोड़ी और लूट के घन के बल पर फिर प्राय उननी ही सेना एकत्रित कर ली । नाशित मे दाना प तो म पुन भयकर मुठभेड हुई—एकहि एक सकहि नहि जीना ।— कि तु रहीम के भाग्य न उम का साथ दिया । उसकी दूरनिता तथा रिजब मे हाथिया की पीठ पर लदी बन्दूक ने मुजफ्फर को भागने पर विवश कर दिया । ^२ उसक लगभग १०० सनिक^३ पकडे गय । अघिकाग ने क्षमा माँग कर रहीम की सेना में स्थान प्राप्त किया । अकबर

१ आइने अकबरी प० २५४

२ विशेष विवरण के लिए देखिए—अदुरहीम खानखाना—डा० समर बहादुरसिंह प० ४१ से ४७ तक

३ मसालिर उल उमरा प० १८४

४ रहीम रत्नावली—प० मायाशकर याज्ञिक प० ८७ से उद्धृत ।

५ विस्तार के लिए देखिए अकबरनामा भाग ३, प० ६४२ ६४३

६ खानखाना नामा—मुनी देवीप्रसाद भाग २ प० १५

ने फतहपुर सीकरी में जब पहली के पश्चात् दूसरी विजय का समाचार सुना तो प्रसन्नता से नाच उठा। उसने अनेक वीरों की पदोन्नति के परमान जारी किए। रहीम का मनसब पचहजारी कर दिया गया। यही मुगल सरदारों की उन्नति की चरमसीमा थी। केवल अट्टाईस वष की कम आयु में पचहजारी बनने वाला कदाचित्त यह सबसे पहला सरदार था। इतना ही नहीं अकबर ने रहीम को वही उपाधि दी जो उसके पिता की वृद्धावस्था में प्राप्त हुई थी। अब रहीम खानखाना हो गये।^१ वेटा बाप से आगे निकल गया।

गुरु का जोश ठण्डा पड़ गया था। किंतु युद्धों के कारण गुजरात प्रांत की दशा खराब हो चुकी थी। अतः रहीम गुजरात की शासन-व्यवस्था में व्यस्त हो गये। किंतु राजा का प्राप्त होने पर वे अगस्त १५८५ में अकबर के दरबार में उपस्थित हुए जहां उनका विशेष सम्मान स्वाभाविक था। दाना और से उपहारों का भारी आदान प्रदान हुआ। किंतु मुजफ्फर छुट पुट शरारत करता रहता था। अतः खानखाना का पुनः गुजरात भेज दिया गया जहां उसने शांतिपूर्वक शासन व्यवस्था ठीक की। इसी बीच उन अथवा दरबारी कलाकारों के सम्पर्क में आने का अच्छा अवसर मिला। इस समय उसने स्वयं भी साहित्य सृजन किया होगा और साहित्यिक क्रिया कलापा में अपने अवकाश को लगाया होगा।

सम्राट के साथ काश्मीर परिभ्रमण

अकबर के हृदय में काश्मीर भ्रमण की ललक बहुत पहले से थी। अनुकूल अवसर पाकर योजना बनाई गई। रहीम को साथ लेन का निश्चय हुआ। अकबर का परिवार भी साथ रहना था। सलीम स्वयं तो सम्राट से जा मिला कि तु हरम की बेगम इतनी गीघ्रता से न पहुँच सकी। उन्हें प्राप्त करने के लिए अकबर उतावला था। किंतु उन तम पहाड़ी रास्तों पर डालिया का आगे बढ़ना आसान कार्य न था। यह कार्य भी रहीम ही ने पूरा कराया। उस सुरभ्य घाटी में अपने हरम की सुदरिया का पाकर अकबर रहीम का बड़ा उपवृत्त हुआ। इस कार्य के लिए रहीम ने सम्राट से सराहना ही नहीं पुरस्कार भी प्राप्त किये। लगभग एक मास तक प्रकृति की इस सुंदर लीला भूमि का आनंद लेकर अकबर काबुल की ओर बढ़ गया। इस यात्रा में उनके दो हीरे नष्ट गये। इनमें पहले स्वर्ग सिंघारने वाला था टोपेरमल और दूसरा था भगवानदास।^२

रहीम जस सहृदय व्यक्ति ने शाक के इस अवसर पर कुछ अवश्य लिखा होगा साथ ही काश्मीर सुपमा पर भी वे कुछ न कुछ लिखते रहें होंगे। दुर्भाग्य है कि उनमें से आज कुछ भी प्राप्त नहीं। वैसे कोई बड़ा अर्थ तो उन दिनों रहीम नहीं

१ आइने अकबरी पृ० ३५५

२ कम्प्लिज गारटर हिस्ट्री ऑफ इण्डिया— जे० एलन, पृ० २६०

लिय सकते थे क्याकि सिद्धहस्त साहित्यकार^१ संगीतकार^२ तथा मुगल साम्राज्य के सस्थापक बाबर के तुर्की ग्रथ तुज्के बाबरी के फारसी अनुवाद म अस्त ये । पूरा होने पर ग्रथ को मट करने के लिए उ हाने बाबर के जीवन स सम्प्रचित एक ऐतिहासिक स्थान वारीक ग्राम को चुना । १५२५ ई० म हि दुस्तान भ्रात समय बाबर इस स्थान पर ही ठहरा था ।^३ खानखाना ने तजुके बाबरी का यह अनुवाद अनुकूल फजल क अकबर नामा के लिए सम्राट अकबर को आज्ञा से बड़ी सावधानी योग्यता एवं परिश्रमपूर्वक तयार किया था ।^४ मु सी देवीप्रसाद ने अकबर क कानुल से लोटने तथा अनुवाद स्वीकार करने की तिथि मगसिर बदी १३ सम्बन् १६४६ दी है ।^५ कहने की आवश्यकता नहीं अकबर इस अनुवाद का प्राप्त कर असीम प्रसन हुआ था और इस दुष्कर काय के लिए उसे सभी ओर से प्रशंसा प्राप्त हुई थी ।

मुगल दरबार का उच्चतम पद

बकील मुतलक^१ मुगल दरबार का उच्चतम पद था । 'साम्राज्य के सवप्रथम बकाल हान का गौरव खानखाना के पिता बरम खान को प्राप्त था ।^२ टोडरमल के स्वगवास के कारण वह पद रिक्त था । रहीम का भाग्य उस समय जोरो पर था । सम्राट ने उस पर भी रहीम को ही नियुक्त किया और अहमदावाद क बजाय जोनपुर की जागीर दी । रहीम को इस उच्चतम आसन पर लगभग एक वष तक बठने का सुभवसर मिला । १५६० ई० क अ त म परिस्थितिया का लाभ उठाकर अकबर ने क धार की अधिकार मे करना चाहा । इस योजना का नायक भी उसने रहीम को ही बनाने का निश्चय किया ।

१ बाबर प्राकृतिक दृश्या का बडा प्रमी था । उसकी कवित्व शक्ति बहुत कुछ इसी प्रकृति प्रेम के कारण थी । उसकी नुद्धि प्रसर तथा कल्पना शक्ति उच्च थी । उसने तुर्की भाषा का एक दीवान भी लिखा था । उसकी कविताए उच्च और भावपूर्ण हैं । वह तुर्की फारसी दोना भाषाए अच्छी तरह और बड़ी सरलता से लिख सकता था । एक बार उसने हुमायू को प्रतावधानी से लिखने पर डाटा भी था । —मध्यकालीन भारत का सक्षिप्त इतिहास—डा० ईश्वरी प्रसाद (प्रयाग १९५७) प० २८०

२ बाबर संगीत प्रमी था वह थोडा बहुत गा भी लेता था । पर तु गीन लिखना तथा उपयुक्त ताल स्वर म बठाना उम अविक रुचिर था । वह स्वीकार करता है कि कभी कभी गीत लिखन का उतावला हो जाता था ।
—मुगल साम्राज्य का उत्थान और पतन डा० रामप्रसाद त्रिपाठी प० ४६

३ मुगलकालीन भारत—बाबर (अनु० सय्यद अतहर अत्रास रिजवी) प० १८
४ वही प० १६
५ खानखाना नामा—मु सी देवीप्रसाद भाग २ प० २१
६ अमरुदरहीम खानखाना डा० समर बहादुरसिंह प० ७६

इस प्रकार मात्र १५८७ म दिसम्बर १२६० तक का लगभग पीने तीन वष का समय, खानखाना के लिए मान सम्मान, शान्ति एक सुख की दृष्टि स अद्वितीय था। इस बीच उ हान तुज्जे दावरी का अनुवाद तो किया ही, हिन्दी के अन्य ग्रथा की रचना भी की। अक्टूबर क राज्य का शान्ति काल, अनक भाषाविदा का निकट सम्पर्क, कविया लेखका तथा संगीतज्ञो की संगति गा त एव सुखी जीवन और सबसे बत्कर उनकी काय प्रतिभा—य सब ऐसी परिस्थितिया थी कि जिनम रहीम क्या काइ भी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति अच्यो कृति समाज का द सकता है। रहीम के साहित्यिक जीवन म भी यह समय अद्वितीय सिद्ध हुआ।

सिध विजय

मघासिर उल उमरा के यगस्वी लखक ने रहीम के वकील हाने के साथ ही, उससे अगली घटनाघा का वणन करते हुए लिखा है कि, छत्तीसवें वष म इसे मुदतान जागीर म मिला और ठट्टा तथा सिध क प्रा त विजय करन का इसने निश्चय किया। नेख फजो न कस्द ठट्टा म इसकी तारीख निकाली।^१ इस उद्धरण म अन्तिम गल बटे महत्व क हैं। यहा सिध विजय के रहीम के निश्चय का वणन है अक्टूबर की आना का नही। वस्तुत अक्टूबर की आना कधार विजय करने की थी। और इसी के लिए रहीम के सेनापतित्व मे लखर ने लाहौर से कधार का ४ जनवरी, १५६० का वूच भी कर दिया था। कि तु खानखाना अक्टूबर की इच्छा के विपरीत कधार से पूव ठट्टा लेना चाहते थे। एमा क्या? यह एक ऐतिहासिक गुथी है जिसका रहस्य अबुलफजल और खानखाना के बीच हुए पत्र-व्यवहार को दग्ने से समझ म आता है।

अबुलफजल सम्राट अक्टूबर के हिज मास्टस वायस थ। अत क गाही फर माना म ही नही अपितु अपने "यत्किगत पत्रा म भी खानखाना का कधार विजय के लिए प्रेरित कर रहे थे। बार बार वही बात कह जान पर रहीम न स्थिति का विश्लेषण करते हुए लिखा था— कधार का केवल नाम ही मीठा है। वह भूवा देग है। वहाँ लाभ कुछ भी नहीं पर हा, खच बहुत है। इतना खच है कि जिसका कोई हिसाब नहीं है। मैं भूखा हूँ। मरे सिपाही भूखे हैं। यदि मैं वहाँ खाली जब लकर जाऊँगा तो कर्हूंगा क्या? हा, जब मुलतान, सक्कर और ठट्टा तक सार सिध दग म अक्टूबर क नाम का नगाडा बजेगा और समुद्र का किनारा अक्टूबर क अधि कार म आजायेगा तब कधार भी आप स आप हाथ म आजाएगा।^२

खानखाना की बात बडी पुष्ट थी। अत सम्राट न भी बाद का ठट्टा पर अधिकार करने की आना द दी थी। स्वामी क अनुकूल हात ही रहा म दस पुर्नी और दक्षता से काय किया कि गन्धु को मीठा न मिल पाया और नक्की जम सामरिक महत्व के स्थान पर बिना किसी रक्त पात के तुर त अधिकार हो गया। लखी इस

१ मघासिर उल उमरा भाग २, प० १८५

२ अक्टूबरी दरबार भाग ३, प० २६७

लिंग सप्तत धे कपोकि तिद्धमन साहित्यकार^१ गमानकार^२ तथा मुगल साम्राज्य के गव्यापक बाबर क मुर्खी प्रथ मुगल बाबरी क पारसी धनुषा^३ म कल्प धे । पुरा हान पर प्रथ का भेद करी क निग उ ।न बाबर क जीत म मन्त्रिया तक रति हासिक स्यात बाबीर धाम का मुना । १५२५ ई० म फि मुगल धा। समय बाबर इस स्यात पर ही ठग्रा था ।^४ गानगाना न तत्र क बाबरी का यह धनुषा^५ धनुष पजल क धकबर नामा क लिग ससा^६ धाबर की धापा म कनी सावधानी गानगा एक परिश्रमपूर्वक गवार किया था ।^७ मुनी देवीप्रसाद न धकबर क बाबुल म सोने तथा धनुषा^८ स्त्रीरार करी की निवि मगगिर कनी १३ मन्त्र १० ६६ श्री है ।^९ कहने की प्रावश्यता नहीं धकबर दम धनुषा^{१०} का प्राप्न कर धमीम प्रसन्न प्रसा था और इस दुस्तर काय क निग उग सभा धार स प्रगना प्राप्न हुई थी ।

मुगल दरबार का उच्चतम पद

कनीन मुतलक मुगल दरबार का उच्चतम पद था । साम्राज्य क गवप्रथम ककील हान का गौरव गानगाना के गिया बरम गी की प्राप्न था ।^१ टाडरमल के स्वगवास क कारण वह पद रिक्त था । रहीम का भाग्य उग समय जारी पर था । सघाट ने उस पर भा रहीम का हा नियुक्त किया और अहमदाबाद क राजाय जोनपुर की जागीर दी । रहीम का इग उच्चतम धासन पर लगभग एक षप तक बठने का सुभवसर मिला । १५६० ई० क अत म परिस्थितिया का साभ उठारर धकबर ने क धार का अधिकार म करना चाहा । इस याजना का नायक भी उगने रहीम को ही बनाने का निश्चय किया ।

१ बाबर प्राकृतिक हदया का बडा प्रमी था । उसकी कवित्व गक्ति बहुत कुछ कनी प्रकृति प्रम के कारण थी । उसकी बुद्धि प्रतर तथा कल्पना गति उच्च थी । उसने तुर्की भाषा का एक दीवान भी लिखा था । उसकी कविताए उच्च और भावपूर्ण हैं । वह तुर्की पारसी दाना भाषाए अच्छी तरह और बडी सरलता स लिख सकता था । एउ धार उसने हुमायू की प्रसावधानी स लिखने पर डाटा भी था । —मध्यकालीन भारत का सक्षिप्त इतिहास—डा० ईश्वरी प्रसाद (प्रयाग १९५७) प० २८०

२ बाबर संगीत प्रमी था वह थाडा बहुत गा भी लेता था । पर तु गीन लिखना तथा उपयुक्त ताल स्वर म बठाना उस अधिक रचिकर था । वट स्वीकार करता है कि कभी कभी गीत लिखने का उतावला हो जाता था । —मुगल साम्राज्य का उच्यत और पतन डा० रामप्रसाद त्रिपाठी प० ४६

३ मुगलकालीन भारत—बाबर (अनु० सय्यद अतहर अ वास रिजवी) प० १८

४ वही प० १९

५ खानखाना नामा—मुनी देवीप्रसाद भाग २ प० २१

६ अकबरहीम खानखाना डा० समर बहादुरसिंह प० ७९

इस प्रकार मार्च १५८७ से दिसम्बर १५९० तक का लगभग पौने तीन वर्ष का समय, खानखाना के लिए मान सम्मान, शान्ति एवं सुख की दृष्टि से अद्वितीय था। इस बीच उहान तुज्के बाबरी का अनुवाद तो किया ही, हिंदी के अथ प्रयास की रचना भी की। अकबर के राज्य का शान्ति काल, अकबर भाषाविदा का निकट सम्पर्क, कवियां लेखिका तथा संगीतज्ञा की संगति गात एवं सुखी जीवन और सबसे बढ़कर उनकी वाच्य प्रतिभा—ये सब एसी परिस्थितियां थीं कि जिनमें रहीम क्या, कोई भी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति अच्छी कृति समाज का दे सकता है। रहीम के साहित्यिक जीवन में भी यह समय अद्वितीय सिद्ध हुआ।

सिंघ विजय

मघासिर उल उमरा के यशस्वी लेखक न रहीम के वकील होने के साथ ही, उसमें अगली घटनाओं का वर्णन करते हुए लिखा है कि, "छत्तीसवें वर्ष में इस मुनान जागीर में मिला और ठट्टा तथा सिंघ के प्रांत विजय करने का इसने निश्चय किया। नेव फज्जो ने कस्दे ठट्टा में इसकी तारीख निकाली।" इस उद्धरण में अंतिम शब्द बड़ महत्व के हैं। यहाँ सिंघ विजय के, रहीम के निश्चय का वर्णन है, अकबर की आज्ञा का नहीं। वस्तुतः अकबर की आज्ञा कंधार विजय करने की थी। और इसी के लिए रहीम के सेनापतित्व में लश्कर ने लाहौर से कंधार का ४ जनवरी, १५९० को वृत्त भी कर दिया था। कि तु खानखाना अकबर की इच्छा के विपरीत कंधार से पूर्व ठट्टा लेना चाहत थे। एसा क्यों? यह एक ऐतिहासिक गुत्थी है, जिसका रहस्य अबुलफज्जल और खानखाना के बीच हुए पत्र व्यवहार का दस्तावेज से समझ में आता है।

अबुलफज्जल सम्राट अकबर के हिज मास्टस वायस थे। अतः वे शाही फरमानों में ही नहीं अपितु अपने व्यक्तिगत पत्रों में भी खानखाना को कंधार विजय के लिए प्रेरित कर रहे थे। बार बार वही बात कह जाते पर रहीम ने स्थिति का बिलपण करते हुए लिखा था—कंधार का केवल नाम ही मीठा है। वह भूखा देग है। वहा लाभ कुछ भी नहीं, पर हा खच बहुत है। इतना खच है कि, जिसका कोई हिसाब नहीं है। मैं भूखा हूँ। मरे सिपाही भूखे हैं। यदि मैं वहा खाली जब लकर जाऊँगा तो करूंगा क्या? हाँ, जय मुलतान, सखर और ठट्टा तक सारे सिंघ दस्त में अकबर के नाम का नगाडा बजेगा और समुद्र का किनारा अकबर के अधिकार में आजायगा, तब कंधार भी आप से आप हाथ में आजाएगा।^२

खानखाना की बात बड़ी पुष्ट थी। अतः सम्राट न भी बाद को ठट्टा पर अधिकार करने की आज्ञा दे दी थी। स्वामी के अनुकूल ही रहीम ने इस पूर्ण और दक्षता से कार्य किया कि शत्रु का मौका न मिल पाया और लक्की जस सामरिक महत्व के स्थान पर बिना किसी रक्तपात के तुरंत अधिकार हो गया। लक्की इस

१ मघासिर उल उमरा, भाग २, पृ० १८५

२ अकबरी दरबार भाग ३, पृ० २९७

प्रात की बुजी उसी प्रकार समझी जाया था जिम प्रकार बगान का गाधा घोर का मीर की बारहूना । "गक प चाग ट्टा क चागक मिता जाया बेग न जमकर मुड हुमा घोर चार घमागान मुड क उतरा उ उगने गणि का बायथाप का । रहीम भी रसद की कमी क बारण परगान प । घन द गत ताधि क प्रगाव स्वीकार कर लिया ।"

दानो पक्षा क सम्मनित उत्सव पर गानगाना क प्रचारा काय मुन्ना दाकधी ने मसनवी लिगा जिसका ता पक्तियां मह उदूयन है—

हुमाण कि धर घरा कर हो गिराम ।
गिरपती बो घाजाव कर हो मुवाम ॥

घर्यान् हुमा पक्षी (म० जानी) जा घाजाग म प्रगदागुपक रिहार कर रहा था उस (रहीम न) पन्ना घोर फिर जान न मुा कर दिया । गानगाना न ना मुल्ला दाकेवी की काथ्य रना तथा उगन रोगन पर रोऊ कर उग पन हजार असाफियां दा ही यही उपस्थित स्वय मिजा जानी न भा उननी हा अगणियां कबि को पुरस्कार म दी । मिजा जानी न पुरस्कार प्रदान करत हुन क्— गुग का पुन है कि तुमन मुक हुमा बनाया गोट्ट कहन ता मी कोन तुम्ह रात सकता था ।"

३७वां राज्यवर्षी दरवार साहोर म ११ माच १५६५ को हुमा था । घन खानदाना की सिध विजय का यही अत समझना चाण्णि । ट्टा का विजय मुगल साम्राज्य की प्रगिठ विजय थी ।" इतिहासकारा क साथ हा कविया ने भा ट्टा विजय का उल्लेख गौरवगूण ग० । के साथ किया है—

नगर ट्टा की राजधानी धूरि धानी कीट्टी
धरकयो लधारी खानदानो ना हसक म ।

छडि हैं बुषार धौ बुषार न उपार नरे
उजबक उजर क गयो है पलक म ।

पोरि पोरि पेर सेर ठौरि ठौरि बई
खानदाना ध्याये तो अवाज है तसक म ।

पिय भाजे तिय छाडि तिया करे पीउ पीउ
बाबा बाबा विल्लात बालक बलक मे ।

रहीम रत्नावली

१ आइने अकबरी प० ३५६

२ मझासिर उल उमरा भाग २ पृ० १८५

३ मुड के विस्तृत बखान तथा उसके आधार प्र यो के लिए देखिए—अम्बुरहीम खानखाना—६१० समर बहादुरसिंह अघ्याय तीन तथा पृ० ६७ की पाद टिप्पणी

उत्तर के पश्चात दक्षिण

तृष्णा का कभी अंत नहीं होता। यद्यपि बंगाल, उड़ीसा, पंजाब सिंध तथा गुजरात आदि उत्तर पूर तथा पश्चिम के सभी भाग अकबर के अधिकार में आ गए थे परंतु अभी दक्षिण नेप था। इस प्रदेश की स्वतंत्रता मराठा की आखा में पहले से ही सटकती थी। इसके अनिश्चित बरार, बीर अहमदनगर, बीजापुर तथा गालकुण्डा इत्यादि रियासतों वाला दक्षिण प्रदेश आर्थिक दृष्टि से भी पर्याप्त लाभ का क्षेत्र था। अतः सिंध इत्यादि से अकबर को प्राप्त कर उसने अपना समूचा ध्यान दक्षिण की ओर केंद्रित किया। राजकुमार गानियाल का विशाल सना लेकर दक्षिण का ओर जाने की आज्ञा दी गई।

स्पष्ट हाथुका है कि अकबर का हार्दिक विश्वास रहीम पर था। राजकुमार वम भी अनुभवहीन था। अतः कुछ ही दिन पश्चान् उसने आज्ञा दी कि दक्षिण का कूच करना अग्रसर गाही मना रहीम के अधीन समझी जाय और रहीम तुरंत आवश्यक समय सामग्री व साथ दक्षिण की ओर अग्रसर हा। मराठा ने यहां तक आज्ञा दे दी कि दक्षिण विजय के लिए रहीम जितना चाहे उतना धन आगरे के राजकाश से निकलवा ले।^१

रहीम मालवा हाते हुए खान देश पहुँचे और वहां का राजा आलीखा का बड़ी कूटनीति से साम्राज्य के अधीन बना लिया और बाद को अहमदनगर के गढ़ का धरा डाल दिया। इस गढ़ की गार्सिका अनुपम धीरागना तथा सदाचारिणी महिला चाद बीबी थी जो नादिरत उल जमानी अर्थात् सत्तर में अपने जमान की अद्वितीय स्त्री कहलाती थी। सारा दक्षिण उनकी सहायता के लिए प्रस्तुत था। खानखाना इस स्थिति से भयभात न हुए और भरपूर हमल बोलकर किले की लगभग पचास गज लम्बा दीवार बरूद से उड़ा दी। किंतु कमाल का या सुलताना का साहस और शौर्य। उसने रात ही रात में किले की प्राचीर के टूट भाग का कक्कड़ पत्थर धहा तक कि मुर्दों की लाशा से पूरा करा लिया। मुगल इस अनाधारण वीरता से चकित रह गये।^२ निरंतर दो महीने तक घरा पड़ा रहा। दोनों पक्ष भीषण मारकाट तथा व्याघात के अत्यधिक अभाव से परेशान हा चुके थे। अतः संधि हो गई जिसके फलस्वरूप बरार का प्रांत साम्राज्य को मिल गया।

आष्टी का अविस्मरणीय युद्ध

मातमिदुद्दीला दक्षिण की अविजेय शक्ति बन चुका था। उसने शक्तिशाली तापखाना तथा बिगाल लश्कर एकत्रित कर लिया था। क्योंकि मुगला की विजय

- १ य रियासतें १५वीं शताब्दी के अंत तथा १६वीं शताब्दी के प्रथमाद्ध में हिंदू धर्म से परिवर्तित हुए मुसलमानों तथा उनकी सत्ताना द्वारा शासित रही। विशेष अध्ययन के लिए दक्षिण इलियट का इतिहास खण्ड २ (लंदन १८७३), पृ० १८४
- २ मरासिरे रहीमी—इलियट भाग ६ पृ० २४०
- ३ तारीखे फरिस्ता, भाग २ पृ० १६१ तथा अकबरनामा, भाग ३, पृ० १०४७-४८

का अथवा दक्षिणियों के स्वत्व की समाप्ति। अतः वे निर्णायक युद्ध के लिए विवश थे। केवल गोदावरी की धार बीच में थी। घाटी के मदान में २६ जनवरी १५६७ ई० को खानखाना के नदी पार करते ही रणचण्डी का भरव नतन आरम्भ हुआ गया। अतः ततोपश्चात् विजय रहीम की हुई। २५,००० सवारा की विनाल दक्षिणी सेना को केवल ७००० की सेना से हराना रजाम जस याग्य एव साहसी सेना नायक का ही काय था। यह युद्ध सामान्य लड़ाई नहीं थी रणचण्डी का भरव नतन था। शत्रु की चौगुनी के लगभग गति मुगलाना की सत्ता का सर्व के लिए दक्षिण सन्धिदान के उत्साह दक्षिण की समस्त राजसत्ताओं के प्रतिनिधि वीर मुहलखा का मुकाबला और उस पर भी बीजापुरी उत्कृष्ट तोपखाने की मार सभी परिस्थितियाँ हृदय कपा देने वाली थी। पर तु घाय है वीरवर रहीम जा इस युद्ध में बरमर्ता के खानदान का नाम ऊँचा कर गया। वह मुर्दों के नीचे दबकर मर जाने को तो उद्यत था पर तु प्रबल शत्रु का पीठ दिखाकर भागने के लिए नहीं।

ऐसे भीषण नर तहार में आग उगलती तोषों के बीच घण्टे भर रक्तों दूधर होता है पर तु रहीम ३६ घण्टे तक साहसपूर्वक लड़ते रहे— बिना सोये बिना खाये पीये। इस अवसर पर राजा सूरजसिंह जग नाथ दुर्गासिंह इत्यादि ने जो वीरता दिखाई उसक लिए मुगल साम्राज्य सदैव उनका श्रेणी रहेगा। रहीम के लिए तो कहा ही क्या जाय? यदि वे जीवन भर कोई अथ युद्ध न करते तथा केवल यही युद्ध जीत पाते तब भी कुशल सेनापति के रूप में उनका नाम अमर रहता। यही कारण है कि अटुलवाकी, फरिश्ता सफीखाँ, अबुल फजल इत्यादि सभी इतिहासकारों ने इस युद्ध के विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करते हुए रहीम के रण कौशल एव शीघ्र की मुक्त कठ से सराहना की है। स्मरण रहे कि इस युद्ध विजय के उपरांत भी रहीम ने पचहत्तर लाख रुपये बाँटे थे। इतिहासकारों ने ही नहीं कवियों ने भी इस प्रसंग को अपनी काव्य रचना का विषय बनाकर रहीम का गुण गाया किया है—

दक्षिण को जूम खानखानाजू तिहारो मुनि
होत है अचम्भों राजा राय उमराइ के।
एक दिन एक रात और दिन अथए लो

आए जो मुकाबिले की गए ना विराइ के।
बातर के जूमे ते सुमार ह्व ह्व गिरत हैं
भेदें भेदें विवडल ते मारे हैं, सराइ के।
जामनी क जूने सूर सूरज को पडो देलें
भोर राहगोर दरवाजे उयो सराइ के।'

दक्षिण से वापसी

घाटी की महान पराजय ने बीजापुर तथा गानकुण्डा दोनों की कमर तोड़ दी थी। मामूली सा आक्रमण उन राज्यों का आधीन करने के लिए पर्याप्त था। अतः

१ रहीम रत्नावली—प० मायासकर यांत्रिक पृ० ८७ ८८

रहीम ने ग़ाहज़ादे मुराद से योजना के लिए सहायता की प्रार्थना की परंतु खुदा मन्तियों ने मुराद के कान भर रखे थे।^१ अतः उसने इस लाभार्थित याचना को स्वीकृत करके भी बाद में अस्वीकृत कर दिया—

रौल बिगाडे राजकू मोल बिगाडे माल ।

सन सन सरदार की चुगल बिगाडे चाल । —रहीम रत्नावली, पृ० २४

दोना में मल करान के प्रयत्न किए गए परंतु व्यर्थ। अतः सम्राट ने रहीम को दण्ड से वापस बुला लिया। दरबार में उपस्थित होकर रहीम ने अपनी निर्दोषता सिद्ध कर दी और अपनी जागीर की व्यवस्था करने के लिए मालवा चले गए। तभी रहीम के पुत्र हैदरी का दहान्त हुआ गया। वह अत्यधिक मदपान के पश्चात् वैहाग पड़ा था कि भवन में आग लग गई और हैदरी भुन गया। पुत्र के गोच से रूग्णा माँ भी तीन दिन के भीतर ही चल बसी। पत्नी और पुत्र की एक माघ अय्यु से खानखाना पर क्या बीती होगी इसका अनुमान महज ही लगाया जा सकता है। उधर दण्ड में मदिरा-व्यसनी मुराद भी बिना कोई मुराद पूरी किये ही अत्यधिक मस्त्रिापान के कारण परलाङ्गामी हुआ गया।

दक्षिण कमान में पुनः नियुक्ति

इसी वर्ष दण्ड की बागडोर ग़ाहज़ादा दानियाल का सौंपी गई। सम्राट स्वयं भी दण्ड गया और दक्षिण कमान में ही रहीम पुनः नियुक्त हुए। उन्होंने इसी वर्ष अर्थात् १६०० ई० के मई मास में अहमदनगर के किले पर पुनः धरा डाल दिया। बहादुर चादबीबी अपन ही सरदार द्वारा कत्ल कर दी गयी और चार महीने चार दिन के धरे के पश्चात् खानखाना ने किले पर अधिकार कर लिया। अक्टूबर को इस सहाय्य और सफलता से बहुत अधिक प्रसन्नता हुई और वह अप्रैल मई १६०१ में सीकरी लौट आया। राजधानी लौटते समय वादगाह ने खानदेश रखकर उसे सुन्तान दानियाल को ही दे दिया और उसकी शादी खानखाना की लड़की जान बगम से कर दी।^२ हिन्दी कवि तथा काव्य प्रेमी हान के कारण वैसे भी दानियाल रहीम का स्नेह पात्र था। रहीम वास्तुकला से भी प्रेम रखते थे। अक्टूबर में अहमदनगर के किले की मरम्मत का भार भी रहीम को सौंपा था।^३

दानियाल तथा अक्टूबर की मृत्यु

दण्ड काय की प्रगति प्रारम्भ ही हुई थी कि अप्रैल १६०४ में दानियाल की जान भी ग़राब ने ले ली। दानियाल के बल पर ही रहीम दण्ड में अबुल

१ चातुर्वारिता के प्रवणुणा तथा दुष्परिणामा का बड़ा आज़मय एक चित्रात्मक कथन अबुलफ़ज्ज न बरमला के अत से सम्बंधित प्रसंग में किया है जो पठनीय है। देखें अक्टूबरनामा खण्ड २, पृ० २००

२ मद्रा० उमरा० भाग २, प० १६०

३ आइन अक्टूबरी प० ३५७

का भय था दक्षिणिया के स्वत्व की समाप्ति । घत वे निर्णायक युद्ध के लिए
 विफल थे । केवल गोदावरी की घाट बीच म थी । घ्राष्टी के मदान म २६ जनवरी
 १५६७ ई० को खानखाना के नदी पार करते ही रणचण्डी का भरव नतन आरम्भ
 हो गया । आततोगत्वा विजय रहीम की हुई । २५ ००० सवारों की विशाल दक्षिणी
 सेना का केवल ७००० की सेना स हराना रहीम जैसे योग्य एव साहसी सेना नायक
 का ही काय था । यह युद्ध सामा य लड़ाई न थी रणचण्डी का भरव नतन था ।
 ग्यु की चौगुनी के लगभग गति मुगलों की सत्ता को सर्व के लिए दक्षिण से मिटा
 देने का उत्साह दक्षिण की समस्त राजसत्ताओं के प्रतिनिधि वीर मुद्देलखाना का
 मुकाबला और उस पर भी बीजापुरी उकृष्ट तापलाने की मार सभी परिस्थितिया
 हृदय कपा देने वाली थी । पर तु घाय है वीरवर रहीम जा इस युद्ध में बरमत्ता के
 खानदान का नाम ऊचा कर गया । यह मुर्तों के नीचे दबकर मर जाने की तो उधत
 या परतु प्रवल ग्यु का पीठ दिखाकर भागने के लिए नहीं ।
 ऐसे भीपण नर संहार म भाग उगलती तोपा क बीच घण्टे भर रुकना
 दूमर होता है पर तु रहीम ३६ घण्टे तन साहसपूर्वक लडते रहे — बिना सोये बिना
 पाये पीये । इस भ्रवसर पर राजा सूरजसिंह जग नाथ, दुर्गासिंह इत्यादि ने जो वीरता
 दिखाई उसने लिए मुगल साम्राज्य सर्व उनका श्रेणी रहेगा । रहीम के लिए तो
 कहा ही क्या जाय ? यदि वे जीवन भर कोई भ्रय युद्ध न करत तथा केवल यही
 युद्ध जीत पाते तब भी कुगल सेनापति के रूप म उनका नाम धमर रहता । यही
 कारण है कि अदुलवाकी फरिदता सफीलौ, अबुल फजल इत्यादि सभी इतिहासकारों
 ने इस युद्ध के विस्तृत बखान प्रस्तुत करते हुए रहीम के रण कौशल एव शौर्य की
 मुक्त कठ से सराहना की है । स्मरण रहे कि इस युद्ध विजय के उपरांत भी रहीम ने
 पचहत्तर लाख रुपये बाँट थे । इतिहासकारा ने ही नहीं कवियों ने भी इस प्रसंग को
 अपने काव्य रचना का विषय बनाकर रहीम का गुण गान किया है—

दक्षिण को जूम खानखानाजू तिहारो मुनि
 हात है भ्रवम्नों राजा राय उमराइ के ।
 एक दिन एक रात और दिन भ्रयए लो
 घाए जो मुकाबिले को गए ना बिराइ के ।

घासर के जूने ते मुमार ह्य ह्य गिरत हैं
 भेदें भेदें विवडल ते मारे हैं सराइ के ।
 जामनी क जूने मूर मूरज को पडो दलें
 मोर राट्गोर दरवाने ज्यों सराइ के ।'

भयात

दक्षिण से घायसी

घाष्ठी का महान पराजय न बाजापुर तथा गानकुण्ग पोना की बमर लाठ दी
 थी । मामूनी या भावमग्न उन राजा का प्राधीन करने क लिए पयाप्त था । घत
 ? रहीम रत्नावली—प० मायागकर घायिक पृ० ८७ ८८

हीम न शाहजादे मुराद से याजना व लिए सहायता की प्रायना की परंतु सुगान्तियो ने मुराद के बाल भर रये थे।^१ अतः उसने इस लाभार्थित योजना को स्वीकृत कर भी बाद में अस्वीकृत कर दिया—

रीत बिगाड़े राजकुं मौल बिगाड़े माल ।

सन सन सरदार की, चुगल बिगाड़े चाल । —रहीम रत्नावली, पृ० २४

दाना में मल कराने के प्रयत्न किए गए परंतु व्यय । अतः सम्राट ने रहीम को दण्डित कर वापस बुला लिया । दरबार में उपस्थित होकर रहीम ने अपनी निदोषता सिद्ध कर दी और अपनी जागार की व्यवस्था करने के लिए मालवा चले गए । भीरु की पुत्र हैदरी का दहात हा गया । वह अत्यधिक मत्पान के पश्चात् हांग पडा था कि भवन में आग लग गई और हैदरी भुन गया । पुत्र के गोक से गला मां भी तीन दिन के भीतर ही चल बसी । पत्नी और पुत्र की एक साथ मृत्यु । खानखाना पर क्या बीना होगी इसका अनुमान महज ही लगाया जा सकता है । अतः दण्डित भी बिना कोई मुराद पूरी किये ही अत्यधिक दिरापान व कारण परलाकामी हो गया ।

दक्षिण कमान में पुन नियुक्ति

इसी वर्ष दण्डित की बागडोर गहजादा दानियाल का सौंपी गई । सम्राट स्वयं भी दण्डित गया और दक्षिण कमान में ही रहीम पुन नियुक्त हुए । उन्होंने इसी वर्ष अर्थात् १६०० ई० के मई मास में अहमदनगर के किले पर पुन घेरा डाल दिया । हादुर चांदबीबी अत ही सरदार द्वारा कत्ल कर दी गयी और चार महीने चार वर्षों के घेरे के पश्चात् खानखाना ने किले पर अधिकार कर लिया । अकबर को इस सहायक और सफलता से बहत अधिक प्रसन्नता हुई और वह अप्रैल मई १६०१ में सीकरी लौट आया । राजधानी लौटते समय बादशाह ने खानदेश का नाम दानदश रखकर उम सुल्तान दानियाल को ही दे दिया और उसकी शादी खानखाना की लडकी जान बगम से कर दी ।^२ हिंदी कवि तथा काव्य प्रेमी होने के कारण बसे भी दानियाल रहीम का स्नेह पात्र था । रहीम वास्तुकला से भी प्रेम रखते थे ।^३ अकबर ने अहमदनगर के किले की मरम्मत का भार भी रहीम को सौंपा था ।^३

दानियाल तथा अकबर की मृत्यु

दण्डित काय की प्रगति प्रारम्भ ही हुई थी कि अप्रैल १६०४ में दानियाल की जान भी गराव ने ल ली । दानियाल के बल पर ही, रहीम दण्डित में अच्युत

१ चाटुकारिता के अवगुणा तथा दुष्परिणामा का बडा आजमय एव चित्रात्मक कण्ठ अनुपपन्न ने बरमखा के अत से सम्बंधित प्रसंग में किया है जो पठनीय है । देखें अकबरनामा खण्ड २, पृ० २००

२ मन्ना० उमरा० भाग २ पृ० १६०

३ आइने अकबरी प० ३५७

का अथवा दक्षिणिया के स्वत्व की समाप्ति। अतः वे निर्णायक युद्ध के लिए विवश थे। कवल गादावरी की धार बीच में थी। ब्राह्मी के मदान म २६ जनवरी १५६७ ई० को खानखाना क नदी पार करते ही रणचण्डी का भरव नतन प्रारम्भ हुआ गया। अ ततो गत्वा विजय रहीम की हुई। २५ ००० सवारों की विशाल दक्षिणी सेना का केवल ७००० की सेना सहाना रहीम जैसे योग्य एवं साहसी सेना नायक का ही काय था। यह युद्ध सामान्य लड़ाई न थी रणचण्डी का भरव नतन था। दन का उत्साह दक्षिण की समस्त राजसत्ताओं के प्रतिनिधि वीर सुहेलखा का मुकाबला और उस पर भी बीजापुरी उत्कृष्ट तापसाने की मार सभी परिस्थितियों हृदय कपा देने वाली थी। पर तु घाय है वीरवर रहीम जो इस युद्ध में बरमखा के खानदान का नाम ऊंचा कर गया। वह मुर्तों के नीच दबकर मर जान का तो उद्यत था परतु प्रवल गुरु का पीठ दिखाकर भागने के लिए नहीं।

ऐसे भीषण नर सहार में प्राय उगलती तापा के बीच घण्टे भर रुकना दूमर हाता है परतु रहीम ३६ घण्टे तक साहसपूर्वक लड़ते रहे—बिना सोये बिना साय-पीये। इस अवसर पर राजा मूरजसिंह जगनाथ दुर्गासिंह इत्यादि ने जो वीरता दिखाई उसक लिए मुगल साम्राज्य सन्व उनका श्रेणी रहेगा। रहीम के लिए ता कहा ही क्या जाय? यदि वे जीवन भर कोई अथ युद्ध न करत तथा केवल यही युद्ध जीन पाते तब भी कुगल सेनापति के रूप में उनका नाम अमर रहता। यही कारण है कि अडुलवाकी, फरिस्ता सफीखा, अबुल फजल इत्यादि सभी इतिहासकारा ने इस युद्ध क विस्तृत वणन प्रस्तुत करते हुए रहीम के रण वीरल एवं शीघ्र की मुक्त कठ संसाराहना की है। स्मरण रहे कि इस युद्ध विजय के उपरांत भी रहीम ने पचहत्तर साय शाय बाँट थ। इतिहासकारा ने ही नहीं कवियों ने भी इस प्रसंग को अपनी काव्य रचना का विषय बनाकर रहीम का गुण गान किया है—

दक्षिण की जूम खानखानाजू तिहारो मुनि
हात है अचम्भों राजा राय उमराइ क।
एक दिन एक रात और दिन अथए ली
घाए जो मुकाबिले की गए ना बिराइ के।
बासर क जूमे ते मुमार ह्य ह्य गिरत हैं
भेदें भेदें विवडल ते मारे हैं सराइ क।
जामनो क जूने मूर मूरज की पखो दखें
मोर राहगोर दरवाजे ज्यो सराइ क।'

अज्ञान

दक्षिण से यापता

घाटा का महान पराजय न बीजापुर तथा गानकुण्डा नामा की कसर लाठ दी थी। मामूना गा अन्नमग उन राज्या का घोषित करत क निग पयाप्त था। अतः १ रहीम रत्नावली—५० मायागकर यागिक पृ० ८३ ८८

रहीम ने शाहजादे मुराद से योजना के लिए सहायता की प्रार्थना की परंतु खुशा मन्तियों ने मुराद के यान मर रखे थे।^१ अतः उसने इस लाभार्थित योजना को स्वीकृत करके भी बाद में अस्वीकृत कर दिया—

रोल बिगाड़े राजकू मोल बिगाड़े माल ।

सन सन सरदार की, चुगल बिगाड़े चाल । —रहीम रत्नावली, पृ० २४

दाना में मल कराने के प्रयत्न किए गए परंतु व्यर्थ। अतः सम्राट ने रहीम का दक्षिण से वापस बुला लिया। दरबार में उपस्थित होकर रहीम ने अपनी निर्दोषता सिद्ध कर ली और अपनी जागीर की व्यवस्था करने के लिए मालवा चले गए। तभी रहीम के पुत्र हैदरी का देहांत हुआ गया। वह अत्यधिक मदपान के पश्चात् ब्रह्मण पडा या कि भवन में आग लग गई और हैदरी भुन गया। पुत्र के शोक से शणा माँ भी तीन दिन के भीतर ही चल बसी। पत्नी और पुत्र की एक साथ मृत्यु से खानखाना पर क्या बीती होगी इसका अनुमान महज ही लगाया जा सकता है। उधर दक्षिण में मदिरा व्यसनी मुराद भी, बिना कोई मुराद पूरी किये ही अत्यधिक मन्त्रिपान के कारण परनाकगामी हो गया।

दक्षिण कमान में पुनः नियुक्ति

इसी वर्ष दक्षिण की बागडोर शहजादा दानियाल का सौंपी गई। सम्राट स्वयं भी दक्षिण गया और दक्षिण कमान में ही रहीम पुनः नियुक्त हुए। उहाँने इमी वर्ष अर्थात् १६०० ई० के मई मास में अहमदनगर के किले पर पुनः घेरा डाल दिया। बहादुर चाचबीबी अपने ही सरदार द्वारा कत्ल कर दी गयी और चार महीने चार दिन के घरे के पश्चात् खानखाना ने किले पर अधिकार कर लिया। अक्टूबर को इस सहयोग और सफलता से बहुत अधिक प्रसन्नता हुई और वह अप्रैल, मई १६०१ में सीकरी लौट आया। राजधानी लौटते समय बादशाह ने खानदेश का नाम दानदेश रखकर उस मुरतान दानियाल को ही दे दिया और उसकी शादी खानखाना की लड़की जान बगम से कर दी।^२ हिन्दी कवि तथा काव्य प्रेमी होने के कारण वैसे भी दानियाल रहीम का स्नेह पात्र था। रहीम वास्तुकला से भी प्रेम रखते थे।^३ अक्टूबर ने अहमदनगर के किले की मरम्मत का भार भी रहीम को सौंपा था।^३

दानियाल तथा अक्टूबर की मृत्यु

दक्षिण काय की प्रगति प्रारम्भ ही हुई थी कि अप्रैल १६०४ में दानियाल की जान भी शराब ने ले ली। दानियाल के बल पर ही, रहीम दक्षिण में अबुल

१ चाटुकारिता के अचगुणा तथा दुष्परिणामा का बड़ा मोजमय एवं चित्रात्मक वृत्त अखुलफज्ज न बरमखा क अत से सम्बंधित प्रसंग में किया है जो पठनीय है। देख अक्टूबरनामा खण्ड २, पृ० २००

२ मन्ना० उमरा०, भाग २ प० १६०

३ आइने अक्टूबरी प० ३५७

पत्न जगा की मरणा रहा था। प्रत उगना मृत्यु के रोग पर न केवल रामानुजी की मृत्यु का ब्यापक हुआ अनिष्ट प्रविष्टा का भी जबरन घबरा गया। मग इस बीच रहीम तथा उगन पुन मित्रा इरीष बहादुर मणि के ली दुःखनीय मर ता-मलिक मम्बर तथा राजू दणिणी म उमभते रहे थे। कई बार उ द पराग भी किया कि-तु उनका पूरा दमन त हा पाया था। तभी १७ १० १६०५ म वह विनयाग प्रतिभा-संगमन विश्व विख्यात सम्राट् मकबर, मतार म उठ गया।

जहाँगीर का राज्य-काल और रहीम

यद्यपि सलीम न कई बार विद्रोह करके पूरे निराश व दुःख की भारी कष्ट दिया था कि तु घटना उत्तने विता म घाल-नामणु कर हा िया था। मकबर ने भी मृत्यु से पूर्व सलीम (जहाँगीर) को राज्य का म अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया था। एक सप्ताह तक विता की मृत्यु का मोह मनाने व पत्नी २६ मकतूबर १६०५ ई० का जहाँगीर (जन्म ३० ४ १५६६) ३६ वष की अवस्था म सिहासनासुद्ध हुआ। साधिया व असहयोग व कारण गागाना बहूत विनिम थे। प्रत उ हाने भारी मेट भेजी तथा दरबार म उपस्थित हाने की माग माँगी। तब ता नहीं ही (जहाँगीर व) तसीय जनुसी वष म तानगाना दरबार म बुलाय गय। अपने ही विषय को सिहासनासीन देग तानगाना भाव विभार हा गय। जहाँगीर-नामा म इस घटना का उल्लेख करते हुए स्वय सम्राट ने लिखा है—

‘एक पहर िन चद्र घुसा था, जबकि तानगाना जो हमारे अधिभावक हान व उच्च पद पर चुना गया था बुरहानपुर से भाकर तथा म उपस्थित हुआ। प्रतप्रना तथा भानद ने उसे ऐसा दबोक रना था कि वह यह नहीं समझ सका कि सर व बल प्राया है कि परा पर। वह घबराकर हमारे परा पर गिर पडा। हमने दया तथा श्रुता कर उसके सिर को उठाया और प्रम व साथ क्षालियन करके उसक मुग का घुम लिया। वह हमारे लिए मोनिया की दो माता कुछ साल तथा पत्ने सामा था। उन सब रत्ना का मूल्य तीन लाख रुपए था।’

१ २ मलिक मम्बर का जन्म एबीसीनिया की ह-गी जाति म हुआ था कि-तु वह दक्षिणभारत की अपना वास्तविक देश मानता था वह स्वय मुतजा निजामशाह के प्रधानमन्त्री का काम करता था। उसने अपनी पुत्री का विवाह भी उसस कर दिया था। दूसरा प्रमुख निजामशाही ममोर या राजू दणिणी। उसका भी जीवन बड़ी साधारण स्थिति से प्रारम्भ हुआ था। विनोय मध्यमनाथ देखिए मन्तुररहीम खानखाना पृ० १६० १६१

३ सलीम के शासन समय पर मकबर की बेटे के लिए माली चाँटे, पटवार रोय लीज आत्म सत्तोप तथा स्नेह के प्रभावी चित्रण के लिए देखिए—

४ जहाँगीर का आत्मचरित (मनुवादक बाबू प्रजरत्नदास) प० २१७ १८

खानखाना नीतिमान व्यक्ति थे। उनके व्यक्तित्व में अत्या का प्रभावित करने की अद्भुत शक्ति थी। जहागीर भी प्रभाव में आये बिना न रहा। जहागीर ने रहीम को मुह मागी दस लाख रुपये की राशि तथा बारह हजार सवार तथा अपनी और से शाह अब्बास का भेजा सर्वोत्तम घोडा देकर दक्षिण को पुन सम्मान वापस भेज दिया।^१ इसके अतिरिक्त शहजादा परवेज का भी दस लाख रुपये तथा अर्ध सामान देकर सयद सेफ खां वारहा के सरक्षण में रहीम की सहायताय विदा किया।^२ बालक और बूढ़े का साथ कैसे निभता? खानखाना का ६३ वर्ष की अवस्था में अल्पवय भोजन होना पडा और ग्रहमदनगर का जीता जिताया दुग उनके हाथ से निकल गया। यद्यपि इस हार का उत्तरदायित्व रहीम पर न था परंतु फिर भी विरोधिया ने सघाट के कान भर दिये तथा उन्हें अपनी जागीर अथान् काली तथा कनौज जाकर वहा की अर्गांति का दमन करने की आना मिली।^३ यह घटना जहागीर के पाचवे जनुसी वष की है।

सदा से सम्मानित रहीम को अकारण जिस अपयश तथा अनादर का सामना करना पडा उसे दृढ़ सेनापति भाग्य की प्रतिकूलता समझ कर पी गया। कदाचिन् तभी उसने लिखा होगा—

रहिमन चुप हूँ बठिये देखि दिनन को फेर ।

जब नीके दिन आइ हैं बनत न लगि है देर ॥

रहीम रत्नावली, प० १८

अवकाश के दो वर्ष

पदच्युत सिंह अपना समय गाति से बिता रहा था। उस समय रहीम का दरबार सगीतशा, कविया तथा कलाकारा से आपूरित था। उसन साहित्य रचना को प्रात्साहन दिया और स्वयं भी साहित्य सजन किया। २० मार्च, १६१० को प्रारम्भ होने वाले पांचवे जनुसी वष में रहीम दरबार में पहुँचे थे और १६ मार्च १६१२ को प्रारम्भ होने वाले जनुसी वष तक अपनी जागीर में रहे।

दक्षिण में पुन नियुक्ति

विरोधी लोग दरबार में बठकर आह जा कह लेते हैं कि तु रहीम क अति रिक्त दक्षिण का कार्य किसी अर्ध के बस का न था। मलिक अम्बर की रग केवल रहीम ही पहचानते थे। अत उनके लीप्तते ही, दक्षिण से नित्य प्रति बुरे-बुरे समाचार प्राप्त होने लगे थे। जहागीर को बहुत चिंता हुई। समा में गम्भीर रीति से विचार करके रहीम का पुन दक्षिण भेजने का निश्चय हुआ। फलस्वरूप दरबार में बुलाकर

१ जहागीर का आत्मचरित्र (धनुषादक, अजरतनदास) पृ० २२०

२ अकबरी दरबार, भाग ३, पृ० ३४६

३ मन्ना० उमरा, भाग २ पृ० १६१

उह विनय रूप से सम्मानित किया गया। उनका ही नहीं उनके पुत्रा के भी मसब बढ़ा दिए। जहाँगीर ने उस सब का पथक पथक बखान किया है।^१ दक्षिण पहुँचने पर रहीम ने अमृतपूर सतकतापूरक काय आरम्भ किया। भूटनीति द्वारा खानखाना के बड़े पुत्र शाहनवाजखाने ने अम्बर के बहुत से सरदारों को अपनी ओर मिला लिया और पुन उही की सहायता से अम्बर की दुबडियों पर विजय प्राप्त की। छोटे पुत्र दाराक ने तो अम्बर को और भी कड़ी पराजय दी थी। इस सबका जहाँगीर ने बड़ा सराहनापूरण बखान किया है।^२ इतना ही नहीं उसने शाहनवाजखाने की पुत्री से सहजादा सुरम (शाहजहाँ) का विवाह २३ अगस्त १६१७ को सम्पन्न कराने के पश्चात उने भी दक्षिण कमान पर नियुक्त कर दिया और स्वयं भी विशाल सेना के साथ मॉड्रु म आ बटा तथा वहा से चारा और को शांति दूत भेजे।

शक्ति क भय से बीजापुर के आदिलशाह तथा गोलकुडा के कुतुबशाह ने पद्रह पद्रह लाल रूप की मॉट देकर अनुकूल सधियाँ कर ली। दुर्जेय अम्बर ने भी अहमदनगर तथा अय दुर्गा की बुजियाँ सोन दी। इस प्रकार छ सात मास म ही अमृतपूर सफलता प्राप्त हो गई। इसका बहुत बडा अय रहीम के साथ ही गहजादे को भी था। अत उस तीस हजारो २०००० सवार का मसब 'शाहजहाँ' की पदवी तथा तख्त क पास की बुर्सी पर बठने का स्वत्व प्रदान किया गया। यह अतिम तास डूपा थी जा तमूर के समय से कभी किसी को प्राप्त नहीं हुई थी। इस सम्मान से विनूयित शाहजादे शाहजहा ने अपने अधिकार का समुचित उपयोग करक विजित प्रदेश की सुअर व्यवस्था स्थापित की तथा खानखाना को उस व्यवस्था का सपहसालार नियुक्त किया। उसने शाहनवाजखाने को भी उच्च पद प्रदान किया। उसी क छोटे भाई अयात खानखाना के चौथे पुत्र अमरुल्ला^३ ने, हीरा की सुप्रसिद्ध गोडवाना की हीरे की कान पर अधिकार प्राप्त किया। हीरा के पानी तथा सुअरता म बड चढकर होते हैं और जीहरीगण इनको आदर से देखते हैं।^४ गोडवाना इतना प्रसिद्ध था कि आगे चलकर एक पद म भूषण ने शिव प्रससा म दक्षिण के अय प्रसिद्ध क्षत्रो के साथ इसका भी उल्लेख किया है—

मालवा उज्जैन मनि भूखन मलास ऐन
सटर सिराज लों परखने परत हैं।
गोडवानो तिलगानो, किरगानो करनार
खलिलानो, रुहिलाने हिये हहरत है।

१ जहाँगीर चरित प० २६१

२ वही प० ३७६

३ जहाँगीर चरित प० ५३१

४ अमरुल्ला रहीम का दासी पुत्र था। अरबरी दरबार, भाग ३ प० ३८५

शाहनवाजख़ाँ तथा रहमानदाद की मृत्यु

खानखाना अपने पुत्रों की सहायता से दक्षिण के प्रबन्ध का मुचाह रूप दही रह घे कि बीरता के कारण छोटे खानखाना के नाम से पुकारे जाने वाले उसके वीर किन्तु पियवकड पुत्र शाहनवाजख़ाँ की तृतीस वष की अल्पायु में गाराव ने जान ले ली। मुसीबत वभी अकैली नहीं आती। खानखाना की पल्ले सूपन भी न पाइ थी कि तभी अघ स्वस्थ अवस्था में भार्द्दाराय की सफल सहायता से लौटकर चोगा उतारत हुए ठग लगन के तीसर दिन ही रहमानदाद की मृत्यु हो गई। सम्पूर्ण ग़ाही सेना तथा स्वयं जहांगीर गोक सागर में डूब गया, वृद्ध खानखाना के शाक का तो कहना ही क्या। जहांगीर ने स्वर्गीय शाहनवाज के छोटे भाई दाराव के मसजद का पचहजारी तक बढ़ाकर, जडाऊ खिलहत तथा अहमदनगर के अध्यक्ष पद से सुगोभित कर पिता के पास भेज दिया।^१ इसके अनिरिक्त शाहनवाज के दा पुत्रा मनाचहर तथा तुगरल का जमग दा हजारी, १००० सवार तथा एक हजारी चार सौ सवार का मसजद प्रदान किया।

इन सब से स्वर्गीय वीरो की क्षतिपूर्ति कैसे होती ? मलिक अम्बर की चढ वनी। दु खी खानखाना की एक भी न चल सकी और उसने बुरहानपुर में धिरे परिवार के साथ जौहर करने का निश्चय जहांगीर का लिख भेजा। वह उस समय काश्मीर विहार में निमग्न था। आख खुलन पर उसने तुरत शाहजादा गुरम (जहांगीर) का आना दी ' जिस प्रकार अकबर ने फुर्ती से कूच करके, खानेआजम की गुजरातिया से रक्षा की थी, उसी प्रकार तुम खानखाना की रक्षा करो।^२ जहांगीर ने दिसम्बर १६२० में दक्षिण पहुँच कर शत्रुआ से निपटने में कमाल की सफलता प्राप्त की। जहांगीर ने विजय की सराहना करते हुए, ईरान के शाह की भेजी हुई एक लाल बलगी शाहजहाके लिए उपहार स्वरूप भेजी।

रहीम विद्रोही शाहजहा के साथ

शाहजहाँ की सफलताआ तथा उसके व्यक्तिगत गुणों के कारण साम्राज्यी मूरजहा उसमें सशक थी। विशेषत उस समय जबकि जहांगीर का स्वास्थ्य नित्य प्रति चौपट हाता चला जा रहा हा। उसने अपनी कपटपूरण चालों से जहांगीर का शाहजहा के विरुद्ध कर दिया। शाहजहा ने अनेक बार और अनेक प्रकार से अपनी सफाई प्रस्तुत की कि तु मज्ज बढ़ता गया ज्या ज्या दबा की। यहाँ तक कि उसके दल के लिए सीकरी के मुख्य द्वार बंद कर दिय गये। अत उसका विद्रोही बनना स्वाभाविक था। साम्राज्य के राज्य विस्तार का सारा श्रेय शाहजहाँ का ही था। धौलपुर काण्ट को लेकर भी उसके साथ आयाय हुआ था। प्राय सभी निष्पक्ष लोग यह मानते थ कि साम्राज्य के उत्तराधिकार क सर्वाधिक योग्य वही था फिर खानखाना की ता नानिन भी उससे ब्याही थी। अत उसने

१ जहांगीर अरिक्त प० १६६

२ मसजद उमरा० भाग २ प० १६३

गाहजहाँ का साथ लिया। सम्राट जहाँगीर को जब यह सूचना मिली तो बहुत बर्बाया। उसने अपने पुत्र का तो जा कुछ कहा सा कहा ही, अपने सत्तर वर्षीय अभिभावक रहाम को राजदाहा कृतघ्न तथा भेडिया इत्यादि कहकर खूब कोसा।^१

एक स्थल पर आकर विद्वाना तथा ऐतिहासज्ञा ने रहीम के चरित्र के सम्बन्ध में भिन्न धारणाय व्यक्त की हैं। कुछ इतिहासकार तो सम्राट के कथन पर मक्षिका स्थान मारि राखकर उह लालची व राज्यद्रोही इत्यादि बताते हैं जबकि कुछ उनके कृत्य का देग भक्ति समझत हैं। हम अपना मत तो यहाँ प्रकट नहीं करेंगे पर तु प्रसंग वग मुगलकालीन इतिहास के पंडित तथा अनेक फारसी इतिहास ग्रन्थों के अनुवाक बाबू ब्रजरत्नदास का मत उद्धृत करना चाहेंगे। रहीमन विलास की मूमिका में उटाने लिया है—

नपाव अन्दुरहीम खानखाना दा बीन्या का समय देण चुके थ। वे ऐसे खानना नही थ कि चाहे लाभ के लिए किसी घोर किमल पडते। उहने बहुत कुछ साच समझकर किसी माग पर अग्रसर हान का निश्चय किया होगा सराव घोर नूरजहाँ के प्रेम में पडकर बादगाह अपने योग्य पुत्र का नाग किया चाहता था। इस समय गाहजहाँ का पग लना स्वामिभक्त सनका थ लिए भी राज विद्रोह नही करता सकता उत बेगम विद्रोह की पदवी ही दी जा सकती है। दोनों घोर से निचा हाकर चुपचाप बठ रहना घोर साम्राज्य का नाग देपना अवश्य स्वामी शाह या दग दाह था।^२ जा भी हा सम्राट न रहाम का राजदाही की सजा अवश्य ली था।

खानखाना क पुराने विराधा महावतगों का विद्रोहियों का पीछा करने को घागा हुई। जहाँ अपने पय क राडे शाहजहाँ स करता लने का नूरजहाँ क लिए यह स्वरा अवसर था वही रहीम क चिर विरोधी महावन के लिए भी अपने वर तापन का समय उपयुक्त अवसर घोर क्या हा सकता था? अत उसने अत्यंत दृढ गति में खानखाना का पीछा किया किन्तु लीए पृथिन पर नवना क सत् की घाहजहाँ का मना द्वारा मन्वया अवश्य पाया।

रहीम क माये का मलक

महावतगों जानना था कि बार घाहजहाँ तथा अनुभवाना मनागति रहाम स पार पाना गरम नही। अत उनन गम्भ का अनेना कूनानि का माग पकरा। वह भा ता उभा अगाडे का निनाशा था घोर सबका नाग पहचानना था। अत सरगारा का माभज्यानच क मुल पय निगहर अनेक का अपना अपना धार निना लिया। उनका गम्भ दहा गतना था विद्रो मना क स्तम्भ वत नाग रा का अपना धार

१ जहाँगीरनामा प० ७२

२ जहाँगीर न स्वयं स्थाकार किया है कि उन १ मर गराब १/२ मर कबाब तथा नूरजहाँ क अतिरिक्त गाह का किना बाग म का वाम्ना नही।

३ इतिमन विलास—ब्रजरत्न १म प० ३

तोड़ लेना । 'वह गाह जहाँगीर की जय, शाह जहाँगीर की जय चिल्लाता हुआ गाही सेना में जा मिला ।'^१

तभी शाहजहाँ के जासूस तकी ने खानखाना के दूत को पकड़ लिया । यह दूत खानखाना का पत्र लेकर महाबतख़ाँ के पास जा रहा था । उस पत्र के आरम्भ में ही एक गैर लिखा हुआ था जिसका अर्थ था—

सौ मनुष्य हमे अपनी दृष्टि में रखे हुए हैं
नहीं हम इस कष्ट से उठकर चले आते ।

तकी से यह पत्र प्राप्त करके शाहजहाँ अवाक और आश्चर्यचकित रह गया । किसी का यह आगा म्यन्न में भी न थी कि खानखाना ऐसा पत्र लिखेगा । शाहजहाँ की आँखें प्रत्यक्ष का भी सत्य नहीं मान रही थीं । आश्चर्य, क्रोध और ग्लानि से भरे शाहजाद ने खानखाना को बुला भेजा । जब उह पत्र लिखाया गया तो दाक के तीन पात बताने के अतिरिक्त उत्तर ही क्या था । पता नहीं शाहजहाँ क्या कर डालता परन्तु परिस्थिति उसके अनुकूल न थी । अतः केवल इतना ही किया कि गैर के अनुसार उन पर कड़ी नज़रें रखने का प्रबंध कर दिया और हुक्म दिया कि उनके परिवार का डेरा उसके स्वयं के डेर के पास रहा करे, जिससे कि खानखाना के क्रिया कलापा पर व्यक्तिगत रूप से दृष्टि रखी जा सके ।

शाहजहाँ की स्थिति अच्छी न थी । अतः उसने राय भाज हाडा के पुत्र बुलाराय को मध्यस्थ बनाकर महाबतख़ाँ से संधि का प्रस्ताव किया । संधि को क्या चाहिए दा आँखें । परन्तु वह चाहता था कि किसी प्रकार खानखाना शाहजहाँ से अलग हो जाए । अतः कहला भेजा कि जब तक खानखाना स्वयं ही आकर बात न करे तब तक कोई संधि नहीं हो सकती । मरता क्या न करता । शाहजहाँ ने यह भी स्वीकार कर लिया । जहाँगीर ने इससे आगे के वृत्तांत को विस्तार से लिखा है । उसने बताया है कि शाहजहाँ ने अपने स्त्री बच्चा को खानखाना के सामने लाकर पवित्र कुरान की पाथ खिलाई और अपनी प्रतिष्ठा को उसके हाथ सौंप दिया । खानखाना संधि की बातचीत निश्चित करने के लिए वेदौलत (शाहजहाँ) से अलग होकर गाही सेना की ओर बना । यह निश्चिन हुआ था कि खानखाना नदी के इसी पार रहकर पत्र व्यवहार द्वारा संधि की बातचीत करें ।^२

दुभाग्य से शाहजहाँ की यह योजना पूरी न हो सकी । शाही सैनिक किसी प्रकार नदी पार करने में समर्थ हो गये और बरमवेग की देख रेख में तनात शाहजहाँ के सैनिक तितर बितर हो गये । खानखाना घम सक्कट में थे । नदी के दोनों तट गाही सेना के अधिकार में थे । अतः पीछे शाहजहाँ के पास लौट कर जाना न था आसान था और न ही खतरे से खाली । खानखाना का चित्त दौलायमान था । तभी उस शाहजादा परवेज़ के पत्र मिले जिनमें खुशामद धमकी और भय आदि सभी

१ जहाँगीर चरित पृ० ७६४

२ जहाँगीर चरित पृ० ७६६

कुछ था। अतः खानखाना महावतखान की अध्यक्षता में परवेज़ की सेवा में उपस्थित हो गये। फिर तो परवेज़ की बन आई। वह शाही हुक्म के अनुसार शाहजहाँ की मुगल राज्य की सीमा से बाहर कुतुबुलमुल्क के राज्य की ओर लडेड कर तुरहानपुर लौट आया। यह घटना १६२३ ई० के अंतिम चतुर्थांश की है।

शाहजहाँ परवेज़ के गिरिवर में रहीम की मानसिक स्थिति बड़ी विचित्र थी। उनका हृदय शाहजहाँ के दिल में पड़ा था। शाहजहाँ का साथ सत्य का साथ था। कुरान की शपथ के द्वारा भी वह शाहजहाँ से बंध के ओर लौकिक दृष्टि से उनका पुत्र पौत्रादि तथा शाहजहाँ की अध्यक्षता में था। और शाही पक्ष में मिल जाने के कारण उन पर कुछ भी बात सकती है उस खानखाना जसा चतुर व्यक्ति एवं समझना था। कि तु परवेज़ के सनिका ने नदी पार करते ही खानखाना तथा शाहजहाँ के गिरिवर के मध्य का मार्ग कुछ इस प्रकार अवरोध किया होगा कि वे शाही गिरिवर में जाने की विवका हो गये थे। यह साचना कि दुनियागारी के विचार से वह महावत खान के पाम चला गया था—गलत है।

माने चलकर हुआ भी वही जिसकी धाराका थी। स्थिति कुछ इस प्रकार बिगड़ी कि शाहजहाँ की राय लिये बिना ही उसका एक सरदार अब्दुला गाने के दाराब के निरपराध परिवार अर्थात् स्त्री पुत्र पुत्री की स्वर्गीय शाहजहाँ खान के एक बच्चे सहित मौत के घाट उतार दिया। इतिहास में वे पट्टे राज भी मामूली और बगुनाह मून के छोटी ग लाल हूँ। अपराध गाराज का था कि वह बचनउद्द हाते दूण भी समय पहले पर शाहजहाँ की सहायता के लिए न आया था पर तु भुगतना पड़ा था और बच्चा का। अद्भुत है विधि का विधान और विचित्र है राजनीति— निया जिस न भरा किसी ने।

अमानुषीय व्यवहार

महावतखानों से स्वयं दाराब भी न बच सका। शाही सना न बगाल पर अघि कार कर लिया। शाहजहाँ ने बगाल का जान कर उम समय दाराब को सौंप दिया था। शाही सना का पकड़ में आने पर जमींदार का एगारा पात ही महावतखानों ने उम ओर मुक्क का गिर बाण डाला। हम नगम सनापति का खानबता यही शाह न हूँ अरिनु उमन के मुठ का रमान में नकर और एक याला में रगकर अमाने निना के पाम भज दिया और अन्ववाया कि यं तरजूज भजा गया है। अग्रगण्य नवा में अब उद्द ने अयन एक मान गय नीतिगत के कट गिर का देगा उगकी सरगशाना बाया में मन्गा निकत पडा था— तरजूज गहाना अस्त । तय आत्रा मानिक न हम एय पर बना कागिक लिपगिया का १।

१ म० अ० उमरा माग १० १६३

२ तरबत गहोती है। यहाँ शाह के अचरित अय के अनिरित तरजूज का एक रिश्म का भा गारा अस्त थ।

३ अंगिक अकरवा दरबार १० १३१

खानखाना की दरबार में वापसी

खानखाना के दुख और दुर्भाग्य की सीमा न थी। इधर परिस्थितियाँ भी बदल रही थी। अपने राज्य के वीसवें वर्ष में जहांगीर ने खानखाना को मुक्त कराने के पश्चात् दरबार में बुला लिया था। चलते समय महावतखा ने उन्हें अत्यधिक आदर तथा शाही ठाठ वाट के साथ विदा किया। महावत खाता था कि अब रहीम का हृदय अपनी छार से साफ कर दे। दरबार में पहुँचने पर रहीम का बहुत अधिक सम्मान किया गया। दोनों पक्ष लज्जित थे। इधर खानखाना जमीन से आखें ऊपर न उठाते थे। उधर जहांगीर स्वयं को अपराधी अनुभव कर रहा था। खोज पश्चात् ताप, क्षमा तथा सौजन्यता के उन क्षणों का बखान करते हुए सम्राट जहांगीर लिखते हैं— मैंने कहा कि जो जो बातें घण्टि हुईं वे सब भाग्य की वाने हैं। न तुम्हारे अधिकार की हैं, न हमारे अधिकार की। इस कारण अब तुम अपने मन में यथ लज्जित और दुखी मत हो। हम अपने आप का तुमसे अधिक लज्जित और दुखी पाते हैं। जा कुछ हुआ सब भाग्य से ही हुआ। हमारे अधिकार की वान नहीं है।^१

दोबारा खानखानानी

जहांगीर ने विविध प्रकार से रहीम का मनोमालिन्य दूर करने का प्रयत्न किया। स्थिति सुधारने के लिए उन्हें एक लाख रुपये तथा कनीज की जागीर दी गई। साथ ही पूर्व प्रजित खानखाना की उपाधि भी लौटा दी गई। उपर्युक्त रहीम ने निम्नलिखित शेर अपनी अगूठी पर खुदवाया—

मरा लूक जहांगीरी जे ताई दोत ख-वानो ।

दोबार निदगी दाद दोबार खानखानानी ॥^२

अथवा जहांगीर की कृपा और ईश्वरीय समर्थन ने मुझे पुनः जीवन तथा खानखानानी प्राप्त की। अब रहीम पर नूरजहा की भी कृपा दृष्टि हो रही थी। मुगी दबीप्रसाद जी ने उन्हें नूरजहा द्वारा १० लाख रुपये अपनी सरकार दान का उल्लेख किया है।^३ क्योंकि महावतखा परबज के उत्तराधिकार का समर्थन कर रहा था^४ जबकि वह अपने दामाद शहरयार का उत्तराधिकारी बनाना चाहती थी। चालाक मलका ने गतिगाली राजकुमार गहजहा को अगस्त कर लिया था। अब वह

१ अकबरी दरबार भाग २ पृ० १७३

२ म०आ० उमरा भाग २ पृ० १६६

३ खानखानानामा, भाग २ पृ० ६६

४ 'परबेज वादगाह का प्यारा वेटा था। परन्तु नूरजहा ने उसको नहीं बहने दिया और मुरम का बटया क्योंकि उसके भाई आसिफ खाँ की बटी ताजबीवी मुरम का ब्याहो थी। परन्तु जब अपने पट की बटी (गेर अफगन में) का विवाह शहरयार में हो गया तो शाहजहा का बल घटाने लगी।

सेनापति महावत से पथक करके गहजादा परवेज को शक्तिहीन करना चाहती थी जिससे कि जामाता शहरयार को राजगद्दी प्राप्त करने की अधिक कठिनाई न हो। अतः उसने महावत खाँ का दरबार में बुला भेजा। पुराना सेनापति यह सब समझना था। दूरदर्शिता से उसने अपने साथ ७००० विश्वास पात्र वीर ले लिए। इनमें से अधिकांश प्राण यौद्धावर करने वाले राजपूत थे।

महावत खाँ का विद्रोह

यह घटना १०३६ हिजरी की है। इसी सन में समाप्त होने वाली पुस्तक अनफोले अक्बर के लेखक मोहम्मद अमीन लिखते हैं—'जब महावत खाँ राजाना पाकर दक्षिण से लौटा तब सम्राट काश्मीर में थे। माग में नूरजहा के भाई आसफ खाँ से उसका (महावतखाँ का) भगडा हो गया। यह भगडा इतना बड़ा कि युद्ध ठन गया।'^१ इसमें विजय महावत खाँ की हुई। उसने न केवल आसफ खाँ को बन्धन में डाल दिया अपितु साही दरबार को भी अधिकारपूर्वक घेरे में बाध लिया। उसकी आना के बिना न तो सम्राट से कोई मिल ही सकता था और न उन तक पत्र ही सीधे पहुँचते थे। सब और महावत के विश्वस्त राजपूत बंधे हुए थे। यह स्थिति छ मास तक रही। बाद में नूरजहाँ की सतकता कूटनीति तथा साहसपूर्ण प्रयत्नों से इस स्थिति पर काबू पाया गया। मुगी देवीप्रसाद ने इस स्थिति का बड़ा नाटकीय विवरण दिया है और लिखा है इस प्रयत्न में वह एक बार नदी में गोते खाते हुए डूबते डूबते बची।^२ स्थिति के नियन्त्रण में आने तक महावत खाँ तो भाग गया कि तु उसके ३००० साथी तलवार के घाट उतरवा दिये गये।

रहीम पुनः सेनापति

यद्यपि महावत खाँ ने रहीम व प्रति आर्द्र और उदारता दिखाई थी। किंतु वह उह दिल्ली भजने तथा वहा से पुनः लाहौर की ओर कूच कराने में सफल हो गया था।^३ अतः महावत के भागने के समय रहीम सम्राट के आस पास ही थे।

गमूता ता पुरानी थी ही। अपने प्रति किये गये अत्याचारा तथा दाराब की हत्या को भी वे न भूले थे। वे उस दुष्ट से प्रतिगोध लेना चाहते थे। अतः रहीम ने बहुत ही नम्रतापूर्वक हादिक कामना पत्र करते हुए सम्राट की सेवा में निवेदन पत्र भेजा कि 'स नमकहराम का दंड देने की सेवा मुझे प्रदान की जाए।'^४

अपने को क्या चाहिए—दो आंग। नूरजहा उस सप का सर कुचलना चाहते ही थी। महावत जैसे रण कुशल तथा वीर का सफलतापूर्वक मुकाबला कर सकने वाले एकमात्र रहीम ही थे। अतः उसने प्रायना को सह्य स्वीकार कर लिया और बिल्ली के भागा छोड़कर दूटने के लिए भगवान को हजार बार घ यवाद दिया।

- १ इतिवत् पृष्ठ ६ पं २४६
 २ पानखानानामा भाग २ पं ६४
 ३ अक्बरी दरबार भाग २ पं ३७५
 ४ वही पं ३७५

वेगम ने उसकी (महाबत खाँ की) जागीर खानखाना को बतन (रूप) में प्रदान कर दी। सात हज़ारी सवार का मसब, दा व तीन घोड़ों वाली खिलमल, जडाऊ तलवार, जडाऊ जूनि सहित घाड़ा, खाने का हाथी नकद वारह लाख रूपय, घाड़े ऊँट और बहुत नी सामग्री प्रदान की। साथ ही अजमेर का सूबा भी प्रदान किया गया। मेनाप्रा सहित अमीर भी साथ कर दिये गए।^१

रहीम का प्राणान्त

रहीम के वृद्ध शरीर में अब इतनी शक्ति नहीं रह गई थी कि इन महान गान्ही सेवाओं के भार का सहन कर पाते। सारा जीवन दौड़ धूप में बीता था। प्राण प्रिया पत्नी के वियोग का कष्ट सदा और सही थी अपने चारा वीर पुत्रों के मृत्यु की वेदना। इतना ही क्या अन्तिम समय के तिरस्कार, अनादर, मासूम पौत्रों की निमम हत्या और सबसे ऊपर हृदय कोष देन वाले उस गान्हीदी तरबूज के दान इत्यादि अनेकानेक हृदय विदारक घटनाओं ने उस वृद्ध के शरीर को और भी जबर कर दिया था। वे अन्तिम विजय यात्रा का श्रोगण भी ठीक से न कर पाये थे कि लाहौर में ही बीमार पड़ गये। उन्हें दिल्ली बहुत प्रिय थी। वे दिल्ली में ही मरना भी चाहते थे। यही तुमायू के मकबरे के समीप उहीन अपनी बीबी का मकबरा बनवाया था। दिल्ली आकर उन्होंने अपनी जावन-यात्रा समाप्त कर दी। अतः उन्हें उसी मकबरे में दफनाया गया।

जहागीर के अतिथय राग-ग्रन्थ हो जाने के कारण घटनाओं तथा तिथियों का उल्लेख ठीक प्रकार से न हो पा रहा था। अन्तिम तीन वर्षों के लेखक मुशी माहमाद हादी की कोतह कलमी के कारण खानखाना जस महान् व्यक्ति की मृत्यु तिथि अज्ञित न हो पाई। मोतमिदवा के 'इकबालनामे जहाँगीरी' में भी तिथि अज्ञित नहीं है। जैसे कहने वाला ने तारीख कही थी—'खाने सिपहसालार का।' इससे १०३६ हि० के मध्यवर्ती महीना अथवा जमादि उलसानी या रजब का ज्ञान होता है। मुगी देवी प्रसाद की पचास गणना के अनुसार, ये मास फाल्गुन सं० १६८३ या चैत्र संवत् १६८४ में बैठते हैं।^२ अतः हम समझते हैं कि खानखाना की मृत्यु माच या अप्रैल १६२७ में हुई होगी। क्या उनकी जन्मतिथि प्रारम्भ में दो हज़ार कुण्डली के अनुसार माघ-शुक्ल १४ सं० १६१३ (१७ १२ १५५६) है। अतः मृत्यु के समय उनकी आयु ७० वर्ष और तीन चार मास की होगी। निष्कर्ष यह है कि खानखाना की मृत्यु अथवा कुण्डली के इक्वत्तरवें वर्ष के प्रारम्भ में हुई।^३ टा० समरबहादुरसिंह का यह कथन "१६२७ ई० में वह बहत्तर वर्ष की जीवन-यात्रा समाप्त कर इस ससार से चल बसा"^४—बहुत ग़ुद प्रतीत नहीं होता। उन्होंने भी खानखाना का जन्म दिनांक वृत्स्पतिवार १७ दिसम्बर

१ अकबरी दरवार भाग ३ पृ० ३७५

२ खानखानानामा भाग २, पृ० ६६

३ अकबरहीम खानखाना पृ० २३१

४ वही पृ० ५

१८५६ ई० माना है।^१ ७२ वर्ष की जीवा यात्रा समाप्त करने का वर्ष हुआ १७ दिसम्बर, १६२८ ई० के बाद का समय जबकि ७ नवम्बर १६०७ का जहाँगीर भी स्वयं सिंघार चुना था।^२ और तानसाना की मृत्यु उसका जीवा पाल में घर्षान् १६२७ ई० में निश्चित है और तूति यह बात क्रतु के प्रारम्भिक दिना में बादगीर गया था। रहीम की मृत्यु से सम्बंधित सारा घटना घन इही दिना के प्राप्त-याप्त माच प्रप्रल का है।

एक भ्रम और उसका निराकरण

रहीम की जीवनी का सिंघावलावन करने पर हृदय में यह भ्रम उत्पन्न हो सकता है कि उनका सारा जीवन राजनीति की गुत्थियाँ गुनमान तथा मुझा की मुसीबता में व्यतीत हुआ, फिर उ हान काव्य रचना कब की? परतु य प्रन कोरा भ्रम है। प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति चाहे किसी परिस्थिति में रहे काय कर ही डालते हैं। बाबर न समर प्राणण के वर्षा और तूपान में बठ कर साहित्य रचना करने का स्वत उत्लेख दिया है।^३ रहीम के समसामयिक बीरबल^४ टोडरमल^५ इत्यादि भी बडे व्यस्त जीव थे परतु वे भी का य रचना करत थे। यहा तक कि स्वयं अकबर भी यथा रुचि छु बनाया करता था। प्राज भी हम सर जाज प्रियसन जस प्रशासन-व्यस्त पाश्चात्य मनीषिया तथा स्वनामय य जवाहरलाल नहरू जसे भारतीयो का विपुल साहित्य सम्प्राप्त है।

अकबर के राजत्व काल में हिंदी शीपक लप में प्राचाय महावीरप्रसाद द्विवेदी ने भी इस प्रश्न पर विचार किया था। उनका कथन है— प्राप्य का सामना साहित्य की नहीं ब द कर सकता। योग सादो के समय फारस में कौन बडी साति थी। फिर वे किस तरह गुलिस्ताँ और बोस्ताँ जसी महान् कृतियाँ लिख सक ? अरब में कितने ही कवि ऐस हो गये हैं जि ह बहुत कम समय गाति और सुख नसीब हुआ। पर इससे उनके कविता कलाप में बुद्ध भी बाधा नहीं आई। वेगव के बुदेलखण्ड में अशाति थी मूपण वे का य काल में बराबर मुझ होते रहते थे। कवियो की कविता की जित समय स्फूर्ति होती है उस समय देश की अशाति

१ वही प० १७७

२ कम्ब्रज हिस्ट्री प्राफ इण्डिया सर रिचाड बन (१६५७) प० १७७

३ मुगलकालीन भारत बाबर अनु० स० अतहर अबास रिखवी नूमिका
वृति सु दरी तिलन —सर जाज प्रियसन हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास
(अनु० किंगोरीलाल—वाराणसी १६५७) प० ११५

४ बीरबल तथा टोडरमल की रचनाप्रा के लिए देखिए डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल
का ग्रन्थ अकबरी दरवार क हिंदी कवि (स० २००७ लखनऊ) प्रमश

का उन पर बहुत कम असर होता है ।^१

अतः रहीम जैसे जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति के साहित्य का दखकर भी किसी प्रकार के भ्रम की गुंजायश नहीं है ।

व्यस्त जीवन में अवकाश के क्षण

रहीम के जीवन का अध्ययन कर लेने के उपरान्त यह आसानी से पाता किया जा सकता है कि उन्हें अपने कायकाल में कइ कइ महीनों और कभी कभी तो कइ कइ वर्षों तक अवकाश तथा शांति के ऐसे अवसर प्राप्त होते रहे हैं जो साहित्य रचना के सवधा अनुकूल थे । यहाँ संक्षेप में उनकी सूची उपस्थित की जाती है—

१ चार वर्ष की अवस्था से आगे का विद्याजन तथा बाल्यकाल का गमस्त समय जो अकबर की व्यक्तिगत देख रेख में व्यतीत हुआ । सोलह वर्ष तक की अवस्था का यह समय एकदम शांति सुख तथा कलापूर्ण दरबारी वातावरण में व्यतीत हुआ था ।

२ सत्तरहवें वर्ष में रहीम को सम्राट अकबर के साथ गुजरात में विजय प्राप्त हुई । इसके पश्चात् वे लगभग तीन वर्ष दरबार में रहे । गुजरात के प्रांतपति इस अवधि के पश्चात् नियुक्त हुए थे । इन वर्षों का उपयोग भी रहीम ने साहित्य सेवा में किया ।

३ गुजरात की सूबेदारी के पश्चात् रहीम दो वर्ष महाराणा प्रताप के साथ उलझे रहे । वहाँ से लौटने के पश्चात् सन् १५८० अर्थात् आयु के चौबीसवें वर्ष में उनकी नियुक्ति मीर अजक सम्मानपूर्ण पद पर हो गई थी । इस पद पर कार्य करने का अवसर तो उन्हें चाहे ही दिन मिला कि तु जितने भी दिन दरबार में रहे मौज से रहे । मीर अजक का काय न ता परिश्रम का था और न किसी बड़ी सिरदर्दी का । अतः इस समय के शांत एवं भारमुक्त मस्तिष्क का रहीम ने अवश्य ही साहित्य रचना में लगाया होगा । स्मरणाय है कि यह अवकाश अत्यंत अल्प था ।

४ गुजरात से मुक्त होने के पश्चात् रहीम १६ मार्च १५८७ को दरबार में उपस्थित हुए । तब से लेकर सिंध के लिए खाना होने की तिथि ४ जनवरी, १५९० तक, रहीम को पुनः स्वयं अवसर प्राप्त हुआ । इस वार इन्होंने शाही परिवार के साथ काश्मीर की सुरम्य घाटियों का भ्रमण किया था । लगभग पौने तीन वर्ष का यह समय रहीम न मस्ती के साथ व्यतीत किया । इसी बीच नवम्बर, १५८६ के अंतिम सप्ताह में, उन्होंने तुर्की ग्रन्थ वाक्यांत वावरी का फारसी अनुवाद सम्राट अकबर को समर्पित किया । इसी अवकाश में उन्हें मुगल साम्राज्य के उच्चतम पद (वकील मुतलक) पर कार्य करने का अवसर मिला । खानखाना की उपाधि उन्हें पूर्व ही मिला चुकी थी । सुख सम्मान, सुविधा तथा सम्पन्नता आदि सभी दृष्टियों से बत्तीस चौतीस वर्ष की भरपूर तरुणावस्था का यह कालावधि रहीम के जीवन का

६ समालोचना समुच्चय आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी (१९३० इनाहाबाद)

प्रद्वितीय समय था। ऐस जीवन क पीने तीन वष ता क्या पीने तीन दिन का समय काव्य रचना की दृष्टि स वर्षों क सम्प जीवन की प्रपणा कहीं अधिक काव्य है।

५ उन्हें सि घ विजय क पञ्चात माघ १५६३ स मिनम्बर १५६३ तक छ महीने क लिए दरबार म रहने का एक और स्थानिण प्रवमर प्राप्त हुआ था।

६ इसके परचात रहीम दक्षिण की विजया म स्थित रह। कुल मिलाकर दक्षिण म उहाने लगभग तीस वष व्यतीत निय। यद्यपि वे समय समय पर दरबार म बुलाय जाते रहे परंतु वास्तविक प्रयों म उन्हें अवकाश का उत्तलगनीय प्रवमर प्राप्त नहीं हुआ। हाँ लगभग ५५ वष की प्रवस्था म वे दक्षिण स बुलाए गय थे। उस समय पञ्च्युत सेनापति के रूप म लगभग दस वष अपनी जायदाद वानगी म काट थे। यह अवकाश पहले अवकाश की भांति न तो शांतिपूर्ण था और न सम्पन्नतापूर्ण। इतना अवश्य है कि व पदा क भारत म मुक्त थ। उन दोहा की रचना इसी समय की प्रतीत होती है जिनस उनकी विगनता लि नता तथा विरक्ति इत्यादि टपकी पड रही है।^१

७ इस अवकाश स भी कुरे दिन उह राज्य विद्रोही के रूप म महावतवा की हिरासत म काटने पडे थ। लज्जा तथा ग्लानि स भरे इसी समय म दाराव की गदन क तरबूज तथा पीत्रा का निमम हत्या म इस घूरे सिंह के हृदय पर क्या बीती हागी इसका अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। इस घोर गोक के समय म विस का काय और कसी कविता।^२

८ मर्मांतक पीडा के उस अवकाश के परचात् प्रगला और अंतिम समय तब मिला जब जहागीर ने उह दोबार खानखानानी तथा एक लाख रुपये प्रादि देकर सम्मानित किया था। किंतु क्रम म पर लटका कर बडे हुए अभिभावक के घावो पर मरहम लगाने का प्रयत्न प्राय य ही था। सम्भव है भक्ति के कुछ दाहे उसी समय लिखे गये हो।

सारांश तथा निष्कष

रहीम के जीवन का ऐतिहासिक अध्ययन कर लेने क परचात् हम उनके सम्बध म निम्नलिखित निष्कर्षों पर सरलतापूर्वक पहुँच सकते हैं—

१ रहिमान उतरे पार नार भौक सब नार मे। १० रत्ना० (याज्ञिक) प० १५

यारो यारो छोडिये वे रहीम अब नाहि ॥ वही प० २

रहो न काहू काम की सत न कोऊ लेय। वही प० ४

सख बढयो उद्यम घटयो नपति निडुर मन कीह ॥ वही प० ५

दुदिन परे रहीम कहि भूलत सब पहिचानि। वही प० १०

नहि रहीम कोऊ लखयो गाढ दिन को मित्त। वही प० १०

सदा रहै नहि एक ली का रहीम पछतात ॥ वही प० २५ इत्यादि इत्यादि

२ यद्यपि कविता का जन्म ही शोक कर्षणा एव दुख से माना जाता है परंतु रहीम का जसा का य प्राप्त प्राप्ति है वह उस मन स्थिति की उपज प्रतीत नहीं होती।

१ रहीम, अकबर के अभिभावक, इतिहास प्रसिद्ध वैरमखाँ खानखाना के, इतिहास प्रसिद्ध पुत्र थे।

२ रहीम का जन्म सलीमा बेगम के गम से लाहौर में गुरुवार १७ दिसम्बर १५५६ तथा मृत्यु मात्र अप्रैल १६२७ को दिल्ली में हुई और वे अपने ही द्वारा बनाये हुए सुन्दर मकबरे में दफनाये गये।

३ रहीम का जन्म मुसलमान परिवार में हुआ था और वे आजीवन मुसलमान ही रहे किन्तु अकबर की उदार शिक्षा नीति के कारण उनमें धार्मिक कट्टरता कभी नहीं आई।

४ पिता के तुर्किस्तानी तथा माता के हिन्दू परिवारित भारतीय मुसलमान होने के कारण स्वदेशी तथा विदेशी दोनों रक्त रहीम के शरीर में विद्यमान थे। हिन्दुत्व से भी उनका रक्त सम्बन्ध था, भले ही वह दूर का रहा हो।

५ रहीम ने अपने पिता के समान ही, अतालीक खानखाना, प्रधान सेनापति तथा वकील मुतलक आदि मुगल दरबार के उच्चतम पदा को प्राप्त किया और वह भी पिता की अपेक्षा कहीं कम आयु में।

६ यद्यपि वे चार बय की अवस्था से लेकर जीवन के अन्त तक मुगल दरबार से सम्बद्ध रहे किन्तु जितनी पदाग्रति तथा सेवा अकबर के शासनकाल में कर पाय उतनी जहाँगीर काल में नहीं कर सके।

७ रहीम ने अनाथ का जीवन भी बिताया और अनाथों के नाथ का भी। राजा रक, मूल पण्डित सहयागी विरोधी, हिन्दू मुस्लिम बाल वृद्ध सभी के साथ काय करने के कारण मानव प्रकृति का जितना अनुभव रहीम को था शायद ही उतना किसी अन्य दरबारी का हो।

८ अपने दीर्घ जीवन के चढ़ाव उतार, यश अपयश सम्पन्नता विपन्नता तथा सीमाग्य-दुर्भाग्य के कारण उन्हें जीवन जगत का अत्यन्त त्रियात्मक अनुभव प्राप्त हो गया था।

९ उत्तर के काबुल और काश्मीर से लेकर दक्षिण में बरार बीजापुर तक की यात्राओं के कारण समूचे भारत की परम्पराओं को समझने तथा उसकी आत्मा तक पहुँचने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ था।

१० रहीम को विविध विषयों तथा भाषाओं का गम्भीर ज्ञान था और वे काव्य सज्जन पत्र लेखन तथा अनुवाद काय आदि की कलाओं में दक्ष थे।

११ सभी पुत्रों की मृत्यु अपने ही सामने होने के कारण उनकी वृद्धावस्था अत्यन्त पन्चाताप एवं परिताप में व्यतीत हुई।

१२ यद्यपि उनका सम्पूर्ण जीवन राजनीति तथा युद्धादि में व्यस्त रहा फिर भी उन्हें बीच-बीच में इस प्रकार के गतिपूर्ण अवकाश प्राप्त होते रहे जिनमें उत्तम काव्य रचना की जा सकती थी।

कृति में कृतिकार के व्यक्तित्व का प्रतिफलन स्वाभाविक है। इसीलिए साहित्यिक समानाचनाओं के लिए व्यक्तित्व का अध्ययन भी आवश्यक है। जहाँ तक रहीम का संबंध है वे वीर सन्निवृत्त कुशल सेनापति सफल प्रशासक अद्वितीय धार्मिकता वास्तविक धर्मों में गरीब निवाज विश्वास पात्र मुसाहिब नीति कुशल नाग, महान कवि विविध भाषा विद उदार कला पारंगी इत्यादि सभी कुछ एक साथ थे। यही कारण है कि न केवल इतिहासकारों ने उनकी प्रशंसा की है अपितु कवियों ने उनका सम्बन्ध में सुन्दर सुन्दर रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। बंगाल गण स० १२३१' धर्मार्थ रहीम के तरपनों बय (१६०६ ई०) में गानसाना चरितम्^२ महान् वाक्यक प्रणता कविवर रूद्र मूरि ने रहीम के व्यक्तित्व का बगान इस प्रकार किया है—

सकल गुण परोक्ष सीमा

नरपति मण्डल घवनक धामा ।

जयति जयति गोपमाननामा

गिरिधर राज-नवाय सानसाना ॥ ३ । १३ ॥

पारना वीरता तथा दानशीलता से परिपूर्ण रहीम के व्यक्तित्व का गुण गान धनक कवियों ने धनक प्रकार किया है। गन कवि का एक शब्द प्रस्तुत है—

सर सम सोल सम धीरज समसर सम

साहब जमाल सरसाना था ।

कर न कुबेर कति कारति कमाल करि

तासे बन्द सरव सरव मन्व शाना था ।

१ गनाय समुत्तम के धर्म में रचना नियम कवि ने इस प्रकार की है—

गण शमागितिषी (१२३१) सौम्य बंगाले गणतपणती ।

चरित सानसानाय धर्मिण रू मूरिणा ॥ ३ । १३ ॥

२ इस धर्म का मूल अर्थ-मग कवन एक प्रति कामनवय रितगण सायदरी मान्य हर्मनिति ग० ७३०६ कुम्बर ७० का तम्बर पर मुरगिन है। यही जिनके विमल कोषरा ने प्रथम बार १६२६ में धनक बय 'कन्दोष्पूगण धाक मुक्तिम रू महान् सक्ति भाग २ में सम्पादित कर प्रकाशित किया था ।

दरबार दरस परस दरवेसन को सालिब,
तलब कुल भालम बखाना था ।
गाहक गुनी के सुख चाहक दुनी के बीच
सत कथि दान का सजाना खानखाना था ॥^१

इन पंक्तियाँ में रहीम की सबतों-मुखी प्रतिभा तथा बड़े गुण सम्पन्नता का अनुमान सहज ही किया जा सकता है। हम उनके व्यक्तित्व को छ प्रमुख शीपका में विभाजित कर सकते हैं—

- १ साधुपति रहीम
- २ आश्रयदाता रहीम
- ३ दानवीर रहीम
- ४ कविवर रहीम
- ५ हिन्दुत्व प्रेमी रहीम, तथा
- ६ राजनीतिज्ञ रहीम

उनके व्यक्तित्व का एक पहलू और भा था जिसे हम बाह्य आरूपण या पारोरिक सौ श्य कह सकते हैं। रहीम के माता पिता दोनों ही सुदर, स्वस्थ, प्रिय-दर्शी और पुष्ट थे। अतः मातान का सुदर हाना कोई आश्चर्य का विषय नहीं। अक्षर रहीम के भय भाल और उनत ललाट स बहुत अधिब प्रभावित था।^१ अक्षर ही नहीं अय परिवारी भी बालक रहीम क आकषक व्यक्तित्व एव गिष्ट मिष्ट ध्यवहार पर मुग्ध थे। सुदर और स्वस्थ कुमार तो और भी बहुत से थे परंतु इनके रूप रंग की बात कुछ और ही थी—

यह चितवन औरे कछू जेहि बस होत सुजान ।

—बिहारी

आजाद साहब न रहीम की स्मरण शक्ति, हाजिर तबावी तथा काव्य-सगीन प्रेम की सराहना करत हुए लिखा है कि उनके मुख मण्डल में सौंदर्य रश्मियाँ सी पूरती थीं जो स्वजना ही नहीं, राह चलत पथिकों का भी आकर्षित कर लिया करती थीं। चित्रकार उनक व्यक्तित्व से चित्र निर्माण की प्रेरणा प्राप्त करत थे और दरवारी अपनी बटका में बानव रहीम का चित्र सजान थे। सन्नत अक्षर तो किसी न किसी बहाने उन्हें अधिकांगत अग्न पास रखत ही थ, उनक पिता के गनु भी रहीम को स्नेह स देगत थे—जाजू वह जो सर चढ़ के बाल।^२ बढ़े होकर भी उनका यह सौंदर्य प्रशंसण बना रहता था। अनेक मुजनिया के उन पर मोहित हान की बयाएँ इसका प्रमाण हैं।^३ दूर कथि न भी इन तथ्या का मकन दूसर अध्याय में किया है। किसी -

१ रहीम रत्नावली पृ० ८५

२ अक्षरनामा भाग ० (एगिया० सु० आष बगल १६०७) पृ० २०३

३ अक्षररी दरबार आजाद (मनु० रामचरु वर्मा) भाग ३, पृ० २२७

४ रहीम रत्नावली पृ० ६६ ८

अज्ञात कवि ने उनके लिए ठीक ही कहा है—

मदन रूप तन तबल वीर बाहन गल लज्जिय ।
घन मद जोवन राज मद एकहि मद् न मत्तियो ॥^१

रहीम की मुख शाभा का जखान सुप्रसिद्ध कवि गग ने भी किया है। गोरे कपोलो को गया काली मूछा को यमुना तथा अरुणारे अघरो को सरस्वती मानकर रहीम के मख को कामद प्रयाग सिद्ध करने वाला दोहा प्रसिद्ध ही है। बाद के कविया ने उनका अनुसरण भी स्वाविषयानुसार किया है।^२ दोहा इस प्रकार है—

गग गौछ मौछें जमुन, अघरन सरसुति राग ।
प्रगत खानखानान के कामद घदनु प्रयाग ॥

ऐसे सुन्दर और सरस यक्तित्व के लिए काव्य कला सगीतादि में रुचि स्वाभाविक है। किन्तु उनका अभिभावक अकबर यह सब नहीं चाहता था। वह तो अद्वितीय सेना नायक बन हीनहार पुत्र को उत्कृष्ट सैनिक तथा सेना नायक देखने को म्नाकुल था। इसके लिए सम्राट ने योजना बद्ध रीति से प्रयत्न किया और १६ वष की अल्प अवस्था ही में रहीम का गुजरात युद्ध में सेना के मध्य भाग की कमान देकर गौरवावित किया। उसके पश्चात सना नायकत्व का नम जीवन भर प्राय अनुष्ण ही रहा और वे अपने युग के कुशल ही नहीं अपितु अद्वितीय सेना नायक सिद्ध हुए।

सेनापति रहीम

अकबर के दरबार में एक स एक बल्कर ईरानी तूरानी और हिन्दुस्तानी सरदार थे। महत्व अपेक्षाकृत हिन्दुस्तानियों का ही था और विरापत राजपूता का। मुस्ला गीरी ने स्पष्ट स्वीकार किया है—

हिन्दू भेद न गमगीरे इस्लाम।^३

(हिन्दू भी मुसलमानों की ओर से तलवार चलाते हैं।)
स्पष्ट है कि अकबरी राज्य में प्रससा वीरत्व की होती थी। वहाँ हिन्दू मुसलमान या छोटे बड़े का विचार न था। खानखाना आयु में छोटे थे तो क्या सैनिक कार्यों में वचपन से ही बेजाड थे। उह तीर और तलवार चलाने की अद्भुत क्षमता प्राप्त थी। घोड़े की सवारी का तो कहना ही क्या। कविया न रहीम के इन गुणों पर काव्य रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। घुडसवारी के लिए परसिद्ध कवि के छप्पय की अंतिम पक्तियाँ प्रकार हैं—

परहाहि पलट्टहि उच्छलहि नच्छत धावत तुरङ्ग इमि ।
खजन जिमि नागरि नन जिमि नट जिमि मग जिमि, पवन जिमि ॥^४

- १ रहीम रत्नावली प० ८८
२ तजि तोरप, हरि राधिका तन छुति कर अनुराग ।
जिंह बज कलि निङ्गु ज मग पग पग होत प्रयाग ॥ —विहारी
३ अकबरी दरबार, भाग ३ प० १६६
४ रहीम रत्नावली प० ७८

इसी प्रकार तीर चलाने का उल्लेख करते हुए 'मदन कवि ने लिखा—

ओहती अटल खान साहब तुरक मान
तेरी ये कमान तोसो तेहू सौ करत हूँ ।^१

कवियों ही नहीं इतिहासकारों का प्रमाण भी लोजिए । मग्रासिरे रहीमी के समकालीन लेखक ने ता उनकी शस्त्र विद्या का और भी विस्तार स बयान किया है । एक घटना प्रस्तुत है—

“बाएँ विद्या मे खानखाना इतने दक्ष थे कि जब गुजरात के शाह मुजफ्फर पर विजय प्राप्त की ता एक दिन चौगान खेल रहे थे । उस समय एक कौघा उडा जाता था । खानखाना ने लगातार बारह तीर मारकर उमके आस पास एक चक्कर बाध दिया और तरहवें तीर से कौए को मार गिराया । एक बार एक सिंह के ललाट म ऐसा तीर मारा जो आर पार हो गया था । इस घटना का उल्लेख मु शी दबीप्रसाद ने भी किया है ।^२

तीर-तलवार से भी अधिक महत्व व समय को लेते थे । समय के अद्भुत पारखी और कद्र करन वाले थे । अपने कार्यों को शीघ्रता से सम्पन्न करना उनकी आदत थी । जब सम्राट ने उन्हें मुजफ्फर पर विजय प्राप्त करन क लिए स्वतंत्र रूप से सेनापति बनाकर भेजा, तब रहीम ने इस तीव्र गति से कूच किया था कि बड़े बड़े तेज सेना नायक भी दग रह गए थे । उनकी आना थी कि बीस कास से पहल अगला पडाव कदापि न डाला जाय । इतना ही नहीं शत्रु का अधिक बल दिखाकर उही के सरदारान उह रोक्ना चाहा किन्तु उ हान बिना आराम किए अगले ही दिन प्रयाण ठान लिया ।^३

बूढ़ खबीसा ने भले ही इस जल्दबाजी तथा अदूरगिता कटा हा पर तु रहीम जानते थे कि उस अवसर पर षोडा भी विलम्ब करना शत्रु का और अधिक तयारी का अवसर दना है । किन्तु इस कथन का यह तात्पर्य नहीं कि वे जल्दबाज व्यक्ति थे । रहीम ने अनुचिन शीघ्रता कभी नहीं की । प्रतिफल समय म हमशा युद्ध का टालते थे । इसी युद्ध म साबरमती और सरखेज के बीच वाल मदान मे उहोन दा दिन टाल दिए थे । कारण यह था कि उहे मालवा स आने वाली कुमुक की प्रतीक्षा थी । तब लाचार हाकर शत्रु का ही पहल करनी पडी थी । निश्चित ही यह पहल उसे महँगी पडी ।

युद्ध सम्बन्धी मामला मे सेनापति रहीम बहुत ही सूक्ष्म दृष्टि से काम लते थे । वे उत्साहमजक ममाचारा को छिपाते और सनिकों के उत्साहबद्धन क लिए स्वयं भूठी सच्ची अनुकूल अफवाह फलवा देने थे । इसी युद्ध मे मुजफ्फर के महामूनगर तक आ जाने के समाचार को उहाने गुप्त रखा था । इसके विपरीत जब उहाने

१ रहीम रत्नावली प० ७८

२ खानखाना नामा—मु शी देवी प्रसाद, भाग २ प० १६२

३ अकबरी दरबार, भाग ३, प० २६२

शत्रु सख्या की अत्यधिक विद्यालता व समाचारा से अपने सैनिकों को घातकित देणा तब एक जाली शाही फरमान तयार किया जिसमें लिखा था कि सम्राट स्वयं विद्याल सेना के साथ, गुजरात विजय के लिए पधार रहे हैं। इस समाचार से शाही सैनिकों का उत्साह दुगुना हो गया और जय मुजपपर ने यह सुना तो उसने पूरा सरकार गई।^१

वे अपने आप तो इस प्रकार व बाय कर लेते थे किंतु शत्रु पक्ष की चाला किया और पडय था से सख सावधान रहते थे। जाम नामक दूत का उद्धान इसी प्रकार मजा चलाया था।^२ अपने काम को दूगरे सरदारों पर टालना वे सैनिक दग्ना के विरुद्ध समझते थे। उपरुक्त जाम नामक दूत ने एक बार समाचार दिया कि मुजपपर अमुक स्थान पर अगुरक्षित है तेज जवान भेजे जायें तो पकडा जा सकता है। रहीम दूसरों पर न टालते हुए स्वयं वहाँ पहुँच। यह बात दूसरी है कि वह पकडा न जा सका।^३

सैनिक ही या सेनापति उसका सबसे बड़ा भूपण है बीरता। वस तो खान खाना का समस्त जीवन ही गौरव का प्रतिमान रूप है किंतु यहाँ उदाहरण के लिए एक घटना प्रस्तुत है। आष्टी के युद्ध में जब प्रातःकाल हाने को हुमा ता शत्रु सेना को सामने देख शाही सेना के हाश उठ गए। शत्रु सेना चौगुनी के लगभग थी। सभी ने भागने की सलाह दी। निराश सेना का प्रतिनिधित्व करते हुए दीलतखा ने खानखाना से कहा हमारा सामने भारी सेना है। विजय ईश्वर के हाथ है। यथादये पराजय व बाट आपको कहा खान। किंतु बाहू रे रहीम! उस समय जो उत्तर दिया वह उही के याग्य था। रहीम बोल— खोजना ही पडे तो शका क नीचे खोजना।^४ उत्तर का सुनना था कि सेना में जोश की बाखद पट गई और इस शौर्य का प्रदर्शन किया गया कि शत्रु को भागते ही बना। ये था रहीम का गौरव का फल।

इस विजय का श्रेय भाग्य को दिया जाय या रण कौशल को किंतु इतना निश्चित है कि रहीम ने गान की इतनी बड़ी शक्ति के सम्मुख भीत को लाक्षात देखते हुए भी लडते लडते रण भूमि में बीर गति प्राप्त करने व जिस दृष्ट संकल्प का परिचय दिया वह निश्चित रूप से यह सिद्ध कर देता है कि रहीम मृत्यु व समय मय से भागने वाले नहीं थे। निश्चित ही यह कथन नितात भ्रामक है— जान देकर भी गान रखने का पाठ उ हाने नहीं सीमा था।^५ इसक विपरीत रहीम की अस्स दिव्य बीरता मन्त्र प्रघसित रही है। राजा प्रजा शत्रु मित्र, इतिहासकार और कवि

१ अफखरी दरबार भाग ३ प० २६४

२ वही, प० २८५

३ वही प० २८४

४ मन्ना उमरा, भाग २ प० १८८

५ अमुरहीम खानखाना प० २६८

सभी ने उनके गीत के गीत गाए हैं । 'परसिद्ध कवि ने लिखा है—
 सात दीप सात सिंधु थरक थरक कर,
 जाके डर दूटत झूटत गढ राना के ।
 क्षपत कुबेर बेर मेरु मरजाद छाँडि
 एक एक रोम भर पडे हनुमाना के ॥
 धरनि घसक धरा मुसक खसक गई
 मनत परसिद्ध खम्म डोले खुरसाना के ।
 सेस फन फूट फूट चूर चक्चूर भए,
 चले पेस खानाजू नवाब खानखाना क ॥^१

शिवसिंह सेंगर ने इसी कवि का एक अर्थ छंद उद्धृत किया है, जिसमें खानखाना की वीरता के आतन का वर्णन है—

गाजी खानखाना तेरे घोसा की धुकार मुनि,
 सुत तजि पति माजी धरी बाल हैं ।
 कटि लचकत बार बार ना समार जात,
 परी विकराल जेह सघन तमाल हैं ।
 कवि 'परसिद्ध तहाँ खगन खिजायो आनि
 जल भरि भरि लेतीं दगन बिसाल हैं ।
 बेनी खचे मोर सीस फूल को चकोर खचें,
 मुबता की माल ऐबि खचत मराल हैं ॥^२

रहीम के शीघ्र और साहस के सम्बन्ध में गाए गए ये गीत वीर कवि कल्पना नहीं ऐतिहासिक विवरण में सम्पुष्ट हैं । अपने सना-नायकत्व और रण कौशल के बल पर ही रहीम ने अनेक बार अपने से कई गुनी शक्ति वाले शत्रु को पराजित किया था । थोड़ी सना से शत्रु की भारी वाहिनी को खदेड़ देना रहीम के सेनापतित्व की एक विस्मयकारी विशेषता थी । शत्रु को खदेड़ने में भी एक कौशल था । वे शत्रु के भागने की दिशा का पूर्वानुमान लगाकर उस पर कुछ एस वेग से आक्रमण करते थे कि उस साखा का सामान टाड़कर भागते ही बनता था ।

य कवल वीर, साहसी और दूरदर्शी ही नहीं, नीति कुशल भी थे । शत्रु मित्र का खूब पहचानते थे और सधि विग्रह में दक्ष थे । परिस्थितियों के अनुसार शत्रु पक्ष से कुछ ऐसी गतें उपस्थित करते थे कि वह मुँह देखता रह जाता था । दक्षिण में मलिक अम्बर तथा सिंध के मिर्जा जानी से की गई सधियाँ इस तथ्य का प्रमाण हैं । उनकी सधि की गतें शत्रु पक्ष का निचाड़ कर रत्न देती थीं । मिर्जा जानी की तो लहकों भी उ हान अपन लडक के लिए भाँग ली थी । और इस प्रकार शत्रुता के सम्बन्ध का नात रिश्ते में परिवर्तित कर दिया था । क्या यहाँ महामति चाणक्य सल्यूक्स और चन्द्रगुप्त की सधियों की याद ताजा नहीं हो जानी ?

सनातामकत्व स सम्बन्धित रहीम व गुणो का परिचय कराने म पूरा प्र प तयार हो सयता है। क्याकि उ हाने जिन विषय परिस्थितिया म सकलता प्राप्त की वे उनके जैसे सनापति का हा काय था। दक्षिण म जाजर प्रच्छे प्रच्छे सनापति प्रसफ्त सिद्ध हुए थे और इस प्रसफलता का कारण था मुगल सरदारा का पारस्परिक विद्वेष और प्रसहयोग। रहीम की सफ्तता का रहस्य यही है कि व प्रसहयोगिया का भी विश्वास प्राप्त करत थ। समचित युद्ध स्थल का चुनाव पच्छ भाग की सुरक्षा का ध्यान राख पूर्ण का पूण प्रव घ तथा पराजित गत्र क भागने का पूर्वनिमान करके ही वे प्रागे वढते थे। अनुकूल ब्रूह रचना टुकड़ियो का दक्षिण वाम एव मध्य पदा म विभाजन तथा प्रावश्यकता के समय सत्तियों को दायें बायें लिसकाने रहता रहाम के सेनापतित्व का विविष्ट अंग था। डा० समर बहादुर की छाप्पी युद्ध स सम्बन्धित ये पत्तिया उद्घरणीय हैं—

वह अपने युग का एक प्रवीण सेनानायक था। उसकी सेना म विभिन्न वर्गों क लोग थ और वह कुल सनापति समी की निष्ठा एव प्रेम का पाय था। राजा अलीखा तथा कतिपय राजपूता के इस समरागण म नि स्वाध बलिदान उक्त कथन के साक्षी है। यदि प्रातरिक कलह और पारस्परिक वमनस्य भाग म प्रव रोषक न होते और यदि इस विजय के पश्चात शाहीनल ने एक मत से काय किया होता तो परिणामत दक्षिण की ऐतिहासिक गाथा आज कुछ दूसरी ही होती।^१

सन्तु और मिथ समी उनके महान सेनानायकत्व का लोहा मानते थे। अयुल फजल ने ठीक ही लिखा था— तलवार और कमानों का यदि बोलने की शक्ति होती तो वे तुम्हारे भुजबल का हजार बार बखान करते।^२

अयुलफजल ता क्या सघाट अकबर तक उनकी सम्मतिया को बिना ननुनक के स्वीकार कर लत थे।^३ इतना ही नहीं कभी कभी ता उनकी युद्ध सम्ब बी याज नाएँ अकबर की योजनाओं से भी बाजी मार ल जाती थी।^४ यद्यपि अकबर की मल्लु के पश्चात व कुछ अधिक न कर सके पर तु उनकी रणकुशलता से जहागीर भी प्रभावित था। और जहागीर ही क्यों सारा मुगल दरवार इसे स्वीकार करता था।^५ वस्तुत युद्ध रहीम के लिए सामा य खेल बन गया था और विजय थी उस खेल का अनिवाय परिणाम। जिस प्रकार और राजा नवाब शिकार खेलने जाने तथा वहाँ से कुछ पशु पक्षी वाद्य लाते थे उसी प्रकार खानखाना युद्ध के लिए दौड़ जाते और अतिलम्ब किसी न किसी गनु को बांध लाते थे।^६ ही भावों से भरा किसा अज्ञात

१ अत्रुरहीम खानखाना प० १४२ ४३

२ खानखाना नामा भाग २ प० १४७ पर उदघृत प्रथम पत्र

३ अकबरी दरवार भाग २ अयुलफजल का पत्र, प० २८७

४ वही, प० २७१

५ जहागीर चरित्र, प० २६१

कवि का एक छन्द द्रष्टव्य है—

काहू की सिकारि स्याल लोमन को खेल होत,
 काहू की सिकारि मग भारि सुखमानो है ।
 काहू की सिकार साथ सिकरा सिचान बान
 काहू की सिकार देखो वारुण बखानो है ।
 खानखाना की सिकार सिधु पके बार पार
 छन्द बन्द फन्द खट धरन को ठानो है ।
 अबही सुनोगे मास दोय तीन चार मांभ
 कौन ही दिसा को पातशाह बांध भ्राना है ।^१

दानवीर रहीम

अकबर का काल सम्पन्नता और सुख का काल था । उसके सरदारो और मुसाहिबा के घर त्रिपुल सम्पत्ति एकत्रित थी । कुछ इस सम्पत्ति का उपयोग विलास के लिए करते थे और कुछ दान धर्म आदि के लिए । इनमें तीन बहुत प्रसिद्ध थे— मिर्जा गयास बेग, वीरबल और रहीम । मुतामिद खाँ ने अपने ग्रन्थ इकबाल नामा जहाँगीरी में वेग के दान की बहुत प्रशंसा की है ।^२ वीरबल की दान गाथायें भी इतिहास प्रसिद्ध हैं । किंतु इन सबके सिरमौर अब्दुरहीम खानखाना थे । उनकी युद्धवीरता तो इतिहास के बनिपय ग्रन्थों तक ही सीमित है किंतु दानवीरता जन जन की जिह्वा पर आज भी अंकित है । कलियुग के कण खानखाना ने माना जन सामान्य की दीनता दूर करने का संकल्प किया हुआ था—

श्रीखानखाना कलिकण नरेश्वरेण
 विद्वज्जनादिह निवारितमादरेण ।
 दारिद्र्यमाकलयति स्म नितातमीत
 प्रत्ययि वीर धरणी पति मण्डलानि ॥^३

लाग रहीम का कल्पतरु समझते थे । जिस घर से दरिद्रता न निकली हो तो समझ लेना चाहिए कि वह खानखाना के द्वार तक नहीं पहुँचा—

खानखाना न जाचियो, तथा दालिद्र न जाय ।
 कूप नीर अद्रे बिना नीली धरा न पाय ।^४

दान का यह कार्यक्रम दो प्रकार से होता था—

- १ दैनिक दान ।
- २ विशेष दान ।

१ रहीम रत्नावली पृ० ८६ ६०

२ इलियट (१८७३ एडिशन) भाग ६, पृ० ४०४

३ खानखाना चरितम्, २ १६

४ रहीम रत्नावली पृ० ८८

दैनिक दान के भी दा रूप थ—

(क) द्रव्य दान ।

(ख) भाजन दान ।

मुमाज इत्यादि धार्मिक कृत्या की भांति द्रव्य दान पानपाना के जीवन का नित्य नमित्तिक काय था । दान उनके स्वभाय एवं जीवन का अविभाज्य अंग हो गया था । बिना दान दिए उन्हें जीवन भी नहीं रुचता था—

तबहीं ली जीवो मल्लो बीघो होय न धीम ।
जग म रहियो कुचित गति उचित न होय रहीम ।^१

संभवतः दैनिक दान व प्रवचक मियाँ रहीम हाते थे । क्योंकि उही व बारे म यह कहावत प्रसिद्ध है कि—

कमाम रहीम धीर लुटावें मियाँ फहीम ।^२

रहीम जब दान करने बैठते थे ता द्रव्य की ढेरी लगा लत थे धीर धाग लुक् की मुट्टी भर दे दिया करते थ । जितना मुट्टी म धाया उसके भाग्य का । दान देते समय धाख उठाकर ऊपर देतना रहीम के सिद्धांत के विरुद्ध था । कौन ले जा रहा है कौन नहीं यह जानने का प्रयत्न रहीम ने कभी नहीं किया ।

गग धीर रहीम के प्रश्नोत्तर प्रसिद्ध ही हैं । गग ने पूछा—

सीले कहाँ नवावजू ऐसी दनी देन ।
ज्यो ज्यों कर ऊचो करो त्यो त्यो नीचे नन ।^३

रहीम का उत्तर था—

देनहार कोउ धीर है, भेजत सो विन रन
लोग भरम हम पर धर पाले नीचे नन ।^४

ऐसे निस्पृह दानी के लिए आचाय प० रामचंद्र गुजल ने ठीक ही कहा है इनकी दानगीलता हृदय की सच्ची प्रेरणा के रूप में थी । कीर्ति को कामना से उसका कोई सम्पर्क न था ।^५ रहीम वैसे भी अपने युग व पारस समझे जाते थे । कथा प्रसिद्ध है कि एक बार एक याचक ने ताप का गोला निकाल कर रहीम के घुटने से धुआ दिया । अग रक्षकों ने उस तुरत घर आया कि तु रहीम ने सबकी हटाते हुये कहा— 'वस गोले के भार का सोना ताल दा ।' मुसाहिवो द्वारा पूछे जाने पर उन्होंने बताया कि यह व्यक्ति रहीम के पारसत्व की जाच के लिए आया था ।

१ रहीम रत्नावली पृ० ६

२ यह रहीम (रहीम का विशेष कृपा पात्र सबर) एक राजपूत का लड़का था ।

—खानखानानामा (२) पृ० ८६

३ तथा ४ रहीम रत्नावली पृ० ६८ ६९

५ हिंदी साहित्य का इतिहास प० रामचंद्र गुजल (१४वा सस्करण) पृ० २०८

इतना अधिक द्रव्य प्राप्त करके जब याचक घर लौटते थे तो साग पूछा करते थे—

लका लायो लूट किधों सिंहन को कूट कूट,
हाथी घोड़े ऊँट एते पाये ते सज्जिने हैं ।
अलाकुली' कथि का कुबेर ते मिताई कीही
अनतुले अनमाने नग और नगोने हैं ।
पाई है त खान सग मई पट्चान भूस,
रह्यो है जहाँ नए समान तहाँ कोने हैं
पारस तें पाए किधों पारा ते बमायो किधों
समुद्र हू ते लायो किधों खानखाना दोने हैं ।^१

इतनी अधिक उगारगोलता के कारण जब उह काग धाए हाता दीखता ता व उम कभी ता शत्रुघा पर चढ़ाई करके भरते और कभी अथ मरदारा के महयाग स । यहाँ तक कि वे कभी कभी श्रुए की व्यवस्था भी करते व । परंतु दान देने म उहान कभी कभी नहीं की । अत्यधिक विपन्नता के अंतिम काल मे भी जय याचका न अपने कल्पनह का पीछा न छाडा तब रहीम को मजबूर हाकर कहना पडा था—

ए रहीम दर दर फिरहि, मांगि मधुवरी लाहि
यारो यारी छोडिए ये रहीम अथ नाहि ।^२

कहने की आवश्यकता नहीं कि—'बिन दीवो जीवा जगत हमे न रच रहीम का नसक अपनी विपन्न अवस्था के कुछ ही दिनों पश्चात ससार छाडकर चल दिया था ।

भोजन दान

रहीम क जीवन का दूसरा कायक्रम था भोजन दान । उनका भाजन सामान्य अमीर उमरावा का सा न होकर एक भाजन यन हाता था । कहते हैं कि उनका लगर सदैव और सबके लिए खुला रहता था । जब खानखाना भाजन करते थे तब पद और मयादा के अनुमार एक साथ मकडा का भोजन मिलता था । वे खाद्य पदार्थों का रकाविया म कहीं कुछ रुपए और कही कुछ अंगकिया रख देते थे । जा जिसके कौम म आए वह उसके भाग्य का । आज तक यह कहावत प्रसिद्ध है—

रहीम खानखाना जिसके
खाने मे भी सजाना ।^३

इन दैनिक दान कार्यों के अतिरिक्त विविध याचना गुणिया माधुघा और सनिका का भी बराबर दान दक्षिणा मिलती रहती थी । अथा य दानी ता मांगने पर देते हैं परंतु रहीम बिना मांग दान लिया करते थे । व जानते थे कि कुलीन

१ रहीम रत्नावली, पृ० ८१

२ वही प० २

३ अकबरी दरवार, भाग ३, प० ३६६

व्यक्ति के लिए आवश्यकता पड़ने पर भी माँगता गरम काप नहीं—
गरम चापनी चाप तौं रहिमान बहू म जाय,
जत कुल की बल बधू पर तर जात सताय ।^१

रहीम जत प्रसामा य तानी भ धग ए। उत प्रसामा य मापन भी ये । त्त
याचका के प्रनेक वगन लगका ने उद्घत कि है ।^२ हम ता बचन ए उद्घरए
प्रस्तुत करता पाटो । गागगाता ए यार दरवार की धार जा रह ये । माग म
एक सन्न सज्जित युवक बाँचन म गलाम भुजावर गहा ए। गया । ध्यान म दगने
पर पात हुमा कि उसकी पगनी म दा सभ्नी की नें बाहर निगनी हुई हैं । प्रुधने पर
उस व्यक्ति ने उत्तर दिया मगराज । एर कीन उग स्थामा के माध म टाकन के
लिए जो धनन नीकरा का ठीक प्रकार वेतन ग दे । धीर दूगरी उग गीकर क लिए
जा वेतन ता स ल किनु सगर्दी के गाय गया करन म जो बुराए । रहीम न बोया
ध्यान का उगवे जीवन भर का वेतन बुजान की घापा देते हुए कहा - सीजिए हब
रत एक कील का बोझ ता धनन तर स उगार दीजिए । दूगरी कील का घापा
अधिकार है ।

व ऐसी धनरागियाँ धपने गवका का प्राय न्त रहत थ । बधिया के धनुसार
उनके सबक करण की बिना भी नहीं करत थ । जानत थ कि रानगाना की सेवा म
उपस्थित हात ही न बचल करण मुक्ति के लिए धन मिलगा धनितु दो हजार हजारियो
के समान मालामाल हो जायेंगे—

काहे रे बरजदार ! भगरत है बार बार,
नक दिल धीर पर जान इतवारी से ।

बेटू दर हाल माल तिलले सवाई साल
देपना विहाल मत जानना मिलाारी से ।

सेवा खानखाना की उमेदवारी दान कीते
महर मुहान की सू होत धनपारी से ।

अय घरी पल माँझ पहर दू पहर माँझ
आज काल के हैर दू हजारी से ॥ रहीम रत्नावली पृ० ८६

रहीम की उदारताप्रा तथा दानमानादि की जितनी चर्चा की जाय थोड़ी है ।
आने अकवरी म अयुल फजल ने सरराज युद्ध का विवरण दते हुए लिखा है कि

रहीम ने मन ही मन यह सक्त्प कर लिया था कि यदि युद्ध म विजय प्राप्त हुई तो
हाथ लगन वाली सम्पूण सम्पत्ति दान कर दी जायगी । भगवान ने कृपा की ।
विजयश्री ने रहीम का वरण किया । उ हाने भी सुई स लेकर हाथी तक जो भी हाथ
लगा था सब का सब लुटवा दिया । प्रस्न यह उठा कि सामान्य पक्ति तीप तमचा

^१ रहीम रत्नावली प० ५

^२ देखिए आजाद का अकवरी दरवार तथा प० यात्रिक की रहीम रत्नावली
(भूमिका)

घोर हाथी घोड़ा का क्या कर ? अतः उनका मूल्य भाँक कर उतना शय्या रहीम ने अपने सजाने में भ्रदा कर दिया ।

भाग्यहीन ता सीने की लका में भी बसते थे । कहते हैं कि एक सैनिक उस दान महायज्ञ के समय नहीं पहुँच पाया । जब वह खानखाना की सेवा में पहुँचा तब वे अपने बागज पत्र दस्य रह थ । सैनिक ने अपने का कुछ न मिलन का निवेदन किया । रहीम के पास सर्वस्व दान के पश्चात् मात्र बलमगान शेष था । उसे ही सैनिक का प्रदान करत हुए खानखाना बोले 'यही तेरे भाग्य का बचा था ।'^१

ऐस ही महादान का एक आयोजन २६ जनवरी १५६७ ई० वाली घाण्टी-विजय के उपरांत हुआ था । इसे ता दान क्या पूरी लूट ही कहना चाहिए । विश्व-इतिहास में ऐसे उदाहरण विरल ही मिलेंगे सम्भवतः न भी मिलें । इस विजय में शत्रु पर अप्रत्यागित विजय प्राप्त हुई थी और शत्रु-युद्ध की भारी सामग्री रहीम के हाथ लगी थी । उसकी अपनी सम्पत्ति तथा हाथ लग माल का मूल्य ७५,००,००० (पिड़तर लाख) रुपये था । विजय के उल्लास में रहीम ने अपने प्राण उत्सुकता सैनिकों को पूरा का पूरा रुपया दान में डाला था । रहीम के पास बचे थे केवल दो ऊँट ।^२ इतनी बड़ी धन राशि का सब सामान सैनिकों में वितरित कर देना रहीम जस उदार दानशीरो का ही काय था । तभी कहा जाता था कि दान खानखाना का नाम पर ही जीवित था —

जोरावर अथ जोर रवि रय कसे जोर

बने जोर देखे दीठि जाँरि रहियतु है ।

है न को लिबया ऐसो है न को दिबया ऐसो,

दान खानखाना क लहे ते लहियतु है ।

तन मन डारे बाजी द्व तन संमारे जात,

और अधिकाई कही का सों कहियतु है ।

पौन की बडाई बरनत सब तारा कवि

पूरी न परत या ते पौन कहियतु है ॥^३

कवियों के अद्वितीय आश्रयदाता रहीम

ये ता राज दरबार कवियों का युगा युगा से आश्रय प्रदान करते चल आये हैं किंतु इस सम्प्रदाय में रहीम की उदारता असीम थी । इस उदारता में वे न केवल अभीर उमराओ से बचकर थे अपितु बिच भर के सम्राटों से भी आग थ । उस समय यूरोप की मन्ारानी एलीजबेथ, ईरान के शाह आवास तथा भारत के अकबर विश्व के महानतम सम्राटों में से थे । सभी के दरबारों में कवि एवं कलाकारों का

१ आइने अकबरी प० ३५५

२ मघा० उमरा भाग २ प० १८६

३ रहीम रत्नावली, प० ८७

जमाव रहता था। कि तु इतिहास साक्षी है कि, भारत ही नहीं अपितु समस्त एशिया एव यूरोप में रहीम की टक्कर का आश्रयदाता कोई दूसरा न था।

अब्दुल गनी साहिब, मुगल दरबार के फारसी साहित्य का इतिहास लिखते हुए उच्च स्वर से उदघोष करते हैं कि अब्बर एगियाई सम्राट म निस्सदेह प्रसिद्ध था किन्तु उसका दरबारी रहीम ता मुप्रसिद्ध था। उन्होंने देशों के नाम गिनाते हुए कहा है कि फारस भारत मध्य एशिया और टर्की में उनके समान ज्योति पिण्ड काय आश्रयत्व के आकाश में दूसरा न था।¹

खानखाना क आश्रय एव आश्रयदायित्व की घूम इतनी मच गई कि देश विदेश के कवि उनके दरबार में इस प्रकार लिखे चले आते थे जैसे भ्रमर कमल पर अथवा पतंग दीपक पर। बात इस अवस्था तक पहुंच गई थी कि सम्मान में थोड़ा सा भी अंतर आने पर कवि अपने आश्रयदाताओं को छोड़ रहीम के दरबार में आने की धमकी दे दिया करते थे। यह घटना छोट मोटे राजाओं के साथ नहीं अपितु ईरान के शाह अब्बास व दरबार में भी घट चुकी थी। ईरान के सुप्रसिद्ध कवि कौसरी ने भरे दरबार में कह सुनाया था—

नहीं दीख पड़ता है कोई ईरान में
जो मेरे गूढायमय पदा का क्रिय करे
तत्प्रात्मा बना हूँ मैं अपने ही देश में
आवश्यक हो गया है मुझे हिन्दुस्तान जाना।
जिस प्रकार बूद एक जाती है सागर और
मेरी भेजूंगा निज काय निधि हिंद को,
क्योंकि इस युग के राजाओं में अब कोई नहीं
खानखाना के सिवा अन्य आश्रयदाता
सरस्वती के सुपुत्र सब कवियों का ॥²

1 The one shining orb in the horizon of literary patronage at Mughal Court and in the whole empire of Asia is the dazzling personality of Khan Khanan who deserves a foremost place as supporter of Persian art and literature among the contemporary rulers of Persia India Central Asia and Turkey. Albar among the Asiatic monarchs was undoubtedly eminent but his court noble Abdur Rahim Khan Khanan was pre eminent — *A History of Persian language and literature at the Mughal court* Mohd Abdul Ghani (Ald 1930) Page 221

2 कि दर ईरान कते नायद पदोदार कि बागद जिस मायनोरा खरीदार।
दर ईरान तल्ल गन्ता कामे जानम बवायद शुद सुवे हिन्दुस्तानम ॥
चु कतरा जानिबे अम्मां फरस्तम, मताए खुद बहिन्दुस्तां फरस्तम।
कि न बुवद दर मुखन दानाने दीरां खरीदारे मुखन जुद खानखानान ॥

— बोट पोइटस आफ इण्डिया एण्ड ईरान — पार० पा० मसानी

इतिहास साक्षी है कि अपने श्राप्रित कविया पर रहीम ने एक अवसर पर हजारों और लाखों श्राफियाँ लुटाई थी। इसीलिए अब्बास के दरबार में जो घटना घटी उसी की पुनरावृत्ति का आभास अब्बर और जहाँगीर के दरबार में भी मिल जाता था। उदारता और योग्यता के लिए जितना गुण गान, रहीम का हुस्ना है उतना सम्भवतः अब्बर का भी नहीं। फारसी कवि रश्मिबल-दर की एक लम्बी कविता में उन गुण गायक कविया का उल्लेख है जो फारसी इत्यादि बाहरी दशा से आय थे।^१ उनके द्वारा गिनाये हुए नामों में अधिक प्रसिद्ध हैं—हरफी, नजीरी, गिकवी हयाती, नावी तथा बुफवी। मु० शिकेवी का, सि घ विजय के अवसर पर, हुमा सम्बन्धी गेर लिखकर एक हजार श्राफियाँ पाना ता प्रसिद्ध ही है।^२

ऐसी ही एक बात मु० नजीरी के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है। मुल्ला ने खानखाना से कहा कि मैंने कभी एक लाख रुपए का ढर नहीं देखा। रहीम की आना से मुल्ला के सम्मुख ढेर लगवा दिया गया। प्रसन्न नजीरी ने कहा— खुदा का शुक है कि, अपन नवाब की कृपा से, मैंने इतना धन एकत्रित दख लिया।^३ रहीम ने वह समस्त ढेर नजीरी को दते हुए कहा— एक बार फिर खुदा का शुक श्रदा करो।^४ मौलाना गिबली ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ शेखल अजम में ऐसी ही एक मोटी रकम प्रदान करने का उल्लेख हरफी के सम्बन्ध में किया है। एक मात्र कसीदे पर प्रसन्न होकर रहीम ने हरफी को सत्तर हजार रुपए का इनाम दिया था।^५ मश्रासिर रहीमी द्वारा गिनाए हुए पुरस्कारों का विवरण प्रस्तुत किया जाय ता उसके लिए पथक से एक ग्रन्थ का आवश्यकता होगी।

खानखाना की अभूतपूर्व उदारता, दरबार के निजी कविया तक के लिए ही सीमित न थी। वे श्राते जात कवियों के प्रति भी उतने ही उदार थे। वस्तुतः उदारता उनकी आदत थी और का याश्रय उनका यसन। एक बार खानखाना दरबार से विदा लेकर बुरहानपुर जा रहे थे। माग में प्रायः सत्ताइस पडाव पडते थे। उनके पहले ही पडाव से अगल में मगल हो गया। वीरान को इस प्रकार श्रावाद हाते दख किंसा दरिद्र ने श्लेष युक्त एक शेर बनाकर उन्हें सुनाया। उसका ग्रन्थ था—

मुनइम (धन सम्पन्न) यत्कि क लिए पहाड जगल और उजाड स्थान में भी किसी वस्तु की कमी नहीं रहती, वह जहाँ जाता है वही खमा खडा कर लेता है और बरगाह बना लेता है।^६

१ कीट पोइटस श्राफ ईरान एण्ड इण्डिया—श्रा० पी० मतानी (बम्बई १९३८) प० १३८

२ म० श्रा० उमरा० भाग २ प० १८६

३ वही, भाग २, प० १९६

४ शेखल अजम मौलाना गिबली (अलीगढ १९२०) हिस्सा सोयम प० १३

५ उस समय तक रहीम का मुनइम खान की उपाधि मिल चुकी थी।

—अबबरी दरबार, भाग २ प० ४०४

कवि के हृदय की सच्चा समुभूति तथा इन्ग की सामीप्य ने रहीम का प्रत्यक्ष प्रभावित किया। उन्गो दरिद्र घाय युव का एक गाय गगन स्वर माना माल कर दिया। गाय ही प्रति प्रति घाकर धर मुनान की प्रायता भा। यह एक सप्ताह तक राज धर मुनाकर एक माग रूपया प्रति दिन प्राप्त करता रहा। घाटन दिन रहीम प्रतीक्षा ही करते रहे पर तु कवि महात्म्य म गयाते। गताम पदाथा तक नित्य एक लाग रोग स्तर प्रगन होन का व्यवहार गा जाने का उद्ग मर रहा।

वदाधित दरिद्र कवि को इतने अधिन धन की स्थान म भा घागा त र गा। वस्तुन कविगण रहीम म जितना मागत थ उमग अधिन प्राप्त करने थ। एक बार पारसी के दा धरो पर प्रगन होकर रहीम ने कवि की दृष्ट्या पूछी। उमने मरण निवेग किया— एक सात रूपया। रहीम न गजाचो का घागा नी— त तथा लाय रुपए द दा। एमी धी रहीम की प्राणतापना।

रहीम व दरवार म पारसी म भा अधिन आश्रय हि नी को प्राप्त था। जिने के कविमो की सपना पारसी व कविया म यही अधिन था। पारसी व कविया का पुरस्कार दा चार या दस व द्रह नाय तक ही प्राप्त हुन हाते किन्तु हि नी कवि गग का ता एक मात्र दृष्यम' पर छत्तीस लाग रूपय की विमान धनराशि प्राप्त हुई थी। यह एक मानन है रिवाज है। ध्यान नहा घाता कि किसी मुगल राजा रईम न एय माय दोट पर छत्तीस लाख रूपय की विपुन द्रव्य राशि भेंट की हो। ३६ लाग इतनी भारी रकम हाती है कि रूपया यदि एक तोन का हा ता चादी का बाक एक हजार एक सौ पन्चवीम मन हो जायगा। यदि गग महात्म्य सवा मन के भार के रूपया (अर्थात ४००० रूपया की गठरी) का बोझ वापर ल गये हा ता उद्द राजाने से प्रगन घर तक (घाठ कम) एक हजार चक्कर लगान पडे होंगे। वास्तव म गग उपकार द्रव्य एक सोभाग्य व बोझ स दख गय हाय।

रहीम क पुरस्कार यही तक सीमित नहीं थे। वे तो कविया का जीवन भर का बीमा कर दिया करते थे। वे इतना दे डालते थे कि उनके द्वारा पुरस्कृत कवि का कभी कभी जीवन भर धौर किसी व दरवार म जाने की आवश्यकता नहीं रहती थी। एक बार की घटना है कि किसी कवि ने एक कवित खानखाना की सेवा म

१ चकित भवर रहि गयो गमन नहिं करत कमल बन ।
 ग्रहि फन मनि नहिं लत तेज नहिं बहुत पवन धन ॥
 हस मानतर तज्यो चक्क चक्की न मिल अति ।
 बहु सुदरि पदानि पुरय न चह कर रति ॥
 लस भलित नैप कवि गग मन अमित तेज रवि रथ खस्यो ।
 खानखाना घरम सुवन जबहि क्रोध करि तग बस्यो ॥
 हि दी साहित्य का इतिहास—आचाय रामच द्र गुजल (१४वा स०),
 प० २६६ से उद्धृत।

सुनाया। उसका प्रसंग था कि सूप सोन के सुमेरू पदत के पीछे अस्त होता है। और सूर्यास्त के कारण चन्द्रवाक मिथुन का वियोग हा जाता है। अत चक्की प्रायना करती है कि किसी प्रकार खानखाना का मुमरू पर अधिकार हा जाय। उदार खानखाना विजयाल्लास म, समस्त प्राप्त घन को लुट्या देने हैं। अत सुमेरू भी लुट जायगा। सुमेरू लुटने पर सूर्यास्त का स्थान समाप्त हा जायगा। अत वह सदव चमकता रहेगा और इस प्रकार चक्की की वियाग व्यथा का मदा सबदा क लिए अत हा जायगा।'

वहने की आवश्यकता नही सूझ अछूती एव प्रिय थी। रहीम ने कवि महोदय से पूछा कि मनुष्य की आयु कितनी हाती है। उत्तर मिला सी वष। सीभाग्यशाली की आयु उस समय पैंतास वष की थी। अत शेष पसठ वष का, पाच रुपये प्रति दिन के हिसाब म घन पुरस्कार स्वल्प प्रदान कर दिया गया। ऐसी थी खानखाना की उदारता। इन गौरव गायाम्रो से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि उ हान कितन नय कवियों को प्रेरणा दी होगी और कितने पुराने कवियों के निखार म योगदान प्रदान किया होगा। मौ० गिबली का यह कथन सवथा सत्य है—“इस तरह की शाहाना फयाजियाँ और गायराना नुख्ता सजिया ने गैरो शायरी के हक मे अबरे करम का काम किया।”'

कविया न खानखाना की जितनी प्रशस्तिया गाई हैं उनका औचित्य उसके गुणा के कारण और भी बढ जाता है। खानखाना कवि को कवल अतुलनीय पुरस्कार ही नही देत थे अपितु इस सम्मान के साथ पुरस्कृत करते थे कि कवि गद गद हो जाता था। एक तथ्य और। वे अपने कवियों की प्रशंसा म स्वय भी काव्य रचना करते थे। राजा नदावा मे ऐसा कदाचित ही कोई मिल। कहत हैं कि भाट कवि भासकरण जह्वा ने कतिपय उत्कृष्ट डिगल दाहा म रहीम की प्रशंसा की। उदाहरणार्थ एक दाहा प्रस्तुत है—

खानखाना नब्बाव रे खाडे अग्न खिबत।

जल वाला नर प्राजल, तण वाला जीधत ॥

अर्थात् हे नबाव खानखाना। तेर खाड (तलवार) की आग अद्भुत है। उममे जा पानी वाले या अपनी तलवार के पानी पर भगोसा करने वाले अर्थात् अपने को बीर समझने वाले हैं वे ता जल मरत हैं और जा तण धारण करने वाले हैं अर्थात् विनम्र हैं वे जीवित रह जात हैं।

रहीम ने प्रत्येक दोहे पर एक लाख रुपये देकर कवि को पुरस्कृत करना चाहा जिस कवि ने अस्वीकार कर दिया और माँगा कि सन्न्यास से मन्गाराणा प्रताप क भाई के लिए जहाजपुर का परगना दिलवा दिया जाय। रहीम ने प्रयत्न किया और वे सफल हो गय। कि तु 'जह्वा के दोहा से वे इतने प्रभावित हुए कि उहाने

अद्वितीय आश्रयदाता थे अपितु स्वयं भी उत्कृष्ट कवि थे । सभाट अक्बर ने उन्हें यदि काव्य और कला की रचना में ही लगे रहने दिया जाता तो गार्हित्य का इतिहास आज कुछ और ही होता है । मो० गिबली का कथन है—

खानखाना इस दरजे का सखुन मज था कि अगर गायरी में पड़ता तो उरफ़ी और नसीरी का हमसर होता ।^१ उनकी गयला या तो गल सादी के समान सरल और प्रभावकारी माना जाता है ।^२ वे गजबे नमुने के तौर पर नेदल अजम, हफ़त अकलीम तजकिरे पुरजांग अघासिरे रहामी तथा तुजके जहाँगीरी आदि में देखी जा सकती है । विद्वानों ने यह सिद्ध कर दिया है कि रहीम ने अनेक पेशवर फारसी शायरा का काव्य कला की साधना में बहुत पीछे छोड़ दिया था ।^३ वेद है कि उनका लिखा फारसी दीवान आज तक उपलब्ध नहीं हुआ । उदाहरण के लिए रहिमान विलास में उद्धृत एक गेर प्रस्तुत है—

अदाए हक्क मुहब्बत इनायत ज दोस्त,
अगरन खातिर आंगिक बहेच खुसदस्त ।
न जुल्म दानमो नदाम इ कदरदानम,
के पाता बेह सरम ब हवों हस्त दर खवस्त ॥

अर्थात् यह तो उनकी कृपा है कि वे मेरे प्रेम का प्रतिदान प्रदान करते हैं अथवा मैं तो उनसे बस भी सदैव प्रसन्न हूँ । मैं नहीं जानता कि उनके बश का बंधन अधिक सुन्दर है या लटायों की लटकन भरे लिए तो आपादमस्तक उनका प्रत्येक श्रम सुन्दर है ।

ससृष्ट और रहीम

कभी समय था जबकि भारत के कण कण ससृष्ट श्लोका की ललित कलित ध्वनि निःसृत होती थी । किन्तु दश की पराधीनता के साथ संस्कृत का भी पराभव निश्चित था । कारण प्रत्येक विजता, शासन के साथ ही अपनी भाषा भी लाता है । उन्मत्त जातिवादी विजितों की सम्यता एक ससृष्टि के अध्ययन एक संरक्षण का भी प्रयत्न करती हैं जबकि अनुदार जातिवादी ऐसा नहीं कर पाती । इस्लाम का अनुत्तरता जगत् प्रसिद्ध है । स्वयं मुसलमान लेखक भी इस सत्य का स्वीकार करने में हिचक नहीं है ।^४ अलबरूनी इस तथ्य का प्रमाण है । अति दक्षी अकबर ने इस स्थिति का विरोध कर मुसलमान विद्वानों का ससृष्ट का सम्भव ज्ञान प्राप्त करने के लिए विवश किया । रहीम भी अपवाद न थे । उन्होंने न केवल ससृष्ट के धर्म ग्रन्थों का अध्ययन किया अपितु ससृष्ट काव्य रचना में भी दक्षता प्राप्त की । इतना ही नहीं वे धार्मु

१ नेदल अजम, मो० गिबली भाग ३ पृ० १३

२ अमूररहीम खानखाना डा० ममरबहादुरसिंह पृ० २८५

३ ए हिस्ट्री आफ़ परगि० लिट्रे० एट द म्यूजल काट, आर०पी० ममानी पृ० २२५

४ अलबरूनी कृत भारत प्रथम भाग अनु०सराम (द्वि०सं०) पृ० ४

रचना करने तथा अशुद्धि साधन में भी समय हो गए। उस युग में संस्कृत में जितनी गति रहीम का प्राप्त थी, उतनी किसी अन्य मुसलमान विद्वान् यहाँ तक कि विद्वत् शिरामणि अबुलज्जल और फकीर का भी प्राप्त नहीं थी।

कहते हैं कि एक बार जगन्नाथ त्रिगुली ने अपने युग के तथाकथित महापुरुषों पर यह श्लोक लिखा—

प्राप्य चलानधिकारान् गन्तुं मित्रेषु बन्धुवर्गेषु ।

नापकृत नोपकृत न सत्कृत किं कृत तेन ॥

अर्थात् राज्याधिकार प्राप्त कर लेने पर जिनसे शत्रु मित्र और बन्धुओं का प्रमत्त अपकार उपकार और सत्कार न किया तो क्या क्या? सत्त्वं परोपकारी रहीम चुपकस रहते, उन्होंने तुरन्त श्लोक का इस प्रकार परिवर्तित कर दिया—

प्राप्य चलाधिकारान् गन्तुं मित्रेषु बन्धुवर्गेषु ।

नोपकृत नोपकृत नोपकृत किं कृत तेन ॥^१

अर्थात् राज्याधिकार प्राप्त कर, गन्तुं मित्र और बन्धु सभी का उपकार न किया तो उसने क्या किया। निश्चित ही संस्कृत काव्य गौरव तथा आदर्श गरिमा की दृष्टि से यह सुधार स्लाघनीय था।

खानखाना-प्राण्डित्य बरण के प्रसंग में दूरी अधिपति महाराज मानसिंह के आश्रित कवि सूरजमल ने अपने राजस्थानी ग्रंथ बग भास्कर में अनेक घटनाओं का बरण किया है। प्रसंगवश एक घटना उपस्थित है। एक बार कोई दुखी संस्कृत पण्डित मुसलमानों का कासते हुए पाप दे रहा था और इस प्रसंग में पत्नी विभक्ति का प्रयोग कर रहा था जबकि संस्कृत व्याकरण के अनुसार केवल पक्षमी विभक्ति का प्रयोग ही विहित है। सयोगवग खानखाना भी उधर आ निकले। उन्होंने ब्राह्मण का ध्यान देस अशुद्धि की आर आकर्षित किया। वह सत्पका गया और लज्जित ब्राह्मण से कुछ कहते न बना। उसने अपनी फटी पुरानी पगड़ी उतार कर खानखाना के पैरों पर रख दी और खानखाना ने उस चिथड़े को अपने सिर पर स्थान दिया। तदनंतर उदारता की प्रत्यक्ष प्रतिमूर्ति रहीम ने उस ब्राह्मण को प्रभूत द्रव्य देकर कष्ट मुक्त कर दिया। निश्चित ही इतने योग्य खानखाना ने किसी संस्कृत काव्य की रचना की होगी, कि तु ज्वातिप क मिश्रित ग्रंथ खेट कौतुकम्' तथा कुछ श्लोकों को छोड़कर उनकी काई भी संस्कृत कृति प्राप्य नहीं है। हाँ, प्राप्य श्लोकों के आधार पर खानखाना के भाव विचार गली तथा काव्य प्रतिभा का अनुमान अवश्य लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए यहाँ दो श्लोक प्रस्तुत हैं—

रत्नाकरोऽस्ति सदन गृहिणी च पचा

किं देयमस्ति भवत जगदीश्वराय ।

१ कटोपूगन आफ मुस्लिम्स टू संस्कृत सनिग—डा० निमल चौधरी, (१९५४ कलकत्ता) भाग २ प० १८

राधा गहीतमनसे मनसे च तुम्य
दत्तमया विजमन स्तद्विद महाण ।^१

अर्थात् भगवन् ! आप का निवास (राना की खान) रत्नाकर (सागर) में है और उस पर भी पत्नी है स्वयं लक्ष्मी जी । तब हे जगदीश्वर ! कौन सी वस्तु आपको भेंट की जाय । मरी समझ में तो आपको पास एक परम आवश्यक वस्तु का अभाव है । अतः वही मैं भीमन को समर्पित करना चाहता हूँ । वह वस्तु है हृदय । आपका हृदय तो श्री राधारानी ने चुरा लिया है अतः आप ध्यानबल बिना हृदय व हैं—हृदयहीन हैं । और यह स्थिति अच्छी नहीं । प्यार प्रभु यदि हृदयहीन हो गए तो भक्त कहा जायगे । इसलिए महाराज ! मैं अपना हृदय आपको समर्पित कर रहा हूँ । स्वीकार कीजिए । इसमें मरा भी कल्याण, आपका भी तथा जनसाधारण का भी कल्याण है । एक श्राय श्लाक में उनकी भक्ति भावना इस प्रकार फूटी है—

अहिल्या पापाण प्रकृतिपगुरासीत् कपिचम् ।
गुहो भूच्चाडालभ्रितयमपि नीत निजपदम् ।
अह विलनाम पगुरपि तवार्चादिकरणे ।
क्रियामिश्चाडालो रघुवर नमामुद्धरति किम् ।^२

पापाणी अहिल्या पगु प्रकृति कपि समूह तथा तीव्र निपादराज इन तीनों का अपन अपन चरणा में गरण प्रदान की । हे रघुवर ! (माना कि) मैं (भक्तिभाव में) पापाण पूजाभाव में पगु और कार्यो में चाण्डाल हूँ । (पर तु अपना परम्परा के अनुसार) आप मरा उद्धार क्या नहीं करत ।

अपने प्यारे प्रभु से ऐसी विदग्धता पूरा विनम्र स्तुति तथा मिठास भरी माँग जीव संवधा स्पष्टणीय है ; भाव क साथ ही भाषा भी कम श्लाघनीय नहीं । भाषा के सम्बन्ध में तो उन्होंने और भी कई प्रयोग किए थे । 'छोट कौतुकम यदि ससृष्ट और पारसी मिश्रित भाषा में लिखा गया है तो मदनपाठक ससृष्ट और रसता मिश्रित भाषा में—

द्रव्यातत्र विचित्रतां तदलना मैं था गया वाय में
काचित्तत्र कुरङ्ग शायनयना गुल तोडती धी लडो ।
उमद्रभ्रधनुषा कटान विगिब घायल किया था मुझे
तत्तोदामि सदव मोह जलधो ह दिल गुजारो गुजर ।^३

हिंदी और रहीम

रहीम युग द्रष्टा कवि थे । उ हाने तुर्की, पारसी और ससृष्ट इत्यादि में जिस प्रमुख अभाव का देखा उस पूरा करने की दार्शिनिकी । दुभाग्य यह रहा कि इस

१ कट्टीयुग्मन आफ मुस्लिमन दू ससृष्ट तनिग भाग २ प० २० तथा रहीम रत्नावली प० २

२ वही पृ० २० तथा रहीम रत्नावली, प० ८२

३ रहीम रत्नावली, प० ८३

महामनीषी को काव्य रचना का यथेष्ट धमवर प्राप्त न हो सका। अग्रया की जाने कि सूर, तुलसी और केवव का समकालीन मठ कवि हिंदी काव्याकाश का 'सूर बनता, 'ससि बनता या 'उडगन' अथवा इन तीनों से भिन्न उपालोक बनकर एक अरार शृ गार की मधुभीनी रगोनी विकीण करता और दूगरी और नीति का उद्वोधक प्रकाश।

रहीम की हिंदी सेवाभा का अध्ययन अग्रय किया जाएगा। यहां तो इतना ही निवेदन करना पयाप्त है कि उ होने अग्रन युग की आवश्यकताभा का समझ लिया था। वे जानत थे कि भारत की कोटि कोटि जनता का लाभ न अरवी फारसी म हा सकता है और न तुर्की एक सस्कृत म। काव्यसदेग का सामाय जनमानस म उतारने वाली यदि कोई सवाधिक उपमागी भाषा है तो वह हिंदी ही है। यही कारण है कि अयाय भाषाभा म पूण गति रखते हुए भी उहाने सर्वाधिक आश्रय हिंदी को प्रदान किया और उसी म सर्वाधिक मात्रा म काय रचा की। दरवार म सम्मान प्राप्त कर आगे बने के लिए हिंदी जितनी अक्बर की श्रणी है उससे वही अधिक रहीम की। उहोने केवल हिंदी कविता को प्रश्रय ही नहीं दिया अपितु स्वयमेव रचना करके हिंदी काव्य-मन का एक नई प्रेरणा प्रदान की। इस प्रेरणा के फलस्वरूप कितनी रचनाएँ प्रस्तुत हुई यह तो नहीं कहा जा सकता किंतु हुई अवश्य थीं। रमइ पाठन के पुत्र माथुर चतुर्वेदी के कुल म उत्पन्न कवि आण की यह पत्तिया उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत की जा सकती हैं—

सवत सोरह से चोहतरि, चत्र चद्र उजियारि।

आयुस पाय खानखाना की, तब कविता अनुसारि।^१

खानखाना ही नहीं उनक ज्येष्ठ पुत्र एरिज बहादुर न भी पिता की नीति को आगे बगाना आरम्भ किया था। केशवदास ने जहाँगीर चरित्र उसी की प्रेरणा से लिखा था। यदि यह युवक जीवित रहता तो न जाने हिंदी को कितना प्रोत्साहन और मिलता।

उद्गू और रहीम

रहीम के हिंदी काय प्रेम के साथ ही उद्गू की चर्चा करना भी आवश्यक प्रतीत हाता है। रहीम का समस्त जीवन सनिका के साथ व्यतीत हुआ था। उस समय की संना म कुछ मिवाहा तूरानी थे कुछ ईरानी और कुछ हिंदुस्तानी। इन सबके सामूहिक निवास स संना म एक कामचलाऊ भाषा गढ ली गई थी जिने 'लशकरी जुवान या उद्गू कहा जाता था। रहीम के काल तक उद्गू साहित्यिक भाषा न बन सकी थी। गुमरा न इस प्रकार की मिली जुली भाषा म साहित्य रचने का प्रयास बहुत पहले किया था परंतु यह परम्परा चल न पाई थी और लशकरी जबान सामा य स्तर के काम काज तक ही सीमित थी। मौलाना गनी का कथन है कि रहीम न सामाय सनिका की भाषा म भी काय रचना की थी।^२ काय

१ रहीम रत्नावली प० ६०

२ ए हिस्ट्री आफ परगियन लंग्वेज एण्ड लिटरेचर, प० २७१

के रूप में उद्गू का प्रयोग काफी बढ की बात है। इसलिए हमारे विचार से रहीम ने भी उद्गू या रेखाता में प्रयुक्त कविता नहीं की। फारसी या गवली के मिश्रित होने के कारण हिन्दी ही कही बहा उद्गू जमी लगन लगी है। मदनमोहन का भाषा इसी प्रकार की समझनी चाहिए। जैसे मैं आगे चलकर रहीम ने लिचडी भाषा का प्रयोग बढ कर दिया था। प्रायु के विकास के साथ उनका काव्य चेतना विकसित होती गई थी और उसमें लिचडी भाषा के लिए कोई स्थान नहीं बनाया था।

रहीम तथा विदेशी भाषा

संस्कृत और हिन्दी तथा भारतीय भाषाएँ हैं ही, फारसी भी लगभग वही श्रेणी में आ गई थी क्योंकि वह तत्कालीन प्रशासकों का राष्ट्रभाषा थी। तुर्की मुगलता का पतन भाषा थी कि तु उसमें काव्य रचना आदि का क्षमता भारतीय सरदारों में समाप्त ही हो चुकी थी, किन्तु रहीम की प्रतिभा जो मजात थी इसलिए उन्होंने तुर्की में भी अच्छी गति प्राप्त कर ली थी और तुर्की में कविता करने की क्षमता रखता था। बाबर के अर्थ का अनुवाद तो वे कर ही चुके थे तुर्की के ही समान अरबी या विदेशी भाषा थी। फारसी, उस समय के हिन्दू मुसलमान सभी सीखता था। अरबी से मुसलमान ही परिचित रहते थे पर तु कुरान की कुछ आयतें याद करने का मननब अरबी सीखना नहीं था। आज भी मुसलमानों की स्थिति वही ही है। अपने यहाँ भी संस्कृत पढ़ना बान और है और पूजा पाठ के कुछ श्लोकों का कठाम्र कर लेना और बात। ही विद्वानों की बात अलग है। मुल्ता बग़ायती, अबुलफजल तथा अबुलफतह आदि विद्वान अरबी के भी ज्ञाता थे। रहीम भी इन्हीं में से थे। उन्हें अरबी का पूरा विद्वान माना जाता है और यह स्वीकार किया जाता है कि उन्हें अरबी काव्य रचना में भी गति प्राप्त थी।^१ नहाबदी ने रहीम के अरबी ज्ञान से सम्बन्धित एक घटना का उल्लेख करते हुए लिखा है कि एक बार अकबर को तीन पत्र प्राप्त हुए। वे पत्र इतने भावपूर्ण थे कि वह इनके मसौद को तुरन्त जान लेना चाहता था। पर तु समय रात्रि का था और पत्र अरबी भाषा की हिजाजी^२ बाली में लिखे गए थे। उसने रात में ही दरबार के तीनों विद्वानों—अबुलफजल अबुलफतह तथा रहीम का बुला भेजा। प्रथम दाना मोनविया ने ज्ञान के माहित हान के कारण अनुवाद के लिए रात भर का समय माँगा। किन्तु अकबर का यत्नता बढती जा रहा थी। उसने निराश नेशा से रहीम की आर देता। रहीम पत्रों का उकर पास में जलत हुए दीपक की ओर बढ़ा और सभी को उबिन करते हुए पत्रों का सारांश मभाट का सुना दिया।^३

१ रहीमन विलास, अजर नदास पृ० ३०

२ काठ पोइटस आफ ईरान एण्ड इण्डिया, आर० पी० मसानो, प० १३६

३ इस घटना से रहीम का उल्लेख अरबी ज्ञान सिद्ध है।

तुर्की और अरबी तो फिर भी किसी न किसी प्रकार से मम्बद्ध भापाएँ थीं किंतु आश्चर्य तो यह जानकर होता है कि यूरोपीय भापाएँ मा रहीम से सीखी थीं और अरबों की आर से उन भापाओं में पत्र भी लिख दत्त थे।^१ इतना ही नहीं मुसी देवी प्रसाद ने इतिहासकारों की साक्षी देत हुए रहीम के सप्त भापाविद होने की चर्चा की है।^२ मग्रासिर, उल उमरा में ता पथ्वी की और भी कई प्रचलित भापाओं में बात कर सकने की योग्यता की चर्चा की है। अरबों की दरवार में भी इन तथ्यों का स्वीकार किया गया है।^३ निश्चित है कि विभिन्न स्वदेशी और विदेशी भापाओं का ज्ञान प्राप्त करने में रहीम की प्रतिभा अद्वितीय थी। वे अपने युग के कदाचित्त सबसे अधिक भापाएँ जानने वाले और अधिकश भापाओं में काय रचना की क्षमता रखने वाले विलक्षण विद्वान थे।

हिन्दुत्व प्रेमी रहीम

विश्व के सभी तथाकथित धर्मों के पुरोहित अपने हाथ में कुछ विशिष्ट अधिकार रखते चले आये हैं। इस्लाम भी इसका अपवाद नहीं। वहाँ कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनके उत्तर का अधिकार मुल्लाओं तक ही सीमित है। धार्मिक सहिष्णुता एवं उदारता का समयक अरबों इस अपनी नीति विस्तार में बाधक समझता था। हिन्दुओं को अधिक अधिकार देने के लिए मुल्लाओं के विशेषाधिकार का समाप्त करना आवश्यक था। अतः उसने सामंजस्य दण्ड भेद से काम लेकर अपने युग के प्रमुख मुल्लाओं में फूट उत्पन्न कर ली थी। कुछ को आपस में लडाकर, कुछ को विशिष्ट कृपा पात्र बनाकर कुछ का उपक्षित कर तथा कुछ को हिन्दुस्तान से बाहर हज करने के लिए भजकर मुल्लाओं की शक्ति को विक्षोभित कर दिया था।

जिन धर्मों के आधार पर मुल्ला तथा इमाम आदि, विशिष्ट समरथाओं के निराकरण सम्भव थी अधिकार अपने पास रखते व अरबों न उन्हीं प्रथा में से ऐसे उदघरण एकत्रित करा लिये थे जिनके अनुसार राजा की सत्ता को सर्वोपरि स्वीकार किया गया है। और इस प्रकार के उदघरणों का सकलन करने के पश्चात् सम्राट ने एक लख तयार कराया था जिसके अनुसार विशिष्ट अधिकार इमामादि के स्थान पर सम्राट का था। इतना ही नहीं उसने इस लेख पर प्रसिद्ध प्रसिद्ध मुल्लाओं के हस्ताक्षर भी ले लिये थे। और यह एक महान शक्ति एवं वास्तविक उपलब्धि थी।

निश्चितता के साथ अरबों जब उदार पथ पर बढ़ा तो उसका सम्यक परिणाम अवश्यभावी था। सभी प्रदेशों में धार्मिक कटुता कम हो गई। मुसलमान भी हिन्दुओं के त्योहारों में उत्सवों में सम्मिलित होने लगे तथा मत्स्य आदि के अवसर पर दाही मूख मुडाकर भद्रा आदि बराने की रस्म अपनाने लगे। सम्राट स्वयं हिन्दु

१ रहीम रत्नावली, प० १२

२ खानखानाखाना, भाग २ प० १६०

३ अरबों की दरवार भाग ३, प० ३८३

पट मूछ रातत राजपूत राजाघा जग वसत्र पहाने तथा मन्त्रि म जान प । इतना हा नहीं उ होने राजपूतो के साथ राटो वेठा का सम्ब प भी स्थापित कर लिया था । भक्त ही कुछ विद्वान इन प्रिया कथाया म बूटनीति क दगन करत हा कि तु इतना निश्चित है कि य कृत्य कोरा शिगावा नहीं थे । अक्षर का आत्मा भी उन कामा में रमती थी ।

जा हा इतना निश्चित है कि अक्षर की इन नीतिया क परिणामस्वरूप हिन्दुमा की सामाजिक एव राजनतिक स्थिति म आगातान मुधार हुआ । हिन्दू न केवल अक्षरों के दरबार के नवरत्ना म समाहित हुए अपितु राज्य का बड़े से बड़ा दायित्व भी सम्भालने लगे, वित्त, आंतरिक प्रयत्न तथा सना जस सर्वोद्दष्ट पना पर टोडरमल बीरबल तथा मानसिंह ही प्रतिष्ठित थे । इन सब क परिणामस्वरूप पारस्परिक सहयोग एव सद्भाव का वातावरण तयार हुआ और नयी पीढा की धार्मिक कटुता से मुक्त एक मूल वातावरण म जीवन का अवसर मिला । रहीम ऐसे ही वातावरण की उपज थे । वे जन्म से मुमलमान थे और अतः तब मुमलमान ही रह । इस्लाम हित क काय भी निरंतर करत रह । उन्होंने मयरा यात्रिया क लिए कर मुक्त जहाज चलान की योजना बनाई और मस्जिद क लिए नाना सुविधाया की व्यवस्था की । यही कारण है कि धार्मिक उदारता का विरोधी तथा अतुलपरत मानसिंह यही तक कि सनात अक्षर क लिए भी तुकादपक्षर गालियाँ देने वाला मुन्ला बदायूनी रहीम की सुराई नहीं करता ।

पर तु उनक व्यक्तित्व एव काय क अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दू एव हिन्दुव के प्रति रहीम के मन म महान आस्था थी । उनक आका का पढकर प्रतीत होता है जस रहीम स्वयं भगवान राम तथा कृष्ण की मूर्ति के चरणा म कर बद्ध उपस्थित होकर उनसे भक्त सुलभ नाना तर्कों द्वारा अपने उद्धार की याचना कर रहे हा—

आनीता नदवमया तव पुर श्रीकृष्ण या भूमिपर ।

प्रतिस्त्व यदि चेति नरीक्ष भगवन स्वप्रापित देखिमे ।

× × ×

र धा गहीत मनसे मनसे ख तुम्ह

दत्त मया निजमनस्तदिव गहाण ।

× × ×

अह चित्तनाइम पशुरपि तवाचाविकरणे ।

त्रियाभि.चाडाला रघुवर नकामुद्धरसि किम् ।

इत्यादि ऐसी पक्तिया हैं जो कवि को आत्मा के अतन्तम से निसन प्रतीत हाता है । निम्नलिखित बरवो म यह स्वर और भी स्पष्ट सुना जा सकता है—

मोहन जावन प्यारे कस हित कीन ।

बरसन ही कों तरफन, ये दग सीन ।

भजि मन राम सियापति, रघुकुल ईस ।

दीन कधु बुल टारन कीसत थीस ।

भजि नरहरि नारायण, तजि बन्धाव ।

प्रकट खम्भ ते राख्यो जिन प्रह्लाद ।^१

उनके अतिरिक्त अन्य चितने ही बरवें उदघत किए जा सकते हैं जिनसे उनका सगुण विश्वास तथा हि दुःख प्रेम स्पष्ट प्रतिभासित होता है । नाथ जी के मंदिर के दगानों से सम्बद्ध भक्तमाल म उदघत दा पदा से ऐसा प्रतीत होता है कि कवि माना सुपुत्रि अवस्था म बठा हुआ मुरली मनोहर पीताम्बरगारी कमलनयन मनमोहन कृष्ण की मधुमय छवि का छक छक कर रस पान कर रहा है । भगवान के रूप वरान की आसक्ति उनके विनाल नेत्रों का आकषण रहीम की आत्मा को भकभोर रह है । वह आकुलता पूण पदावली देखते ही बनती है—

छवि आवन मोहन लाल की ।

बाछे काछनि कलित मुरली कर पीत पिछौरी साल की ।

धक तिलक बेसर बे कीने, दुति माना विधु माल की ।

बिसरत नाहिं सखी मो मन तें चितवान नयन बिसाल की ।

या सरूप निरख सोई जानै इस रहीम के हाल की ।^२

रहीम को कृष्ण के नेत्र भाल और कर-कपाला ने ही आकषित नहीं किया था, वे उनकी मद मद मुस्कान अमृतमयी बतरानि तथा विनाल चन्द्रस्थल पर मुक्त माल की यहरानि से भी कम आकृष्ट न थे । रासलीला और नृत्य के समय पीताम्बर का पहरना रहीम के हृदय मे उतनी ही गहरी अनुभूति उत्पन्न करना था जितनी की अन्य किसी भक्त के हृदय म—

कमल दल नननि की उमानि ।

बिसरत नाहीं सखी मो मन ते मद मद मुमुकानि ।

चढी रहे चित उर बिसाल की मुकुतमाल यहरानि ।

नृत्य समय पीताम्बर हू को पहरि पहरि फहरानि ।

अनुदिन श्री वृंदावन ब्रज ते आवन आवन जानि ।

अब रहीम चित ते न टरति है सकल स्याम की वानि ।^३

इन पदा का पदत ही भक्त शिरामणि सूरनाम का स्मरण है आना स्वाभा विव है । वसी ही आसक्ति वसी है ललक, वही निष्ठा और वही विनम्रतापूण आकुलता और सबके ऊपर भाषा का सौकुमार्य सारत्य एव प्रवाह । भाव मापा छट समी दृष्टियों से पद सूर स होड लेने का तयार है । काग ऐस कुद पत् और मिल पाते । पद ही नहीं रहीम का भक्त हृदय घनाभरो और सबया म भी फूटा है । उनकी प्रेम धारा सबया मे ता और सवा मुनी हारर वही है । इन सबया और घनाभरिया मे सगुण रूप के प्रति निष्ठा, महाभारत पुराणा के क्षेत्रा क उदाहरण

१ रहीम रत्नावली बरव प्रसंग प० ६३

२ वही प० ७८

३ रहीम रत्नावली प० ८६

देवी देवताओं के प्रति पूज्य भाव सभी बुद्धिमान का है। नीति भक्ति निष्ठा तथा वाक्य गरिमा आदि से एक साथ अपूरित बंगला परम्परा की एक शनादारों का अल्लाह की लिए—

बडेन सा जान पहचान क रहीम कहा,
जो प करतार ही न मुख देन हार है ।
सीतहर सूरज सों नह कियो पाही हेत
ताहू प कमल जारि डारत तुवार है ।
क्षीर निधि माहि घस्यो शकर क सीत बस्यो,
तऊ न कलक नस्यो ससि मे स्या रहै ।
बडी रिक्कार है चकार दरबार है
कलानिधि सो यार तऊ चाखन अगार है ।^१

स्पष्ट है कि रहीम की दृष्टि में मुख उच्च पद बडा की जान पहचान से नहीं अपितु प्रभु का कृपा से मिलता है। सूर से स्नेह होते हुए भी तुवार कमल का जना डालना है चंद्रमा से एकनिष्ठ प्रेम होते हुए भी खजूर को आग ही भलनी पडती है। भाग्य में बडा दुख क्या प्रयत्नों से हट पाता है? बेचारे चंद्रमा ने कौन कौन से उग्रम नहीं किये क्षीर सागर तथा भगवान शकर के शीश जमे उच्च एक अप्राप्य स्थला को प्राप्त करके भी क्या उसका बलक मिट पाया? कहने का आवश्यकता नहीं कि अक्बर और जहाँगीर आदि में घबिष्ठतम सम्बन्ध होते हुए भी रहीम का अन्तिम जीवन ताप शाप से अपूरित रहा है। अतः यह अनुभव उनक अपने जीवन का अनुभव है और अति यक्ति कर्मता, चकोर क्षीर सागर एवं शकर शीश के माध्यम से हुई है—गुला गुलनुन के माध्यम से नहीं। यही है रहीम का निरुत्तम प्रेम। कतना ही नहीं जिस प्रकार भाग्य में बडा दुख हटाने नहीं हटता उसी प्रकार भाग्य में बडा सुख भी प्राप्त होकर ही रहता है। एक सबया नीजिए—

धीनु चहै करतान जिहँ मुख सो तो 'रहीम टर नाह टारे ।
उद्यम पीरय क। हँ यिता धन आवत आपुहि हाथ पतारे ॥
बय हने अपनी अपना विधि के परपच न जात विचारे ।
बेटा भयो बमुदय क घाम श्री बुदनि बाअत न द क द्वारे ।^२

यहां हम उस बात विचार में नहीं पडना चाहते कि रहीम भाग्यवादी था या पुण्यायवादी। देवता यह है कि उ होने जा कुछ भा कहा है वह हि दुआ की शली में हि दुआ क था था क उपाहरण लेते हुए कहा है। उसे इमका तात्पर्य यह नहीं कि रहीम न भाग्य पर ही तिजा है पुण्याय पर नहीं। उनका तो सारा जीवन ही पुण्याय का मूर्तिमान उदाहरण था। अतः पुण्याय का प्रतिपादन भी उनके वाक्य में हुआ है और वह सब भी हिन्दू धर्म से सम्बद्ध कथाओं के आधार पर। अधिक नहीं एक ही

१ रहीम रत्नावली प० ७६

२ वही प० ७७

उदाहरण पर्याप्त होगा—

जो पुरुषारथ ते कहूँ सपति मिलत रहीम ।

पेट लागि बराट घर तपत रसोई भीम ।^१

स्पष्ट है कि यहाँ भी तथ्य पुष्टि का आधार तूर और तूर नहीं बैराट और भीम हैं, जो हिन्दुओं के पूज्य अथ महाभारत के पात्र हैं। महाभारत रामायण तथा पुराणों इत्यादि से सम्बद्ध अनेकानेक सदभ प्रस्तुत किए जा सकते हैं। तीना का एक-एक उदाहरण प्रस्तुत है—

राम न जाते हिरण सग सोय न रावण साथ ।

जो रहीम भाबी कतहुँ होति आपुने हाथ ।

रहीम दुरदिन के परे बडेन किए घटि काज ।

पाच रूप पाडव मए रथवाहक उत्तराज ।^२

मागे घटत रहीम पद कितो करो बडि काम ।

तीन पर बसुधा करी, तऊ बावन नाम ।^३

इस प्रकार रहीम के काव्य को देखकर यह स्पष्ट हो जाता है कि रहीम की हिन्दू परम्पराग्राही रीति रिवाजों और धर्म ग्रन्थों के प्रति गहरी आस्था थी। इस आस्था और ज्ञान का प्रयाग जिस विस्तार एवं शुद्धता के साथ रहीम ने किया है वसा अथ मुसलमान कवियों में सहज प्राप्त नहीं। कुछ कवियों ने तो हिन्दू सदभों में भयकर भूलें भी की हैं। जायसी की भूलों का आचायक पं० रामचन्द्र गुल्ल बहूत पहले गिना चुके हैं। रहीम के काव्य का आद्यापात अध्ययन कर लेने के पश्चात् एक भी स्थल ऐसा प्राप्त नहीं होता जिससे हिन्दुत्व के प्रति किसी प्रकार की अनास्था या अगुण्डि प्रकट हो। नास्नीय अतकथाग्रा घटनाओं एवं तथ्यों को बकुछ इस प्रकार प्रकट करते हैं जिससे उनका हिन्दुत्व प्रेम का प्रकट होता ही है साथ में मस्जिद कविया जसी पुनीत मौलिकता भी प्रतिभासित होती है—

जे गरीब पर हित करें, ते रहीम बड लोग ।

कहा सुदामा बापुरो कृष्ण भिताई जोग ।^४

बडे दीन को बुल सुने सेत दया उर आनि ।

हरि हाथी सों कथ हति, कहूँ रहीम पहिचानि ।^५

स्पष्ट है कि रहीम के हृदय में वैष्णवी श्रद्धा की परम पुनीत एवं प्रबल मन्ता किनी प्रवाहित थी। उसी पुण्य जन के प्रताप से रहीम के मन की सम्पूर्ण धार्मिक कटुता धुल धुल कर समाप्त हो गई थी। जितनी श्रियता निष्ठा एवं वैष्णवी

१ रहीम रसनावली प० ७

२ वही प० १६

३ वही, प० १४

४ वही प० ७

५ वही प० १२

सूभ बूभ उनके कव्य म प्राप्त होनी है उतनी अनेकानेक तथाकथित हि दुमों के काव्य म भी नहीं है। मुसलमान होते हुए भी उ होने हिंदी और हि दुख की जितनी सेवा की है उसके लिए सभी हि दू उनके श्रेणी हैं। अत यह मुसलमान कवि उतने ही अपितु उसम भी अधिक आदर का पात्र है जितने कि सर तुलसी और नंददास। स्पष्टहीय थी उनकी श्रद्धा और श्लाघनीय था उनका विश्वास—

धर धरत निज सौस प कहु रहीम केहि काज ।
जेहि रज मुनि पत्नी तरी सो दूढ़त गजराज ।^१

रहिमन को कीउ का कर ज्वारी चोर, लवार ।
जो पत राखन हार है माखन चाखन हार ।^२

धम-निरपेक्ष भारत के लिए क्या रहीम का काव्य राष्ट्रीय चेतना का आदेश प्रेरणा स्रोत नहीं हो सकता ?

रहीम के 'यक्ति व सम्बन्धी विभिन्न पक्षा का अध्ययन कर लेने पर भी उनके कतिपय अग्र गुण गत पष्ठा की सीमा मे नहीं आ पाए हैं। अत संक्षेप म उनका उल्लेख कर देना अप्रसांगिक न होगा। रहीम का अध्ययन करते हुए हमे यह नहीं भूलना चाहिए कि वे अकबरी दरबार की उपज थे। नवरत्नों म स्थान ग्रहण करने के लिए जिन अनेक गुणों की आवश्यकता हाती है वे प्राय सभी रहीम के 'यक्ति' म समाहित थे। उनके 'यक्ति' मे विरोधी गुणा का अपूर्व सामंजस्य दिखाई देता है। वे जितने नीति कुशल और गम्भीर थे उतने ही हसमुख और विनोदप्रिय भी। एक बार की बात है कि वे मानसिंह के साथ शतरज खेल रहे थे। शत यह भी कि जो हारेगा उस बिल्ली की बोली बोलना पड़ेगी। रहीम ने जब अपना पाला हारता हुआ दला तो उठ के लडे हो गए और आवश्यक काय का बहाना करके जाने लगे। मानसिंह ने जाने से पूर्व बिल्ली की बोली बोलने का आग्रह किया। इस पर रहीम दामन छुडाते हुए बोले— 'गुमादामनम् न गुजारीद भीमायम, भीमायम्।' अर्थात् दामन छाडिय मैं आता हूँ मैं आता हूँ। उन्हने की आवश्यकता नहीं कि रहीम अपने वाक्य के अंत म मियाऊ मियाऊ कहकर बिल्ली की बोली बोल चुके थ। उस घटना स विनादप्रियता के अनिरिक्त उनकी अवसरचित अभिनय दाता प्रत्युत्पन्न मति एव वाक पठना भी स्पष्ट हो जाती है। उनका वाक पठना ने ता जीवन म अनेक बार उनकी रक्षा की थी। गाही स्वभाव होने के कारण वे अपने महल म ठाठ वाट की उन वस्तुमा को भी रखते थ जा केवल राजा के लिए ही विहित है। इस तथ्य की बुगली अकबर स लगाई गई। तथ्य निरूपण के लिए आया अकबर उन ठाठ का दखनर दग रह गया। पूछन पर रहीम ने उत्तर दिया— 'यह सब वस्तुएं हज़ूर के हाँ लिए हैं जिसस कि यहाँ पधारने पर आपनी कष्ट न हो। और

१ रहीम ररनावली प० ११

२ वही प० १७

आवश्यकता की सारी चीजें तैयार मिलें तथा मुझे भी किसी में याचना न करनी पड़े। अथवा इस वाकपटुता से बहुत अधिक प्रभावित हुआ था।

वाकपटुता के साथ ही व्यवहार कुशलता उनके चरित्र का बहुत बड़ा गुण थी। इसके बहुत में उदाहरण उनकी जीवनी से स्पष्ट हैं। उनकी जीवनी से यह भी स्पष्ट है कि रहीम युद्ध में जितने निष्पूर थे दासि के समय उतने ही रसिक। 'तजकिरे हुसनी में एक' घटना का उल्लेख हुआ है, जिसमें उनमें किसी कवि ने कहा था—

'मरी चन्द्रमुखि प्रियतमा यदि प्राण मांगे तो कोई हज नहीं कि तु वेद है कि वह मुझसे एक लाख १० मांगती है। अतः हूँ उदारप्रेता खानखाना मेरे प्रेम की रक्षा करा।' प्रेम की पीठ के पारखी खानखाना ने उसे एक लाख छ हजार १० दकर विना किया। एक लाख प्रमिका का देने के लिए और ऊपर के छ हजार मोज उदान के लिए। इसी प्रकार की दूसरी घटना है कि एक बार उहाने वर्षा में भी अपने मनिवा की छुट्टियाँ रद्द कर दी और उन सबको एक एक मोहर खिलाकर गिविग में ही उत्सव मनाने की आना प्रचारित की। कि तु किसी सैनिक ने उनसे कहा कि एक मोहर में उनका ता जून पूरा हो जाएगा कि तु उनकी उपस्थिति से पारिवारिक जना को जा प्रसन्नता मिलती उसमें वे बचित ही रह्यं। कहने की आवश्यकता नहीं कि कोमल चित्त रहीम ने बात को समझ कर छुट्टियों के रद्द करने की आना वापस ले ली।

चकत्ता वग परम्परा और मधासिग रहीमी में इस प्रकार की अनेक घटनाओं का वणन है। उन घटनाओं से खानखाना की विभिन्न रुचियों एवं चारित्रिक विपताओं का ज्ञान होता है। कहते हैं कि हमाम का आविष्कार उहाने ही करवाया था। सबसे पहला हमाम खानखाना न गुजरात में मोहम्मद अली मिलावर की देपरख में बनवाया था। पुस्तक संग्रह के शौकीन रहीम क कारीगरा ने ही जिल्दसाजी के काम आने वाला अंबरी का कागज तैयार किया था। खानखाना ने ही ईरान से पहले पहल बीज भेगवाकर गुजरात के गाँवा में खरबूज की बढिया फसल तयार कराई थी। व्यायाम में भी खानखाना को अत्यधिक रुचि एवं दक्षता प्राप्त थी। खेलों का शौक उह और भी अधिक था। जन प्रसिद्धि है कि उहाने गतरज पर कई पुस्तकें भी लिखी थी।

स्पष्ट है कि खानखाना का व्यक्तित्व अनेकानेक मानवीय गुणों से आपूरित था। वे त्रियात्मक व्यक्ति थे। अने गुणों के साथ साथ कुछ न कुछ कमियाँ भी अवश्य रही होंगी। उनके गराव पीने के उल्लेख भी मिलते हैं और दासि प्रेम के भी। मांस भक्षण का ता कहना ही क्या कि तु यह सब तत्कालीन राजा नवाबों के मूषण माने जाते थे दूषण नहीं। उनके चरित्र के सबसे बड़े दूषण को व्यक्त करने वाली घटना गाहजहाँ के साथ गादावरी तट पर महावत का संधि और उसको निखे हुए सी निगाह वाले पत्र से सम्बद्ध है। यह रहीम के जीवन पर ऐसा कलक है जिसको इतिहास आज तक क्षमा नहीं कर पाया और न भविष्य में कर पाएगा

दूषण सहसा गुणा की आभाष मग्नुप नगण्य ही समझा जाना चाहिए। अतसो गत्वा व भी हाड मीस के घन हमारे जस प्राणी थे। ही इतना अवश्य है कि उनका जमा व्यक्ति-व उस युग व राज समाज म और विगपत अकबरी दरवार म दूसरा न था।

अपनी धार स अधिक बृद्ध त कहने हुए हम उही व समसामयिक समाज नितामुहान बहारा क प्रथ 'तबकाते नासिरी' का उदघरण प्रस्तुत करते हैं। 'इस समय खानखाना की अवस्था मतीम वष का है। आज स दस वष हुए इमन खान खाना का मसब तथा सनापति का एक प्राप्त किया था। इसन बहुत बडा

सेवाए की हैं। बड गड युद्धो म विजयी हुआ है। इस साथ धीर माय पुरुष व गान विद्या और गुणा व सम्बन्ध म जो कुछ लिमें वह मी म एक अर्थात् बन्ध पाडा है। इसने सब लोगा पर दया करने का गुण बडे बडे विद्वाना और पण्डितों को गिना फकीरा का प्रेम और कवि प्रवृत्ति मानो अपन पिता स उत्तराधिकार म पाई है। लौकिक ज्ञान और गुण की दृष्टि स इस समय दरवार म उसका जांच का अमीर और कोई नहीं है।' एम अन त गति व्यक्ति का यदि काव्यात्मक गगा का नीर प्रथवा 'हनुमन् वीर' बता दें ता इसम अत्युक्ति ही क्या है

साहिबू की साहिबी का रक्षक अनत गति
कीनो एक भगवत हनुमत वार सो।
जाको जस 'बेसौदास' भूतल के आस पास
सोहत छबीलो क्षीर सागर क क्षीर सो।
अमित उदार अति पावन विचारि चार
जहा तहा आदरियो गगा जो क नीर सो।
खलन क धालिब की खलक के पालिबे को
खानखाना एक रामचंद्र जू के तीर सा। —जहागीर चंद्ररा

निष्कर्ष

निष्कर्ष यह है कि, रहीम का 'यकित्व' सवतो-मुखी प्रतिभा सम्पन्न था। वे एक ही साथ सनापति, प्रशासक, आश्रयदाता दानवीर, कूटनीतिज्ञ, बहुभाषाविद कलापारखी, कवि एवं विद्वान थे। जन्मजात मुसलमान होते हुए भी हिंदुत्व के प्रति अपार निष्ठा उन्हें भारतीय श्रद्धा का पात्र बना देती है। वे कविया के कल्पतरु पात्रका व कण और गुणजना व भोज थे। विरोधी गुणा का बडा सु दर सत्तुलित सामग्रह्य उनके यकित्व म सर्वाहित था। सनापति की दृष्टता और कवि की कोमलता, दोनों ही उनके यकित्व का अभि न अंग थी। प्रशासका की यथायवादी दृष्टि भी उन्हें प्राप्त थी और कलाकारों की कल्पना प्रवणता भी। घन सग्रह को वे एतना आवश्यक समझते थे कि अबुलफजल के लाख कहने पर भी अफगानिस्तान पर आक्रमण करने के लिए तब तक सहमत न हुए जब तक की ठट्टा को हाथ म करके उनका मुठ्ठा गरम न हो जाय। दूसरी ओर घन म विमाह भी इतना

कि गंग को एक कविता पर ३६ लाख रु० जितनी बड़ी राशि पुरस्कार में दे डाली थी। इतना ही नहीं ७५ लाख जसी महान अरल्पनीय धनराशि उहाने सनिका का लुटवा दी थी।

सरल व्यक्तित्व के साथ ही वह कूटनीतिक दाव पचा के सिद्धस्त व। शत्रु को साम दामादि से कुछ इस प्रकार फँसाते कि वह लाभ प्रयत्न करने पर भी उनके जाल से छुटकारा पाने में अपने को असमर्थ पाता था। मिजा जानी जम काइयाँ चाँद धीवी जसी धीरागना, मुजफ्फर जैसे साहसी तथा हब्शी अम्बर जम दुधस यादगाभा का वश में करने की सामर्थ्य रहीम की ही थी। यही कारण है कि एक नहीं अनेक बार उन्हें दक्षिण में धुलाया गया। परंतु हार कर फिर भी दक्षिण कमान पर उही की नियुक्ति करनी पड़ा। लाग प्रण कर करके दक्षिण विजय के लिए गए कि तु रहीम से अधिक एक इंच भी आगे न उड़ सक। सच बाग ता यह है कि जिस आन्तिकाही कुतुबगाही सम्मिलित वाहिनी का रहीम सहज ही पराजित कर दिया करता था उही सनाओ ने रहीम के दक्षिण से लौटन पर मुगला का टिकना कठिन कर दिया था। इसी क्षमता के परिणामस्वरूप, जहांगीर न चाहते हुए भी उन्हें दक्षिण भेजने का बाध्य हुआ था।

वे हलानु चगज या उसके अर्थ वशजो की भाँति रक्त पिपासु मुसलमान न थे। नातिपूण समझीत करना, अनावश्यक हत्याओं से बचना तथा धन जन को यथ बरबादी न हाने देना उनकी युद्ध नीति के आवश्यक अंग थे। यही कारण है कि अलीखा जसे महत्वाकांक्षी शत्रु भी उनके गुणों से राक्ष कर मित्र बन गए थे और इन मित्रों ने अन्तिम इबास तक, लड़ते लड़ते प्राण योद्धावर किय थे। आष्टी सरखेज, नादात तथा सिंध के युद्ध उनके रण-नीशल व अमर कीर्ति स्तम्भ हैं। उनकी योजनाएँ इतनी विशाल तथा महत्वाकांक्षी होती थी कि अकबर और जहांगीर तक हस्तक्षेप करने में अपने को असमर्थ पाते थे। और मुह भागी धन जन की सहायता देने में ही कल्याण रामभूत थे। इतिहास साक्षी है कि रहीम की याजनाएँ ९५% सफल रही। वैसे सफलता असफलता देवाधीन वस्तु है किंतु अधिकांश युद्धों में उह सफलता ही मिली है। दक्षिण की जिन लड़ाइयाँ में वे असफल हुए उनका दायित्व रहीम पर न हाकर मुगल सेना क उन अधिकारियों पर है जो पारस्परिक विद्रोह के कारण अपने कर्तव्य को समुचित रीति से पूरा नहा करते थे। इस कमी का रहीम तो क्या मानसिंह अबुलफजल, महावतखा, परवज जहांगीर, गाहजहाँ और यहाँ तक कि सम्राट अकबर भी न मिटा सक। शाही सेना का गारितना युद्ध में निपुण न होना भी एक बहुत बड़ी सीमा थी, जिसके कारण रहीम और महावतखा की हा नहीं अपितु दो पीढ़ी पश्चात औरगजेब तक का मरठा सेना से मुँह की खानी पड़ी थी।

अन दक्षिण की कोई भी हार, कभी भी रहीम की अयोग्यता के कारण नहीं हुई। जो लेखक रहीम पर मरूरदर्शिता और उतावलेपन का आरोप लगाते हैं वह यह भूल जाते हैं कि उनके जैसे दूरदर्शी व्यक्ति सम्पूर्ण दरबार में दूसरा

या । आश्रमणा म उ हाने जब कभी भी शोघ्रता की तो यह क्षत्रपण का तयारा का विषय अबसर न मिलने दन क लिए ही । यदि इसका परिणाम कभी विपरीत रहा तो वह रहीम के वण की बात न थी । भावितर गन्धु भी ता मोम का बना नहीं हाता । हा जतना अवश्य है कि विकट परिस्थितिमा प फैसे ग्राह्यही क हित क विपरीत मन्त्रवतर्वा को पत्र लिखा तथा पवित्र कममा इत्यादि की परवाह न करन हुए भी शोदावरी के उम पार जाकर शाही सना स मिल जाना चाह वह कितनी भी विकट परिस्थिति म क्या न हा इलाघनीय नहीं था परंतु यही भी हम यह नहीं भूलना चाहिए कि रहाम साधु महात्मा नहीं राजनतिक क्षत्र के ध्यक्त थे ।

साहित्य क विद्यार्थी की सीमा का ध्यान रखते हुए हम इस विनाम म अधिक् नहीं पडना चाहते । क्योंकि हमारे लिए रहीम क इतिहास की अपेक्षा रहीम के स्वभाव चरित्र और काव्य क्षमता का अध्ययन अपेक्षाकृत अधिक् महत्वपूर्ण है । इस दृष्टि मे हम उह तुर्की शरबी फारसी संस्कृत एव हिन्दी का कुशल कवि एव विभिन्न विषया का पण्डित देखते हैं । जीवन-जगत के विविध क्षया का जिनका त्रियात्मक अनुभव रहीम का प्राप्त था उतना शकवरी दरबार क शय नवरत्नों का भा नहीं । विविध भाषाभाषा के सम्यक् ज्ञान और काव्य प्रतिभा म शक्य कवि बोरवन युग पण्डित शबुलफज्ज और साहित्य शिरोमणि फजी भी उनके सम्मुख नहीं टिक पाते । हम ता यहा तक कहेंगे कि अपने स्वनाम धाय मूर तलसी और रसतान आदि साहित्यकार कवल भक्त और कवि ही थे, जबकि रहीम भक्त कवि भाषाविद, ज्यातिपी दानवीर प्रशासक एव सेनापति सभी एक साथ थे । कुल मिलाकर उनके जसा बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति हिन्दी में हम दूसरा दिखाई नहीं देता । तत्कालीन कविमा ने इस तथ्य को अपने प्रकार से स्वीकार किया है । मु० शकबी जैसा कवि उनका का य त्रिपुणना को बणित करने म अपने का असमथ पाता है और नाज्जीरी यह स्वीकार करता है कि (निदाना क) पत्र म जब तक रहीम का का नाम नहीं था जाना लब तक पत्र गौरु से भागे नहीं बढता और उसका माहर के बिना समय का आन्श पूरा नहीं हा पाता—

जो गौरु नामे तो शक्य सफहा शपुजरत तहगीर ।

ज सातिमे तो निशा ता कजाए कर्मा गुद ॥^१

—नाज्जीरी निशापुरा

१ सर चश्मए इल्मी बहुरे माझनी

कग कज्ज जे आम्ता न जुम्बद ।

× × ×

शक्य हिस्सए दागरा गकबी

आ बेह कि नवे क्या न जुम्बद ॥ मु० शकबी ॥

मग्रासिर रहीमी (सम्पा० हिदायत हुयेन) खण्ड प्रथम (१६२) कलकत्ता ।

प० प० ८१

२ वही पृ० १६४

रहीम की रचनाएँ और उनका समय निर्धारण

रहीम की रचनाओं के अनेक सग्रह समय समय पर प्रकाशित होते रहे हैं।^१ इनमें अधिक महत्वपूर्ण हैं बाबू ब्रजरत्नदास का 'रहीमन विलास तथा ५० माया शकर यानिक की 'रहीम रत्नावली'। यानिक को 'गोघ ग्रन्थ एव हस्तलिखित प्रतियों के सग्रह का 'यसन था और उनका स्वकीय पुस्तकालय भी बहुत अच्छा था। अतः गोघ सक्लन की दृष्टि से 'रहीम रत्नावली' का महत्व हमें और भी अधिक नात होता है। रहीम के नाम पर रासपचाष्पायी तथा रहीम सतसई इत्यादि की चर्चा बहुत पहले से होती चली आई है किन्तु उक्त पुस्तक में ऐसी कोई कृति सग्रहीत नहीं है और न ही अभी तक खान में प्राप्त हुई है। रहीम की जो भी पुस्तकें प्राप्त हैं उनका सक्लन रहीम रत्नावली में निम्न प्रकार में हुआ है—

- १ दोहावली
- २ नगर गोभा
- ३ बरव नायिकाभेद
- ४ बरवै
- ५ मदनाष्टक
- ६ फुटकर छंद तथा पद
- ७ श्रृ गार सोरठा
- ८ सस्कृत-काव्य

इस सूची में खेट-कौतुकम^२ का नाम नहीं है। यानिक जी ने खेट-कौतुकम देने की आवश्यकता बदाचित्त इसलिए नहीं समझी क्योंकि यह ज्योतिष का ग्रन्थ है, काव्य नहीं। खेट का अर्थ है यह और कौतुक का अर्थ है चाल-श्रीटा या खेल। ग्रन्थ की श्रीटा पर लिखा गया ग्रन्थ निश्चिन् ही ज्योतिष का होगा, काव्य का नहीं। किन्तु रहीम के काव्य विकास—विशेषतया भाषा-कौशल को समझने के लिए इस ग्रन्थ की चर्चा परम आवश्यक है। हम इसी ग्रन्थ को रहीम की प्रथम कृति मानते हैं।

- १ साहित्य सम्मलन का रहिमन विनोद सुरेन्द्रनाथ तिवारी की रहीम कवितावली, रामनरेश त्रिपाठी का रहीम रामनाथ सुमन का रहिमन चन्द्रिका, लाला भगवान दीन का रहिमन गतक इत्यादि।
- २ यह पुस्तिका सवप्रथम १९०८ ई० में लदमी बैकटेश्वर प्रेस, बम्बई में प्रकाशित हुई थी।

कवि भी मौज आने पर इस प्रकार की छन्द रचना कर लेते थे। खानखाना पले थे फारसी के वातावरण में तथा अकबर की शिक्षा-नीति के अनुसार पढ़ते थे सस्कृत ज्योतिष एवं हिन्दू धर्म ग्रन्थ। अतः फारसी सस्कृत मिश्रित भाषा में फलित ज्योतिष का ग्रन्थ लिखना उनके लिए कोई बड़ी बात नहीं थी। परन्तु यह उनका प्रारम्भिक प्रयास है जिसकी भाषा में किसी प्रकार का सुधरापन मादव या कौशल नहीं। फारसी हिन्दी का अनुपात भी नहीं निम्न पाया है। कहीं सस्कृत शब्दावली अधिक है तो कहीं फारसी। दा श्लोकों से यह तथ्य स्वतः स्पष्ट हो जायगा—

नरपति कुल माय सलभो धन्दनादौ

× × ×

व पुरजसुखसुसिद्धौ हिजगदश्च लेखे

जरदार महबूब सिर्दार व मुरौबत मनुजम।

यापित्तनकाने जोहरा मईश पुस्तक कुस्तै ॥^१

इनमें से प्रथम श्लोक की भाषा सस्कृत शब्द बहुला है तथा दूसरे की फारसी बहुला। प्रथम श्लोक में प्रगाह का शिथिलता तथा दूसरे में ताव्रता भी द्रष्टव्य है। पहल श्लोक में 'मादवली सलिलष्ट है ता दूसरे में असमन्त गन्ना का प्रयोग हुआ है। अगुद्धिया भी है ही। निष्पन्न यह है कि 'खेट-कौतुक' रहीम के उस जीवन की रचना है जब उन्हें सस्कृत या फारसी में से किसी पर भी अच्युत अधिकार प्राप्त नहीं था। सम्भवतः यह रहीम के छात्र जीवन की रचना है। रहीम का छात्र जीवन पन्द्रह सालह वय की अवस्था तक चला था। अतः इसका रचना उनी अवधि की हानी चाहिए। रहीम के स्वभाव तथा अथ कृतिया से प्रकट होता है कि वे रसिक जीव थे। तरकारी के जीवन की सभी कृतिया शृंगारिक हैं। नीति के दाहे प्रौढ अवस्था के हैं। अतः नात होता है कि यह कति उनके जीवन में यौवनागम से पूर्व की है, अर्थात् बारह चौदह वय की अवस्था की। अतः खेट कौतुक का रचना काल अनुमानतः १५६९ ई० के आस पास होना चाहिए।

मदनाष्टक

खेट-कौतुक से स्पष्ट है कि रहीम सस्कृत के प्रति पर्याप्त रूप से आकृष्ट थे, किन्तु सस्कृत फारसी मिश्रित भाषा में तो सस्कृत विद्वानों में समादृत हो सकती थी और न असस्कृतन यत्तिया में। जनता की आम भाषा, फारसी तथा देशी भाषाया का सम्मिश्रण थी, जो उस समय लङ्करी भाषा या रेखता (उर्दू) कहलाती

- १ यदि मंगल नवम स्थान में हो, तो मनुष्य राज परिवार में आदर तथा उत्सवों में सम्मान प्राप्त करता है। उन ग्राम्य एवं स्वतंत्र जीवन के निर्वाह का अवसर मिलता है और वह भाग्यवान बनता है। परकीया युवतिया में निरत रहता है।

तथा

यदि गुन ग्याह्वें स्थान में हो तो व्यक्ति धनवान, एश्वयवान, सुसम्पन्न प्रिय व्यवहार वाला, राजा अथवा उसी के समान महापुंस बनता है।

थी।^१ अतः विद्वाना की भाषा संस्कृत तथा ग्राम लक्ष्मी भाषा रेखला की मिश्रित शैली की ओर रहीम ने अपना पग आग बढ़ाया। खुसरो का फारसी मिश्रित सामान्य भाषा व समान ही संस्कृत मिश्रित सामान्य भाषा भी काव्य सृजन का एक शैली थी भन ही वह बहुप्रचलित न रही हो। १४०० ई० के लगभग रचित शारंगधर पद्धति^२ में श्री नीलकण्ठ का एक छंद प्रसिद्ध है—

नून घादल छाई तैह पतरी नि धाण गब्द सर
 शत्रु पाडि सुनालि तोडि हनिती एव भणत्युदमटा ।
 कूठे गव नरामधालि सहसा रे कत मेरे कहे ।
 कण्ठे पाग निवेश जाह शरण श्रीमल्लदेव प्रभुम ।

रहीम मुमलमान होते हुए भी संस्कृत प्रेमी थे। अतः संस्कृत के सुप्रचलित छंद म उ हाने कविता की। जीवन के नवस्फुरण, संस्कृत प्रेम हिंदू धर्म के आदर्श तथा दरबारी वातावरण ने दू ह रामलीला और गोपी विरह के विषय पर काव्य रचना करने के लिए प्रोत्साहित किया। प्रेमरसिक अष्टछायी मन्नास ने राम पचाध्यायी म सरद पूर्णिमा पर कृष्ण वाणावादन का मुन गोपियो द्वारा कुटुम्बिका का छांड यमुना तट पर जाने तथा रास रचाने आदि के विषय पर सुंदर काव्य रचना की है। रहीम ने भी कदाचित् इसी विषय पर मदनाष्टक की रचना की। मन्नाष्टक की तीन प्रतियाँ प्राप्त हैं उनमें भी क्रम निर्वाह तथा भाषा गठन आदि की दृष्टि से सम्मलन पत्रिका का मदनाष्टक अत्रिक उपादेय प्रतीत होता है।

अष्टक के प्रथम पद में श्याम के वेणु वादन से मन्त्र मुग्ध गोपिका का सुत-पति त्रयादि की छोड़ बन जाने का बखान है— रति पति मुत निद्रा साइयाँ छांड भाग्यो। दूसरे पद में प्रणय विभोर गोपिका का 'कलित ललित माला तथा 'चपल चपल बाने पीताम्बरधारी के दशाने का उल्लेख है जिसकी रूप माधुरी का पान करते ही उसका आत्मा पुवार उठती है— अलि बन अलबेला, यार मेरा भकला। तीसरे पद में छत्रीली छत्रा की छरी मणि जटित रसीली माधुरी मूदरी से युक्त कमल कमल जस श्याम के हाथ को देखने का बखान है। चौथे पद में कथानक बुद्ध भांड लता प्रतीत हाता है। उसमें त्रिपदार की कठिन कुम्हिल कारी जुल्फो की याद करने हुए नायिका का अचानक ही सकल गणि कला राशनी हीन प्रतीत होने लगी है और वह कामना कर उठी है— अहह ! सजबला का किस तरह फेर देली।

यहाँ यह समझना कठिन हो जाता है कि जो गोपिका अभी पिछले पद में श्याम की रूप छवि का पान कर रही थी वह एकाएक कलजे में ठहाका मारकर दहन क्या करने लगी। निश्चित ही याम उसका मन्त्रा स ओम्कार हुए प्रतीत हात है।

१ रचना का नामो लख स्वतः रहीम ने मदनाष्टक के एक पद में किया है—

जरद बसन घाला, गुलचमन दलता पा।

भुक् भुक् मतवाला गावता रेखता पा।

यहा हमे पुन श्रीमद्भागवत तथा रासपचाध्यायी क कथानक की याद आती है जहाँ श्याम रूप गविता गोपिकाप्रा की दृष्टि ने सहसा अन्तर्धान हो जाने है। मदनाष्टक का पाचवा पद स्पष्टि विह्वलता का पद है, जिसम गोपिका मलौनी रूपमाधुरी का स्मरण करती है—

श्रुति युग चपला से कुण्डले भूमते ये ।

नयन कर तमाने मस्त ह्व घूमते ये ।

छठ पद म श्याम री तरल तरनि सी तीर सी अमल कमल सी सुन्दरी श्याम आँखो के मन म बिलमने का वरण है। और सातव पद म भुजग भुज तथा बाकुरो मान भीहो क आकपण तथा अपनी 'अकल की वेदुरस्ती का कथन है। यह वरण अथ पदा की भाति भूतकाल म न होकर वतमान बाल म ह। दूसरी पक्ति म गो नटवर का इस प्रकार सम्बोधित किया गया है जैसे कि वे सम्मुख उपस्थित हा। यदा पत् उस समय के प्रतीत हात हैं जब रति पति इत्यादि त्याग कर आई हुई गोपिका का अलखले वार के दगन हुए थे। अत छठे और सातव पद का स्थान तीसरा और चौथा प्रतीत हाता है। इस पश्चात् मदनाष्टक का अन्तिम पद है जिसम गोपिका के विरह विह्वल अंत करण का आतनाद है—

पकारि परम प्यार सावरे को मिलाओ ।

असल अमृत प्याला क्या न मुझको पिलाओ ।

इति घदति पठानी ? मनमथानी विरागी ।

मदा गिरसि भूय क्या बला भ्रान लागी ॥

—रहीम रत्नावली २० ४११

इस विवेचन से स्पष्ट है कि मदनाष्टक एकदम मुक्तक रचना नहीं है। उसका क्षीण कथानक रासपचाध्यायी का सा है। पदा मे वतमान कालिक क्रियाप्रा का भी प्रयाग है। वत य प्रयाग सबथा गुड नहीं हैं। राशनाई (रोगनी के स्थान पर) आपने (अपने के स्थान पर) आदि प्रयाग अगुड हैं। छेलरा, भावता, कुण्डले, वेदुरस्ती, अकल आदि प्रयोग भी वित्य हैं। इनके अनिरिक्त अथ प्रयाग भी अनगड हैं। अत लेखक का नोसिखिया हाना स्पष्ट है।

भाषा का अनगडान भावा की अपरिपक्वता, प्रवचात्मकता का खण्डित प्रवाह तथा उठने हुए यौवन की प्रबल मदन तरंग दलकर हमारा अनुमान है यह पद ह सोलह वष की अवस्था की कृति होगी। १५७२ ई० म रहीम का गुजरातगमन ऐतिहासिक घटना है अत मदनाष्टक १५७२ ई० से पहले की कृति है। खेटकौनुवम का रचना काल अनुमानत १५६६ ई० है। वसे तो कवि पाडे बहुत पद कभा भी रच सकता है किन्तु कृति गृ गारिक हैं। अत १५६६ या आयु के चौदह वष से पूर्व की कति मानना तत्र मगत नहीं। इसीलिए हमारा अनुमान है कि मदनाष्टक क नाम से पात्र जान बाल ये पद १५७०-१५७२ ई० के बीच रच गय होगे। कौन कह सकता है, कि रहीम के नाम से प्रसिद्ध (अश्राप्त) कति रासपचाध्यायी भी इसी प्रकार की रचना हा अथवा ये पद उसी के अंग हा।

नगर गोभा

नगर गोभा में भवन उद्योगों में नगर के नादिक उद्योगों का रही प्रतिष्ठित गोभा के प्रतिष्ठित रूप में नगर को यथा रिचय है। इनके विषयों का प्रस्ताव उ० कर्णारिष्य के मीना यात्रार में मिली था। माता यात्रार में नगर के सम्मान के लिए स्त्रियों को भी भव विषय की सभी व्यवस्था स्त्रियों ही स्त्रियां करती थी। मन्त्रालय हरम की वेगमा तथा मन्त्रालय की व्यवस्था के माय विचर उद्योगों तथा पुस्तकालय के भी या स्त्रियों के सम्मान के लिए मन्त्रालय द्वारा मन्त्रालय के सुधका के लिए गाथा भी निर्मित कर दी जाती थी। साथ माता यात्रार पर के दिने काय में उनका विवाह भी सम्भव करा गया था। मुक्त मुक्तिवा का एका एका नर बाणा की हूए हूए तथा मधु मुस्तराना का सम्मान प्रदान रहीं। यही न जान किना बार देना होगा।

सलना लायक की जान मन्त्रियों में परिपूर्ण योग यात्रार के मीन्य सरावर में रमित हूए रहीम का सम्मान निमित्त हो गई था। नरम हूए प्रतिभा और वातावरण सभी एवनिन थे। इन रहीम के मान में कविता पूट पड़ी। उसमें नाटिका के उस नगर की गोभा को मन्त्र का सुरभ्य विचारिया में सजा दिया। रमितवर रहीम की कथा में ही उस सौम्य मुखा का परधिया भाग यात्रार हम भी प्राप्त है। इसका सोज का श्रय प० मायागकर यात्रिक का है। कवि का परिचय कराते हुए ये लिखते हैं— 'इसके प्रथम दोह में रहीम का नाम न जाने पर भी कविता का भाषा उसका प्रीकृता और भाव अपने स मह प्रथम रहीम का नी जान पड़ता है। नगर सारठ की भाषा में इसका भाषा मिलती भी है। सबसे विश्वस्त प्रमाण यह है कि पुस्तक के आदि में लिखा है— प्रथम नगर गोभा नवाब खानखाना कत।' मन्त्रालय मुस्लिम प्रशासन में खानखाना की उपाधि ही किनेने व्यक्तियों का मिली और उनमें भी नवाब में सम्प्रोषित होने वाले खानखाना कितने हैं। और एक नवाब जा खानखाना हाते हुए भी सुप्रसिद्ध कवि हो - निदिचन ही रहीम है। इन कवि का अदुरहीम खानखाना द्वारा रचित होना निर्भीक है।

नगर गोभा के न तगत विभिन्न उद्योग थे जो में सलमन रमणिया का चित्रण है। सचप्रथम दा दोहों में मगलाचरण है। यही सौम्य रागि के आदि रूप की स्तुति में अदनी लघुमति को अक्षमय मानता हुआ कवि इस नानारूपालेख जगत् में उनी शादिरूप की फलक दलकर नेत्रों की कुछ वृत्ति प्रदान करता है। कहने की भावश्यकता नहीं कि यह मगलाचरण बहुत ही साभिप्राय तथा उपयुक्त है। कारण,

१ आदि रूप की परम वृत्ति घट घट रही समाइ।

लघुमति ते मी मन रसन अस्तुति कही न जाइ ॥१॥

नन तप्त कष्टु होत हैं, निरखि जगत की भक्ति।

जाहि ताहि में पाइयत आदि रूप की कांति ॥२॥

कवि ने आरम्भ में ही रूप वरुण के प्रति अपनी आसक्ति, गम्भीरतापूर्वक व्यक्त कर दी है। यहाँ भी रसमजरीकार (नायिका भेद) नन्ददास की स्मृति हो घाना स्वाभाविक है, क्योंकि उहाने भी प्रारम्भ में मगलाचरण कुछ इसी प्रकार का दिया है—

रूप प्रेम आनन्द रस, जो कुछ जग में आहि ।

सो सब गिरधर देव को, निधरक बरनौ ताहि ॥^१

मगलाचरण के पश्चात् कविवर रहीम ने ब्राह्मणी से लेकर भगिनी तक के सौन्दर्य का वर्णन बड़ी ही शिष्टता तत्परीक्षिता और काव्यात्मकता के साथ किया है। ब्राह्मणी और भगिनी के बीच में खत्तरानी, जौहरिन, कायथनी बदन, सुनारिन, चर्ननी, रगरेजिन, वनजारिन लुहारिन गुजरी कमाइन भटियारिन तुकनी, सक्की, नटनी चमारी, घसियागी इत्यादि लगभग ७० जाति की कुलागताम्रा का वर्णन एक सौ बयालीस दोहा में किया गया है। श्रौसतन एक जानि या उद्योग के लिए दो दोहे प्रयुक्त हुए हैं। आवश्यकतानुसार कही-कही दो से अधिक और कही कही दो से कम दोहा में भी काम चला लिया गया है।

नगर गोमा के वसुना की सबसे बड़ी विशेषता है जाति विरोध के सामाजिक गौरव का ध्यान रखने हुए उसी उद्योग में काम आन वाले पदायों एवं उपकरणों से जानि विरोध की नायिका का सौन्दर्य चित्रण। मगलाचरण के पश्चात् सबप्रथम गंगा के समान परजापति परमेश्वरी ब्राह्मणी के परम पाप पल में हरने वाले रूप का चित्रण है, जो न केवल ब्राह्मण जानि के गौरव एवं हिन्दू समाज की परम्पराओं के अनुकूल है अपितु ब्राह्मणों के प्रति रहीम की श्रद्धा का भी द्योतक है।^२ कायस्था का काय प्राय नौकरी करना रहा है। अतः वे कायथनी से मैन की सैन द्वारा, छाती की पाती में प्रेमाक्षर लिखवाकर प्रिय को बाँचने के लिए भिजवाते हैं।^३ सुनारिन का काम स्वर्ण और सोने से पड़ता है। अतः सुनारिणी का परिचय 'सोने में डले परम रूप कचन बरन' कहकर देते हैं।^४ बुम्हार का काम गध की पीठ पर

१ नन्ददास प्रयावली—रसमजरी—स० बजरत्नवास (ना०प्र० स० काशी),

पृ० १२६

२ उत्तम जाती ब्राह्मणी देखत चित्त सुभाय ।

परम पाप पल में हरत परसत बाके पाय ॥३॥

परजापति परमेश्वरी गग रूप समान ।

जाके अग तरंग में, करत नन अम्नान ॥४॥

—रहीम रत्नावली, प० २८

३ कँचनि कचन न पारई प्रेम कथा मुख धेन ।

छाती ही पाती मनो, लिखे मन की सन ॥६॥

वहनि बार लेखनि कर मसि काजरि भरि लेइ ।

प्रेमाक्षर लिख नैन त विय बाँचन को देइ ॥१०॥

—वही, प० २८

४ परम रूप कचन बरन गोमित नारि सुनारि ।

मानो सचि डारि क, बिधिया गडी सुनारि ॥१५॥

—वही, पृष्ठ २८

वान से बने तुकील गुरयो म मिट्टी भर कर गाना १ । धरा कुम्हार की कुमायिका ब
 कुचय को (मिट्टी भर बटार उठे) गुरये ब समात बागा गया है १^१ बरता परा
 वाली ठठेरिन ब गारार ब यगन म उमर कया का गी वा (मृग लाग) गया
 नितम्बा का ताटे जसा विपिन किया गया १^१ गाव भासा बचा गाना बार्ता ब
 कुचो का गाल भाटा (धगा) धपरा का लाव गाजर तथा तुलाया का सांगन पूजा
 से ध्यत किया है १^१ इन बचने वाता गधिनो का माजू कुटली इयाणि ग काम गदा
 है । प्रत उत्तव गारोरिक तो य का विपण गणित—

गुरग यतन तन गधिनो वेसत बग ग धपाय ।
 कुच माजू कुटली धपर मोघा घरान धाय ॥१७॥^१

नायिकाया ब चित्रण म रीमन उदाग ब धपुरन गायता का ही प्रयाग
 नहीं किया धानु कामिनियो ब वाय ध्यावार म भा उतक उदागा की प्ररत भनर
 लिताई है । उगारण ब लिए धी का बगता उगमिया किया जा सकता है । र्द
 धुनन ब ध्यावार म तात उमका पुति तथा धुनी र्द र्द ब नरम वारीर रगा का
 तात से चिपटना गम्मिनित रहता है । रहीम लही मय विद्याया का धपन ग म
 उपयोग करते हुए कहत हैं कि धुनी की प्रम प्राडा बने विचित्र है । तब उमर मन
 की तात वाता है और कामर धपना परायम गिगात है ता निय ब स्पग करा ही
 वह र्द ही नरम हा जातो है गरम धयान प्रापिन धपया बटार न्ही रहती और
 पुन प्रिय ब शरीर के राम राम से उस प्रचार लकाकार हा जाती है जस विटो र्द
 र्द (तात से) —

धुनियाइन धुनि रन दिन पर गुरति की मति ।
 बाकी राग न वृकि हो कहा बजाव ताति ॥६७॥
 काम परायम जब पर धुवत नरम हो जाइ ।
 रोम रोम प्रिय ब यदना र्द ही तो लपटाई ॥६८॥^१

१ बरवा ब माटी भरे कोरी बस कुम्हार ।
 इ उलटे सरवा मनो दीसत कुच उनहार ॥२७॥
 निरलि प्राण घट जमो रहै कयो मुख धाव याक ।
 उर मातो धावाद् है, चित्त जमे जिमि चाक ॥२८॥

२ धाभूया बसतर पहिर चितवत पिय मुख शोर ।
 मानो गड़ नितय कुच गडुवा डार बठोर ॥१०॥

—रहीम रत्नावली प० ३०

३ कुच माटा गाजर धपर मूरा से भुज माइ ।
 बठी लोका बेचई लेटी खीरा खाइ ॥३६॥

—वही प० ३६

४ वही पृ० ३२
 ५ वही पृ० ३२

—वही प० ३१

नायिकाएँ सदैव अनुकूल ही नहीं रहती, प्रतिकूल भी हो जाती हैं। तीर कमान बनाने वाली की प्रतिकूल अवस्था का चित्रण इस प्रकार हुआ है—

कर गुमान कमागरी, नौह कमान चडाइ ।

पिय कर नहि जब खचई, फिर कमान सी जाइ ॥४८॥

तो गात है पिय रस परस रहै रास जिय टेक ।

सुधी करत कमान ज्यो बिरह अगिनि मे सेक ॥४८॥^१

इस प्रकार शृंगार का एक मात्क चित्र सम्पूर्ण कृति में परिव्याप्त है जिमने नगर गाना का एक झूठी शृङ्गार रचना बना दिया है। वही तो प्रेम अग आधीन चिर वाताग्नी के सारी निसि प्रिय सग रहने का उल्लेख हुआ है और कही प्रिय के सग अगडाती टुट नगरचिन (नक्वारा बजान वाली) के घर 'आधी रात रनि-मति की नौवत बजन का। वही रगरेजिनी के मुख पर सुरतात का रा दिवाया गया है तो कहीं वेश्या की विपरीत रति न सुख का संकेत। किंतु इन चित्रों में अश्लीलता नहीं है। अश्लीलता के निरट में हाना हुआ भाव सफाई से आगे निकल जाना है—

परम ऊजरी गूजरी, वहाँ सीस प लेइ ।

गोरस के मिसि डोलाई, तो रस नेक न देइ^२ ॥३३॥

यहाँ 'सा' ने जिम प्रकार मर्यादा की रक्षा की है उसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। आचार्य चतुरसन ने ठीक ही कहा था— इनके शृङ्गार में भी एसा चमत्कार है कि अश्लीलता भी नहीं आ पाई और चुभ भी गया।^३ यह चमत्कार प्रायः शब्द प्रयोग के कारण आया है किंतु शब्द प्रयोग के सम्बन्ध में उनकी आदत प्रायः पुनरुक्ति की है। एक एक शब्द का दो दो बार प्रयोग रहीम का बहुत प्रिय है। इतना प्रिय कि यह उनकी भाषा की एक कसौटी भा बन सकता है—

चोर चोर मन लेत है ठौर ठौर तन तोर ॥७२॥ —नटनी

घेर घेर उर राखही फेर फेर नहि देइ ॥७६॥ —अहरनी

शब्द प्रयोग के साथ ही वे मुहावरों के प्रयोग के सम्बन्ध में भी सजग है। घोवी के कुत्त तथा तेली के बदन में सम्बन्धित मुहावरों समाज में न जाने कब से प्रचलित हैं। इन जातियों का बखान करत समय रहीम ने त सम्बन्धित मुहावरा का भी प्रयोग किया है—

घोबन सुवधी प्रम की ना घर रहै न घाट ।

बेल फिरे घर घर बगर लुगरा घरे लिलार ॥१३७॥

बेलन तिली सुवास के तेलनि कर फुनेल ।

बिरही दष्टि कियो फिर, ज्यों तेली की बल ॥४१॥

१ रहीम रत्नावली पृ० ३२

२ वही पृ० ३०

३ हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास—प्रा० चतुरसन(१९४० लाहौर)

मुहावरा से भाषा में कुछ गुपटना आई है। एमी ही गुपटना स्थानीय व घरबी पारसी व गणों में भी उत्पन्न की है। पजाबीय तथा पूर्वोक्त का स्पष्ट निम्न लिखित पत्तियां में देखा जा जाता है—

हरिगुण प्रायज बनाया टिंता याजत काम ॥७७॥
नातिवदनी रन दिन रहै सतिग व नास ॥३५॥

सभीय प्रयोग व अतिरिक्त घरबी पारसी व ता घनन गण घागानी म एकत्रित किय जा सकते हैं। गस्तर आवाद भाषरा कीन हाजिर भज मुन्तर तथा कवाद आदि सा जहाँ तहाँ गिर पड़े हैं। य प्रगाग की कीनी ता सोय म बाधा भी उत्पन्न करते हैं। वही कहा पर प्रयोग आगुद भी है— राजपूत का स्त्रीलिंग राजपूतनी है पर रहीम न राजपूतई का प्रयोग किया है। इगी प्रकार घाग वचन वाली व लिए घासी का सा प्रयुक्त हुआ है जबकि सा घसियारिन है। सा युनिया के अतिरिक्त कुव भग पून पदत्व आधिक पत्व आदि दोष भी पर्याप्त हैं। धारम्भ म उच्यन जो गात है विय रस परस म स्पष्ट ही आधिक पत्व है। साथ म अतिगयाति का सब प्रयोग भी अयस्वर प्रतीत नहीं जाता। वही वही भाव भी स्पष्ट नहीं हो पाता।

गोमा भ्रम भगेरनी सोमित माल गुलाल ।
पना पीस पानी कर चलन दिखाय सास ॥११६॥

यहाँ भगेडिनी का भाव स्पष्ट नहीं है। भाग के गुणा की सयाजना भी नहीं बन पाई। इन सबका देखते हुए हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि यह कृति भी कवि का अप्रौढ जीवन की रचना है। इसका प्रज भाषा में प्रभाव तो है पर लालित्य नहीं। इसी प्रकार भाषा में यौवन की मांसलता तो है पर तु विचारों की गम्भीरता नहीं। अतः यह भी बहुत अधिक प्रौढ जीवन की ही रचना नहीं है।

नगर शोभा के श्रृंगार के उद्गम वेग तथा भाषा की अपरिपक्वता को देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि यह रचना तेईस चौबीस या बहुत समभिए तो पच्चीस छन्वीस वष का आयु से अधिक व्यक्ति की नहीं है। उधर रहीम अपने जीवन के चौबीस वष में अकबरी दरवार के मीर भज के पद पर काय भी कर रहे थे। यह काय आराम का काय था—न परिश्रम था न परेशानी। हाँ यह अवकाश बहुत लम्बा नहीं था किन्तु रहीम जैसे जन्मजात प्रतिभाशील कवि के लिए सौ-डेडती श्रृंगारिक दोह लिख देना दो चार वष का काय नहीं। अतः हमारा अनुमान है कि यह रचना एसी समय के आस पास अर्थात् सन् १५८० में लिखी गई होगी। समय है कुछ दोहे १५८२ ई० में भी लिखे गये हाँ जब कि वे शाहजादे सलीम के शिक्षक नियुक्त हुए थे। इस प्रकार हम नगर शोभा का निमाण काल १५८०-८२ से आगे नहीं मान सकते।

इस प्रकार स्पष्ट है कि एन सी बयालीस दोहा की रचना नगर शोभा रहीम के यौवन काल की कृति है जिसमें सबसे प्रथम ब्राह्मणी और सन्नाणी (खतरानी) और अतः से चमारिन एवं चूहरी युक्तिया का सी दम वर्णित है। स्पष्ट

है कि हिंदू ममाज में सब से अंतिम सिरे पर बूढ़ या भगिया को रखा जाता रहा है। रहीम ने उसे भी गले लगाने का फनवा^१ देकर अपनी कृति का अंत किया। इसके आगे कोई जाति बचती ही नहीं। हा हलवाइन इत्यादि कुछ जातियाँ पर पयक से कुछ बरवें मिलते हैं। उनकी रचना भी १५८२ के बाद की नहीं जान पड़ती।

बरवें नायिका भेद

बरवें नायिका भेद हिंदी जगत की सुप्रसिद्ध कृति है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है इस कृति में नायिकाओं के भेद प्रभेदा का बखान है। नायिका का सामान्य अर्थ है सब प्रकार से रूप गुण सम्पन्न रमणीय रमणी^२ जो चिरंतन काल से मानव के आनंदण एवं रहस्य का केंद्र बिंदु रही है। वस्तुतः इच्छा, नान और काम की त्रिभुज रेखाओं से घिरा मानव जीवन, क्षुधा काम तथा स्वत्व के त्रिभुज बिंदुओं द्वारा संचालित रहता है। क्षुधा तथा स्वत्व कामना^३ बगवान प्रकृतियाँ तो अवश्य हैं परंतु ये सत्कार के निर्माण का मूल आधार नहीं। बदन काम ही वह भावना है, जिस पर निसर्ग निर्माण का पूरा दायित्व है और वही मनुष्य की प्रबलतम मूलभूत मनाकृति है।^४ कदाचित् इलीजिफ इसे प्रसाद जी ने 'मगल से मंडित श्रेय कहा है।^५

वैसे तो श्रेय सम्पादन में स्त्री पुरुष ज्ञान का योगदान समान रहता है किंतु सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषण करने पर तथा आधुनिक मनोविज्ञान एवं शरीर रचना शास्त्र की दुहाई देकर विद्वानों ने यह निश्चिन किया है कि नारी की काम भावनाएँ तथा

१ हरी भरी गुन चूहरी देखत जीव बलक ।

परम सता सो लहलही धर पम संयोग ॥

बाके अघर कपोल को चुवी पर जिमि रंग ।

कर गहि गले लगाइय, हरं बिरह को रोग । १४२।

२ लाज भरी भाग भरी सुंदर सुहाग भरी

राग भरी रति में पिया की सुखदायिका ।

लाज रति रूप खरा सोल भरी सोगुने है

गुन गान आगरी, करनि हाइ भाइका ।

मौन कवि कहत घिलोकत ही जासु अग

प्रमटे अनग रस रासि उपजाइका ।

बन मन भाइका मनोरथ साइका

सुचित चोप चाइका बखान ताहि नायिका ॥

—भौन कवि

३ दख सी० जी० जुग का सिद्धांत विश्लेषणात्मक मनाविज्ञान (एनेलेटिकल साइकालाजी)—एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका

४ देखें मनोविश्लेषण—सर ए० फ्रायड (अ० देवेन्द्र वेदालकार) लिबिडो की व्याख्या प० २२७

५ काम मगल से मंडित श्रेय सग इच्छा का है बरदान ।

तिरस्कृत कर उसको दुम आज बनाते हो असफल भव धाम ॥

शारीरिक धीन सरचनाएँ, पुरुष की अपेक्षा कहीं अधिक सश्लिष्ट हैं।^१ यह सश्लिष्टता आज के वपानिक युग में भी एक सुला रहस्य बनी हुई है। और चूँकि यह सज्जन एवं काय सश्लिष्ट का अवसर नारी की अपेक्षा पुरुष का ही अधिक प्राप्त होता रहा है अतः वह ऋग्वेद से आज तक नारी के आकर्षण विकर्षण के असह्य विषय उतारकर उसे विभिन्न प्रकार से समझने का प्रयत्न करता चला आ रहा है। नायिका भेद उस प्रयत्न का साहित्यिक प्रतिफल है। इस साहित्य में स्त्री पुरुषों के श्रृंगारिक मनोभावों एवं भेदा प्रभेदों को प्रकृति वय स्थिति स्वभाव परिस्थिति आदि की पट्टभूमि पर समझने का यत्न किया जाता है।

निश्चित ही यह अपने मूल रूप में कामशास्त्र का विषय है। यही कारण है कि वास्त्यायन मुनि ने कामसूत्र में हम सबप्रथम विभिन्न आधारों पर भेद प्रभेद के दगन होने हैं।^२ कामशास्त्र में यह प्रकृति चलती रही।^३ का यशास्त्र के अंतगत इस विषय का लान वाले प्रथम व्यक्ति नय्याचाय भरत मुनि है।^४ नायक नायिका का भी अपने में इस अर्थ का प्रतिनिधित्व करते हैं कि इनका सम्बन्ध नाटक से है। वही से धनजय मागर ने श्री रामचंद्रादि नय्याचार्यों एवं रुद्रत मम्मट रचयक भाज केगवमित्र विष्णुनाथ सारदातनय गिगमूपाल तथा बागभट्टा आदि अलंकारिका ने इस विषय का विवेचन प्रस्तुत किया। आग चलकर रूप गोस्वामा की उज्ज्वल नाल मणियाँ तथा भानुत्त की रसमज्जरी काश्यशास्त्रीय नायक नायिका भू के आधार अर्थ बन गये। हिंदी के नायिका भेद की मौलिकता अमौलिकता का सम्बन्ध में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। कुछ विद्वानों का कथन है हिंदी के आचार्यों विगत रीतिशालीन वाक्यशास्त्रियों ने इस अलंकारशास्त्र को सश्लिष्ट आचार्यों से जया का स्था प्रहण कर लिया^५ जबकि दूसरों का कथन है कि उन्होंने इस सम्बन्ध में पर्याप्त मौलिकता का परिचय दिया है^६ और नायिका भेद को सश्लिष्ट की अपेक्षा कहीं अधिक विस्तार प्रदान किया है।^७ यहाँ तक कि सपद गुलाम नहीं रसलीन न उनके भेद प्रभेदों का एक हजार तीन सौ बावन तक पट्टेबा दिया।^८ रहीम ने भी अनेक स्थानों पर मौलिकता प्रमाणित की है।

- १ दम्पति में भी रस का दृष्टि से नायिका ही मुख्य है। नायिका से अतिप्राय उमर स्त्री से है जो जीवन रूप कुल प्रेम नील गुण वनव और भूषण से सम्पन्न है। — श्व और उनकी कविता डा० नगेन्द्र (१९४६) पृ० १४२
- २ नायिकास्तिस्र कथा पुनश्च कथा च ॥ कामसूत्र १५४॥
- ३ धनगरन = २ तथा रतिरहस्य १ १०
- ४ त्रिविधा प्रकृति स्त्रोणां नाना सत्य समुद्भवान् ।
बाह्या धाम्यतरा धवस्याद् बाह्याभ्यतरां परा ॥ — नाय्यशास्त्र २८ १४३
- ५ रीतिशालीन कवियों की प्रेम ध्यजना डा० बच्चनसिंह (प्र० ग०) पृ० ६६
- ६ रतिशालीन धनकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन डा० धाम प्रकाश शास्त्र (प्र० ग०), पृ० २३
- ७ रीतिशास्त्र की भूमिका डा० तपन (द्वि० सं०) पृ० १४३
- ८ इह सश्लिष्टा इह परकाया सामाया मिति धारि ।

रहीम के समय में हिन्दी भाषा में नायिका भेद के ग्रन्थ प्राप्त नहीं थे। नन्ददास की रसमञ्जरी दूसरे ग्रन्थवाद है। परन्तु रामधारीसिंह दिनकर^१ तथा राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी^२ आदि कतिपय विद्वान् बरवै नायिका भेद का रसमञ्जरी से भी पूर्व की ग्रन्थात् हिन्दी नायिका भेद की प्रथम कृति स्वीकार करते हैं। अतः स्पष्ट है कि रहीम ने अपने विवेचन का आधार सस्कृत काव्य शास्त्र का ही बनाया। सस्कृत भाषा में, उनकी रचि एव गति का एक ज्वलन्त प्रमाण यह भी है। जिम प्रकार नायिका भेद हिन्दी के लिए नया विषय था उसी प्रकार बरवै भी नया छन्द था। उनकी मौलिकता, आचार्यत्व एव शास्त्रीय ज्ञान का इससे बड़ा और क्या प्रमाण होगा कि उन्होंने हिन्दी का एक नया विषय सवया नए छन्द में प्रदान किया। बरवै का नवीन छन्द इसलिए कहा जा रहा है क्योंकि रहीम ही बरवै के साहित्यिक जनक हैं।^३

घट्ट नायिका मिलि सोई, बसित होत विचारि ॥

उत्तमादि सौ मिलि उहै सुन छियानवे होत ।

पुन चौरासो तीन से, पामिनि आदि उदोत ॥

तेरह सो धावन बहुरि, दिव्यादिक के सग ।

यो गनना मे नायिका बरवै बुद्धि तरंग ॥

—रस प्रबोध

१ रीति कविता एव शृंगार विवेचन—राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी (भागरा सं० २०१०) प० २३६ २४२

२ सस्कृति के चार अध्याय—डा० दिनकर प० ३५६

३ बरवै छन्द की उत्पत्ति के सम्बन्ध में घटना प्रसिद्ध है कि रहीम का एक सैनिक लम्बे भ्रमकाग में अपने घर गया हुआ था। इसी बीच उसका विवाह हो गया और वह नवपरिणीता दुल्हन के साथ रसकेलियों में कुछ ऐसा निमग्न हो गया कि यह बात ही न हुआ कि भ्रमकाश की भ्रमधि बंध निकल गई। ध्यान आने पर बहुत पछताया। उसे अपनी नौकरी छूट जाने का भय था। पति को दुखी देख स्त्रा ने जब दुख का कारण पूछा तो उस विदुषी ने पति को जान की प्रेरणा करत हुए दो पक्ति लिखकर दे दी और उन्हें खानखाना की सेवा में उपस्थित करने का कहा। रसिक खानखाना स्थिति की वास्तविकता को समझ गय तथा सैनिक का क्षमा कर दिया। रहीम का ये पत्तिया इतनी रुची कि, उ होने उसमें स्वतः भी काव्य रचना की तथा श्रम गुणियों को लिखन के लिए एक सैनिक दुल्हन द्वारा सम्प्रेषित निम्नलिखित पत्तिया की प्रेरणा से रहीम ने नए छन्द का जन्म लिया और पत्तिया में आए प्रमुख शब्द 'बिरवा' के आधार पर उस छन्द का नामकरण बरवै हुआ—

प्रेम प्रीति का बिरवा चलेउ लगाय ।

सौचन की मुधि लोजियो सूखि न जाय ॥

रहीम का नीति वाक्य
 नायिका भद के प्रारम्भक दो दोहा म उ हाने बरव छ ७ की प्रशंसा की है।^१ घोर
 उसके पश्चात् एक बरव म सरस्वती व ७ ना करने पुस्तक का समाारम्भ कर लिया
 है। मगलाचरण इस प्रकार है—

घवो देवि सरवथा पद कर जोरि ।
 बरनत वाक्य बरवा लगइ न खोरि ॥३॥

प० मायाशरर यानिक ने जिस हस्तलिखित प्रति स बरव नायिका म ७ का
 सम्पादित किया है उसने प्रारम्भ मे रहीम क उदाहरण म पूव महाकवि मतिराम
 क रसराज से लक्षण दाहा की भी लिख दिया गया है। इस प्रकार का मन्तन
 किसने किया यह ता नहीं कहा जा सरता किन्तु हमारा अनुमान है रसिक किमी नवीन
 नामक रसिक ने प्रथम म पूगता लाने की दृष्टि म ऐसा किया है। अनुमान का
 कारण इस प्रकार सम्मानित नायिका भद क प्रतिम दाहे है—

लच्छन दोहा जानिए उदाहरण बरवान ।
 दूनो क सग्रह मए रस सिगार निर्मानि ॥११७॥

एह नवीन सग्रह सुनो जो देवे चित देय ।
 बिबिध नायका नायकनि जानि भलो विधि लेय ॥११८॥

प्रथम म कुल एन सौ सोलह छ ७ है। इनमे से बरव वणन के दा दोहे तथा
 मगलाचरण का एक बरवा निकाल देने पर कुल एक सौ तेरह बरवों से यह प्रथम
 निमित्त है इनम भी नायिका भद का कुल बयानवे बरव दिये गये हैं। गेप इवकीत
 बरवो म से तेरह म नायक वणन चार म दशन वणन तथा चार म सखी तथा
 सखीजन कम का वणन है। इस प्रकार एक सौ तेरह बरवो म नायिका भद नायक
 भद दशन भद तथा सखीजन कमों का वणन किया गया है। इतने वडे विषय को
 इतने थोडे से छंदा म वर्णित कर देना गागर म सागर ही है।

सुविधा की दृष्टि से हम पहले नायक वणन को लेते है। नायक शास्त्र काम
 शास्त्र तथा साहित्य शास्त्र म नायिकाओं क समान ही नायको क भी भद किये गये
 हैं। य भद लगिक, शारीरिक तथा प्रकृति की दृष्टि से अनक हैं। दिग्मत्प्यादि

१ कवित कह्यो दोहा कह्यो तुल न छप्पय छंद ।
 विरच्यो यही विचारि क, यह बरवा रस कंद ॥१॥
 वैधक अनियारो बडो समुक्त चतुर सुजान ।
 सुनत जात चित चाव प यह बरव के वान ॥२॥

गीपका के अतगत तो नायका के भी एक सौ पतीम भेद गिना दिये गये है ।^१ रहीम ने अपना नायक वरुण नायक के गुणों से प्रारम्भ किया है । उहाने सुन्दर चतुर धनी कुलीन, केलि कला प्रवीण गीलवान तथा स्वस्य व्यक्ति को नायक कहा है ।^२ ये गुण आचार्य विश्वनाथ द्वारा समर्पित हैं । इससे अगले बरव में पति उपपति तथा वसिक तीन प्रकार के नायक गिनाये गये हैं । गुरुजनो द्वारा विधिवत विवाहित नायक पति,^३ भरोसे से भौक भाङ्कर आस जोड़ने तथा निहोर करने वाले का उपपति^४ वेश्यानुरागी आचारा वेग को वैसिक कहा गया है ।^५ पति के पुन अनुकूल, दक्षिण घष्ट तथा शठ—चार भेद किये हैं । अपनी ही स्त्री से सदब निरत, निरपराधी जीवन व्यतीत करने वाला तथा परनी का स्वप्न में भी अस तुष्ट न करने वाले पति को अनुकूल^६ अनेक नारिया से एक ही समान स्नेह कर रस रग रचाने वाले को दक्षिण^७ पर स्त्री गामी का घष्ट तथा लोभ राज, कुल मान सब का छाड निस्थ अपराधा की बान वाले जार कर्मादि के अन्वयस्त का शठ की सजा दी गई है ।^८ इनमें सर्वोत्तम है अनुकूल, जिसको परनी का स्वप्न में भी कभी मान करने की गु जाइश नहीं रहती —

करत नहीं अपरधवा, सपनेहु पीव ।

मान कर की सधवा रहि गइ जीव ॥६६६ प० ५६ ॥

रहीम ने नायका का वर्गीकरण एक अर्थ प्रकार से भी किया है । इस वर्गीकरण के अतगत—प्रोपित मानी बचन चतुर तथा क्रिया चतुर नाम से चार शीपक दिये गये हैं । रहीम का यह वर्गीकरण, भानुदत्त की 'रस मजरी' से भिन्न है, क्योंकि उहाने मानी और चतुर को प्रयुक्त वर्गीकृत नहीं किया, जबकि शास्त्र ही नहीं क्रियात्मक गृहस्थ जीवन में भी मान एवं चतुराई के अवसर आते ही रहते हैं ।

१ शृ गार नायिका (सा० आ० जागलेकर) ५० ६३

२ वहा, बरव स० ६७ १०३ तथा १०४ प० ६०

३-५, रहीम रत्नावली, बरव स० ६७ १०२, प० ५६ ६०

६ तुलनीय—

फूलन सौ बाल की बनाय गुटी बेनी लाल

भाल दई बदी मग मद की असित है ।

भाति भाति भूपण बनाये बज भूपण

सुबोरी निज कर सौ लवाई करि हित है ।

ह्वै के रस वास जब दीवे को महावर के

सेनापति लाल गह्वो चरन ललित है ।

चूमि हाथ नाह के लगाइ रही आखिन सौ,

एहो प्राननाथ ! यह अति अनुचित है ।

—सेनापति

रहीम के त्रिया चतुर नायक, राधाबल्लभ कृष्ण की चतुराई ता देरते ही बनती है—
खेलत जानेति रोलिया नन्द किगोर ।
छुइ वयमान कुमारिमा भगा चोर ॥^१ १०८ प० ६१ ॥

दशन भेद

नायक भेद स अक्काश प्राप्त कर रहीम ने सवन स्वप्न चित्र साधात् नाम से चार प्रकार के दशना का उल्लेख चार बरवों म किया है।^२ यह विभाजन भी रसमजरी से भिन्न है क्योंकि वहा केवल तीन ही प्रकार के दशन गिनाये गये हैं। रहीम यहाँ पर साहित्य दपण स भी असहमति रखते हैं। यहाँ चार भय होते हुए भी नाम भिन्न हैं।^३ स्वतंत्र रूप से श्रवण दशन को मायता देना रहीम की मौलिकता है। श्रीमो केशव पत्यादि ने भी यही स्वीकार किया है। रहीम का यह वयान बड़ा मुकुमार है। स्वप्न देखती हुई नायिका को नौकरानी ने जगा दिया। दुखियारी नायिका का काल्पनिक मुख भी विधाता से न देला गया—

पोतम मिलेउ सपनवाँ मी सुल खानि ।
जाइ जगाएउ चेरिया मी सुल खानि ॥^४ ११० प० ६१ ॥

इसी प्रकार साधात दशन का वयान भी सुन्दर बन पडा है। विरह की विकराल अवधि के पश्चात वह पुण्य अवसर आया जबकि प्रेमी-युगल इकठोर हुए। उस समय कितना हृष, कितना उत्साह कितना चाव था उस आगतपत्तिका के हृदय मे प्रिय के सागत दशना के लिए उसके नेत्र चकोर बन गये—

विरहिन और विदेसिमा मी इकठोर ।
पिय मुख हेरि तिरिभवा चड्र चकोर ॥ ११२ प० ६१ ॥

सखी तथा सखीजन-कर्म

कभी कभी नायक नायिका अपने अभिप्रेत स्वयं नहीं सिद्ध कर पाते। वात्स्यायन ने ऐस अवसरो पर दूतिका प्रयोग का परामश दिया है। उनका कथन है

१ काह चतुराई करि द्वार मे बिछाई सेज
जानि मनि मन्दिर मे मन भाई वाम को ।

कालिदास रसिकाई जानि के चुपाइ रहे
भाई जब सुन्दरि सिधाई निज धामकों ।

चबल चतुर छरकायल छुबोली वाम
अचल छुव न बीनी स्याम अनिरामकों ।

पाटी पग धरि गई चेटक सों करि गई
नटी लीं उछरि गई छरि गई स्यामको ।

—कालीदास

२ रहीम रतनावली—घरव स० १०६ स ११२ पृ० ६१

३ साहित्य दपण—३ १८६

४ सपने म साइ मिले सोवत दिया जगाय ।
घाँल न खोलू डरपता मति सपना है जाय ॥

—बबीर

वि विषवा, गकुनिका, दासा भिक्षुणी आदि स्त्रिया इष्ट स्थान में, न केवल सुगमता पूर्वक प्रवेश पा जाती हैं अपितु विश्वास प्राप्त करने में भी सफल सिद्ध होती हैं। इस काव्य के लिए विशेष गुण अपेक्षित हैं।^१ किंतु इन गुणवती दूनित्रियों से नायिकाओं को सावधान रहने की आवश्यकता हाता है। कभी कभी ये ही प्रिय समागम प्राप्त कर जाती हैं।^२ इन स्त्रियों के लिए मात्र कतिपय गुण धारण करना ही आवश्यक नहीं अपितु उन्हें काव्य भी बनाने हान हैं। रहीम ने मण्डन, शिक्षा, उपालम्भ तथा परिहास नाम से चार सखि कम गिनाये हैं। ये काव्य रसमजरी के आधार पर हैं। रहीम ने, संस्कृत आचार्यों की भाँति विस्तार से दूति वरण नहीं किया। उन्होंने तो संक्षेपतः चारों काव्य चार बरवों में गिना कर दूति कम का समाप्त कर दिया है। किंतु संक्षिप्तता ने सौम्य का आघात नहीं पहुँचाया। परिहास का स्वाभाविक सुंदर सरस तथा हृदयहारी चित्रण प्रस्तुत करने वाला 'नायिका भेद' का अंतिम बरवें इस प्रकार है—

विहंसत भउह चटाए धनुष मनोज ।

लावत उर उपटनवाँ ऐँठि उरोज ॥ ११६—पृ०६२ ॥

अंतिम गणों के साथ काव्य रसिका के हृदय भी यदि इठ जाय तो काँइ आश्चर्य नहीं। वैन रहीम का यह बरव वट्टन ही भास्वर शब्द चित्र प्रस्तुत करता है। स्पष्ट है कि रहीम के ये प्रसंग सन्निप्त हाते हुए भी प्रभावशाली हैं। अपने वरणना में रसमजरी एवं काव्यदण्डादि संस्कृत प्रयोगों का अवलम्ब लेते हुए भी रहीम ने

१ पटुता धाष्ट्यमिडगिकारता प्रसारण कालजता ।

विपह्य बुद्धित्व सखी प्रति पति सोपाया चेति दूत गुणा ॥

—कामसूत्र १५

२ (क) मैं पठई जेहि कजवा, आइसि साधि ।

छूटि गी सीस जुरवना, दिठि करि बाधि ॥

(ख) मोहित हरबर आवत भो पथ खेद ।

रहि रहि लेत जेससवा औ तन खेद ॥ ३५ ॥

प्रिय समागम प्राप्त छली दूतिका के लौटने की दशा के चित्रण में 'शिव कवि' ने रहीम के इसी भावा को उतार दिया है—

कटक ते अटक अटक सब आय हो ते

फटिने बसन तिहें नीक क बनारइ ल ।

बनी के विचित्र बार हारन मे आय आय

अरुभे अनोखे ते तो बठि सुरभाइ ल ।

कहे शिव कवि दबि काहे का रही हैं बाम !

धाम ते पसोनी बह्यो ताकी सियराइ ल ।

बात कहिबे मे नदलाल को उताल कहा,

हाल तो हरिन नभो हफनि मिटाइ ल ॥

मौलिकता का पर्याप्त परिचय दिया है कि तु यह ता ग्रन्थ का अन्तिम भाग है । प्रारम्भिक भाग है नायिका भेद । यह एक विस्तृत प्रसंग है । अतः इस परिचयपरमक सतत में पूरे नायिका भेद का परिचय नहीं दिया जा सकता । यहाँ संवल इतना ही जान लेना पर्याप्त होगा कि रहीम व नायिका-भेद के आधार क्या हैं ?

रहीमकृत नायिका भेद के आधार

- १ सामाजिक सम्बन्ध तथा विवाहादि ।
- २ दगा तथा स्थिति ।
- ३ वय तथा परिस्थितियाँ ।
- ४ स्वभाव तथा गुण ।

प्रथम—सामाजिक सम्बन्ध के आधार पर तीन भेद—

१ स्वकीया (तीन भेद)	(क) मुग्धा (ख) मध्या (ग) प्रौढा	अज्ञात यौवना जात यौवना, नवीना तथा विश्रब्ध नवीडा (काइ भेद नहीं) (काई भेद नहीं)
------------------------	---------------------------------------	---

१ महा रसमजरीकार भानुनाथ के नायिका भेद पर सक्षिप्तत दृष्टि डालना अनुचित न होगा ।

(क) त्रिविध नायिकाएँ—(क) स्वकीया (ख) परकीया (घ) सामाया ।

(अ) स्वकीया—मुग्धा अकुरित यौवना (ज्ञात एव अज्ञात यौवना २ भेद) नवीडा तथा विश्रब्ध नवीडा ।

मध्या—

प्रगल्भा—रतिप्रीता एव आनन्दातिसम्भोहा (मुग्धा एव मध्या के घीरा, अघीरादि के आधार पर तीन-तीन भेद हैं और ज्यष्ठा एव कनिष्ठा के पुन घीरा, अघीरा के आधार पर तीन-तीन भेद हैं ।)

(ब) परकीया—क प्रका (कोई उपभेद नहीं) पराडा—मुग्धादि छ भेद जो रहीम ने भा अपनाए हैं ।

(स) सामाया—(काइ भेद नहीं)

(ख) दगानुसार तीन भेद—(क) अय सम्भोग दुर्बलता, (ख) वक्राक्ति गविता—प्रेम गविता एव सौ दय गविता । (ग) मानवती—लघुमान मध्यमान गुहमान ।

(ग) अष्टदशाएँ प्रत्येक के ५ भेद—मुग्धा, मध्या प्रगल्भा, परकीया एव सामाया । परकाया व तीन भेद—ज्यो० दिवा० तथा तपो० । रहीम ने इही में प्रवत्स्यप्रतिवा व आगत्यतिका जोडकर १० भेद किए हैं ।

(घ) सत्कारानुसार—दिय, अदि य तथा दि०दादिद्वय—तीन भेद ।

(ङ) स्वभावानुसार—उत्तमा, मध्यमा तथा अघमा—तीन भेद ।

२ परकीया	(क) अनूढा (ख) ऊढा	(अविवाहिता) (विवाहिता)—भूत सुरतिगुप्ता, भविष्य सुरतिगुप्ता, विदग्धा—क्रिया एव वचन विदावा—अनुसमाना—प्रथम अनु० द्वि० अनु० तथा तृतीय अनु०, मुदिता और कुलटा ॥
----------	----------------------	--

३ सामान्या (गणवा)

द्वितीय—दशा तथा स्थिति—

- १ अय सम्भाग दुखिता
- २ प्रेम गविता
- ३ रूप गविता

तृतीय—वय तथा परिस्थिति के अनुसार

(दस नायिकाएँ तथा प्रत्येक के पाच पाच भेद)

१ प्रापित्यतिका	मुग्धा, मध्या प्राडा परकीया एव सामान्या, पाच भेद
२ खण्डिता	वही पाच भेद
३ कलहातरिता	वही पाच भेद
४ विप्रलया	वही पाच भेद
५ उत्कण्ठिता	वही पाच भेद
६ वासकसग्जा	वही पाच भेद
७ स्वाधीन पतिका	वही पाच भेद
८ अभिसारिका	वही पाच भेद तथा चुकला एव दिवाभि सारिका दो और प्रभेद ।
९ प्रवर्धयत्प्रेयसी	वही पाच भेद
१० आगत्यतिका	वही पाच भेद

चतुर्थ—गुण तथा स्वभावानुसार

- १ उत्तमा
- २ मध्यमा
- ३ अधमा

नायिका भेद की इस श्रेणी पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है रहीम का विभाजन अय पूर्ववर्ती एव परवर्ती आचार्यों की भांति सदिलिप्त न होकर सब सुलभ एव सरल है । इतना ही नहीं, नायिकाओं के जो उदाहरण रहीम ने दिये हैं वे बहुत ही सरस तथा अकृत्रिम हैं । और बहुत दूर तक कवि उनका अनुकरण करते

रहे हैं।^१ मगिराम ने तो अपने पापप्रतिपात लक्षण रराम के उदाहरणों से ही लिए हैं। कारण यह है कि रहीम के यग्य यदूत ही मगीब हैं। इनमें मयाग पत्र विभाग दोनों ही प्रकार की रग सरिता प्रवाहित है। निम्नलिखित चरन हमारे कथन का स्पष्ट करने के लिए पदावत हैं—

सयोग श्रुतार

सब सुधर सुदरिया, पिय के साथ ।

दुपए एक दुनरिया सरसत पाय ॥ ६८—७० ५८

सेसत जानेति रोलिया नद बितोर ।

गुड वपमानु कुमरिया नगा चोर ॥ १०८—७० ६१

१ आधुहि देत कजरया गू दत हार ।

चुनि पहिराय चुनरिया प्राण अपार । ३६—५० ४८

भारन पाय जयकवा नाइन दोन ।

सुन्हें भंगोरत गोरिया हान न कीन । ३७ ५० ४८

प्रेम गविता के इस उदाहरण का अनुसरण देव दास सनापति तथा बेनी प्रवीन आदि कवियों के कायम दलित—

(क) मालिनि हू हरिमाल गुहे चित्तय मुल चेरि मयी चित्तचाइनि ।

पान खवाय रखासिनि हू के सुयासिन हू सितखे सुए माइन ॥

बदी दे देव दिलाई के वपए, जाबर देत मयी अय नाइन ।

प्रम पगो पिय पोत विद्यौरी सों प्यारी के पीछि पमारी से पाइन ॥

(ख) माँग सवारत कांधइ ल कच भार भिजायत अय समेत ही ।

राम बठावत कु कुम लेइक, दास मिलाइ मनो लिणें रेत ही ।

बीरी खवावत अजन देत घनावत आइ कपो बिन हेत ही ।

या सुधराई भरौसे कयो दौरिर्क छोरि सखीन की काजर लेत ही ॥

(ग) फूलन सों याल की बनाय गुहो बनीलाल,

माल दई बदी मगधद की असति है ।

भाति भाति भूषन बनाए अज भूषन

सुबोरी निज कर सो खवाई करि हित है ॥

हू के रस दास जब दीव को महावर के

सनापनि लात गह्यो बरन ललित है ।

चूमि हाथ माह के लगाइ रहीं आखिन सों

एहो प्राणनाथ^१ यह अति अनुचित है ॥

(घ) मालिनि हू हरवा गुहि देत चुरी पहिराय बन चुरिहेरी ।

नाइन हू के निखारत कस हमेस कर बनि जोगिनि फेरी ॥

बेनीप्रवीन बनाइ विरी बरन दने रहे राधिका फेरी ।

नदकिसोर सदा वपमानु की, पीरि पठा बिक बने चेरी ॥

पीढहु पीय पल्लनिया मीढहु पाय ।
 रन जने कर निदिआ, सब मिटि जाय ॥४६—५० ५०
 जेघन जोरत गौरिया, करत कटोर ।
 छुचन न पावे पियवा, कहू कुच कोर ॥१०—५० ४२

वियोग श्रुगार

का सन कहउँ संदेसवा, पिय परदेसु ।
 रातुल ह्व नाह फूले, त्रिह बिन टेसु ॥४२—७० ४६
 पिय पथ हेरत गौरिया, भी मिनुसार ।
 चलहु न करहि तिरिअवा, सुव इतवार ॥६३—७० ५२
 उठ उठ जात खिरबिया, जोहत बाट ।
 कत वह आइहि मितवा सूनी खाट ॥६४—७० ५२
 करबेउ ऊच अटरिया, तिय सग केलि ।
 कबधी पहिरि गजरवा, हार चमेलि ॥१०५—५० ३०

बरव नायिका भेद के सभी पहलुओं पर सांगोपांग विवेचन करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि साहित्यिक गान्धीय तथा सामाजिक दृष्टियाँ से यह रचना अत्यन्त प्रौढ़ एवं उपमांगो है। साहित्य का अतन्त्र भाव, भाषा एवं शैली का जितना महत्त्व है, उतना सिद्धांत निष्पन्न अथवा विचार प्रतिपादन का नहीं। भाषा की दृष्टि में यह रचना निस्संदेह अत्यन्त सरस है। सयोग, वियोग, मान, पूवराग आद्य तथा आकुलता इत्यादि मनोवशा की वृत्त ही सुन्दर अभिव्यंजना नायिका भेद के बरवा में है। रहीम बरव छन्द के साहित्यिक जनक हैं। इस छन्द की सबसे बड़ी विशेषता है षष्ठी आभार। इतने छोटे छन्द में भाषा का जिस सफरता से भरा गया है वह अत्यन्त दुर्लभ है। यदि विहारी ने गागर में सागर का भर लिया है तो रहीम उससे पहले ही महासागर को गागर में भर चुके थे। यदि लोहा गागर है तो उससे कहाँ छोटा बरव तो गगामागर^१। अतः यह कथन कोई अत्युक्ति नहीं कि रहीम ने महासागर को गगामागर में भर दिया है।

लम्बे लम्बे भाषा को बरव की छोटी सी पिटारी में सजा देना रहीम का एक बहुत बड़ा कौतुक है। इस कौतुक का रहस्य है उनकी भाषा। भाषा के अक्षर में भी एक बहुत बड़े कमाल की बात यह है कि वे सदैव असमस्त गणवली का प्रयोग करते हैं। और फिर भी अर्थ खातने पर भाषा का तार निबलना ही चला जाता है। बरव नायिका भेद की भाषा इस दृष्टि से अत्यन्त सराहनीय है। उसमें न केवल सांगोपांग वियोग के वर्णन करने की शक्ति है अपितु वह स्थिर तथा यथमान करण तथा प्रसन्न सभी प्रकार के चित्रों का याचने में सफल है। वही कहें तो रहीम ने ऐसे भाषा भरे गद्य चित्र बरव की छोटी सीमा में भर दिए हैं कि आज का कमरा भी

१ टूटीदार बड़ा साँगा जिससे पैंगता के समय जल परोसा जाता है।

उनस बाजो नही ल सकता । सिर भुङ्गारर नीचे की मार ताकती हुई, पर की छिगुनी से घरती कुरदती मग्घा लडिता व मिसकिया और कदणा भरे रूप का मत्य त सरन गिष्ट और सालकार गन्ना द्वारा केवल एक बरध म उतार देने का काय रहीम जैसे रस सिद्ध एव कवि कम कुशल शब्द गिल्पी ही कर सकत है—

सीस नवाइ नवेतिया निचवा जोइ ।

छिति पनि छोर छिगुनिया मुमुकनि रोई ॥ ४०—५० १०

ऐसा ही एक मय शब्द चित्र प्रस्तुत है—

भाकि भरोये गोरिया मखियन गोरि ।

फिर चितवति चित मतवा करत गिहोरि ॥ १०३—१०६ ६०

नायक-नायिका भेद जैसे विस्तृत एव शास्त्रीय विषय का सभी जन तथा दूती कम महिन केवल ११३ बरवी म सजो देन का जा कठिन तथा भ्रवधी व लिए मवया नवीन काय रहीम न सम्पन्न किया वह उनकी योग्यता और लाघव का ज्वलन प्रमाण है । इससे उनके संस्कृत प्रेम, साहित्य शास्त्रीय अध्ययन का भी ज्ञान हो जाता है । मुसलमान होकर भी काय शास्त्रीय भ्रगा का इतना सूक्ष्म पूण अध्ययन और निजी चिंतन के योग के साथ उसका सुखिपूण पुनराख्यान एव ऐसा काय है जिसके लिए कोई भी कायानुरागी रहीम की प्रतिभा के समक्ष सिर भुङ्गाए बिना नहीं रह सकता । उाक व्यस्त जीवन इस्लाम धर्म और विषय के भ्रूनेपन का देखत हुए यह काय और भी सराहनीय है । नायिका भेद के बरवी के गिष्ट भाव एव प्राज्ञल रूप को देखकर नगर नाभा के लेखक की शृंगार चेतना का विकास भी स्पष्ट हो जाता है । इस कृति म हमे शृंगार ही नहीं शृंगार से ऊपर कुछ और भी दृष्टि-गोचर होता है—

यदि हम इस कृति के सामाजिक सदेश को और ध्यान दे ता देतेगे कि रहीम को जहा भी अदसर मिला है वे शास्त्रीय लक्षणो की सीमा और शृंगार की सरसता को अक्षुण्ण रखते हुए भी एक स्वस्थ संदेश दे जाते हैं । सामान्या ग्रथवा वेश्या के वणना मे तो यह स्वर और भी स्पष्ट सुनाई पता है । वेश्या चाहे कितनी भी रूप यौवन बना मग्घ ना क्या न हो अततीगत्वा वह वश्य ही है । उसका प्रेम जैसे तक सीमित रहता है । यही कारण है कि प्रत्येक प्रकार की सामान्या के प्रत्येक उदाहरण मे वे किसी व किसी प्रकार वेश्या व मुख से धन मणिमाल और मौक्तिक हारा को भ्रष्टने की इच्छा यक्त कराकर प्रत्येक रसिक को सामान्या के तृप्ति प्रेम की मार साधधान कर देना चाहत है । काम कदम मे फन युवका के लिए रहीम का वह शाश्वत सदेश अत्यंत उपयोगी है । अत बरध नायिका भेद की उपादेयता मात्र शृंगार तक ही सीमित नहीं । उदाहरणार्थ केवल दो बरव पयाप्त हमे—

सामान्या उत्कठिता—

कठिन नोद भिनुसखा आलस पाइ ।

धन द मरए मितवा रहल लोभाइ । ६५—५० ५३

सामान्या अभिसारिका—

धन हित कीह सिगरया धातुर बाल ।

चली सग ले चेरिया, जहूँवा लाल ॥ ८०—पृ० ५५

स्पष्ट है कि यह कृति सयाग विपोग के मादक किंतु परिष्कृत और मयादित चित्र प्रस्तुत करती हुई ऐसा लोकापयोगी सदेग भी प्रदान करती है जो एतद विषयक ग्रंथ ग्रंथा मे सामान्यतः उपलब्ध नहीं। वैसे तो इस कृति का आधार संस्कृत काव्य शास्त्र और उसमें भी विपोग भानुदत्त एवं विश्वनाथ के लाक प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। किंतु यह भी निश्चित है कि रहीम ने उन आचार्यों का ग्रंथानुकरण नहीं किया। अनेक स्थान पर हम उनकी मौलिकता एवं स्वतंत्र चिंतन का परिचय प्राप्त हो जाता है। हिंदी आचार्यों के प्रभाव से तो सबका अदृते हैं ही, क्योंकि हिंदी में उस समय तक नायिका भेद पर प्रयत्न ही नहीं। कृपाराम की 'हित तरंगिणी' एवं मूरदास की साहित्य-जहरी का नायिका भेद की आरम्भिक कृतियाँ मानने वाला की सभ्या आज दिन प्रतिदिन घटती जा रही है। विद्वानों ने इन कृतियों की भाषा एवं काल निश्चय पर इस प्रकार के प्रश्नचिह्न अंकित किए हैं 'जिनके कारण हम इन्हें परवर्ती कृतियाँ मानने के लिए बाध्य हैं। यहाँ यह उल्लेख करना अप्रासांगिक न होगा कि कतिपय विद्वानों बरव नायिका भेद का ही हिंदी की प्रथम कृति स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में यह रचना मूरदास की रसमञ्जरी से भी पहली है।' किंतु हमारे विचार से अष्टाध्यायी मूरदास कृत रसमञ्जरी का स्थान हिंदी नायिका भेद विषयक स्वतंत्र कृति के रूप में प्रथम और रहीम के बरव नायिका भेद का स्थान द्वितीय है, केशव के ग्रंथ का स्थान कालक्रमानुसार तृतीय है।

साहित्य जगत में यह प्रसिद्धि सबके व्याप्त है कि तुलसीदास जी का बरव रामायण लिखने की प्रेरणा रहीम से मिली थी। इसका आधार बाबा वेणीमाधव दाम की यह पत्तियाँ हैं—

कवि रहीम बरव रचे पठये मुनिवर पास ।

सखि तेहि सुंदर छंद मे रचना कियेउ प्रकास ॥

इतना ही नहीं वेणीमाधव जी ने बरव रामायण का रचना काल स० १६६६ दिया है। इसी आधार पर डॉ० श्यामसुंदर दास,^३ डा० रामकुमार वर्मा^४

१ हिंदी साहित्य—आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी प० १७०

२ देखें राजेश्वर प्रसार चतुर्वेदी की 'रीति कविता एव शृंगार विवेचन

तथा

प० २३६ २४०

डा० रामधारीसिंह दिनकर की 'संस्कृति के चार अध्याय' प० ३५६

३ गोस्वामी तुलसीदास पृ० १००

४ हिंदी साहित्य का आलाचनात्मक इतिहास—पृ० ३७६

तथा १० रामायण भाष्यों ने भाष्य कृति का सं० १५६ का भी स्वीकार कर लिया है। चिन्तु उक्त समय रहीम वरव का जन्म रहाम वरव की रचना दक्षिण वष पूव कर पुनः व। दूसरी धार गणपुत्राचार्य प्रणय वर। रामायण की सं० १६५ का रचना स्वीकार करती है जब रहीम वरव छत्राचार्य वर व रहे होंगे। उक्त १० भाषाप्रमाण पुनः राम तुलसी व जीवनाचरण का एक संकलित कृति संग्रहांत है।^१ अतः वरव रामायण व छाया पर नायिका भेद का समय निर्दिष्ट करना अति आवश्यक व अनिश्चित धोर बुद्ध नहीं। हमारे विचार त तुलसीदास उन महान ग व काग नायिका भेद जग शृंगारि वरव का भजन की घण्टा, रहीम जग परिष्कृत रमि व अति व कभी वी की शायी। उक्त भक्ति विषयक भी बुद्ध उत्कृष्ट वरव र व, जग भाग व प्रारम्भिक वना व म प्रभावित है। रहीम ने उही भाषा का भाष्याभा जग वगत भेदा शायी जिनके वे रहीम व प्रिय छत्र व भी रामायण वर व। अतः वरव नायिका भेद व काग निर्णय म रहीम धोर तुलसी व धोर वरव व छाया प्रणय की वृत्त अधिग मन्त्र नये दना चाहिए। हम उनकी जीवनी व छाया पर ही नायिका भेद का निर्माण वान निश्चय कर सारत है।

रहीम ने गुजरात की सूबेदारी व पञ्चान पीन तीन वष का समय दरबार म विताया था। तीग वतीग वष का भरा पूरा परिपक्व जीवन, दरबार का वनात्मक एव शृंगार प्रधान वातावरण चिन्तो भी कवि का गाम्भीर्य शृंगारिक रचना की प्रेरणा द सकते हैं। अतः हमारा अनुमान है कि इसी समय व वीर १५८८ ई० म वरव नायिका भेद का निर्माण हुआ होगा। हाँ, इतना अवश्य है कि भाषा तथा छत्र की परिपक्वता को देखते हुए हम यह भा वहन का साहस कर सकते हैं कि रहीम ने इससे पूव भी अवधी भाषा म कुछ न कुछ अवश्य लिखा होगा अथवा एवम् भाषा पर इतना अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता। दुभाग्य यह है कि रहीम का पूरा काव्य प्राप्त नहीं है।

फुटकर वरव

नायिका भेद के वरवों के अनिश्चित रहीम द्वारा रचित कुछ वरव वर व प्रसिद्ध हैं। एक प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक के छाया पर प० यादव ने इस प्रकार के १०५ वरवों का सम्पादन रहीम रत्नावली म किया है।^२ इन वरवों म १०१ वरव तो एक प्राचीन प्रति के अनुसार हैं और नैप चार वर व पुस्तक से संकलित। बाद म

१ गोस्वामी तुलसीदास—पृ० ३५२

तुलसी व चार दल—पृ० १०२

तुलसीदास—प० २५५ २५६

रहीम रत्नावली, प० ६३ म ७२

घोर भी कुछ बरवें मिले हैं। वास्तव में इनकी सख्या कितनी थी, नहीं बता जा सकता, क्योंकि कोई घरवा घात मूचक प्राप्त नहीं हुआ। हाँ, प्रारम्भ मूचक उरवे अवश्य है, जो यह निश्चय करत है कि इनका प्रणयन नवीन रूति के रूप में किया गया था। कारण यह है कि प्रारम्भिक छ बरवें 'मगलाचरण' सूत्र है। इह पत्र ही प्रातः स्मरणीय गोस्वामी तुलसीदास जी के मानस की प्रारम्भिक पक्षियाँ सहसा याद आ जाती हैं। प्रथम बरवें में 'विघन विनासन तथा 'निमल बुद्धि प्रकासन गणेश' जी की वन्दना है। तदनंतर चार बरवों में प्रथम न 'कुमार', 'सूरजदेव', 'गिरिजादेव' तथा गल गानक बन जावन, प्रिय ग्धुवीर का ध्यान किया गया है। मगलाचरण के अन्तिम अथात् छठे बरवें में गुरु वन्दना है—

पुन पुन बबहु गुरु के पद जलजात ।

जिहि प्रताप से मनके तिमिर बिलात ॥ ६—पृ० ६३

सप्तम बरव में, उमड धुमड कर आती हुई घन घोर घटाघात से उल्लसित मार के गोर तथा उदीयमान तृणाक्षुरा के विकास का प्रणयन करती हुई विरहिणी 'नन्द किंगार का स्मरण करती है। आठवें बरवें में चतुर्थ द्वार मृगताघार उन्मत्त मघा के बीच में नन्दकुमार के उस आश्वासन का स्मरण करती है जो उहीने सावन में आवन के लिए दिया था। नव बरव में विरह जनित आगका व्यक्त करते हुए वह, सखि से कहती है कि कहीं उसके प्रियतम का किसी घाय बामा ने अपने बम में तो नहीं कर लिया। यह आगका आते ही उसकी आकुलता अत्यधिक बढ़ने लगती है। एकादश बरव में तो मानों विरह की कष्टना सरिता ही फूट पड़ी है। गठ चातक का अर्धनिश पीव पीव उसके हृदय में उत्पात मचाने लगता है। चमकती बिजली में उनकी अथाय समवयस्काएँ अपने अपने प्रियतमों के साथ भूले का उन्मत्त मना रही हैं। ऐसे समय में उगत हुए नवाबुर यदि उसके हृदय में मदन महीप के तीर के समान घँस जाए तो आश्चर्य ही क्या ?

उलह नच अक्षुरवा बिन बलवीर ।

मानहु मदन महीप के, बिन पर तीर ॥ १६—पृ० ६४

इस प्रकार यह विरह वरण, प्रायः निरंतर रूप से इकतीसवें बरव तक चलता है। उसके पश्चात् भक्ति के एक आने पुट के साथ बरव पसरट्टे की दृकान बन जाते हैं। ऋतु वरण अमर गीत, ज्ञान भक्ति बराग्य तथा धर्मोपनिषद् इत्यादि अनेक विषयों के कलात्मक नमून उपस्थित मिलत हैं। यहां तक कि फारसी के बरवें भी बीच बीच में हैं—

मों गुजरद इ दिलरा, बे दिलदार ।

इक इक साअत द्भचू, साल हजार ॥ ८६ पृ० ७०

१ डा० समरबहादुर सिंह के संकलन में बरवा का संख्या १०६ है।

गङ्गा में गुद घातम घब हतार ।

ये दितदार क गोरव दितम तरार ॥ ६४—५० ७०

दिलपर जद घर जिगरम तीर निगाह ।

तपीडा जी भी आपद हरदम घाट ॥ ६५—५० ७१

क गोपम ग्रह यातम वेग गिगार ।

तनहा नजर न आपद दित साधार ॥ ६६—५० ७१

कहने की आवश्यकता नहीं कि पारमा के बरवों में प्रेम की पीर का ही गायन है। वही दूज बरवों का प्रधान विषय है। 'गो रामपद निजारी बरवों का विषय रास नीला मानते हैं।' रास नीला हा न हा किन्तु विश्व नीला तो निश्चय ही है। है समय के त्रि भा किन्तु घटून कम जिनन है उता मत्त न मादक एव स्वाभाविक ।

जय तव माहन भूठी सोहैं खात ।

इन यातन ही प्यार तुर क्हात ॥ ६७—५० ६७

पयिक आय पनघटवा कहत पिपाय ।

पया परा नदिया फेरि क्हाव ॥ ६८—५० ७१

गली अथेरी मिलक, रहि चुप चाप ।

बरजोरी मन मोहन करत मिलाप ॥ ७४—५० ६६

अंतिम बरव में त्रिग चतुर नायक की बरजारा का दृश्य अपने में एक ही है। ऐसे नायक की विरहिणी यदि अथ बरवों में सौ सौ धासू रानी है तो आश्चर्य ही क्या? उमे तीना माहन तलवार जस लगते हैं। मारन के साथ ही जय रिमभिम भडी लगा हो और घर घर में मदन हिलार आई हुई हा ता उसक पिपा का कर उसके कर में न होना करम की खो नही तो और क्या है—

या भर मे घर घर मे मदन हिलोर ।

पिय नहि अपने कर मे बरमे सोर ॥ १०३ - ५० ७१

कहने की आवश्यकता नहीं कि यहा करम के यमन न बरव के आकषण में चार चाद लगा दिए है। ऐसी ही मदन हिलार होसी क हिलोल में उठती है। युवती के लिए विरह का यह अवसर अत्यन्त कष्टकर है और वह भी तब जबकि अथ सतिया प्राण प्यारा के साथ फाय श्रीडा के हास विलास में रहत हा। ऐसी अवस्था में भी जिस अभागिन को प्रिय आगमन की प्रत्याशा में वाग हा उडाने पडे, उस की हृदय में पीडा का अनुमान भी नही लगाया जा सकता—

लोग सुगई हिल मिल खिलत फाय ।

परयो उडावन मो की सब दिन वाग ॥ ६७—५० ७१

मे रहाम रतिग श्रु गार मारक का उल्लेख किया है । कि तु दुर्भाग्य म अभी तक यह रचना प्राप्त नहीं हो सकी । स्थानीय यात्रिक जो त ए मारठे रहाम रत्नावली म शिण थे । यही छ मारठे रत्नावली क भीस यण पंचान की कृति 'रतिमन विलास म प्रकाशित है ।^१ स्थाना पुनार पाप स उही की परम पर मन्त्रीय करना पट रण है । प्रथम सोरठा है—

गई घागि उर साय घागि तेन घाई जो तिय ।

साथी नाहि घुभाय मभकि मभकि बरि बरि उठ ॥ १—पृ० ८०

यह सोरठा रहीम क रतिक दृश्य, मूर्ख परिवार तथा मामा य जनसम्पर्क की दुहाई देता है । प्राग यणुए एक दूसरे क घर श्रुहा मुनगान के त्रिण घाग मीगने जाया करती हैं । रहीम न किसी ऐसी ही युवनी की घाग मीगत गेगा हागा । घाग लेने हुए ऐस मन म भी घाग लगा गई । फिर ता भभक भभक कर काम जसला की लपट उटना स्वाभाविक था । कहने की भाव यकता नही कि घ तस म प्रज्वलित कम घाग का बुझना सरन नहा जाना । भभकि भभकि तथा बरि बरि इयाणि गंगा का पुनरुक्तिमय प्रयोग नगर गाभा के गंगा की स्मृति करा देता है । घन लेवक क एक हान म किसी प्रकार क स देह की गुजाइश नही वही घसमस्य सरस सागावली वही जन सुनभ भाव । घाग लने जाने जसी सागाय घटना पर भी कविता हा सकती है यह सांठे से सिद्ध है । ठीक ऐसा ही दूसरा चित्र देखिए—

दीपक हिए छिपाय नवल यधु घर ल चली ।

कर बिहीन पछिताय कुच ललि गिज सीसं धुन । २—पृ० ८०

जिस प्रकार युवतिया एक दूसरे के घर घाग मीगने चली जाती हैं उसीप्रकार पडोमी क घर दीपक जलाने चले जाना तथा जलान क पश्चात् बुझने के भय से साडी के आंचल स ढक लना बहुत ही सामान्य क्रिया है जा प्राय प्रत्येक गाँव म सायकाल का देखी जा सकता है । ऐसी सामा य ग्राम्य घटना पर इतनी ऊँची कल्पना श्रुगार भाव का ऐसा विस्फोट रहीम का प्रतिभा पर आश्चर्य हाता है । सोरठे की पहली पक्ति म यही है । दूसरी पक्ति का भाव दीपक पर आंचल ढकने के बाद की क्रिया स सम्बद्ध है । भाव द्वा स लाख बचाने पर भी चलते समय दीपक की लौ हिलती है । रहीम के लिए यह दीपक की लौ का हिलना, मात्र प्ररम्भित होना नही सिर धुन धुन कर पछताना है । कारण घने वस्त्रा से सदैव आच्छादित रहते हुए भी अपनी उत्तुंगता और पीनता प्रदर्शित करते रहने वाले, नवन वधू के उराज आज उसके निता त समीप हैं । किंतु कर बिहीनता—हाथ न होने के कारण दीपक कुच मदन कर भी तो किस प्रकार । यही है कर बिहीन दीपक की पीडा । दीपक इसीलिए पछता रहा है और इसीलिए धुन रहा है अपना मिर । यहाँ रहीम की कल्पना कसी रोमांचक है कितनी प्रकृता और सरस ।

दीपक को आचल म छिपा कर ले जाने का उल्लेख तो कवि आज भी करत हैं^१ पर रहीम की सी नासल कल्पना किसी ने नहीं की। इतना सदिलिष्ट चित्र भी कोई नहीं उतार पाया। कहते हैं कि एक बार कवि गग ने इमी भाव का प्रयोग करके दरवार म एक समस्या पूति की थी। समस्या थी 'हालत पानी —

एक समय जल आनन को घर-सो निकली अबला बजरानी।
जात सकोल म डोल मरो जल खँचत मे अगिया मसकानी ॥
देखि समा छतिपा उघडो, कवि 'गग कहे मनसा ललचात्री।
हाय बिना पछितात रह्यो इहि कारन डोल मे हालत पानी ॥^२

स्पष्ट है कि रहीम की सी सक्षिप्तता आकुलता और नवलता इतने बड़े छन्द म भी नहीं है। स्वाभाविकता भी उतनी नहीं है। क्याकि डाल हाय म लटकना है जिमकी स्थिति जघाघ्रा न पास हाती है उसकी अपना ता पनिहारी के बगल का पडा व न प्रदश के अधिक समीप हाता है। आचल के दीपक का नकटय ता बात ही कुछ और है। दीपक पर ही एक सोरठा और लीजिए—

पलटि चली मुस्कान्य दुति रहीम उपजाय अति।
बाती सी उक्ताय मानो दीनी दीप को ॥ ४—पृ० ८०

यहा मध्या आगतपतिका का प्रवास की लम्बी अवधि क पश्चात प्रिय का पाना देखना पलटना मुस्काना इत्यादि अनुभाव बडे ही मादक हैं। साथ ही मुस्काने इत्यादि के समय मुख कमल पर इस प्रकार की सौन्दर्य राशि फूट पडी मानो नन्द-टिमटिमाते दीपक की बत्ती को सहमा उक्ता लिया गया हो। यह भाव रहीम की स्वाभाविक सरमता मूश्म परिवेक्षण तथा कमनीय कल्पना शक्ति का परिचायक है। वस्तुत इत सारठो म कल्पना विलास बहुत ही कमाल का है। अन्तिम अया छठा सारठा इस प्रकार है—

रहिमन पुतरी श्याम, मनहु जलज मधुकर लसै।
केधो गालिग्राम, रुपे के अरघा घरै ॥ ६—पृ० ८०

आन्व के सपद परदे पर श्याम पुनली के चमकन की कितनी सालकार कल्पना है। महा काल मधुकर का कमल म वसना जहा प्रवृति प्रेम एव शृंगार दीपन का द्योतक है वहीं चाँनी की आधार पिण्डी म स्थित गालिग्राम की चिकनी चमकदार काला बटिया की कल्पना रहीम हृदय की वैष्णवी भावना भी व्यक्त करता है।

१ गगि मुख पर घूघट डाले।

आचल मे दीप छिपाये ॥

जीवन की गोधूली मे

प्रिय कौतूहल से आये ॥

आसू

२ रहीम रतनावली प० ५६ पर उद्धृत।

कल्पना की कमनीयता कविश्य की सरगता, गती की गुणमरता तथा भाषा का सातकार सरलता म य सारठे बेगान हैं । चाहे गूढ मनिराम और बिगारी, क दाहा के साथ रगिए और चाहे मूर तुलसी क पना क साथ उनाग नही उररेगे, एवनीस ही रहगे । दुर्भाग्य यह कि यह धगूठी काव्य कृति प्राप्त नहीं है । यदि रहीम का पूरा काव्य प्राप्त हा जाता तो मूर तुलसी काव्य, रिहारी और मनिराम काव्य क स्थान पर की कल्पना जगत रिता और प्रचार क करता ।

तब न बनी मान यह है कि इन सरम सोरग का संगम मुड की विभीषिना म निर तर व्यस्त रहने वाला एक मनापति है । शृ गार के बुधन सारठे और बरव रचने की या यता रचना तथा विनाल मुद्रा के मफल मचानन म संगम हाता दा परस्पर निग गुण हैं । बन्धुम्यति यह है कि रहीम का समूचा व्यक्ति क विपरीत गुणा के गुदर सामजस्य का सादग है । साचाय द्विवेदी का कथन है —

जिस गूढ श्म कवि (रहीम) का हृदय मातृवीय रम म परिपूण था और अनामक्त तथा अनाविल सोदय की दृष्टि से समृद्ध था । जीवन के अनन्य धान प्रति पाता के भीतर स भी रातृवीय पश्यत्रा का चपन म बराबर आते रहन क वा भी और हर प्रकार क उतार चढाव म उठत मिग्ने रहन के बाद भी जिस कवि क हृदय का मातृवीय रस नि गय नहा हुआ उसने हृदय की अद्भुत सरमता का अनुमान सहज ही किया जा सकता है ।^१

फुटकर छन्द

शृ गार सारठ के समान ही थोड़ी सख्या म रहीम के कतिपय काव्य छन्द शतस्तत प्राचीन सग्रहा म लिखे हुए हैं । उस युग म पद सर्वय, पना री तथा छप्पय इत्याद लिखने का बहुत प्रचार था । रहीम भी मन की मौज म आसर छन्द रचना करते रहे हाग । तुलसीदास जी का जिस प्रकार प्रत्येक छन्द के राममय करने की बुन थी उसी प्रकार रहीम भी प्रत्येक छन्द मे नीति रचना करना चाहते थे । बरव नायिका भेद के आरम्भ म कवि ने स्वय लिखा है—

कवित्त फह्यो बोहा कह्यो तुल न छप्पय छन्द ।

विरच्यो यही विचार क, यह बरवा रस कन्द ॥^२

स्पष्ट है कि नायिका भेद लिखने स पूव, रहीम नाना प्रकार के छंदा म रचनाए प्रस्तुत कर चुके थे । किन्तु नायिका भेद की रचना उन्होंने अपने प्रिय छन्द बरव म ही की । उसे इससे पूव नगर शोभा प्रसंग के भी कुछ और बरव प्राप्त हैं ।^३ उनमे गदा की दुस करके बहने की प्रवृत्ति स्पष्ट है । बालावरण निर्माण एव सौ दय निरूपण म उद्यान विशेष की नगर शोभा जसी सादाबला प्रमुक्त की गई है ।

१ हि दा साहित्य आचार्य हजाराप्रसाद द्विवेदी (म० २००६) पृ० २०४

२ रहीम रत्नावली प० ४०

३ वही प० २१

भाषा सली तो है ही रहीम की। अत वे बरवै भी रहीम के ही हैं। किंतु स्तर की दृष्टि से नायिका भेद के बरवों के समकक्ष नहीं हैं। ये बरवै प्रारम्भ की उस स्थिति के जान पड़ते हैं जब बरव छंद अपनी दुधमुही अवस्था में था। और धू कि हम अगर गोभा की सन १५८०-८२ की रचना मान चुके हैं। अत बरवै छंद का साहित्य में प्रवेश भी इसी समय के आस पास की घटना है। उधर नायिका भेद का समय हमने १५८८ ई० माना है। अत निश्चित है कि उस समय तक रहीम, घनाक्षरी, सबवे, छप्पय इत्यादि सभी छंदों में रचना कर चुके थे। बत्तीस वष के प्रतिभा सम्पन्न युवक के लिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं।

प्राप्त फुटकर छंद भक्ति एवं नीति विषयक तो हैं ही, शृंगार विषयक भी हैं। सब पूछिए ता शृंगार विषयक ही अधिक है। अति अनियारे और विष के विषारे, नन बाणा पर लिखी एक घनाक्षरी प्रस्तुत है—

अति अनियारे मानो सान दे सुधारे

महा विष क विषारे ये करत परतात हैं।

ऐसे अपराधी देख, आगम अगाधी यहै,

साधना जो साधी हरि हिय मे अ हात हैं।

बार बार बोरे या तें लाल लाल डोरे नये,

तोहू तो रहीम थारे बिधिना सकात हैं।

धाइक धनेरे दुख दाइक हैं मेरे नित,

नन बान तेरे उर बेधि बेधि जात हैं ॥^१

नेत्र बाणा से विधे हृदय की अवस्था भी विचित्र होती है। मन जितना बिधता जाता है उतना ही और अधिक बिधने की कामना करता है। मन माहक की निष्ठुरता जानते हुए भी उनमें दशन देने में न लजाने की प्रायना करते हुए सकाच नहीं होता। उसे बात है कि प्रिय के न आन की अवस्था में भी चित्त उही के पास रहगा—'चित्त लाग्यो जित जये तित ही रहीम निति' जैसा अमूल्य भाव भरा पतवा देन वाली दूसरी घनाक्षरी भी द्रष्टव्य है—

मोहिबो निछोहिबो सनेह मे तो नयो नाहि

मले ही निदुर मये काहे को लजाइये।

तन मन राबरे तो मता के भगन होतु

उचरि गये ते वहा खोरि लाइये।

चित्त लाग्यो जित जये तित ही रहीम निति,

धाधवे के हित इत एक बार आइये।

जान हूरसी उर वसी है तिहारे उर

मे सो प्रीत वसी तऊ हँसो न कराइये ॥^२

१ रहीम रतनावली प० ७५

२ वही, प० ७६

छन्द मे निवेदन की विवशता देखते ही बनती है। उम नात है कि प्रिय का स्नेह पान कोई और है। किन्तु मतवाला हृदय फिर भी उनसे दशन देने की प्रार्थना करता हुआ पुकार उठता है कि घाघवे (जलाने) क हिन ही सही, कि तु एक बार दान तो दीजिए। इतने पर भी यदि प्रिय न पधारें तो निपटुरता की परावाष्ठा ही समझनी चाहिए। भगवान जाने वह कौन सी प्रभागी पड़ी थी, जब एने निपटुर चितचोर से भेंट हुई। सबैया द्रष्टव्य है—

पुतरो भतुरीन कहु मिलिकें सगि लागि गयो कहु काहु करदो ।
हिरद वहिब सहिय ही को है कहिय को कहा कहु है गहि केदो ॥
सूधे चित तन हा हा करे हू रहीम' इतो दुल जात कयो भेटो ।
ऐसे कठोर सों श्री चित चोर सा कौन सी हाय घरी नय भेटो ॥^१

प्रिय कठोर हो या कोमल, उसकी भेंट सख सुख हाती है। प्रिय का पाना पुष्प-फल का उदय ही समझना चाहिए। एसी पुष्प बेला म मौन रहना भला किस को अच्छा लगेगा? कि तु मौन रहना या न रहना अपने बस की बात नहीं। निगोडी लाज, होठ तो क्या भाव भी नहीं खुलने देती और नेत्र भरकर चन्द्रानन का रस पान करने की साध, मन की मन में ही रह जाती है। सधये म रहीम की भाव धारा इस प्रकार बही है—

सीखी है ऐसो रहीम कहा इन नन अनोखे धो नेह की नावन ।
श्रोत भये रहते न बने कहते न बने बिरहानल राषन ॥
पुयन प्यारे सो भेंट मइ ए प मौन कुसग मिल्यो अपराधन ।
स्वाम सुधानिधि आनन की भरिये सखि सूधे चितवे की साधन ॥^२

स्पष्ट है कि दोहो, सोरठो और बरवों का यह रचयिता सबये एव पनाधरी लिखने में भी सिद्धहस्त था। जब तक और छन्द न मिल जाएं तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि रहीम ने उस युग के सुपरिचित छन्द, चौपाई में कुछ लिखा था या नहीं। भक्तमाल प्रसंग के दो पद— छवि भावन मोहन लाल को तथा कमल बल ननन की उमान के सरस भावो तथा रहीम के संस्कृत काव्य का उल्लेख व्यक्तित्व के प्रसंग में हो चुका है। यहाँ भगवती जाह्नवी के प्रति अगाध श्रद्धा प्रदर्शित करने वाले एक अग्र्य श्लोक को उद्धृत करने का लोभ सवरण करना कठिन है—

अच्युतचरणतरङ्गिणी गशि गेखर मौलि मालती माले ।
मम तनुवितरणसमये हरता देया न मे हरिता ॥^३

अर्थात् भगवान विष्णु के चरणों में तरंगयित तथा गशिगेखर देवाधिदेव गवर की जटाझा में मालती माला के समान शोभायमान हे गने। मेरे उद्धार के समय मुझे

- १ रहीम रत्नावली, प० ७८
- २ वही प० ७८
- ३ वही, श्लोक सख्या, ७ पृ० ८४

(त्रिलोकप्रियपति) विष्णु मत बनाना, (अग्निचन) शंकर ही बनाना जिससे मैं तुम्हें अपने सर पर धारण किए रहने का सौभाग्य प्राप्त कर सकूँ।

कितनी पुनीत भावना है, कसी अगाध वैष्णवी श्रद्धा। उन्होंने इसी भाव को दोहे में भी निबद्ध किया है—

अच्युत चरण तरंगिनी शिव सिर मालति माल ।

हरि न बनायो सुरसरी, कौजो इन्दव भाल ॥^१

निष्कर्ष

रहीम की रचनाओं का अध्ययन कर लेने के पश्चात् इस सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं रह जाता कि रहीम उच्च प्रतिभा सम्पन्न कवि थे। उन्होंने जिस व्यस्त जीवन तथा विरोधी काय व्यापार में सलग्न रहते हुए भगवती भारती का आराधन किया, वह न केवल सराहनीय अगितु स्तुत्य है। रहीम विशेषतया शृंगार, भक्ति और नीति के कवि थे। यद्यपि कला, संस्कृत काव्यशास्त्र एवं ज्यामिती में भी इनकी अच्छी गति थी, किन्तु साहित्य में वे अपनी शृंगार एवं नीति सम्बन्धी कविताओं के कारण ही प्रसिद्ध हैं। इनकी कवि प्रतिभा प्रबन्धकार की प्रतिभा न टाकर, मुक्तककार की प्रतिभा थी। उस क्षेत्र में रहीम किसी भी मुक्तककार से होड़ ले सकते हैं। उनका जितना भी काव्य प्राप्त है उसी के आधार पर हिन्दी मुक्तक काव्य परम्परा में उनका अपना स्थान सदैव ही सुरक्षित रहेगा। हिन्दी एवं हिन्दुत्व का समयक यह मुसलमान कवि सवथा वादनीय है।

रहीम दोहावली— एक विषयपरक विवेचन

काल की क्रमता मयविदित है। वह छोटे बड़े बुरे भले, पण्डित मूढ़ किसी का नहीं छोड़ता। विद्वान यही जानकर अपने को समर करने के लिए विभिन्न प्रयत्न करते हैं। काव्य उही प्रयत्नों का सर्वोत्तम रूप है। दुख तब और अधिक होता है जब किसी महाकवि का काव्य भी काल के कराल गाल में विलीन हो जाता है। रहीम के साथ ऐसा ही हुआ है। हिन्दी जगत सदस्य से यह सुनता चला आया है कि रहीम ने काँ सनसई लिखी थी। किन्तु लाख प्रयत्न कराने पर भी लगभग तीन सौ स अधिक दोहे प्राप्त नहीं हो पाए हैं। वैसे तो रहीम ने और भी कई रचनाएँ लिखी थी किन्तु सामान्य जनता में उनकी प्रसिद्धि नीति के दोहों के कारण ही है। कुछ विद्वानों ने डा. दाहो का सनसई 'कुछ ने सनसई-दोहावली' तथा कुछ ने केवल दोहावली^१ नाम दिया है। प० मायागकर याचिक ने इन दोहों को दोहावली शीपक से प्रकाशित किया है। हिन्दी में कुछ दोहावली और भी प्रसिद्ध हैं। अतः हम दोहावली के साथ रहीम का जोड़ना आवश्यक समझते हैं। इसीलिए रहीम के नीति सम्बन्धी दोहों का प्रस्तुत अध्ययन, रहीम दोहावली शीपक से किया जा रहा है।

रहीम के यत्नत्व का अध्ययन करते समय यह निवेदन किया जा चुका है कि जीवन के जितने अधिक क्षेत्रों में रहाम का प्रवेश या उतना हिन्दी के किसी अन्य कवि का नहीं। रहीम के समान उच्च पदों पर कार्य करने वाला तो सम्भवतः कोई भी अन्य कवि इतना प्रसिद्ध नहीं हुआ। नीति के क्षेत्र में इतनी अधिक क्षमता का श्रेय उनके त्रियात्मक अनुभवजन्य ज्ञान को ही है। विस्तृत अनुभव तथा बहुमुखी प्रतिभा के चलते रहीम ने जिस नीति काय का सृजन किया वह मध्य युग के अन्धकार कवियों की भाँति कुछ घिस पिटे विषयों का विधि-वेपथु मात्र नहीं है। उन्होंने जनता के सम्मुख ऐसे स्वानुभूत तथ्य समों तब शली से प्रस्तुत किए जा साम्प्रदायिकता से सम्बद्ध होते हुए भी नितांत प्रावहारिक हैं।

१ कविता कौमुदी—रामनरेश त्रिपाठी (अष्टम संस्करण), भाग १, प० ३३१

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (संस्करण १५), प० २१०

३ रहीम रत्नावली प० मायागकर याचिक (दोहावली) प० १

रहीम दोहावली की व्यावहारिकता

रहीम का प्रत्येक कथन श्रियात्मक जीवन एवं व्यावहारिक आचार पर टिका है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि रहीम आदर्श के विराधी थे। विरोधी तो वे थाये आदर्श के थे, व्यावहारिक आदर्श के नहीं। उनका अपना जीवन भी सांसारिक जीवन था। न वे सत्त महात्मा थे और न त्यागी ब्रह्मचारी। किंतु फिर भी सामाजिक मर्यादाओं का पूरा निष्ठा के साथ निर्वाह करने पर उन्होंने साधु महात्माओं से कम बल नहीं दिया। श्रद्धावस्था में विवाह कराने के इच्छुक तथा परदारों सम्भाग आदि के उत्सुक मिजाज द्वारा काले किए बाला बाल, बूढ़े जवानों पर करारों चाट करत हुए उन्होंने लिखा है—

रहिमन थोरे दिनन को, कौन करे मुह स्याह ।

नहीं छलन को परतिया नहीं करन को व्याह ॥ १६४—पृ० १६

इस प्रकार की और अनेक कुप्रवृत्तियों पर उन्होंने यत्न-तन आघात करते हुए व्यावहारिक आदर्श की स्थापना पर बल दिया है। रहीम ने अनुभव किया था कि यदि बड़े आदमी थोड़ा सा भी लोक मगल का काय सम्पादित करें तो उनकी बड़ाई वृत्तिकाय की अपेक्षा कहीं अधिक होती है—

थोरो किए घडेन को, बडी बडाई होय ।

ज्यों रहीम हनुमत को गिरधर कहत न कोय ॥ १२—पृ० १

इस दाहे के ध्वंसाय द्वारा रहीम ने तथाकथित बड़े आदमियों को लाकोपकार में निरत रहने की प्रेरणा दी है। ऐसा करने से उनका यज्ञ सामान्य स्थिति के उदार व्यक्तियों की अपेक्षा कहीं अधिक होगा।

स्वाभाविक सरसता जन्मजात प्रतिभा और शास्त्रीय गान ने रहीम के नीति काव्य के लिए माने में सुगंध भरन का काय किया है। कटु अनुभव एवं सरस अभिव्यक्ति के आधार पर जीवन सापत्य के जो मूलमंत्र जनता को बताए थे आज भी जन जन के गले का कण्ठहार बने हुए हैं। उन्होंने परम्परागत गुरुभक्ति का अंधानुकरण न करत हुए उद्घोष किया कि हमें उचित आज्ञाओं का ही पालन करना चाहिए। यदि गुरु भी अनुचित आज्ञा दें तो वह उपेक्षणीय है। इसके समयन में उन्होंने रामायण की घटना को उद्घन किया है। गुरु वशिष्ठ ने महाराज भरत को राज्य करन का सानुरोध आदेश दिया था किंतु राम की अनुपस्थिति में उसे मर्यादानुकूल न समझते हुए, भरत ने उसका पालन नहीं किया। ऐसा करन से भरत का श्रेय घटा नहीं बढ़ा ही है। यहाँ तक कि ४ सुयोग में स्वयं भगवान राम से भी पहले आत है^१—

अनुचित बचन न मानिए जदपि गुरायसु मादि ।

है रहीम रघुनाथ त सुजस भरत को बादि ॥ ५—पृ० १

१ वदों प्रथम भरत के चरणा। जानु नेम अत जाय न बरना ॥

भरत जस महापुरुष निजी नीति का निर्धारण करन मे सफल हैं । सामान्य जन तो गुरुजना क जोर पर ही उचित अनुचित काय करत हैं—

अनुचित उचित रहीम लघु करहि बडन के जोर ।

ज्या ससि के सयोग से पचवत आगि चकोर ॥ ४—५० १

जीवन म प्रतिदिन अच्छ बुरे सभी व्यक्तियों से पाला पडता है । वे अपनी बुद्धि-योग्यता और शिक्षा दीक्षानुसार व्यवहार करते हैं । अत हम मूर्खों के व्यवहार का बुरा मानकर व्यथ ही बात को बढाना नहीं चाहिए—

जसो जाकी बुद्धि है तसो कहै बनाप ।

ताको बुरो न मानिये लन कहा सू जाय ॥ ६७—५० ७

यहाँ चौथ चरण का स्वाभाविक तब अवलाकनीय है । उसम मूर्खों के प्रति एक सहानुभूति का भाव भी दृष्टिगोचर हाता है । मूर्खों के प्रति सहानुभूति का व्यवहार सज्जनों की विशेषता है । यही विशेषता उह दुष्टा से पथक करती है । सहानुभूति के आघार पर हम अपने सगे सम्बन्धियों और इष्ट मित्रा से लाक व्यवहार बनाए रखत है अथवा टकराव तो उनसे भी हो जाता है । टकराव क कारण कोई अपन सम्बन्धिया का छोड नहीं देता । उ ही के कारण यह जावन जीने योग्य बनता है । उही के कारण सामाजिकता का निर्वाह होता है । अत हमे दूटे हुए सम्बन्धियों को बार बार जोडन का प्रयत्न करते रहना चाहिए । रहीम का तब है कि मोतिया की (उपयोगी एवं बहुमूल्य) लडी जितनी बार टूटती है उतनी ही बार जोड दी जाती है । सम्बन्धिया का समाज भी मोती की लडी ही है—

दूटे मुजन मनाइए जा दूटे सौ बार ।

रहिमन फिरि फिरि पोइए दूटे मुक्ताहार ॥ ८५—५० ९

दूटने के बाद जुडना और जुडन के बाद दूटना प्रकृति का नियम है । सुममय के बाद कुसमय और कुसमय क बाद सुसमय का क्रम भी इसी प्रकार चलता है । यही जीवन का चक्र है । कुसमय उपस्थित होने पर यदि मानव अपने को बचा ल जाय तो सुख के दिन देव सक्ता है । अत कुअवसर उपस्थित हान पर यन कन प्रकारेण रक्षा का उपाय करना चाहिए । यदि किसी अमन्न स्थान म भी भाग कर गरण लेनी पडे तो कोई हानि नहीं —

दुरदिन परे रहीम कहि दुरयल जयत भागि ।

टाडे दूतत घर पर जब घर सागत आगि ॥ ९८—५० १०

ग्रामीण लोग घर म भाग लगन पर समीपस्थ कूडिया पर भी जाकर अपनी रक्षा कर लेते हैं । यह उदाहरण रहीम क ग्राम्य सम्पक का सूचक हान क साथ तत्कालीन ग्रामीण स्थिति का सतत प्रमाण करता है । इस स हम उस कान क मकाना, छप्परा तथा भाग लगन की घटनाया का अनुमान सहज ही कर सकत हैं । ऐम समय में ग्राम्य जीवन म बडी एकता भा जाता है । वस एकता सामान्यतया नहीं

रहती, सामान्यतया रहते हैं लडाईं, भगडे, विद्वेय और घृणा । स्नेह पास पास रहने वाला मे उतना नहीं हो पाता जितना दूरस्थ सम्बन्धिया मे । इस दृष्टि से रहीम ने नकटव्य की अपेक्षा दूरी को अच्छा माना है—

नात नेह दूरी मली लो रहीम जिय जानि ।

निकट निरादर होत है ज्यो गडही को पानि ॥ १०६—५० ११

दूर से देखने पर यह तथ्य कुछ अटपटा पात होगा क्योंकि स्नेह तो निकट सम्पर्क और मेल-जोल की उपज है किन्तु रिश्तदारों के सम्बन्ध में नित्य प्रति का अनुभव रहीम के कथन का समयन करेगा । ऐसा ही एक अनुभव नौकरी चाकरी के सम्बन्ध में है । नौकरी के क्षण में सफाता, सराहना तथा अधिकारिया का स्नेह केवल काम करने मात्र में नहीं मिलता । उनके लिए कुछ अथ अच्यौ-बुरी योग्यताएँ प्राप्त करना आवश्यक है । खुशामद एसी ही योग्यता है । सब जानते हैं कि खुशामद में आमद होती है । मालिक की हा में हा मिलाने वाले मौज करते हैं इनाम और उन्नतिया मार ले जाते हैं । दूसरी ओर सच्चे और परिश्रमी, मन मसोमते ही रह जाते हैं । राज समाज की इसी स्थिति से खीझ कर रहीम ने अधिकारिया की हाँ में हा मिलान की बात कही होगी । वे तो यहाँ तक कह गये हैं कि, ऐसे समाज में यदि आवश्यकता पड़ता और से भी आगे बढ़ जाने में कोई हानि नहीं । यदि राजा दिन को रात कहता एक पग और आग कह दीजिए—जी हाँ तारे भी दीख रहे हैं ।

रहिमन जो रहिबो चहे कहै बाहि के दाव ।

जो नप बासर निसि कहे तो कचपची दिखाव ॥ १०८—५० १६

आदशवादी इस तथ्य से सहमत न हागे किन्तु रहीम के समय में यही वातावरण रहा हागा । और सच पूछिए तो दफतरों, कल कारखाना और स्कूल-कालिजा में आज भी यही बात है । जीवन की ठाकरें खाने के पश्चात जब आदश का कच्चा घागा टूटता है तब बहुत अनुभव नियात्मक जीवन व्यतीत करने को बाध्य कर देते हैं । नीति के कवि का काय इन्हीं तथ्यों का उल्लेख करना है । इस दृष्टि से निम्नलिखित दोहे भी ध्यान देने योग्य हैं—

अनकी ही बातें करे, सोबत जागे सोय ।

साहि सिखाय जगायबो, रहिमन उचित न होय ॥ ३—५० १

रहिमन तीन प्रकार तें हित अनहित पहचानि ।

परबस परे परीस बस, परे मामला जानि ॥ १६१—५० १६

पूर्व विवेचित विषय

रहीम खानदाना, कबीर के समान बहुश्रुत भी थे और तुलसीदास के समान बहुपठ भी । इन दोनों के अतिरिक्त जीवन जगत का नियात्मक अनुभव उनकी अपनी थी । लोक और शास्त्र दोनों पाठशालाओं से रहीम ने जो कुछ सीखा उसे कायात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से हमारे मग्मुस उपस्थित कर दिया । यही कारण है कि

उनके नीति काव्य में स्वानुभूत नियात्मक तथ्यों के साथ ही पूव विवेचित शास्त्रीय विषयों का निबचन भी भरी भानि तथा प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है। इनमें भी अधिकता उन्हीं विषयों की है जिनसे उनका जीवन त्रिषात्मक रीति में सम्बद्ध था। निश्चित ही महापुरुषा, भाग्यवानो, जानियों पुरुषार्थिया तथा याचका से उनका सम्पर्क अधिक था, अथवा य विषयों में कम। यही कारण है कि उनके काव्य में शान, भाग्य पुरुषार्थ दुभाग्य, निघण्टा, ऐश्वर्य निराशा तथा कुसमय आदि विषयों की चर्चा अपेक्षाकृत अधिक हुई है। नीति के इन विषयों पर बहुत से दोहरे महावतला की नजरबंदी की अवस्था के सामाजिक विक्षोभ के समय तथा दुभाग्य दीनता एवं अधिकार मुक्तता की अवस्था में लिख गये जान पड़ते हैं। शेष अवस्था में मन की मीज में आकर जो नीति काव्य लिखा गया है उसमें प्रेम, शृंगार, भक्ति, दया, दिव्यता आदि विषय प्रमुख हैं। इनमें भी सबसे अधिक सारगर्भित है—प्रेम।

प्रेम

परिचय, घनिष्टता व मित्रता, हमारे सामाजिक मूल जोल के श्रेष्ठ विकार हैं। इस शृंखला की अंतिम सीढ़ी ही प्रेम है। प्रेम का सम्बन्ध हृदय का कोमलतम अनुभूति से है। इसीलिए अनुभूति प्रधान काव्या एवं कला-कृतियों में, एक से एक अतूठे सरस और सुन्दर प्रसंगों की सृष्टि की गई है। कवियों के लिए प्रेम का वगन जितना अनुकूल पड़ता है उतना सम्भवतः कोई अन्य विषय नहीं। इसीलिए विश्व काव्य का ६०% बलेश्वर किसी न किसी प्रकार से प्रेम निरूपण से सम्बद्ध है। काव्य जगत में यदि प्रेम प्रसंगों का श्रेष्ठ कर दिया जाए, तो जो कुछ शेष बचेगा वह इतना अल्प एवं अनाकंपक होगा कि काव्य की आत्मा चीत्कार कर उठेगी। यहाँ एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि आजकल प्रेम वगन और शृंगार निरूपण का एक दूसरे से नितान्त सम्बद्ध अथवा एक करके मान लिया जाता है। वस्तुतः ऐसा नहीं होना चाहिए। शास्त्रीय भेदों में न पड़ते हुए यदि हम देखें तो पाएँगे कि शृंगार निरूपण का सम्बन्ध सौन्दर्य सज्जा और बाह्य आकर्षण से है जबकि प्रेम वगन का सम्बन्ध तात्त्विकी आन्तरिक विचारों की भावात्मक, दार्शनिक तात्त्विक और अनुभूति परक अभिव्यक्ति से है। यहाँ प्रेम वगन का हम इसी अर्थ में लें रहें हैं। अतः शृंगार निरूपण प्रस्तुत प्रसंग से भिन्न है।

रहीम स्वभावतः रमिक, भावुक और प्रमीन जीव था। उन्हें वास्तविक रूप में कवि हृदय प्राप्त था। जन्मजात काव्य प्रतिभा तो स्वयं सिद्ध है ही। अतः रहस्य का काव्य में प्रेम सम्बन्धी विचारों की प्रचुरता स्वाभाविक है। त्रिभुक्तोमी की नैतिक चेतना एवं नीति-काव्य-सज्जा ने उनका प्रेम निरूपण को अत्यंत कविता से भिन्न कर दिया है। रहीम अपने प्रेम वगन में कामलता एवं मरसता के साथ उपयोगितापरक नैतिक स्तर भी बनाए रखते हैं। उदाहरण के लिए निम्नलिखित दोहा लिया जा सकता है—

रहीमन असुवाँ नयन दरि, जिय दुग प्रगट करइ ।

प्रेम निवेदन के क्षण में आमुष्मा का अपना स्थान है। प्रत्येक प्रेमी यही करता है। दुःख, भक्ति और भावावेश का प्रकटीकरण भी इस कथन के अन्वय में नहीं। किन्तु प्रेम के क्षण में आमुष्मा का महत्व निर्विवाद है। शायद ही कब का कोई ऐसा सौभाग्य शाली प्रेमी हो जिसे प्रत्यक्ष या पराङ्ग रूप से आमुष्मा से वास्ता न पड़ा हो। सच बात तो यह है कि काव्य की उत्पत्ति ही आमुष्मा से हुई है और काव्य जगत की सरसतम रचनाएँ अश्रुजल से आसिक्त हैं। प्रेम पात्र के सम्मुख भावान्तरिक में अथवा कल्पनाद्वारा होकर आमुष्मा की दा बूद गिर जाने से प्रेमी हृदय की विरह तीव्रता, अनुराग सधनता, दुःख कातरता तथा मिसनात्कण्ठा का जितना परिचय प्राप्त हो जाता है उतना घटा के प्रेम निवेदन एवं दुःख कथन से नहीं हो पाता। ऐसी भी स्थिति आती है जब गद्गमयी भाषा असमर्थ एवं मौन हो जाती है। उम अदम्या में हृदय की मूक अधुमयी भाषा ही भावाभिव्यक्ति का माध्यम बनती है। रत्नाकर जी की ये पत्तियाँ असिद्ध हैं—

गह्वरि प्रायो सरौ भभरि अचानर त्यों
प्रेम परयो च्वाप चपल पुतरीन सो।

नेक कही वनन अनेक कही नैननु

रही सही सोऊ कहि दीनी हिचकीन सों ॥ — उद्धव गानक ४

निश्चिन्त ही अभिव्यक्ति का इतना सरस माध्यम शारीरिक भाषा नहीं हो सकती। परन्तु इस प्रकार के कथन सरलतापूर्वक एक नहीं अनेक उद्घृत किए जा सकते हैं। हाँ, आमुष्मों की भाषा के साथ यह कथन कि 'जाहि निवारो गेह तें कस न भेद कहि देय'—शायद ही कहीं मिले। यहाँ प्रेम का नीति के साथ मलिकाचन संयोग देखते ही बनता है। काव्य में सन्निहित सौन्दर्य और सत्य के साथ निवृत्त का सम्मिलन, कुछ ऐसा अनुठा है जो व्याख्या से अधिक अनुभव करने की अपेक्षा रखता है। अतः इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि यहाँ आमुष्मा की सुकामलता में नीति का पुट साने में सुगन्ध का नाय कर रहा है। रहीम का प्रेम वरुण यही सुगन्धित सोना है, जबकि अनाय कविया का प्रेम वरुण अधिकांश सोना ही है।

प्रेम के क्षेत्र में सौन्दर्य का आधिपत्य निश्चित रूप से अनिवाय है। शायद ऐसा कोई प्रेम वरुण ही जिसमें शारीरिक या मानसिक सौन्दर्य का आश्रय न दिया गया हो। यहाँ तक कि मयादिन प्रेम के अद्वितीय गायक गोस्वामी तुलसीदास भी वाटिका-भेद के समय कह ही गए— अरुण दक्षिण दमन जागू। रहीम ने यहाँ भी कमाल किया है। उनके शारीरिक सौन्दर्य निरूपण में भी नीति की वृत्ति ही प्रभाव शाली भक्त है। व्याख्या की अपेक्षा का दोह उद्घृत करना अधिक सायक होगा—

नन सतीने अघर महु कहि रहीम घटि कीन।

मीठा भावे सोन वं अरु मीठे प सोन ॥ ११२—पृ० ११

जो अनुचितकारी निहूँ लग अरु परिनाम।

सले उरज उर बेधियत, क्यों न होय दुख ह्याम ॥ ६९—पृ० ७१

उरोजा के घब्र भाग की शृष्णता शू गार काभ्य म अत्राय नर्त कि तु उनम यह निष्पत्ति निवातना कि य कलति (काम) श्रगवित हा गण है नशक्ति या का भे कर ऊच उठे है रहीम का घबना है । इस प्रकार उरात्र जमे शू गारिब घब के घगन म भी रहीम का सन्ने है कि जा भूगरा का भे कर या हाति पट्टेया कर घागे बान है उनक मुह एव गण क ति का न हाग हो । कहन की घाययता नही कि यहाँ गास्वामी जी का यह दाहा भी बरवत स्मरण हा घाता है—

तुलसी जो बोरति घट्टि पर की बोरत सोय ।

तिनके मुट मसि लागि है मिन्द न मरिहें घोय ॥

मादक घगा के नीति परत घाफान सम्बधी घय भी पई गरम दाह है किनु य शू गार निरूपण क विषय है प्रम यणन क गरी । घत श्रग विषय की घागे न यज्ञान हुए प्रेम सम्ब घो दा दाह उद्भूत करत है—

रहिमन पडा प्रम की निपट तिलतिलो गत ।

विद्यलत पाँव विपीलका लाग सदायन घस ॥ २०६—१० २०

रहिमन मारग प्रेम को मत मतिहीन मभाय ।

जो डिगिहै तो फिरकहू नहीं धरन की पाँव ॥ २१५—१० २१

यहाँ प्रेम पय की कठिनता का यणन है । प्रेम पय की यात्रा घत्य त कठिन है । एक बार चल पडने के पश्चात यदि वहाँ डिग पडे तो फिर सर गहीं घत निश्चिन ही यहमूर्खों का पय नही । इस पय की फिसलाहट कुछ ऐसी विचित्र है कि सायधानी से चलने पर तो भारी से भारी बोझ (बलो का सदान) सकर निरला जा सकता है किनु असावधानी से चीटी के भी पर फिमल जाते हैं । रहीम का सनेत है कि प्रेम-पय पर पवित्रता और सावधानीपूर्वक चलने से गृहस्थ सामाजिकता घयवा जीवन की भार-भरी बलगाडी भी पार हो सकती है और असावधानता वातना घयवा स्वाध के कारण एक पग आगे बढ़ने पर ही विनाग के गहरे गत मे फिमल कर गिरा जा सकता है ।

प्रेम पय की कठिनता स भी अघिक आश्चयजनक है उसकी विचित्रता । लोकानुभव उसे लाख प्रयत्न करन पर भी नही समझ पाता । जिनके हृदय म एक बार प्रेम की आग सुलग जाती है उनके हृदय में और कोई आग जल ही नही पाती । प्रेम की अग्नि प्रज्वलित होने के पश्चात शांत नहीं होती । वह तो सुलग सुलग कर जलती और बुझ बुझ कर सुलगती है—

जे सुलगे ते बुझ गये बुझे ते सुलगे नाहि ।

रहिमन दाटे प्रेम के, बुझ बुझ के सुलगाहि ॥ ६६—१० ७

इस ज्वाला का प्रभाव अत्यंत शीतलता एव शांति प्रदायक है । प्रेम के प्रभाव से चिलचिलाती धूप शरद पूर्णिमा बन जाती है और तप्त बानू फूला की सेज । कटक फूल की सी गुदगुदी उत्पन्न करते हैं और मृत्तिका स्वण का आभास देती है, कि तु शत यही है कि प्रेम पात्र निकट हो । प्रेम पात्र का सान्निध्य प्राप्त करने के

पदचात ढाक के तीन पात भी कल्प वृक्ष एव स्वर्ग का सा सुख प्रदान करने लगते हैं। अतः न कल्पवृक्ष की आवश्यकता है और न स्वर्ग अथवा उसका न दन कानन की। आवश्यक है प्रिय और उसका नैकट्य—

बहा करी बकुण्ड ले, कल्पवृक्ष की छाँह।

रहिमन ढाक सुहावनो, जो गल प्रीतम बाँह ॥ ३८—पृ० ४

प्रेम की दीप्तता का समाप्त करने वाली एव ही वस्तु है और वह है कपट। इसी ने प्रेम-पथ की पवित्रता को समाप्त कर दिया है। विश्वास पात्र प्रेमी की सम्प्राप्ति न जीवन जितना मधुमय एव स्वर्गिय बनता है। जपटी की प्राप्ति होने पर उनका ही दुःख एव नारकीय। मोठी और भाली चाता का कपट जाल रचकर धूत जन सामान्य प्रेम पात्र को चगुन म फेंका लेते हैं और स्वाय पूछ हो जाने पर भाँवें फर लेते हैं। कितने ही जीवना का इस कपट व्यापार ने समाप्त कर दिया है। अतः रहीम न कपटिया के प्रति सजग रहने का सन्तान देते हुए बहा है कि—सावधान ! कहीं कोई धूत—प्रेम का स्वाय रचकर तुम्हारे शरीर की ढींक्ली से अपने खेत को सोचने का उपक्रम न कर रहा हो—

रहिमन वहाँ न जाइये जहाँ कपट का हैत।

हम तन डारत डेकुली, सोचत अपुनो खेत ॥ ३९—पृ० २३

काव्य में प्रेम के कापटिक व्यवहार का निन्दान कतिपय प्रतीकों के माध्यम से कराया जाता रहा है। जल तथा भ्रमर इसी भाव के लिए बदानाम हैं। मधुमय स्वर तथा आतुल प्रत्यावर्तन से भ्रमर कामल कलिका के हृदय को अपने अनुराग के प्रति आश्वस्त कर, मनमाना मधुपान करना है। कि तु मधुकोश समाप्त होते ही बिना किसी भ्रमत्व के वही श्रिया नवीन कलिका से दोहराता है। उसके अनंतर फिर तीसरी और चौथी कलिका से वही प्रणय क्रोडा। भोग सबका प्रेम किसी से नहीं। इसी का भ्रमरी वृत्ति का नाम दिया गया है। जल की स्थिति थोड़ी भिन्न है। अनन्य चित्तसमर्पिता मछली किसी भी परिस्थिति में जल का त्याग नहीं करती। जल उसके लिए जीवन भरण का साथी है। कि तु क्या जल भी यही व्यवहार करता है? वह तो जल के पडते ही, अपनी स्वाभाविक गति से आगे बह जाता है फँसती और जीवन दती है बेचारी मछली। इसी प्रकार सर सरावरा को त्याग कर चातक का, एकमात्र स्वाति की वृक्ष के प्रति तथा हंस का मानसरोवर के मोती के प्रति प्रेम भाव अनन्यता का प्रतीक है। स्त्री पुरुषों में भी यह अनन्यता देखी जा सकती है किन्तु बहुत कम। अधिक है भ्रमरी वृत्ति जो नतिक सामाजिक अथवा दार्शनिक किसी भी दृष्टि से श्लाघनीय नहीं। रहीम ने इही परम्परागत भावनाओं को लेकर अनन्य प्रेमादेश से सम्बन्धित कई दोहे लिखे हैं—

धनि रहीम गति मोन की जल बिचुरत जिय जाय।

जियत कज तजि अनत बसि, कहा भ्रमर को जाय ॥ १०४

यद्यपि अवनि अनेक हैं कृपवत सरि ताल ।

रहिमन भानसरोवरहि, मनसा करत मराल ॥ १११—पृ० १५

बादुर मोर किसान मन लख्यो रहे घन माहि ।

रहिमन चातक रटनि हू सरवर का मनु नाहि ॥ ६३—पृ० १०

रहीम ने अपने प्रेम वल्लभ म कतिपय बाधक तत्वा का निर्देश भी किया है । ये बाधक तत्व प्रेम की प्रगाढ़ता समाप्त कर लेते हैं । अतः इनसे सावधानी बरतने की आवश्यकता है । सज्जने यही सावधानी विलगाव की भावना के प्रति चरती जानी चाहिए । विलगाव या विच्छेद की भावना मन में उत्पन्न होते ही प्रेम दूटने की नहीं लगती और एक बार टूटा हुआ प्रेम कठिनाई से जुड़ना है । जिस प्रकार टूटे हुए पाग का जानने से गाँठ पड़ जाती है । उसी प्रकार विलगाव के पश्चात् यदि प्रेम सम्बन्ध का पुनः चाँड़ लिया जाए तब भी हृदयों में एक प्रकार की गाँठ पड़ रह जाती है जो अविद्य म पुनः प्रेम में बाधक सिद्ध हो सकती है—

रहिमन धागा प्रेम का मत तोरहु छटकाय ।

दूटे से फिर ना मिल मिले गाँठ पड़ जाय ॥ १६८—पृ० २०

प्रेम हृदय का व्यापार है । इसमें हृदय के द्वारा हृदय का सीना होता है । इस व्यापार में भेद और विगावे के लिए कोई गुंजायमान नहीं । मुग्न में कुछ बहना और हृदय में कुछ और रहना प्रेम-व्यापार के धारक तत्व हैं । अतः प्रेम में बाह्य सम्बन्धों का प्रचार न सहज एवं निश्चल स्नेह भाव की आवश्यकता है । तीरे की सी स्थिति प्रेम का धारक है । गीरा ऊपर से दमन पर सुन्दर धारक सब प्रकार से एक तथा गालमटान दीगता है किन्तु तरागने धमका अतः निरीक्षण करने पर उसके हृदय में एक नती तीन-तीन फाँके पड़ी जानती हैं । अतः रहीम की सम्मति है कि—

रहिमन प्रीति न कीमिए जस लीरा ने कीन ।

ऊपर से तो दिल मिला, भीतर पीर तीन ॥ २०७—पृ० २०

गीरा का रहीम न कटुभाषिया का प्रचार भी माना है और कहा है कि हमारा निरकार कर और कटे हुए पर जो नमक रसतन की प्रिया का जानी है वह उचित ही है । क्योंकि कटु वचन बानस वाला की धारण बिना हम प्रकार की पापता ही नहीं सुधरती—

लीरा निर तो कागिए मलियत नीन सताय ।

रहिमन कटु मूलन की छहिमन परे ताजाय ॥ ६४—पृ० ५

कटु वचन प्रेम में बाधक है । कटु वचन प्रेम मान भाव ही नहीं करिबु बिना का विना ही है । प्रेम धारण में परिपूर्ण दान है । कारण प्रेम भाग में अति स्थान स्थापन में अति करमाय तथा धारणभरण से अति धारण विभरण है । यह लक्षणा में धारण तथा धारणता में लक्षणा स्थापित करने का गति रहना है । हृदय में कटु वचन का धारण धारणता में अति करमाय है और अति-धारण मान तथा धारण विभार का धारण प्रमाण रहता है । धारण ने धारण धारण में प्रेम करने तथा विगण

अपन हितपी मित्रा तथा गात्र वाला के साथ किसी प्रकार का बैर विरोध न आने देने का आशयान किया है—

रीति प्रीति सबसों भली, बर न हित मित गोत ।

रहिमन याही जम की बहुरि न सगति होत ॥ २४०—प० २३

प्रेम का इतन ऊचे स्तर पर देखने वाल रहीम ने एक दाह म उस वासना के साथ भी व्यक्त किया है, जसकि वस्तुस्थिति म प्रेम और वासना दो भिन्न मनाभाव हैं । प्रेम तो गिःगु एव निर्जोव वस्तु अथवा भाव विनोप से लेकर गुरु एव प्रभु तक पहुँच सकना है जबकि वासना का क्षेत्र अत्यन्त सीमित केवल असमलिंगी प्राणी तक सीमित है । भारतीय दार्शनिक दृष्टिकोण से प्रेम आत्मा का प्रसाद है और वासना इन्द्रिय का भाजन । डा० विजयद्र स्नातक ने भक्ति सिद्धांत का विवेचन करते हुए 'प्रेम और 'काम' शीपक स इस विषय पर मारगभित विचार व्यक्त किये हैं ।^१ उनके द्वारा उद्धृत श्रीकृष्णदास कविराज की पक्तियाँ पठनीय हैं—

आत्मेन्द्रिय प्रीति इच्छा तार प्रेम नाम ।

श्रीकृष्णोर प्रीति इच्छा तार प्रेम नाम ॥

अतएव काम प्रेमे बहोत अतर ।

काम अपतन, प्रेम निमल नास्कर ॥^२

स्पष्ट ही वासना का अधकार बताया गया है और प्रेम का मूय ।

प्रेम भगवती जाल्ही का निमल जल है ना वासना तडाग की पकिलता है । अत वासना और प्रेम का एक ही साथ बगुन कुछ जमता नहीं । एक दाहे म रहीम ने कामदब के घोडे पर सवार होकर चलने का अग्निपथ कहा है और साथ ही प्रेम पथ की कठिनाई का उल्लेख भी किया है । प्रेम पथ निश्चित ही कठोर है कि तु वह वासना के घाडे स सम्बद्ध नहीं । अत निम्न दाहे का भाव कुछ उखडा उखडा सा प्रतीत होता है—

रहिमन मन तुरग चडि चलिबो पायक माहि ।

प्रेम पथ ऐसी कठिन सब कोड निबहत नाहि ॥^३ २१७—प० २१

परकीया प्रेम का आधार वासना अवय रहीती है और उस पथ का निर्वाह निश्चित ही आग पर चलने क समान कठिन है जा सब के बस की बात नहीं । केवल दक्षिण्य जन ही इस करतूत म सफल हा सकते हैं । पर तु यह सफलता भी उनके हृदय के सच्च प्रेम की द्योतक नहीं हो सकती । प्रेम की गली तो इतनी सकरी

१ राधाबल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य—डा० विजयद्र स्नातक

(द्वि० स०), प० १५३

२ वही प० १५४ पर उद्धृत ।

३ यह दाहा ध्रुवदाम जी क नाम स भी प्रसिद्ध है । डा० स्नातक ने श्रयात म ध्रुवदास जी के नाम से उद्धृत किया है । देखिए वही प० ५७२ ।

है जिसमें एक मन भावन के अतिरिक्त दूसरा समा ही नहीं सकता। दिव्य प्रेम से आपूरित नेत्रों में किसी की छवि एक बार बसने पर किसी अन्य की छवि समा नहीं पाती। यदि समाती है तो प्रेमभाव में सत्यता एवं सघनता नहीं मानी जा सकती है। सराय में यदि स्थान नहीं है तो आग तुक प्रवेश नहीं कर सकता, यदि प्रवेश कर गया है तो निश्चित ही स्थान था और सच्चे प्रेमी के मन की सराय में बसने पर किसी अन्य के लिए कोई स्थान शेष रहने का प्रश्न ही नहीं उठता—

प्रीतम छवि नन बसी, पर छवि कहां समाय ।

मरो सराह रहीम लखि, आप पयिक फिरि जाय ॥ ११६—पृ० १२

ऐसे अन्य बहुत से दोहे रहीम के नीति काव्य से उद्धृत किए जा सकते हैं। इन दोहों के अतिरिक्त वे दोहे पद्यक हैं जिनको हम शृंगार के नाम से पुकारते हैं। इस प्रकार से सम्पूर्ण नायिका भेद नगर शोभा आदि शृंगार काव्य के अंतर्गत है। फुटकर बरबों में नौ संयोग वियोग के एक से एक अनूठे चित्र प्रस्तुत हैं। शृंगारिक चित्रों के अतिरिक्त प्रेम का एक अर्थ क्षण भी है जिसमें पूज्य भाव विद्यमान रहता है। इस भाव को भक्ति का नाम दिया गया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह एक भिन्न विषय है। प्रसंगवश इतना कहना आवश्यक है कि विद्वान रहीम को भक्ति काव्य रचयिता की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। श्री रामनिरजन पाण्डेय ने अपने ग्रंथ राम भक्ति शास्त्र में लिखा है 'नीति और शील की पवित्रता के उपासक रहीम रसिकता के उपासक तो थे ही—राधाकृष्ण का परम पावन निश्छल प्रेम उनके हृदय में अनुराग की लाली बनकर समा गया था। यही अवस्था रहीम की काव्य साधना के भीतर कविता के मधुर माध्यम द्वारा राधाकृष्णमयी होकर उनके ग्रंथों में अभिव्यजित हुई है।' रहीम का भक्ति काव्य एक विस्तृत विषय है। और उसका किंचित संकेत स्थान स्थान पर किया भी जाता रहा है। अतः हम अपनी ओर से अधिक कुछ न लिखते हुए उनके दो-तीन दोहे उद्धृत करते हैं—

कहि रहीम जग मारियो नन जान की चोट ।

भगत भगत कोउ बचि गये, चरन कमल की ओट ॥ २८—पृ० ३

रहिमन धोखे भाव से, मुख से निकसे राम ।

पावत पूरन परम गति कामादिक का धाम ॥ ११६—पृ० २०

रहिमन को कोउ का करे, ज्वारी चोर लवार ।

जो पत राखन हार है, भावन चाखन हार ॥ १७५—पृ० १७

इन दोहों में स्पष्ट है कि नेत्र वाणी अर्थात् कामदेव या भौतिक आकर्षणों से बचने, परमगति प्राप्त करने तथा ससार के धूर्तों से बचने के लिए एकमात्र उपाय, रहीम, भगवान रामकृष्ण की भक्ति को ही समझते थे।

लक्ष्मी और ऐश्वर्य

जघन्य कृत्या का सम्पादन विनापत धन के लिए किया जाता है। धन वह तत्व है जो प्रायः दुःखों का पास ही एकत्रित रहता है। भरवा फारसी पर

समान अधिकार रखने वाले बल्लभ के सुप्रसिद्ध कवि साहिद (लगभग ६०० ई०) ने दावा किया था कि ससार का कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति धन सम्पन्न या सुखी नहीं मिलगा। उनका कथन है कि 'पान तथा धन नरगिस और गुलाब के समान हैं। य दोना एक स्थान पर तथा एक ही साथ विकसित नहीं हो सकत। पानवाना के पास धन नहीं रहता और धनवालो के पास पान नहीं हाता।' भारत में लक्ष्मी और सरस्वती का वर चिर प्रासिद्ध है। लक्ष्मी की चंचलता भी अपने साहित्य में कम विख्यात नहीं है। कदाचित् इसीलिए उसे चंचला नाम से पुकारा गया है। लक्ष्मी की चंचलता का कायात्मक वर्णन रहीम के दोहों में देखने ही बनता है—

कमला धिर न रहीम कहि यह जानत सब कोय ।

पुरुष पुरातन की बधू, धर्यो न चंचला होय ॥ २३—५० ३

कमला धिर न रहीम कहि लखत अघम जे कोय ।

प्रभु को सा अपनी कहै, धर्यो न फजोहत होय ॥ २४—५० ३

इन दोहा में व्यय बिनोद इनेप और शृ गार इत्यादि की छटासुन्दरतम रूप में विद्यमान हैं। लक्ष्मी इसलिए स्थिर नहीं रहती क्योंकि वह पुरुष पुरातन (बूढ़े) विष्णु की युवती पत्नी है। इस युवती की कृपा कटाक्ष प्राप्त करने वाले धनवान उस अपनी ही समझन का भ्रम कर लेत हैं। इसीलिए उनकी दुर्गति होती है। दूसरे की पत्नी को अपनी समझन वाल का फजोता निश्चित है। इसके विपरीत रहीम ने एश्वर्य के गुण भी गाए हैं। वे भली भाँति जानत हैं कि, ससार में सभी काय व्यापार लक्ष्मी के माध्यम से सम्पन्न होत हैं। आपत्ति के समय ता लक्ष्मी ही सबसे बड़ा सहारा है। कमल की निजी सम्पत्ति (जल) के नष्ट हान पर घनिष्ठतम मित्र सूय भी उसकी रक्षा नहीं कर पाता। सम्पत्ति हीन जीवन वैसा ही निष्प्रभ होना है जैसा दिन में दिखाई देने वाला चन्द्रमा—

रहिमन निज सम्पत्ति बिना कोउ न विपति सहाय ।

बिनु पानी ज्यों जलज को नहि रधि सक बचाय ॥ २०१—५० २०

सम्पत्ति भरम यथाइक, हाय रहत फछु नाहि ।

ज्यों रहीम सति रहत है, दिवस भकासाहि माहि ॥ २६३—५० २६

दान

रहीम का व्यक्तित्व उदार दानों का व्यक्तित्व था। उस कलमुगी कण की दान गाथाएँ अभी तक प्रसिद्ध हैं। उन्हें जीना तभी तक अच्छा लगता था जब तक दान देने में हाथ धोमा न हो। दानहीन जीवन रहीम के मत में व्यय है। दानों को चाहिए कि वह अपने याचक को भरपूर सुष्टि करे। याचक का देखकर बुढ़ जाना

अपना वचन देकर मुकर जाना रहीम की दृष्टि में बहुत बड़ा अपराध था। उधारना पूर्वक धन देने का ये ईश्वरीय कृत्य समझत थे—

मांगे मुकरि न जो गयो केहि न त्यागिया साथ ।

मांगत मांगे गुल सह्यो त रहीम रघुनाथ ॥ १८६—५० १२

सभी जानत हैं कि मांगना और भीन बराबर हैं। धन हात हुए भी दान न करने वाल धनी बहुत बड़े पाप के भागी हात हैं—

रहिमा ये नर मर चुके, जे बहुत मांगत जाहि ।

उाते पहिले वे मए जिन मुख निरुतत जाहि ॥ २३४—५० २३

मांगना गदित काय है किन्तु आपत्ति आने पर मांगने व अपतिरिक्त और कोई चारा भी नहीं रहना। ऐसी अवस्था में मांगना बुरा नहीं। धनवाना एव दान दाताआ की ऐसी परिस्थितिया की गम्भीरता अरुश्य अपने ध्यान में रखनी चाहिए क्याकि धन का काय ता धन स ही चलता है और विपति में धन की गरण अनिवाम होती है—

कोउ रहीम जनि काहु के द्वार गये पछिताय ।

सम्पति वे सब जात हैं, विपति सब ले जाय ॥ ४२—५० २

मान सम्ब धी विचारा का कारण यथास्थान उनकी दानधीरता के प्रसंग में आ चुका है। अत उनके अत्यन्त प्रसिद्ध तीन दोहा का यहा उदघत किया जा रहा है—

दीन सबन को लखत है दीन लख न बोप ।

जा रहीम दीन लख दीन बघु राम हीय ॥ १५—५० १०

देनहार कोउ और है नेजत सो दिन रत ।

लोग भरम हम पै करे पाते नाचे नन ॥ १००—५० १०

रहिमन याचकता गहे बडे छोट हू जात ।

नारायण हू को भयो, बाचन आंगुर गात ॥ २१८—५० २१

सम्मान

दान और याचकतादि के प्रसंग में हम देख चुके हैं कि दार और मान का बंध है। मांगने से बड़ से बड़े का मान घटा है। किन्तु सम्मान का सबसे बड़ा गुणु निधनता है। निधनता की स्थिति में सम्मान बनाए रखना और भी कठिन है। अत रहीम ने महामति चाणक्य का अनुसरण करते हुए सम्मान की रक्षा में धन का निवास, बघुआ के मध्य निधन और असम्मान पूरे जीवन बिताने की अपेक्षा कही उत्तम समझा है। रहने की आवश्यकता नहीं कि निधनता की कठिन परिस्थितिया में इज्जतदार आदमी के लिए इससे अधिक उपयुक्त दूसरा मांग खाज पाना सरल नहीं है। कदाचित् इसविषे रहीम ने आदर रहते ही धन गमन का सुभाष दिया था—

बहु रहीम बानन भलो, बास करिय फल भोग ।

बधु मध्य घन हीन ह्वै, बसिबो उचित न योग ॥ २४५—५० २४

असम्मान से विपुन घन प्राप्त करने की अपेक्षा ससम्मान किंतु अल्प घन से जीना कही उत्तम है—

घन थोरो इज्जत बडी, कह रहीम का बात ।

जसे कुल की कुल बधु, चियडन माहि समात ॥ १०२—५० १०

घन की चिंता न करते हुए, सम्मान का ध्यान कुलीनता का द्योतक है । सम्मान जाने की आशका उत्पन्न होते ही, स्थान का त्याग कर देना चाहिए । सम्मानपूर्वक चने खाकर जीना उत्तम है, भूखे मरना उत्तम है, महा तक कि विप पीना भी बुरा नहीं किंतु असम्मानित होकर अमत पीना भी मृत्यु के बराबर है । सम्मान ही जीवन है अपमान ही मृत्यु—

रहिमन तब लगी ठहरिये दान मान सम्मान ।

घटत मान जब देखिये, तुरतहि करिय पयान ॥ १६०—५० १६

रहिमन मोहि न सुहाय, धमिय पिदावत मान विनु ।

बहु विष देय बुलाय, मान सहिन मरिबो भलो ॥ २७६—५० २७

शील

भारतीय आचार दशन का मूल तत्व शील ही है । शील को मानवीय आस्थाओं का बीज कहा जा सकता है । भारतीय सभ्यता में शील का जितना महत्त्व है उतना समस्त अन्य गुणों का नहीं । वस्तुतः अन्य समस्त गुणों का समाहार शील में ही जाना है । शील रहित जीवन असामाजिक और अमानुषीय जीवन होगा । इसीलिए शील की रक्षा करना हमारा प्रथम कर्तव्य है । जिस स्थान में शील के भंग होने की संभावना हो उस स्थान का तुरतः त्याग कर देना चाहिए—

रहिमन रहियो वा भलो जो लो शील समूच ।

शील डील जब देखिये, तुरत कीजिए बूच ॥ २२२—५० २२

यदि ऐसा न किया गया तो शील के साथ ही मान मर्यादा आदि के सभी बन्धन नष्ट हो जाएंगे जिनके सघात का दूसरा नाम मानव जीवन है । शील और मर्यादा अतिक्रमण में विनाश निश्चित है ।

जो मरजाद चली सदा, सोई तो ठहराय ।

जो जमते जल पार से सो रहीम बहि जाय ॥ ७३—५० ८

शील संरक्षण का सबसे बड़ा उपाय मन समय है । मन के स्वयं होते ही इन्द्रियों पर विजय निश्चित है । और इन्द्रिय विजय होने पर शील, सदाचार, मान

१ बर घन ध्याप्रगजेन्द्र सेवित

द्रुमानय पशुपताम्बुसेवनम्

तपोषु गप्यागत जीण पक्षल

न बधु मध्ये घनहीन जीवनम् । चाणक्य नीति—१०/१२

मर्यादा सब सुरक्षित हैं ।^१ न किसी प्रकार के व्यसयम का भय रह सरेगा और न स्वसन का । इसके बिना कोई किसी काम को ठोक प्रकार नहीं कर सकता ।^२

जो रहीम मन हाथ है, तो तन बित जाहि ।

जल मे ज्यो छाया परं, चाया मोजत नाहि ॥ ७८—५० ८

मित्र और मित्रता

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । यद्यपि समाज में हित प्रहित साधन करने वाले अनेक प्रकार के प्राणी हैं तथापि मानव-जीवन हित साधन तत्वा पर ही आधारित है । हित साधना की दृष्टि से मित्रता सबसे अधिक वांछनीय है । जिसे कोई अच्छा मित्र प्राप्त नहीं उसका जीवन सूना ही रहता है ।^३ सच्चे मित्र के समप्राप्त होने से जीवन धन्य हो जाता है । प्रश्न उठता है सच्चे मित्र की कसौटी का । रहीम के पास इसका सीधा उत्तर है—कष्ट के समय साथ देना । आपत्ति के समय वही व्यक्ति साथ देगा जिसके हृदय में आत्म त्याग अथवा कष्ट सहिष्णुता की भावना है । बिना त्याग किए, बिना अपने को अग्नि में भाके, कोई किसी का कष्टमुक्त नहीं कर सकता । इस दृष्टि में दूध जल सम्बन्ध भादश है । दूध पर घाँच आने से पूव पानी अपने को जला डालता है और पानी को जलता देता दूध अपने कर जलने के लिए दौड़ता है तथा पुन उसका छोटा पानर गा त हो जाता है । उदाहरण पुराना होते हुए भी सटीक है । रहीम ने इसी भाव का प्रयोग किया है—

जलहि मिलात रहीम ज्यो कियो आप सम छीर ।

अंगवहि आपुहि आप त्यो, सबल आच की भीर ॥ ५९—५० ९

मित्र के लिए अपने आप कष्ट सहना, मित्रता का सबसे बड़ा लक्षण है ।^४ सलाम राम राम ता आते जाते परस्पर सभो करते हैं परंतु ऐसे व्यक्ति गाँठे समय में साथ दे सकेंगे इसमें सन्देह है और गाँठे समय में साथ दिए बिना किसी की मित्रता सिद्ध नहीं । वस्तुतः विपत्ति इस दृष्टि से बड़ी उपयोगी है । वह क्षण मात्र में मित्र अमित्र की परीक्षा करा देती है । रहीम ने इसी तथ्य को अनेक दोहा में अनेक प्रकार से व्यक्त किया है । कुछ दोहे उद्धरणीय हैं—

रहिमन विपदा हू मली, जो धोरे दिन होय ।

हित अनहित या जगत में जान परं सब कोय ॥ २३३—५० २३

१ मनसाया इद सप्रमाप्तम् । शतपथ ब्राह्मण—१/७/६/२२

२ न ह्यपुवतेन मनसा किञ्चन सप्रति शशनोति कर्तुम् । वही—६/३/१/१०

३ शूय पुत्रस्य गृहं चिरं शूय नास्ति यस्य सा मित्रम् ।

मूलस्य दिना शूयां सव शूय दरिद्रस्य ॥ मच्छकटिक १/८

४ जे न मित्र दुख होहि दुखारी । ति हहि विलोकत पातक भारी ।

निज दुख गिरि सम रज करि जाना । मित्रक दुख रज मेह समाना ॥

सब को सब कोई कहै, फैं सलाम के राम ।
 हित रहीम तब जानिए, जब कलु भटके काम ॥ २५०—५० २४
 मयत मयत माखन रहै, दही मही बिलगाय ।
 रहिमन सोई मीत है मीर परे ठहराय ॥ ३८—५० १४
 कहि रहीम सपति सगे, बनत बहुत बट्ट रीति ।
 विपति कसौटी जे कसे, सो ही संचि मीत ॥ ३१—५० ४

समय

रहीम का व्यक्तित्व अत्यंत सजग था । वे समय की गति के प्रति सतक एवं सावधान रहने वाले जीव थे । उन्हें पता था कि समय अत्यंत वेगवान है । कभी कभी एक बार का बिगडा काम जीवन भर प्रयत्न करने पर भी नहीं बन पाता । अतः प्रारम्भ से सावधान रहने की आवश्यकता है—

रहिमन विगरी आदि की, धन न खरचे दाम ।
 हरि घाटे आकाग लो, तऊ बाबनी नाम ॥ २१०—५० २१

साथ प्रयत्न करने पर भी समय नहीं लौटता । धन, सम्पत्ति, समादर, वैभव और स्वत्व आदि सभी बहुमूल्य पदार्थ पुनः प्राप्त किण जा सकते हैं किन्तु गए हुए समय का हाथ आना असम्भव है । अतः समय रहत, सचेत होने के समान कोई बुद्धिमाननी नहीं और समय पर एक क्षण भी खूब जाने के समान दूसरी मूल्यता कोई नहीं ।^१ जिस प्रकार कुठार काठ को काट कर दा दूक कर देता है उसी प्रकार समय की शूक जीवन साफल्य का खणित कर देती है । समय शूक न उपज पदधात्ताप हृदय का जीवन भर काटता रहता है—

समय साम सम लाभ नहि समय चूक सम चूक ।
 घतुरन चित रहिमन समी समय चूक की हूक ॥ २५५—५० ०५
 रहिमन कुटिल कुठार ज्या करि डारत दो दूक ।
 घतुरन क कसकत रहे समय चूक की हूक ॥ १७४—५० १७

सुसमय

समय की गति बड़ी विचित्र है । आज जा लाया कराया म खेलन है, म्ल के ही कौडी कौडी के लिए मोहनाज खिलाई पडत हैं । कल जिनके घर नौवन बजनी थी, आज उनकी घरों उटाने वाला भी खिलाई नया पडता । बेचारे रहीम के पिता का यही हाल हुआ था । अच्छे समय में जो व्यक्ति छाया के समान अनुसरण करत हैं बुरा समय आन पर वे मुँह दपन से पूणा करन लगते हैं । जाना ही नहीं रखक, मगव बन जात हैं । उनति और सुसमय के आने पर जिस सुन्दरी ने सायकाल (उनति के समय) में दोपन का जलाकर आचन की आट से रखा की थी, प्राण

१ आधुनिक क्षण एको पि तय रसन सम्प्रदे ।

(बुसमय) उपस्थित होन पर वही स्त्री उसी आंचल की भपक से दीप को बड़ा दती है। दोष किसी का नहीं। कुसमय पड़ने पर मित्रा का भी शत्रु बन जाना स्वाभाविक है—

जो रहीम दीपक बसा, तिय राखत पट छोट ।

समय परे ते होत हैं, याही पट की छोट ॥ ८०—५० ८

जिहि अचल दीपक बुरयो, हयो सो ताही गात ।

रहिमा असमय क परे मित्र शत्रु ह्वै जात ॥ ६२—५० ७

दीपक स ही मिलती जुलती दगा तारो की है। आकाश की स्वाभाविक शोभा रात्रि के गहन अंधकार में अपनी चरम सीमा पर होती है। प्रकृति उस सुपमा पर तारो की अनंत सम्पत्ति योछाधर कर लेती है। आक्षत्र भी प्रसन्नतापूर्वक उसकी सुख सभाम अपना योगदान देकर, सौंदर्य में चार चाँद लगाते हैं। किंतु जयाही उसके उपर प्रबल पराश्रमी सूर्य का आक्रमण होता है और दुर्भाग्य घेरता है त्यों ही सारी महकिल समाप्त हो जाती है। सम्पूर्ण तारक पिण्ड सूर्य की प्रथम रश्मि के उदित होने का आभास पाते ही भाग लेते हैं। रहीम का निष्कप है कि विपत्ति घाने पर धन भी स्त्री प्रकार निरोहित हो जाता है, चाहे कितनी विपुल मात्रा में एकत्रित क्या न किया गया हो—

विपत्ति नए धन ना रहे रहा जो लाख करोर ।

नम तारे ट्रिपि जात हैं ज्यो रहीम मय मोर ॥ ३०—५० १३

प्रकृति की घटनावली का यह चक्र, हम दैनिक जीवन में भी देखते हैं। प्रकृति से उदाहरण देने का कारण तो केवल तथ्य की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है। काय और आश्रय में यही अंतर है। यदि तथ्य की यथातथ्य अभिव्यक्ति कर दी जाय तो उसमें काव्य गरिमा नहीं आ पाती। इसी विषय में एक अन्य दोहा उक्त कथन का प्रमाण है—

धन दारा श्री सुतन सो, लगे रहे नित चित्त ।

नाँह रहीम कोऊ लख्यो गाढे दिन को मित्त ॥ १०३—५० १०

कथन में का यात्मकता न होते हुए भी जो चुभन है उसका श्रेय रहीम की भाषा को है। वस कथन अपने में नितान्त सत्य तथा अनुभव सिद्ध है। दोहे का अर्थ यह भी हो सकता है कि जब गाढ समय में धन स्त्री पुत्र इत्यादि काम आते ही नहीं तो मात्र उन्हीं क चक्कर में जीवने गवा दना कोई बुद्धिमत्ता नहीं। बुद्धिमानी तो उस आश्वत तत्व का प्राप्त करने का प्रयत्न होगा जो गाढ दिन का मित्र है। वस्तुतः मित्र की कसौटी ही कुसमय है। दुर्दिन हमें इस तथ्य से अवगत करा देते हैं कि, कौन

१ दोहे का ध्वन्याय यह भी हो सकता है कि, स्वार्थी व्यक्ति तभी तब साथ देता है जब तक उनका मतलब सिद्ध हो। समय निकल जाने पर वह साथ देना समाप्त कर देते हैं इतना ही नहीं घातक भा सिद्ध हो सकते।

हमारा मित्र है और कौन शत्रु। अतः इस दृष्टि से निश्चित एक प्रकार से उपयोगी भी है—

रहिमन बिपदा हू भली, जो थोड़े दिन होय।

हित अनहित या जगत में, जान परत सब फोय ॥ २३३—५० २३

दुर्दिन में सहायता देने वाले व्यक्ति का प्राप्त होना गुन गढ़न है। जन्म भाषा में एक कहानन प्रसिद्ध है निम्न अर्थ है कि अन्धे मिन का प्राप्न हाना दुर्दिन की समाप्ति और सौभाग्य के आगमन का सूचक है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि जब कोई मित्र सहायता का हाथ आगे बढ़ाएगा तभी दुर्दिन की समाप्ति होगी। जब अन्धे मिन सदब नहीं रहे तो कुसमय सदैव कहे रह सकता है? इसलिए अर्थ की चिन्ता और पश्चात्ताप से क्या लाभ—

समय पाय फल होत है समय पाय भरि जान।

सदा रहे नहि एकसी का रहीम पछितात ॥ २५८—५० २५

दोह का अन्तिम चरण आशावाण का म दश देना है और धय बघाता है कि कुसमय सदब रहने वाला नहीं। विश्व का चक्र इस तथ्य का स्वतः प्रमाण है। कुसमय के चगुल में कौन नहीं फँसा? विश्व के सभी छोटे बड़े प्राणी, युग युगांतरा से दुर्देव द्वारा पांडित होने चले आए हैं। स्त्री पुरुष, सज्जन दुजन राजा रज सभी को इस चक्की में घिसना पडा है अजुन, भीम नकुलादि पाण्डवा तथा नग नल आदि महाराजाध्या तक पर दुर्दिन का प्रकोप हुआ था और सभी का इस अवस्था में अपनी प्रतिष्ठा के विपरीत काय करने के लिए बाध्य होना पडा था। इसलिए जिस प्रकार भी ऊँच नीच में दुर्दिन कटे चुपचाप काट लेने चाहिए। व्यय के गिक्का गिकायत की आवश्यकता नहीं। कहने सुनने और रोने गाने से कुछ लाभ भी तो नहीं होता। लोग उसमें हाथ न बटा कर उल्टी हँसी उडात ही देखे जात हैं—

रहिमन दुरदिन के परे बडेन किए छिटि काव।

पाच रूप पाडव भए, रयबाहक नलराज ॥ १९६—५० १९

दुरदिन परे रहीम कहि भूलत सब पहिचानि।

सोच नहीं बित हानि को जो न होय हित हानि ॥ ९९—५० १०

रहिमन चुप हू बठिए देख दिनन को फेर।

जय नीके दिन आइ हैं वनत न लगि है देर ॥ १८०—५० १८

रहिमन निज मन की ब्यया मन ही राजो गोय।

सुन अठिलहैं लोग सब, दाट न लहैं कोय ॥ २००—५० २०

स्मरण रख कि यह स देश किसी उपदेगक का शस्त्राजित प्रवचन नहीं अपितु रहीम के उतार चढाव पूरा जीवन के स्वानुभूत तथ्य हैं। हजारों लाखों के भाग्य विधाता, करोड़ों के निस्पह दानी तथा अन्धवरी साम्राज्य के परम विस्तारक रहीम, बंदी निधन तथा विद्रोही का जीवन यापन करत हुए भी निराश नहीं हुए थे। उन्होंने दोबारह खानखानानी भी प्राप्त की और सनापतित्व भी। इसीलिए कुसमय के सम्बन्ध में उन्होंने जो भी कहा है वह एक आपबीनी कहानी है।

भाग्य

शहशाह फारुख के परम समाहृत फारसी कवि कासिमूल अनवर 'हाफिज' ने एक बार कहा था कि 'भाग्य हाथ के पत्र के समान पाँच अंगुलियाँ रखता है। जब वह किसी से अपना हुक्म मनवाना चाहता है तब दो अंगुलियाँ आँसू पर दो काना पर तथा शेष एक का होठा पर रख कर कह देता है—सामान जिघर में कहता हूँ चला चल।' लोक अनुभव सिखा देता है कि यहाँ सत्र कुञ्ज अपने ही हाथ में नहीं है। कोई परोक्ष शक्ति हमारी इच्छा के विरुद्ध बहुत से बाध करा ले जाती है जिनका परिणाम कभी लाभकारी होता है और कभी हानिकारक। इसी का दूसरा नाम भाग्य है। भाग्य का ही खेल था कि नि रहीम मुगल साम्राज्य का उच्चतम पत्र, 'बकील मुतलक' तब पहुँचे और भाग्य के खेल से उनका निरपराध पुत्र वीरादि, उनके सम्मुख मौत के घाट उतार लिए गए। अतः उन्हें भाग्य की प्रबलता का बड़ा बटु अनुभव था। भाग्य की प्रबलता दखकर ही वे मानव को भाग्य के हाथ की कठपुतली कह गए हैं^१—

ज्यो नाचत कठपूतरी करम नचावत गात ।

अपने हाथ रहीम ज्यो, नहीं आपुने हाथ ॥ ८४—५० ६

अपने हाथ में कम है कम फल नहीं—

निज कर प्रिया रहीम कहि सिधि भाबी के हाथ ।

पासे अपने हाथ में दाव न अपने हाथ ॥ १११—५० ११

चौपड़ का खिलाडी खूब साध साधकर कौडिया फेंकता है परन्तु दाँव वही पड़ने हैं जो पड़ने होते हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपनी ओर से कम अत्यधिक विचार पूर्वक करता है कि तु फल देवाधीन ही रहता है। सामान्य व्यक्ति तो क्या, सब शक्ति-सम्पन्न नर देवादि भी भाग्य के हाथ का तिलौना बनते रहे हैं। वीरता एवं शौर्य में अद्वितीय पाण्डवों को वन-वन की राख छाननी पड़ी, (कवि परिपाटी के अनुसार) पावती का निःसन्तान जीवायापन करना पड़ा भगवान राम को कपट मग का पीछा करना पड़ा तथा आकाश-माला को बाण के सम्मुख तुच्छ समझने वाले अर्जुन को अबला नारी का वेश धारण करना पड़ा—

भाबी था उनमान की, पाडव बनहि रहीम ।

तदपि गौरि मुनि बाँक है बर है गम्म अजीम ॥ १३५—५० १४

रुफ़ न ज़ाले हिडन सग शौर्य न रावन साथ ।

जो रहीम भाबी कहतू होति आपुने हाथ ॥ २३७—५० २३

महि मम सर पजर कियो रहिमन बल अवसेप ।

सो अर्जुन वंराट घर, रहे नारि क सेप ॥ १४१—५० १४

१ कौट घोड़स आफ ईरान एण्ड इण्डिया धार० पी० मसानी (१९३८) प० ११

२ नचती है नियति नटी सी, कडुव पीडा सी करती । —प्रसाद

भाग्य की शक्ति इतनी विचित्र है कि वह अच्छा या बुरा, लाभ या हानि जो भी कराना चाहती है, वैसे परिस्थितियाँ स्वयं बना लेती है।^१ किसी किसी का भाग्य जन्म से ही अनुकूल चलने लगता है। ऐसे व्यक्तियों के महान बनने में सन्देह ही क्या हो सकता है। लाख कमियाँ रहत हुए भी वे आगे निकल जाते हैं। उनकी बुराईयाँ लुप्त हो जाती हैं, कमियाँ छिप जाती हैं और अच्छाईयाँ खुलकर प्रकाश में खलती हैं। इतिहास समाज, धर्म तथा पुराण आदि से इस प्रकार के अनक उदाहरण सरलतापूर्वक एकत्रित किए जा सकते हैं किन्तु कवि रहीम इसके लिए प्रकृति के प्राणों से दृष्टान्त ग्रहण करते हुए लिखते हैं—

जो रहीम विधि बड किये, को कहि दूपन काढि ।

चंद्र दूबरो कूबरो तरु नखत ते बाढि ॥ ६५—प० ६

पुरपाथ

इस वर्णन से स्पष्ट है कि रहीम को भाग्य की शक्ति में पूरा विश्वास था। किन्तु विरोधी गुणों का धारक रहीम, मान भाग्य के भरोसे कभी नहीं बठा। उनका समस्त जीवन पुरपाथ का उत्कृष्ट उदाहरण है। उनके काव्य में भी पुरपाथ सम्बन्धी दोहे यत्र तत्र प्राप्त हैं।

इस सम्बन्ध में उद्दान बहुत सुन्दर अन्वयक्ति लिखी है जिसमें सब प्रकार से पुष्ट और सुन्दर कदली को पुरुषार्थहीनता का तथा पान रहित कटकित करील को पुरुषार्थ का प्रतीक माना गया है। साधन, योग्यता एवं सम्मान सम्पन्न व्यक्ति भी यदि घर में घुमकर पुरुषार्थहीन जीवन व्यतीत करता हुआ, पूर्व अर्जित सम्पत्ति के बल पर जीता है तो उसकी अपेक्षा हिम आतप वात सहन कर खुले मैदान में डटे रहने वाला पुरुषार्थी कहीं अधिक अच्छा है, भले ही उसे अपने पुरुषार्थ में काटे प्राप्त हों। महत्व फल का नहीं उद्यम का है—

जो घर ही में घुस रहे कदरो सुपत सुडोल ।

तो रहीम तिनते भले, पय के अपत करील ॥ ७०—प० ७

किसी व्यक्ति को अधिक मनवान, यशवान अथवा गुणवान देखकर हमें अपने प्रति हीन भाव उत्पन्न नहीं करना चाहिए। कौन कह सकता है कि वर्तमान अवस्था को प्राप्त करने के लिए उसने, संसार के देखे अनदेखे कितना पुरुषार्थ किया है। सभी जानते हैं कि शक्ति जन्म से कुछ लेकर अवतीर्ण नहीं होता। प्रयत्न एवं पुरुषार्थ करते करते सभी कुछ प्राप्त हो जाता है। पुरुषार्थ यदि गलत शिक्षा की आर

१ (क) तुलसी जस भवतभ्यता, तसो मित्त सहाय ।

भाप न धाव ताहिपै ताहि तहा ल जाय ॥ —तुलसी

(ख) तादशी जायते बुद्धिभ्यवसायो वि तादग ।

सहायास्तादगा एव यादगी भयितभ्यता ॥ —चाणक्यनीति, ६६

है सा सम्मान, घर घोर विवेक हाथ सगे घोर वनि महा निता की धार है
सा प्रीन विपुला घोर वग धानि की प्राणि हाथी—

यह रहीम निज सग से, जनम जगत म ब्योय ।

घर प्रीति सम्पात नरा होत होत ही होय ॥ १५४—प० १५

जीवन म एसा भी घबस्या सा जाना है जब ये स ये धरि का रर र
की टोररे तानी पशुनी हैं । दुभाग्य प गग समय म उगरी महापता सगा म गगा
सम्बधी भी गही करता । इत परिस्थितिया म पुण्याधी जीवत गीना का सम्मान
से ले जात है जबकि पुण्याध हीन गीना तब काय जीवत-मानन करत हुए मयाण
हो जाने हैं । ये पुण्याधी परिस्थिति गिणप म छोटा म छाटा काय करत को भी
स यथा नही समझने । जो भी मिलता है हृषयूयन प्रदण करत हैं घोरपुण्याध द्वारा
दुर्दैव पर विजय प्राप्त करके पूय स्थिति का प्राप्त होत है । रहीम यहन कथन की
पुष्टि म बराट की रसोई घोर भीम की सगा का उत्पन्न करने हैं—

जो पुष्ट्यारथ से बहू, सम्पति मिलत रहीम ।

पेट खाणि बराट घर सपत रसोई भीम ॥ ७१—प० ७

यहना न होगा कि यदि मानवीय पुण्याध के साथ भाग्य का सहारा नी
प्राप्त हा तो सोने म सुगंध सा जाती है ।

महापुरुष

रहीम को अपने युग के महानतम पुरुषा क साथ रहन का सौभाग्य मिला
था । अकबरी दरबार के नवरत्न उन दिना भारतीय भेषा का नवनीत थे । अथ
महापुरुषो स भी रहीम ने अपने सम्बन्ध बना रते थे । गोस्वामी तुलसीदास की
मित्रता इस कथन का प्रमाण है । इत महापुरुषा के जीवन घोर काय व्यापारा का
अध्ययन रहीम ने अवश्य ही निवट से किया होगा । यही कारण है कि, रहीम के
नीति वाक्य मे महापुरुषा से सम्बन्धित दोहे प्रचुर संख्या म उपलब्ध हैं ।

गाम्भीय महापुरुषो की सबसे बड़ी विनेपता है । जो व्यक्ति जितना महान
होगा वह उतना ही गम्भीर भी होगा । गम्भीर व्यक्ति न तो हर्षातिरेक म फूल पडत
हैं और न दु ख मे धांसू बहाते हैं । उनके जीवन म एक विचित्र समरसता हाती है ।
यह समरसता उ हे भभावता की सहने का बल प्रदान करती है । रहीम ने दु ख मुख
की समावस्था^१ के लिए चन्द्र के उदय एव अस्त का उपाहरण देते हुए कहा है कि
चन्द्र जिस (सुपीत) अवस्था मे उगता है उसी मे अस्त भी हो जाता है बडे लोग भी
सुख दु ख की अवस्था मे इसी प्रकार एक समान व्यवहार करते हैं—

यो रहीम सुख दुख सहत बडे लोग सह भांति ।

उद्यत चन्द्र जेहि भांति सों अववत ताही भांति^२ ॥ १५८—प० १६

१ सुखदु खे सम श्रुत्वा लाभालाभो जयात्प्यो । —धीमदभगवद्गीता २ ३८

२ उदय सविता रक्तो रक्तश्चास्तमये तथा ।

सम्पत्तौ च विपत्तौ च मृतमेव रूपता ॥ —पंचतन्त्र २ ७

मुख दुख व समान ही दूसरी अवस्था नि दा और स्तुति की है। सामान्य व्यक्ति स्तुति से मुख तथा नि दा से दुख का अनुभव करता है। परंतु महापुरुष इस अवस्था में भी समभाव धारण करते हैं। प्रसन्नक का पुरस्कृत तथा नि दाक को तिरस्कृत करना महापुरुषों का काय नहीं। नि दा एव स्तुति की चिन्ता किए बिना वे याय पथ पर अग्रसर रहते हैं। उत्तुंग गोवर्द्धन को धारण करने वाले दृष्टावन विहारी गिरिधर कृष्ण को यत्नि बगीधर कह दिया जाए तो क्या वे बुरा मान जाते हैं—

जो बडेन को लघु कहें नहि रहीम घटि जाहि ।
गिरिधर मुरलीधर कहै, कछु दुख मानत नाहि ॥ ७२—प० ७

महापुरुष आत्मदलाभा भी नहीं करते—
बडे बडाई ना कर बडो न बोल बोल ।
रहिमन हीरा कब कहै लाख टका मेरो मोल ॥ १२५—प० १३

गुण स्वत बोलत है। कोई महापुरुष अपने गुणा का शिरोरा नहीं पीटता। ही दूसरे उसका गुण-गान करत नहीं अघाते। सच्च महापुरुष इस गुणगान से भी दूर भागते हैं। वे जहाँ तक बने, अपने काम धाम और नाम को छोटा करके ही प्रगट करते हैं। कारण यह है कि गुणगान, स्तवन एव प्रशंसा इत्यादि में यत्कि के हृदय में गव एव अहंकार का उदय हो सकता है जो निश्चित ही पतनकारी प्रवृत्तियाँ हैं। प्रसन्न प्रादि तो उच्चकर्मों व अनिवाय परिणाम हैं। यही कारण है कि महापुरुष काम पर ध्यान देते हैं नाम पर नहीं—

रहिमन कबटु बडेन को नाहि गव को लेस ।
भार धरें ससार की तऊ कहायत सेस ॥ १७१—प० १७

दूसरो के लिए कष्ट सहना,^१ गरीब से हित करना^२ दीना के प्रति दयालु होना,^३ कभी अपना बडप्पनन न बघारना^४ परापकार करना^५ छोटा को नजर स न गिराना^६ विषयो स यथा सम्भव पथक रहना^७ आदि गुण महापुरुषा के प्रसंग में बडे ही बलात्कर रूप से गिनाए गए हैं। रहीम के इन बणुनों में विचित्र आकषण है।

ससार में महापुरुषों की अपेक्षा नीच और मूर्खों की सख्या बड़ी अधिक है। रहीम का जीवन धूर्तों स्वार्थियों तथा पडयंत्रकारियों से लडने भगडन बीता था। उन्हें नीचों की रग रग का जान था। सेना में एकता बनाए रखने के लिए वे ऐसे नीचा को कभी साम, कभी दाम, कभी दण्ड तथा कभी भेद की नीति से बस में बिया करते थे। नीचा से सम्बन्धित रहीम के विचार अनुभव को भट्टी से तप्य होकर निकल है—
रहिमन लाख भली बरी, अगुनो अगुन न जाय ।
राग सुनन पय पियत हूँ सपि सहज धरिताय ॥ २२६—प० २२

१ स ७ तक प्रमदा रहीम रत्नावली दहा स० ४८ ६८ १२२ १२४ २४८
१६७ तथा ८३

रहिमन नीर पतान बूटे प लोभ नहीं ।

सस मूरत ज्ञान बूभ प गूभ नहीं ॥ २७४—५० २७

सायद ही कोई भाग्यशाली व्यक्ति ऐसा हो जिससे उन नीचों में सामान पड़ा हो जो उपकार करते हुए भी अपकार करने से बाज नहीं आते । ऐसी दुजन का साथ सिधार्थ से काम निकलना असम्भव हो जाता है । शमीतिग — आज्ञाबहि कुत्तगुन नीति की बहावत प्रचलित हुई थी । समभान जुमाने अथवा प्रायना याचना करने में उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । ऐसी व्यक्तियाँ तो दण्ड एव दण्ड के जर से ही काम निकाला जा सकता है । चाक के प्रतीक का प्रयोग करते हुए रहीम ने टीका ही कहा है—

रहिमन चाक भुम्हार को मनि दिया म देय ।

छेद म उडा शरि क चाहे नाँद सँ सेय ॥ १७६ ५० १८ ॥

ऐसे व्यक्ति अथगुणा से प्रेम तथा गुणा से बँर रगत हैं । सीधे साफ माँग से उनका सम्बन्ध नहीं होता । यदि दखवाग से उन्हें किसी अनति का अवसर प्राप्त हो जाए तो उनकी दगा, गतरज के उस बजोर जसी हाती है जो प्याद से परजी बन जाने पर टेढ़ा टेढ़ा ही चलता है—

जो रहीम ओछो बड़े तो अति ही इतराय ।

प्यादे से फरजी भयो टेढ़ो टेढ़ो जाय ॥ ७५—५० ८

चाल ही नहीं रुचियाँ तथा स्वभाव भी टेढ़े होते हैं । सज्जना द्वारा निरस्तुन वस्तुएँ उन्हें अधिक प्रिय होती हैं—

जो विपया सतन तजी मूढ़ ताहि सपटात ।

ज्यों नर डारत धमन करि, नवान स्वाद सों सात ॥ २३—५० ६

यहाँ श्वान का प्रयोग अप्रत्यक्ष रूप से नीच जनों के लिए किया गया है । कि तु कई स्थला पर उहाने स्थिति को एक दम स्पष्ट करते हुए नीच जनों तथा उनके कार्यों की तुलना श्वान से की है । श्वान, प्रेम प्रदर्शित करते हुए चाटता है और शीघ्र म काटता है । पर तु काटने और चाटने की दोनों ही क्रियाएँ हानिकर हैं—

रहिमन ओछे मरन सो बर भसो न प्रीत ।

काटे चाटे नवान के डुहू भाँति विपरीत ॥ ६६—५० १७

अतः नीचा की मित्रता एव शत्रुता दोनों के प्रति सावधान रहने की आवश्यकता है । ऐसा न हो कि धोखे में उनसे सम्बन्ध हो जाए और बाद में पछताना पड़े । ऐसा प्राय हो जाता है क्योंकि दुजन परिधान तथा बेपादि की दृष्टि से सज्जना की अपेक्षा कहीं अधिक सिष्ट मिष्ट और आकषक बने रहते हैं । सुयोग उपस्थित होने पर ही उनका अंतर समझ में आता है—

दोनों रहिमन एकसे जो लो बोलत नाहि ।

जान परत हैं काक पिक, ऋतु बसत के माँहि ॥ १०१—५० १०

१ नवध, ५ १०

२ इक्षु दण्डस्तिला गूद्रा काता कांचन मेदिनी ।

चन्दन दधि ताम्बूल मदन गुणवद्धनम् ॥ —चाणक्यनीति—६ १३

कुसग

नीच के सग का ही दूसरा नाम कुसग या कुमगति है। कुसगति म फँस कर व्यक्ति जाति तथा राष्ट्र बरबाद होते देखे गए हैं। कुमग म लिप्त होने का परिणाम तो अनय है ही, उसके स्पग मात्र स कलक लग सकता है। रहीम ने कुसग को कालिख लगा बरतन कहा है, जिसके स्पग मात्र से कलोंच लग जाती है—

रहिमन उजली प्रकृति को, नहीं नीच को सग।

करिया वासन कर गहे, कालिख लागत अग ॥ १६८—८० १७

ऐसा ही भाव एक सोरठे म व्यक्त किया गया है। वहाँ कुसग की तुलना अगारे से की गई है। अगारा गम होने की अवस्था म अग को जला डालत है और ठण्डा हाने अथवा कोयला बनने की अवस्था म अग काला कर देता है। इसी प्रकार निष्क्रिय हा अथवा सक्रिय, कुमग सत्व त्याज्य ही है—

ओछे को ससग, रहिमन तजहु अगार ज्यों।

तातो जारे अग सीरे प कारी करे ॥^१ २७१—८० २६

कुमग की घनिष्टता ता क्या पडोस भी श्रेयस्कर नहीं। सुवृत्तिया का प्रभाव पडे या न पडे परंतु कुवृत्तिया का प्रभाव तुरंत पडता है। सज्जना के साथ रहने से सुयग प्राप्त होने मे देर लग सकती है किंतु दुजन के साथ बसने से कणक लगे बिना नहीं रहता। समुद्र जैसी विनाल विस्तृत एव गम्भीर जलराशि को पुल के बंधन में इसलिए आना पडा क्याकि राबण उससे पडास म बसा हुआ था। कुवृत्त्य किया पडोसी ने, अपन पडा समुद्र के गले। अत कुसगति में कुशल असम्भव है—

बसि कुसग चारत कुशल यह रहीम जिय सोच।

महिमा घटी समुद्र को राबन बस्यो परीम ॥^२ १२७—८० १३

समुद्र राबण के पडोस म बसन नहीं गया था, प्रत्युत राबण स्वय आकर समुद्र के बीच बसा था। दुजन अपनी सुरक्षादि की दृष्टि से सज्जना का सम्पर्क खोजते हैं और फिर अपने साथ ही उन्हें भी नष्ट कर देते हैं—'आप डूबे पाडिया ल डूबे जजमान। कुसगति के ससग म जो भी आएगा, अथवा का भागी होगा। दूध जसी पुनीत वस्तु का भी यदि क्लारिन (मदिरा बेचने वाली) के घडे म रख दिया जाए ता लोग उसे मदिरा ही समझेंगे—

रहिमन नीचन सग बसि सगत कलक न काहि।

दूध क्लारी कर गहे मद समुझ सब ताहि ॥ २०२—८० २०

१ दुजनेन हि सम सहय प्रीति चापि न कारयेत।

उरणो दृष्टि चांगार गीत कृष्णायते करम् ॥

२ तुलनीय—

दुजन के ससग में सज्जन लहत बलेस।

ज्यों दसमुख अघराय तें, अपन सहो जलेस ॥ —बृह

बलारी के कुसग से दूध जसी पवित्र वस्तु को मंत्रिा जैसी घृणित वस्तु का बलक लगा । कुसग का परिणाम ही ऐसा है । बेणीसहार म एक स्थान पर कहा गया है कि अमृत लता भी विष उधका सम्पन्न प्राप्न कर यदि मारर नहीं हागो तो मूर्च्छा कारी अत्रय ही हा जाएगी ।^१ वियगमय प्रसिद्ध है कि स्वाति की जो बूद बेल म गिर कर कपूर और गुक्ति म गिर कर माती बनती है वही सय मुग व ससग मे विष मे परिवर्तित हो जाती है—

मुक्ता कर करपूर कर चातक जीवन जोय ।

ये तो बडा रहीम जल घ्याल बदन विष होय ॥ १४७—५० १५

रहीम ने अ य भा कई दोहा म कुसग व दोषा का बरण किया है । उन सय का सार यही है कि कुसग विनाशकारी है जहाँ तक भी हा सके नीतिवान व्यक्ति को उससे बचने का उपश्रम हर कीमत पर करना चाहिए ।

सत्सगति

कुसगति मानव जीवन के लिए अभिगाप है और सत्सगति वरदान । महाराज भवृ हरि ने सत्सगति की बडी अद्भुत महिमा गार्ई है । वह बुद्धि की जडता को हरती है, वाणी म सत्य का सचार करती है, लोकलाकातरा म कीर्ति का विस्तार करती है इत्यादि, इत्यादि ।^२ तात्पर्य यह है कि सत्सगति मानव के समस्त सद्गुणा की विधात है । रहीम ने सत्सगति पर बहुत अधिक नहा लिखा । वस्तुतः व कुसगति व बरण म सत्सगति की महिमा भा प्रकारांतर मे बता गप हैं । जिसके सस्कार उत्तम हैं उसका कुसगति भी बूद्ध विगड नहीं सकती और जो सस्कार हीन है सत्सगति उसे प्रभावित नहीं कर सकती । दोनों की सीमाएँ हैं । सीमा निर्णय के सम्बन्ध मे उनके दो प्रतिनिधि दाहे अवलोकनीय हैं—

जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सक्त कुसग ।

चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजग ॥^३ ७४—५० ८

रहिमन जो तुम कहत हो सगति ही गुन होय ।

बीघ उधारी रस मरा रस काहे ना होय ॥^४ १८७—५० १६

१ बेणीसहार—१ २०

२ जाडय धियो हरति सिञ्चति चाचि सत्यम् ।

मानाश्रति विशति पापमपाकरोति ॥

चेत प्रसादयतिक्षु दि तनोति कीर्तिम ।

सत्सङ्गति कथय कि न करोनि पु साम ॥

—नीतिगतकम २३

३ सजन कुसगति सग तें सज्जनता न तजत ।

ज्यो भुजग जन सग तऊ चन्दन विष न धरत ॥

—वृ ६

४ सगति मुमति न पावई परे कुमति के धष ।

राखहु मेल कपूर मे, हाँगु न होत मुगष ॥

—विहारी

नित्य प्रति सपों से सशुक्त रहने पर नीतल प्रकृति चन्दन म विप व्याप्त नहीं हो पाता । और चारा झार ईस ही ईस होने पर रसमरा के पीव मे मिठास नहीं आ पाता । स्पष्ट ही दोना क प्रभाव की सीमा है, परंतु प्रभाव होता निश्चिन है—
घाँटन चारे का लगे ज्या मेहदी का रग ।

परोपकार

रहीम के व्यक्तित्व विश्लेषण से स्पष्ट हो चुका है कि वे एक परोपकारी जीव थे । समकालीन एव परवर्ती लेखका न उनके परोपकार की भूरि भूरि प्रशंसा का है । स्पष्ट रहीम न अपने नीति काव्य म परोपकार पर कई दोह लिखे हैं । परोपकारियों का स्वाभाविक गुण है, स्वतः कष्ट सहकर भी दूसरा का सुखी करना । महाराज भत हरि न ऐसे ही पुरुषों की मनुष्यत्व की सर्वोत्कृष्ट श्रेणी मे रखा था ।^१ इस तथ्य की अभिव्यक्ति के लिए रहीम का ध्या सेना क पाठा की ओर गया था । कहा जाता है कि प्रत्येक सवार, अर्ध विधेय पर ही सघ कर युद्ध कर पाता है । इस तथ्य का ध्यान म रखते हुए, राजा टोडरमन न, सवार का गम्बर, उसके प्रिय घाडे पर दागने की प्रथा चलाई थी जिससे कि घोडा घाँटन म असुविधा न हो । निश्चित ही इस प्रथा मे घोडे का, दागन की पीडा सहन करनी पडती थी । अपन ही वातावरण से विषय सामग्री सचित करने वाले रहीम ने, महापुरुषों की परोपकार प्रियता के लिए लिखा—

या रहीम गति घडन की, ज्या तुरग व्यवहार ।

बाग दिखावत आपु तन, सही होत असवार ॥ १५७—पृ० १६

मनुष्य पशुप्रा की अपेक्षा कही अधिक जानवान प्राणो है । इसीलिए महापुरुष परोपकार के लिए अपना तन मन प्राण सभी कुछ योद्धावर करते रहे हैं । महाराज शिवि और मुनिवर दधीचि के उदाहरण जगत प्रसिद्ध हैं—

रहिमन पर उपकार के करत न यारो बीच ।

माँस दियो गिवि भूप ने, दोहो हाड दधीचि ॥ २०४—पृ० २०

रहीम ने घडे और रस्ती का उदाहरण देते हुए परोपकार के भाव का बहुत सुन्दर रीति से समझाया है । घडा अपने गले मे रस्ती को फाँसी बंधवाता है, जल म डूबता है, कुए के भरे से टकराकर अपने अस्तित्व क विनष्ट होने का खतरा माल लेता है, कि तु दूसरा का तृष्णा भवस्य शांत करता है—

रहिमन रीति सराहिए जो घट गुन सम होय ।

भीति आप प डारि क, सब पियाव तोय ॥ २२८—पृ० २२

१ एते मत्पुरुषा पराधघटका स्वाय परितज्य ये ।

सामान्यास्तु परायमुग्रममृत स्वार्था विरोधेन ये ॥

तेमी मानुषराक्षसा परहित स्वार्थाय निघ्नन्ति य ।

ये निघ्नन्ति निरथक् परिहित ते क न जानीमह ॥ —नीतिशतकम् ७५

यही परोपकार का साधन है और यही है अपने धर्मित्व का गुणरत्नम उपयोग। धर्मिया शरीर तो समाप्त होगा ही। धर्म भावधर्य है कि शरीर रक्षने शक्ति भर अतिता परोपकार दिया जा सके करने—

रहित रहीम इतक करे जा की जहाँ बतात।

नहि यह रहे न यह रहे रहे रहन की यात ॥ २१८—पृ० २६

स्वाध

परोपकार का वित्तोम है स्वाध। परोपकारी धर्मो की बच्य देकर धर्म्या का बलपण करता है। स्वार्थी धर्मो का बच्य देकर धर्मने गुण की याचना याता है। कभी-कभी तो हमक निय निरुप्यतम माग धर्मतो म भा नहीं भूकता। ऐग जय-य ध्यतिता के लिए रक्षाम न बयूत का प्रतीक गुता है जो पून पुन और ध्याया प्रदान करने क स्वान पर पयिका क माग म बाट बाता धर्मिक धर्मदा समझता है—

ध्याय न बाहू काम क दार पात पुन पुन।

धोरन की रोचत फिरें रहिमन कर यवत ॥ १२—पृ० २

इन धूरा का सबसे बड़ा धम स्वाध ही एता है। स्वाध का रोग ऐसा प्रबल है कि यह जिस लग जाता है उसे धर्म्या कर देता है। स्वाध क रागी बड़ा स बड़ा उपकार भुला देते हैं। अधिकांग सत्तार की यही गति हो गई है। जब तक स्वाध सिद्ध नहीं होता लोग पीछे पीछे लग फिरत हैं। स्वाध निकल जाने पर उपकारी व्यक्ति का दूध की मक्खी की भाँति निबाल कर फेंक देते हैं। जब तक भाँवर नहीं पड़ती, मोठ का दुल्हा क सिर पर स्थान मिलता है। भाँवरे पड़ते ही उसे गनी म प्रवाहित कर दिया जाता है। स्वाध का सीमा है—

काज परे कछु और है काज सरे कछु और।

रहिमन भाँवर के भये गदी सिरावत और ॥ ३६—पृ० ४

स्वाधिया का स्वाध इतना प्रबल है कि उन्हाते स्वम स्वाध को भी स्वार्थी बना दिया है। स्वाध के भय से प्रेम भाव तो निदा ही हो गया है और स्वय स्वाध धपना स्वाध समझ कर स्वाधियो क हृदय म भा विराजा है—

कह रहीम या जगत से, प्रीति गई द डेरि।

रहि रहीम नर नीच म, स्वारय स्वारय हेरि ॥ ३०—पृ० ३

चिन्ता

मानव हृदय को सबसे अधिक स तप्त करने वाली मनोवृत्ति चिन्ता है। यसे तो चिन्ता मनुष्य का धम है और प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति का कोई न कोई चिन्ता होती है। होनी भी चाहिए। क्योंकि सबसे चिन्ता गुम होना एक प्रकार स मानसिक विधिप्यता अथवा पागलपन होगा। इसीलिए प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति चिन्ता ग्रस्त रहता है। राजा से रक तक, कुवेर से निधन तक सभी के मन चिन्तित हैं—दोष है उसका अधिकाय। अधिक चिन्तित व्यक्ति क लिए भोजन, शयन यहा तक कि

सम्पूर्ण जीवन दूमर ही जाता है। चिन्ता की सुनगती हुई मट्टी' म शरीर के मांस, मज्जा तथा मेघादि तत्व भुनकर राख हो जाते हैं। अतः रहीम का कथन है कि चिन्ता चिन्ता से भी अधिक भयकर है। चिन्ता केवल मृतक को जलाती है जबकि चिन्ता चलते फिरते जीवित जागृत व्यक्ति का स्वाहा कर डालती है। अतः शान्ति प्राप्त करने के लिए चिन्ता मुक्त रहना परम आवश्यक है—

अन्तर दाव लगी रहे, धुमा न प्रगटे सोय ।

कै जिय जान आपुनो, जा सिर बीती होय ॥ २१—पृ० ३

रहिमन कटिन चिन्तान त चिन्ता क चित चेत ।

चिन्ता दहति निर्जीव को, चिन्ता जीव समेत ॥ १७०—पृ० १७

इन विषयों के प्रतिरिक्त और भी अताधिक विषय रहीम के नीति काव्य में वर्णित हैं। विस्तार भय से सबकी व्याख्या करना सम्भव नहीं। अतः परिचयात्मक रीति से कुछ प्रतिनिधित्व दाहे यहाँ प्रस्तुत हैं—

१ आत्म प्रशंसा—ये रहीम फौके दोऊ, जानि महा सतापु ।

ज्यो तिय कुच आपन गहे आप बडाई आपु ॥ १५६—पृ० १५

२ थाया प्रदशन—करत निपुनइ गुन बिना, रहिमन नियुन हजूर ।

मानहु डेरत विटप चढ़ि, मोहि समान को क्रूर ॥ २७—पृ० ३

३ अत्यधिक प्रसन्नता—बरमहीन रहिमन लखो घस्यो बडे घर चोर ।

द्वितन ही बड लाभ के, जागत हू गो भोर ॥ २६—पृ० ३

४ क्षण भंगुरता—फागद की सो पुतरा, सहजहि मे घुल जाय ।

रहिमन यह अचरज लख्यो, सो उ खेचत घाय ॥ ३५—पृ० ४

५ क्षमा—छिमा बडन का चाहिए, छोटन को उत्पात ।

का रहीम हरि को घटो, जो भगु मारी लात ॥ ५५—पृ० ६

६ सहनशीलता—घरती की सी रीति है सीत घाम श्री मेह ।

जसी परे सो सहि रहे, त्यो रहीम यह वेह ॥ १०६—पृ० ११

७ काल—रहिमन भेषज के लिए, काल जीत जी जात ।

बडे बडे समरय भये, तो न बोउ नरिजात ॥ २१३—पृ० २१

८ स्मृति—रहिमन सुधि सबतै भली लगे जो बारम्बार ।

बिछुरे मानस फिर मिल, यही जान अकतार ॥ २३५—पृ० २३

१ चिन्ता ज्वाल शरीर धन दावा लागि लागि जाय ।

प्रगट धुंवा नहि देत है उर अन्तल धु धिमाय ।

उर अन्तर धुं धिमाय जरे ज्यो काच की मट्टी ।

जरि गयो लोह मास, रह गई हाड की टट्टी ।

कह गिरिधर कविराय, सुनो हो मेरे मिता ।

वे नर कैसे जिये जाहि तन व्याप चिन्ता ।

- ९ रीझ— नाद राझ तन देत मग, नर धन हेत समेत ।
ते रहीम पसु तें अधिक् रीझहु कछु न देत ॥ ११०—पृ० ११
- १० सपूत—जो रहीम गति दोष की, सुत सपूत की सोय ।
बढ़े अधेरो तेहि रहे, गए अधेरो होय ॥ ७८—पृ० ८
- ११ कपूत—जो रहीम गति दोष की, कुल कपूत गति सोय ।
घारे उजियारो लगे, बढ़े अधेरो होय ॥ ७७—पृ० ८
- १२ पतिव्रता—प नग बेलि पतिव्रता, रिति सम मुनो मुजान ।
हिम रहीम बेली रही, सत सोजन दहियान ॥ ११३—प० ११
- १३ दोहा—दोरघ दाहा अरघ्य के, झालर घोरे आहि ।
ज्यो रहीम नट कु डली सिमिट कूद चढि जाहि ॥ ६६—प० १०
- १४ विषय सुख—रहिमन राम न उर घरे रहत विषय सपटाय ।
पसु खर खाये स्वाद सो, गुर गुलियाए खाय ॥ २२५—प० २२
- १५ माया ममता—कहु रहीम कतिक रही, केतिक गई विहाय ।
माया ममता मोह परि, अत चले पछिताय ॥ ३२—प० ४
- १६ मन—रहिमन मनहि लगाय के देख लेहु किन कोय ।
नर को बस करिबो कहा, नारायण बस होय ॥ २१४—प० २१
- १७ भेषज—रहिमन बहु भेषज करत, व्याधि न छांडत साय ।
खग भृग बसल अरोग बन, हरि अनाय के नाय ॥ २१०—प० २१
- १८ अनमोल सगति—कहु रहीम कसे निभ बेर केर को सग ।
वे डालत रस आपने उनके फाटत अग ॥ ३३—प० ४
- १९ छिपाए न छिपें—खर खून खांसी खुसी चर प्रीति मरु पान ।
रहिमन दाबे न दबे, जानत सरल जहान ॥ ४७—प० ५
- २० गुरना—गुरुता फय रहीम कहि, फबि आई है जाहि ।
उर पर कुच नीके लगें, अनत बतीरो आहि ॥
- २१ गांठ—जहा गांठ तट रस नहीं यह रहीम जग जोय ।
मंडए तर की गांठ मे गांठ गांठ रस होय ॥ ६०—प० ६
- २२ दीन—दीन सबन को लखत है दीन लख न कोय ।
जो रहीम दाने लख दीन बहु सम होय ॥ ६५—पृ० १०
- २३ बडा पेट—बडे पेट को भरने को है रहीम दुख बाढ़ि ।
या तें हाथी हहरि कें, दिये दात द्व बाढ़ि ॥ १२३—पृ० १२
- २४ अति—रहिमन अतो न कीजिए गहि रहिए, निज कानि ।
सजन अति पूजे लख डार पात की हानि ॥ १६०—प० १६
- २५ जिह्वा—रहिमन जिह्वा बावरो, कहिये सरय पताल ।
आपु तो कहि भीतर रही, जूती खात कपाल ॥ १८६—पृ० १८

- २६ पानी—रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून ।
पानी गण न ऊबरे मोती मानस चून ॥ २०५—५० २०
- २७ विवाह—रहिमन व्याह विद्याधि है सकहु तो जाहु बचाय ।
पायन बेडी परन हैं ढोल बजाय बजाय ॥ २०६—५० २१
- २८ गोत—रहिमन यो सुप होत है बढत देख निज गोत ।
ज्या बडरी अखिया निरखि अखियन को सुख होत ॥ २२०—५० २२
- २९ शोध—रहिमन रिस का छाडि के करी गरीबी भेस ।
मोठो बोलो नय चलो, सब तुम्हारे देस ॥ २२६—५० २२
- ३० सौदा—सौदा करी तो कर चलो रहिमन याही घाट ।
फिर सौदा पही नहीं दूरि जान है बाट ॥ २६१—५० २५
- ३१ अचरज—बिन्दु भी सिंधु समान, को अचरज कासीं कहीं ।
हेरन हार हेरान रहिमन अयुने आप तैं ॥ २७७—५० २७

इन दोहा के अतिरिक्त भी शनाधिक दोहे और उद्धृत किए जा सकते हैं जिन्हें देखने से पात हागा कि रहीम क वष्य विपया की सूची बहुत लम्बी है । उनक प्रमुख विपया की सक्षिप्त नामावली इस प्रकार गिनाई जा सकती है—

गुरु आयसु, प्रभु, प्रभु भक्ति, प्रभु आश्रय सत्य महिमा, दान महिमा दान का प्रभाव, सच्चे दानी दान की विधि, दाहे का महत्व, रूप का आकर्षण, याचना, याचकता, आपतकाल में मांगना, मागने से मानहानि, मागना और उदार पानी, जेहि मुख निक्सत नाम प्रभुता पर घर गए की प्रभुता, नारी, सती कुल बधू कामातुरा नपति, राज्य, अधिकारी, भगुनी अगुन ममता, चित्ता मोह मर्यादा, आपद घम, सगति, कुसगति, कुसग और कुशल, दुजन का पडोस, दुजन मण्डली में साधु की स्थिति, साधु बचते नाहि अगार, करमहीन, मूख, मूख का पान, प्रेम, प्रेम का फिसलना, पथ प्रेम की कसौटी, प्रेम में प्राणा की बाजी, प्रेम और प्रियतम, प्रीतम छवि और पर छवि, धन, धन की आवश्यकता, धन की सुरक्षा, धन क दुगुण, लक्ष्मी चाँचल्य अधिक धन सग्रह थारे जल के मीन, दीन दीन और दीनवधु, दिव्य दीनता, अघम पेट बडे पट का भरना स्वाथ विपदा हू भली गाढे दिन क मीत, गाढे दोऊ काम, अतमेल का सग स्वामी सेवक, निबल, निबला की रक्षा सबलता, घमण्ड, आत्म विश्वास आत्म गारव अपनी गरज गम्भीरता, निज मन की व्यथा, गापनीयता, गापनाय पदाथ गुप्त न रहने वाले भाव दुराव दुराव किससे बडे लोग बडो की सगति बडो के काम क्षमा, असमय समय का प्रभाव, नैन दान, उराज का श्याम मुख, उराज और बतौरी निघनता, सहिष्णुता, सम्बन्धिता स दूरी, टडपन की तासीर, कडुवे मुखन को चहियत यहै सजाय, मिष्ट भाषण भावी, भावी और कम, चातक मीन अमर जिह्वा, अति सुधि, गोत्र सच्चा दूर, जागीर उत्तम प्रकृति, शोध, विपय सुख विवाह गाँठ, मन रोझ, स्मृति काल, विप, इत्यादि इत्यादि ।

प्रस्तुत ऋण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि रहीम का प्राप्त नीति काव्य विषय निरूपण की दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है। उन्होंने दान मान, सुसग कुसग, सज्जन दुजनाति कतिपय पूव विवेचित विषय परम्परा को आगे बढ़ाते हुए, उस धार धार्मिकता एवं शास्त्रीयता के बानावरण से मुक्त करके, श्रियात्मक जीवन के आधार पर व्यवहृत किया। यद्यपि उनके विषय निर्वाचन में धर्म एवं शास्त्र से वमत्य नहीं किंतु फिर भी उसमें सरस अनुभूति एवं लौकिक अनुभव का अंश ही अधिक है। मध्ययुगीन नीति काव्य की परम्परा में अधिकारत कविषा ने सामान्यतः कुछ ही विषयों पर काव्य रचना की है। गुरु महत्व नाम जप, नारी नित दा, ब्रह्मचर्य महिमा, असार ससार ईश्वर जीव माया यमत, क्षण भगुरता, विषय त्याग आदि ऐसे ही विषय हैं। इस समस्त विषय निरूपण का दृष्टिकोण धार्मिक रहा है। रहीम ने रामायण, महाभारत, पुराणादि की कथाओं तथा प्रभु विश्वास पर पूरा आस्था रखते हुए भी, अपने नीति काव्य को अतिशय धार्मिक सकीलता से मुक्त रखा है। यही कारण है कि ये नीति काव्य को नवीन दिशा की ओर मोड़ देने में समर्थ हो सके। उन्होंने अपने गम्भीर शास्त्र ज्ञान तथा विस्तृत लोकानुभव के आधार पर विगुण व्यावहारिक विषय विवेचन की परिपाटी की स्थापना की तथा नीति काव्य के घबल प्रसाद को दैनिक जीवन की नींव पर सड़ा किया। इसीलिये उनका नीति-काव्य केवल किसी वग विषय तक सीमित न रहकर आज भी प्रत्येक शरीर के लागे की जिह्वा पर अक्षित है।

काव्य, कमनीयता पूरा रचना है। कमनीयता के मूल आधार दो हैं—अनुभूति और अभिव्यक्ति। अनुभूति जितनी तीव्र होगी अभिव्यक्ति उतनी ही सशक्त हो जाएगी। जिस प्रकार किसी वस्तु का देखकर, हमारी पुतली पर उसकी छाया पड़ती है और मस्तिष्क के योग से उसका रूप, नाम, कम इत्यादि समझ लिया जाता है उसी प्रकार किसी वस्तु, दृश्य, कथा, घटना अथवा विचार के मन में आते ही हमारी चेतना पर जो मूक प्रतिक्रिया होती है, वही अनुभूति है। मन की इस मूक प्रतिक्रिया को कह देना अथवा अभिव्यक्त कर देना ही अभिव्यक्ति है। अभिव्यक्ति के साधन और प्रकार, भिन्न भिन्न हैं। दैनिक क्रिया-कलापों में यही अभिव्यक्ति गाम्भीर्य रूप धारण कर, भाषा बन जाती है। विविध प्रतिभा एवं योग्यता सम्पन्न व्यक्तियों की अनुभूति जय गाम्भीर्य अभिव्यक्ति ही साहित्य एवं काव्य है। तूलिका के माध्यम से उसी अनुभूति का अभिव्यक्तिकरण चित्र कला, स्वर के माध्यम से उसी अनुभूति का अभिव्यक्तिकरण मंगीत-कला तथा छेनी हथौड़े के माध्यम से उसी अनुभूति का अभिव्यक्तिकरण मूर्तिकला है। अतः स्पष्ट है कि इन सबका मूल तत्व अनुभूति ही है।

अनुभूति प्रक्रिया और काव्य

अनुभूति की क्रिया निष्पन्न होत ही हमारे मस्तिष्क का विचित्र शक्ति सम्पन्न कम्प्यूटर न जाने अपनी किस कोठरी से ध्वनि, वण गद्गद और वाक्य एकत्रित करके उन्हें स्वर, लय आकारण आदि के आधार पर व्यवस्थित कर देता है और फिर ध्वनि यंत्रों का आना दकर, उन्हें भाषा के रूप में अभिव्यक्त करता है। परंतु अभिव्यक्ति में पूर्व अनुभूतिजय सम्बन्धाभा के फलस्वरूप गन्ध चुने जा चुके होते हैं कत्ता, क्रियादि के व्याकरण नियमा द्वारा निबद्ध एवं वाक्या के परिवर्धन में यस्त हो चुके होते हैं। भाषा का दर्शन अभी पाठ नहीं कर पाया कि ये सब क्रियाएँ मस्तिष्क के किस भाग में होती हैं और कस हाती हैं? आश्चर्य तो तब होता है जब कि मस्तिष्क को साधन का भी अवसर नहीं मिलता और सड़क पर वेतहागा दौड़ता हुआ व्यक्ति किसी रंगती चीज का देखकर चाख उठता है—साँप। कुछ इसी प्रकार में अनुभूति जय सम्बन्धन जब आवेप, दीघता उत्साह आदि के कारण शाब्दिक रूप में फूट पड़त हैं तब भाव कहलात हैं। और वे ही सम्बन्धन जब विशेष मनन एवं चिंतन की प्रक्रिया से गुजरत हुए व्यक्त होते हैं तो विचार कहलात हैं। अनुभूति का सृज स्वभाविक, वेगवान पक्ष भाव है और सुचिंत्य पक्ष विचार। बसे ता दाना ही हमारी धारणा

शक्ति की उपज हैं कि तु भाव धारणा के जिस अंश से सम्बद्ध है उसे अक्षरीर मास्तिष्क भाषा में हृदय (हाटलनही) तथा जिस अंश से विचार सम्बद्ध है उसे सामान्यतया कविता का हृदय पक्ष से सम्बद्ध माना जाता रहा है जिसमें मास्तिष्क का योगदान कम और हृदय का अधिक रहता है। कदाचित्त इसीलिए तुलसी ने कहा था कि कविता में हृदय पक्ष विस्तृत समुद्र और मास्तिष्क पक्ष उस अनुपात में सीपी जसा हाता है—हृदय सिंधु मति सीप समाना।

अनुभूति पक्ष के आधार

स्पष्ट है कि कविता एक भावमय व्यापार है भाव का सहज उच्छ्वलन ही कविता है।^१ कि तु भाव का मास्तिष्क से एकदम अलग नहीं किया जा सकता और मास्तिष्क का धर्म है चिंतन करना, मनन करना विचार करना। अतः कविता से विचार पक्ष तिरोहित नहीं हो सकता। कदाचित्त इसीलिए काव्य के अनुभूति पक्ष को उद्घाटित करते हुए प्रायः चार आधारों पर विचार किया जाता है—

- १ भाव
- २ विचार
- ३ कल्पना
- ४ रस

इसमें भी मुख्य है—रस भाव, विचार, कल्पना सभी रस के सहयोगी हैं। मात्र भाव एव प्रभाव होगा मात्र विचार, उपदेश और मात्र कल्पना एक साधलापन। कविता का सब प्रकार संपुष्ट करने के लिए चारों का सप्टु सामञ्जस्य आवश्यक है। भाव कविता की मासलता है विचार मेरुदण्ड कल्पना रत्नसंचार तथा रस प्राण। स्वस्थ रहने के लिए सभी का विकसित होना आवश्यक होगा। यह बात दूसरी है कि मासलता के अधिक होने पर शरीर अधिक आकषक, मेरुदण्ड की अधिक सम्पुष्टि से दीर्घजीवी रत्नसंचार के अधिक सुचारु होने से पुर्निला दिखाई पड़ता है।

नीतिकार्य—एक मध्यमान

नीतिकार्य का ढाँचा कुछ ऐसा है जिसमें अर्ध तीना पक्ष के साथ ही, विचार पक्ष की प्रधानता रहती है। भावना और कल्पना का स्थान सुरक्षित होत हुए भी विचार का प्रावलय रहता है। किन्तु कल्पना और भावना विहीन विचार विनाश एव दान का वस्तु हैं। कार्य के लिए लाजिब्य का योगदान परम आवश्यक है। नीति काव्य का विचार पक्ष जितना प्रबल तथा विस्तृत होगा उमका मूल्य उतना ही अधिक समझा जायगा। साथ ही उसकी अनुभूति जितनी मार्मिक और कल्पना जितनी सूक्ष्म होगी उसका प्रभाव उतना ही अधिक होगा। का संहाय्य इसलिए धारण है क्योंकि यही गुण विचारों के लिए स्थान नहीं। नीति काव्य इन दोनों के बीच की अवस्था का काव्य है। सब प्रकार में मधुर, मय प्रकार से आनन्द और सब प्रकार में कल्याणकारी। कहने की आवश्यकता नहीं कि रहीम का

१ पाइंडी इव द स्पी-डेनियस ओवरपनो ऑफ द पावरफुल पीसिंगस — बट सबय

काव्य इसी प्रकार का काव्य है। उनके काव्य के अनुभूति पक्ष में भावा की मिठास, कल्पना की रंगीनी और विचारा की गहनता का त्रिवेणी एक साथ बहता है। इसीलिए उनकी कविता में विचारात्तेजन के साथ रसानुभवन की भी गति है। मच्चे कविधा की बसोटी यही है।

जहां तक रहीम के नीति काव्य के विचार धर्म का सम्बन्ध है, उसका अध्ययन रहीम दोहावली के विषय वर्णन प्रसंग में ही हुआ है। हा यदि नीति के प्रकारों की दृष्टि से, उसे धर्म धर्म, कामादि के रूप में वर्गीकृत करना चाहें तो मरलता से कर सकते हैं। धर्म और नीति व्याख्यय शब्द है। वस ता धर्म की कोई भी सबसम्मत व्याख्या अभी तक प्रस्तुत नहीं की जा सकी। युधिष्ठिर महाराज न यश को बताते हुए यही कहा था। किंतु जो हो उसका महत्व निश्चित है—धर्म एव हतो हति धर्मो रश्ति रश्ति १ काव्यकारा न भी इसी स्वर में स्वर मिलाते हुए कहा था—धर्मण लभते सर्व धमसारमिद जगत २ इसी लिए आदि कवि के काव्य में लेकर आज तक धर्म पर नाना प्रकार से काव्य रचना हाती चली आ रही है।

धमनीति

नीति काव्य और धर्म का सम्बन्ध पर्याप्त घनिष्ठ है। किंतु नीति में धर्म अपने बाह्य रूप अर्थात् पूजा पाठ नमाज तीर्थ, व्रतादि के रूप में न आकर कर्तव्य के रूप में आता है। रहीम धमनिरपक्ष प्रकृति के जीव थे। यद्यपि रामकृष्णादि की भक्ति विषयक कथन उनके नीति-काव्य में है किंतु धर्म के नाम की दुर्गई देकर उन्होंने कुछ नहीं निखा। यही कारण है कि रहीम के नीति काव्य में धर्म शब्द का प्रयोग अत्यंत सीमित है परंतु है अत्यंत। यथा—

रहिमन विद्या बुद्धि नहीं नहीं धर्म जस दान।

भूपर जनम वथा धर, पसु बिन पूछ विधान ॥ २३२—५० ३३ ॥

वस्तुतः रहीम की धमनीति कर्तव्य परायणता की नीति है। व इसी अर्थ में धम-परायण थे, सामान्य प्रचलित अर्थ में धर्मोपदेशक नहीं। फिर भी उन्होंने आपत्त धर्म की चर्चा करते हुए अपनी रक्षा के लिए प्रत्येक संभव उपाय काम में लाने की सम्मति दी है, चाहे धूरे पर जाकर गरण लनी पडे^३ या किसी द्वार पर मांगना पडे^४ व्यक्तिगत धमनीति की दृष्टि से यह दुख सुख में समभाव धारण करने की छोटा को क्षमा करने की^५, बंधु या बंधु से प्रेम भाव बनाये रखने की^६ या^७ जीवन के लिए मुह बाला न करने की^८ सामाजिक दृष्टि से दान करते रहने की^९, परोपकारमय जीवन बिताने की^{१०}, प्रीति में प्राणों की बाजी लगा देने की^{११} राजनैतिक दृष्टि में शत्रु के समान सबसत्कार की दृष्टि धरने की^{१२}, नीति पर बल दिया है। इनके

१ मनुस्मृति, ८ १५

२ बालमीकि रामायण, ३ ६ ३०

३ से ११ क्रमशः रहीम रत्नावली, दोहा० सं० ६८ ४२, ५१ ८५, ६८ ८७ ८८, १५२ तथा २२४

अतिरिक्त कुछ उपदेशपरक भाव भी देख जा सकते हैं—

गहि सरनागत राम की, भवसागर की नाव ।

रहिमन जगत उधार कर, और न कछु उपाव ॥ ८६—५० ।

रहिमन रस को छाड़िष, करी गरीबी भेस ।

मोठी बोलो न चलो, सब तुम्हारो देश ॥ २२६—१० २२

राम नाम जायो नहीं मइ पूजा मे हानि ।

कहि रहीम पयों मानि हैं, जम के किकर बानि ॥ २३८—५ २३

रहिमन वहाँ न जाइए, जहाँ कपट का हेत ।

हम सब टारत डेकुली, सींचत अपनो लेत ॥ २३०—५० २३

अमर बेलि बिन मूल की, प्रतिपालत है ताहि ।

रहिमन ऐसे प्रभुहि तजि, लोजन किरिए काहि ॥ ७—५० १

अथनीति

घन सम्बन्धी प्रत्येक विचार योजना और नीति अथ नीति के अंतर्गत हैं । भारत प्रारम्भ से ही घन प्रधान देश रहा है । अतः घन रहित अथ को भारत में कभी महत्त्व नहीं दिया गया । पाश्चात्य विचारधारा के विपरीत यहाँ समस्त सुखों का मूल घन है, अथ नहीं । महाभारतकार का कथन है—घनमून सदव अथ ।^१ आग्नेय पुराण के अनुसार अथ यदि ऋण है तो घन उसका मूल—घनमूलोऽथ वित्त ।^२ किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि अथ निन्दनीय है या अनावश्यक है । अनावश्यक एवं निन्दनीय है अथम से अर्जित घन, अथवा घन में तो सभी गुण निवास करते हैं ।^३ चाणक्य ने इसीलिए उसके संग्रह पर बहुत बल दिया है ।^४ रहीम भी घन सम्पत्ति के विरोधी नहीं है अथर्माजित घन के विरोधी थे । वे जानते थे कि ऐसा घन कभी टिकता नहीं—रहिमन वित्त अथम को जरत न लागै धार । ऐसा घन स्वयं तो जाता ही है साथ में अथ हिता को भी क्षय कर जाता है । अतः यदि मात्र घन ही नष्ट हो और उससे किसी अथ प्रकार की हानि न हो तो बहुत बड़ी हानि नहीं समझनी चाहिए—साच नहीं वित्त हानि को जो न होय हित हानि । वस्तुतः घन का महत्त्व साधन के रूप में है, साध्य के रूप में नहीं । साधन की दृष्टि से वह जीवन के काय-यवहारों के लिए परम आवश्यक है । जब तक अपने पास घन नहीं होता, विपत्ति में कोई परवाह नहीं करता—

१ महाभारत—गीतिकाव्य १२३ ४

२ आग्नेय पुराण २२४ २

३ यस्यास्ति वित्त स नर कुलीन

स पण्डित स श्रुतवान् गुणन ।

स एव वत्ता स च दानवीय

सर्वेगुणा काचनमाश्रयति ॥ नी० गतक—४१ ॥

४ चाणक्य नीति—६ १६

रहिमन निज सम्पति बिन कोउ न विपति सहाय ।^१ ३०१—५० २०

अतः हम कह सकते हैं कि धन तथा सम्मानपूर्वक धन का अजन तथा दान धर्मादि करते हुए विपति काल के लिए उसका सरक्षण ही रहीम की आर्थिक नीति थी । दान उनकी अर्थनीति का अनिवाय अंग था—

तब ही लो जीवो मलो, दीवो होय न धीम ।

जग में रहियौ कुचित गति, उचित न होय रहीम ॥^२ ८७—५ ६

कामनीति

भारतीय सस्कृति में जिस प्रकार अर्थ को धन के अधीन माना गया है उसी प्रकार काम को धन और अर्थ दोनों के अधीन स्वीकार किया गया है । वैसे भी अर्थहीन उपभोग केवल आकांग-कुसुम ही है । अतः अर्थ एवं धनयुक्त काम काम्य है । महाभारत ने उसे धन अर्थ का फल स्वीकार किया है—

धन मूल सदवाथ कामोऽथ फलमुच्यते ।^३

आग्नेय पुराण में भी यही तथ्य स्वीकृत है—

धनमूलोऽथ विटप तथा काम फलो महान् ।^४

- १ रीमक बहार होती है पसे से सब वमूल ।
जो न हो तो चेहरे पे उडती है खाक धूल ॥
पसा ही सारी चीज है, पसा ही मद मूल ।
बिन पसा आदमी है जहाँ बीच नामाकूल ॥
पसा ही रंग रूप है, पसा ही माल है ।
पसा न हो तो आदमी चले की माल है ॥—नजीर

लेकिन दूसरा पक्ष यह भी है—

काम काल के न आया मालोजर ।

मुनइमों । दीलत पै बेजा है धमण्ड ॥—अजुम

—उडू कवियों की नीति कविताएँ—निवनाथ गण्डित्य (१६२८ मेरठ), पृ० ३४

- २ तब ही लो जीवो मलो दीवो होय न धीम ।

बिन दीवो जीवो जगत, हमें न रुच रहीम ॥

हमें न रुच रहीम, दिये विनु जग में जीवो ।

यहै एक है सार धन निज कर जो दीवो ॥

धन की गोमा दान, दान लो जस फले जग ।

जब लो पर उपकार बने, धन जनम तबही लग ॥

—राधाकृष्ण प्रयावली—रहीम दोहो पर ११३ कुण्डलिया वाला भाग, स०

‘याममुदर दास (१६३० खण्ड प्रथम), प० ५३

- ३ महाभारत (शांतिपर्व) १२३ ८

- ४ आग्नेयपुराण २२४ २

सम्पूर्ण कामशास्त्र की नीति यही है। कामसूत्रकार वात्स्यायन मुनि ने एक पग और आगे बढ़कर काम को घम प्रथम के समकक्ष ही स्थान दिया है। उन्होंने स्वीकार किया है कि काम की कतिपय कमियाँ हैं पर तु क्या उन्हीं के कारण काम की सर्वथैव विगहणा नहीं की जा सकती क्या चारा का भय होने हुए भी घनाजन नहीं किया जाता? क्या भृगादि क भय से कृपि कम छोड़ दिया जाता है? क्या भिक्षुका के भय से भोजन पकाना बंद कर दिया जाय? तो फिर काम का उचित उपभाग भी क्या न किया जाय?¹

नहि भिक्षुका सतीति स्थात्या नाधिघीमते ।

नहि मगा सतीति यवा नाप्यन इति वात्स्यायन ॥²

किंतु मध्य युग का वातावरण इन कथना के प्रतिवृत्त था। सभी स न भक्तों ने काम और कामिनी की जी खालकर निन्दा की है। किंतु रहोम इसके विरोधी जान पड़ते हैं। उनका कोई स्वर काम-नामिनी निन्दका के साथ नहीं मिलता। इसक विपरीत नगर गोभा, फुटकर घरवा तथा स्वयं नीति के दोहो म कही कही सुन्दर शृ गारिक चित्रण सोत्साह किये गये हैं—

मनसिज भाली की उपज कही रहोम नहि जाय ।

फल श्यामा क उर लगे फूल श्याम उर आय ॥ १३६ प० १४ ॥

साथ ही वे काम की आतुरता के प्रति भी सजग हैं और कामातुराओं के स्वाधादि का प्रवृत्ति के प्रति सभी का सजग करत हुए कहते हैं—

धरज गरज मान नहीं, रहिमन ए जन चारि ।

रिनिया राजा, मांगता, काम आतुरी नारि ॥ ६—प० २ ॥

एक अ य दोहे में उन्होंने मदन क घोड़े पर चढ़े हुए पुरुष के अग्नि पय का भी उल्लेख किया है। परंतु म कथन विश्व का अनुभूत एक तटस्थ सत्य है। इनम न गहणा का भाव है और न प्रतिशयाक्ति का। यही कारण है कि किसी क लिए भी इसस असहमति प्रकट करना कठिन होगा। माय ही यह भा ध्यान देने योग्य है कि उ हाने कामातुरा का उल्लेख अय कविता की भांति ढोल गवार बाधिनी सपिणी माय क माय न करके राजा के साथ किया है। यह नीति केवल इसी दोहे म नहीं अयय भी दली जा सकती है—

उरग तुरग, नारी नपति नीच जाति हथियार ।

रहिमन इहें संनारिए, पलटत लग न चार ॥ १४ पृ०—२

स्पष्ट है कि यहा नारी के साथ उरग तुरग शक्ति गहित तत्व ही नहीं नपति जैसे सम्मानित पद भी हैं। एक अय प्रमुख बात यह है कि नारी के रूप तथा कामासक्ति क

१ कामशास्त्र के महत्त्व तथा भगवान महादेव एव नदी आचार्य म लेकर वात्स्यायन एव परवर्ती आचार्य परम्परा क लिए लेख—कामसूत्रम् (लक्ष्मी दत्तशंकर प्रेस सं० १६७१) प्रथम भाग, विस्तृत की भूमिका ।

२ कामसूत्र १/२/३८—वही प० ७१

यसे अतिरञ्जित चित्र भी रहीम ने नहीं उतारे जैसे ससृष्ट के नीति कवियो ने ।^१ तात्पर्य यह है कि रहीम के नीति काव्य म नारी का असम्मान नहीं है । उनकी कामनीति म मध्यमाग का भ्रवलम्बन है । पुरुष एव स्त्रिया को सामान्यतः कामानुरता के प्रति सावधान रहते हुए आयु-साधन एव मयाग के अनुकूल कामच्छात्रो की परितुष्टि करती चाहिए यही रहीम की कामनीति का साराग है—

रहिमन थोरे दिनन कों, कौन करे मुँह स्याह ।

नहीं छलन को परतियाँ, नहीं करन को ब्याह ॥ ६४—पृ० १६ ॥

मोक्षनीति

भारत आध्यात्मिकता प्रधान देश है । आध्यात्मवाद म जितनी कामना मोक्ष की है उतनी सम्भवतः शायद ही किसी अन्य विषय की हो किन्तु आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि भारत म मोक्ष के सम्बन्ध म कभी एक सी मायताएँ नहीं रही । विभिन्न ऋषिया, आचार्यों, धर्मानुयायियों तथा मत सस्यापकों ने अपने अपने विचारों के अनुसार मोक्ष की विभिन्न धारणाएँ की हैं । सभी धार्मिकता का मोक्ष सम्बन्धी विवेचन भिन्न भिन्न है ।^२ इतनी विभिन्नता होते हुए भी उन सब म कुछेक ममानताएँ खोज लेना बहुत कठिन नहीं है । सब पूछिए तो भारत की विशेषता ही है—विभिन्नता में एकता की खोज । काममागिया को छोड़ प्रायः अन्य सभी मनीषी इष्टदेव का भजन, प्राणियात्र का नित, सादा जीवन तथा विषय त्याग आदि का मोक्ष साधना का माग स्वीकार करते हैं । रहीम, मोक्ष व्याख्याता नहीं थे । इस्लाम धर्मावलम्बी होने के

१ नारी के आकषण विकषण के एक साथ अतिरञ्जित रूप के लिए छोटी सी पुस्तक 'गुक रम्भा' सवाद बड़ी मन्त्वपूर्ण है । इसम रम्भा नारी के लौकिक भोग का तथा गुक त्याग का पक्ष प्रस्तुत करते हैं । आस्वादाथ कुछ छन्द निम्नोद्धृत हैं—

रम्भा—कामानुरा पूर्णशगाक चक्रा विम्बाधरा कोमल नाल गौरा ।

नालिंगता स्वे हृदये भुजाभ्या वया गत तस्य नरस्य जीवितम् ॥ ८ ॥

भ्रान्दरपा तरुणी नतागी सदधम ससाधन सष्टि रूपा ।

कामाथदा यस्य गहे न नारी वया गत तस्य नरस्य जीवितम् ॥ ३६ ॥

च द्रानना सुन्दर गौरवर्णा व्यवतस्तनी भोग धिलास दक्षा ।

नादोलिता च गवनेषु येन, वया गत तस्य नरस्य जीवितम् ॥ ३१ ॥

गुक—भाया करण्डी नरकस्य हण्डी तपो विलण्डी सुहृतस्य मण्डी ।

नणा विलण्डी चिरसेविता चेत् वया गत तस्य नरस्य जीवितम् ॥

चित्ता यथा दुःखमयी सदोया ससार पाशा जनमोहकर्त्री ।

सतापकोणा मजिता च येन वया गत तस्य नरस्य जीवितम् ॥

कापटयवेया जनवचिका सा विष्णुत्रदुगधदरी दुराणा ।

ससेविता येन सदा मलाढया वया गततस्य नरस्य जीवितम् ॥

२ देखें भारतीय दर्शन—वाचस्पति गरोला (प्र० स०) विभिन्न धार्मिकता में मोक्ष सम्बन्धी विवेचन

कारण उनकी भिन्न मायताएँ होना और भी स्वाभाविक है। किन्तु उपयुक्त तत्वों से सम्बन्धित दाहा को खोज कर, उनके मोक्ष नीति सम्बन्धी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष विचार जान सकते हैं—

राम नाम जायो नहीं, भइ पूजा मे हानि ।

कहि रहीम क्यों मानिहैं जम के किकर जानि ॥ २३४—५० २३

रीति प्रीति सबसों मली बर न हित मित गोत ।

रहिमन याही जनम की बहुरि न सगत होत ॥ २४०—५० ३३

जो विषया सतन तजी मूढ ताहि लपटात ।

ज्यो नर डारत बमन कर स्वान स्वाद सो खात ॥ ८३—५० ६

सदा नगारा कूच का बाजत आठो जाम ।

रहिमन या जग आइक को करि रहा मुकाम ॥ २४६—५० २४

धम, अथ काम, मोक्ष के अतिरिक्त फुटकर विषया की सूची तो विगत अध्याय में प्रस्तुत की ही जा चुकी है। इस सत्र विवरण से स्पष्ट है रहीम के नीति का य का विचार पक्ष अत्यंत पुष्ट परिपक्व तथा विस्तृत है।

भावानुभूति

रहीम के भावुक स्वभाव का विस्तृत विवेचन, उनके यत्नित्व सम्बन्धी प्रसंग में किया जा चुका है। किसी काय, चित्र, उक्ति अथवा काय पर प्रसन्न होकर, लाखा का पुरस्कार दे डालना रहीम का सामान्य काय था। याचक की आवश्यकता अथवा निधन की दीनता को देखकर उनका हृदय करुणा से भर जाता था। वीरता जहाँ भी हो, शत्रु अथवा मित्र में उसकी सराहना करना सो त्यज जहाँ भी हो प्रकृति में अथवा नारी में उस पर रोझ उठना कला जहाँ भी हो काय में अथवा चित्र में, उससे पुलकित हो उठना व्यक्ति की भावुक मनोवृत्ति के परिचायक हैं। इस दृष्टि से मदनानन्द नगर गोभा बरव तथा फुटकर छन्द सभी उनकी भावुकता के अकाट्य प्रमाण हैं। मादक वस्तुओं एवं घटनाओं को देखकर भाव विभोर होने के बजाय उनसे नीति सम्बन्धी निष्कप निकालना भावुक यत्नियों के लिए और भी अधिक कठिन काय है। परन्तु रहीम के लिए यह अत्यंत सरल था।

बड़ी बड़ा आँसा को दलकर नत्र प्रसन्न हाते ही हैं किन्तु रहीम की अनुभूति में यह अपने मात्र की अभिवृद्धिजन्य प्रसन्नता है।^१ उरोज भी मास के गम्भीर पिण्ड हैं और रसौली भी, किन्तु रहीम की अनुभूति है कि गुरुता सभी का पवती नहीं। उरोज का उत्तमतर गुण्य हृषकारक होती है जबकि रसौली में बड़त हुए मास की गुण्य दुःख चिन्ता और बलप का विषय है।^२ रहीम ने दीप के जलते ही प्रकाश के अन्तर की सभी वस्तुओं के देख जान पर अनुभव किया कि जब एक ही दीपक से अन्तर की सम्पूर्ण वस्तुएं दीख गइ तब नत्रा के दीपक जलने पर भी अन्तस का छिपा अनुराग क्या न प्रकट हो।^३ प्रेमी प्रेमिका के नत्रा की आँसु मिचौनी देव और सयोग

रहीम के नीति काव्य में भावानुभूति तथा रस

के परिणाम अर्थात् वृचमदनादि का अनुभव न कर, रहीम के हृदय का नीति कवि गा उठा—

कुटिलन सङ्ग रहीम कहि, साधू यचते नाहि ।

ज्यों नना सना करे उरज उमेठे जाहि ॥ ४०—५० ४

यहाँ अनुभूति की सरसता तथा नीति की उपादेयता का मणि कांचन संयोग देयत ही बनता है। सामान्य घटना अनुभूति की गहराइया में ल जाकर आस्वाद्य बना देना और फिर उससे नीति रत्न भी निकाल लेना रहीम के अनुभूति विधान की अमूल्य उपलब्धि है। उन्होंने सायकालीन बेला में नारी को दीपक जलाते तथा बुझने के भय से आचल में छिपाते देखा और देखा उसी अचल से भार होते समय दीपक को बुझाते। बल के रक्षक को आज का भयक देयकर नीति कवि का हृदय, असमय की इस प्रबलता पर चीत्कार कर उठा—

जिहि अचल दीपक डुरयो हयो सो ताही गात ।

रहिमन असमय के परे भिन्न नभु हूँ जात ॥ ६२—५० ७

इसी प्रकार बल के गिरासीन मौड़ को दुःखिन प्राप्ति के तुरंत पश्चान्, दूल्हे द्वारा जल में प्रवाहित किया जाता देख रहीम ने अनुभूति की आँखा से— काज परे कछु और है काज सरे कछु और का निष्कप निकाल लिया। रहीम जैसा अनुभूतिगोल नीति-बुंगल कवि ही इस सामान्य घटना से इतना बड़ा निष्कप निकाल सकता है। अनुभूति के बल पर ही रहीम ने शतरज के खेल के प्यादे का फरजी बनता देख निष्कप निकाला था—जो रहीम मोछो बडे तो अति ही राय। अनुभूति की सपनता ता देखिए—

मूढ़ मण्डली में सुजन ठहरत नाहि विसेलि ।

स्याम कचन में सेत ज्यों, दूरि कीजियत देखि ॥ १५६—५० १५

डालडा और चाय समृति के इस युग में तो बाल ज म स ही सफे होने लगे हैं किन्तु वसे यह डलती आयु का व्यापार था। बाले बाला के बीच सफे हुए, एक दो बाला को उखाड़ फेंकना लोक जीवन का सामान्य व्यापार है, किन्तु रहीम की अनुभूति प्रवणता ने इसे ही कविता का विषय बनाकर नीति निवचन का अवसर निकाल लिया। जिस प्रकार असह्य बाले बाला के बीच से एक दो श्वेत बाला को उखाड़ कर फेंक दिया जाता है उसी प्रकार दुष्टा के बीच स अल्प सख्यक सज्जन निकाल बाहर कर दिये जाते हैं। कितना बड़ा सध्य और कितनी सामान्य घटना से। इसी को कहते हैं 'जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि।' अब अनुभूति की तरलता का एक उदाहरण लीजिए—

रहिमन अमुभा नयन दरि, जिय दुख प्रगट करइ ।

जाहि निकारो गेह ते, कस न भेद कहि देइ ॥ १६५—५० १६

आसू के डलकत ही हृदय के दुख का प्रगट होना सामान्य है किन्तु रहीम की अनुभूति यहाँ आसुओं की बूदा के समान तरल हो गई है और उस तरल अनुभूति ने

ही बड़ी गरजना में एक ऐसा कर्गीय तथ्य सामा रस विना जा विचार करने पर मंत्रमूर बन जाता है—जाति, विचारी केह से बग न भ- कहि द- ॥ यह भाति बचन वाच्यत तय सावभौमिक तथ्य है। सामा हा यह यथार्थ भाति ब विण उपायोगी है, सामाजिक नीति के विण उपायोगी है, जातीय नीति ब विण उपायोगी है, घोर राष्ट्रीय नीति ब विण भा उपायोगी है। सब घ न म धनुभूति को मूर्मता का एक उपाहरण प्रस्तुत करने इस प्रसंग का समाप्त करता है—

रहिमा प्रोति सराहिण निग होत रग बून ।

ज्यो जरबो हरदी तम तम सपेरो घूत ॥^१ २०८—१० २१ ।

मान पूजन धार्मिक धर्मगुरु पर शक्ति ब प्रभार म ह-नी म घूना मिलान पर उन दाया ब रग परिषदा की मूर्मता पर जिम दृष्टि म रहोम की भक्ति भगता ने विचार किया यह उक्त मूर्म तथ्येणन का दाया है। सामा-य कवि मूर्मभता प्राणी है। यह घटनाका की मूर्मता का पकड़ता है। उ-ते धनुभूति ब रग म दाया है घोर भावा ब माध्यम से व्यक्त कर देता है। पर-तु रहोम की इनके धनिरित्त धर्म विगपता है सामा य घटनाका की नीतिपरक व्याख्या। धनुभूति की तरलता गहनता घोर मूर्मता ब सहाय ब घटना भाष या यस्तु व्यापार की गहराई म गीना लगाकर यार्द न यार्द प्रमूल्य रस उद सात है जिसम नीति ब प्रिय-गी एव हित साधक प्रकाश की रश्मियाँ पूरती रहती है।

रसानुभूति

रस भारतीय साङ्गमय का चिर अभिलाषित वाच्य है। ई-र सम्प्राप्ति धर्मवा माक्ष स लवर द्धि द्रया का निनात स्पूत मान-द धर्मवा भोग रस की व्याप्त परिधि म समाहित हो जाते हैं। इमीलिय वेद- उपनिषदा-^२ धर्म एव दान के उच्चतम ग्रन्था मे भी रस की चर्चाएं हैं घोर रति रहस्य अनंत तरंग एव काममूत्रादि म भी। काव्य शास्त्र का रस इन दोनों का मध्यवर्ती है। यह लौकिक वाक्य-नायिकादि के संयोग वियोग से सम्बद्ध हात हुए भी ब्रह्मानन्द नहीं तो ब्रह्मानन्द सहोदर धर्म्य है। प्राचीन काल म इस ब्रह्मानन्द स-र-रव का स्थान इतना ऊंचा था कि उसकी स्थिति के बिना उच्चकाटि के काव्य की कल्पना नहीं की जाती। काव्य ही उस वाक्य को कहा गया जो रसात्मक है—रसात्मक वाक्य वाक्यम्। रस की व्याख्याएँ भरत मुनि स लेकर डा० नगे द तक इतनी होती चली आ रही हैं कि यदि उस सम्पूर्ण समा लोचना साहित्य का एकाग्रित कर लिया जाय तो केवल प्रथम काटि के ग्रन्था की

१ ऋदमे शोक बड़े इनकी तरफ गया 'प्रकवर'।

दिल से मिलते नहीं ये हाथ मिलाने वाले ॥

—उद्ध कवियों की कविताएँ—शिवनाथ शांडिल्य (१६७८) प० ४४

२ श्रीरम ध्यायो ज्योतीरसोऽमृत ब्रह्म भूभुध स्वरो स्वाहा ।

३ रसो ब स । रस ह्येधाय लब्धवान-दी भवति—तत्तरीय उपनिषद् ।

संस्था गताधिक होगी। इस क्षेत्र में विद्वद् वागमयक अतगत भारत का अपना स्थान है। विन्व के काव्य गान्ध मे काव्य रस विषयक भारतीय स्थापनाएँ अतम एव अष्टम है।

आश्चर्य यह है कि इतनी विषय व्याख्याओं के हत हुए भी रस सम्बन्धी अनेक प्रश्नों पर विद्वानों में मतभेद नहीं। उदाहरणार्थ रस रसों का प्रश्न लिया जा सकता है। नाटक के आठ रसों में लेकर उनकी संख्या अगम्य सदासी तक पहुँच गई है। 'शृंगार के ५२ उपभेद हास्य के ३६ कथन के ८, वीर के ६, भयानक के ६, शीघ्र के ६, अद्भुत के २, रोद्र के ३ तथा गीत के 'गूँय, सवयाग १०२ है।' नीति काव्य के काव्यत्व का प्रश्न भी ऐसा ही है। क्योंकि नीति के कवि प्रायः उपदेश की सज्जा करते हैं जिसमें रस नहीं आ पाता। 'यदि कवि जान बूझकर नतिज हो तो वह उपदेशक ही जायगा कलाकार नहीं।' हमारा अतिरिक्त निवेदन है कि यह धारणा उच्च प्रतिभा सम्पन्न कवियों के सम्बन्ध में किसी प्रकार भी सत्य सिद्ध नहीं होती। अनुभूति प्रवण, भावुक, सन्तम तथा रस सिद्धि कवि के मानस से अनुभूति के क्षणों में जो निकलता है, रस मय हाता है। रहीम का नीति काव्य हमारे कथन का ज्वलत प्रमाण है।

हाँ एक सीमा अवश्य है और वह है विषय एव गली की। रमणी-सौन्दर्य, क्वच कुच गुच्छ समानानादि पर रसवण्णा अतिनी सरल है ईश्वर, जीव प्रवृत्ति, सत्य परोपकारादि विषयों में उतनी ही कठिन। दूसरे महाकाव्यकार अथवा प्रबन्धकार का रस निष्पत्ति के लिए अतिना अथवाग रहना है मुक्तकार का वह प्राप्त नहीं होता। 'प्रबन्ध की विस्तृत भूमि में रस सामग्री जुटा रखने के लिए पर्याप्त स्थान रहता है परन्तु मुक्तक की सकीण नली में इस सामग्री का भरना बहुत ही कठिन काम है।' यह कठिनाई अथवा छोड़े और सारठ जैसे लघु आकार के नीति विषयक छंदा में और भी उग्रतर रूप में उपस्थित होती है। और फिर रहीम व्यावसायिक या दरबारी कवि नहीं थे। मन की मोज में अगाजक के लिए कविता करते थे।^१ किन्तु इन विषयताओं के होते हुए भी उनके नीति के दाहों में चुम्बन की, आह्लाद, की रस की, एक ऐसी संयोजना है जो माहित किय बिना नहीं रहती—

१ रस सिद्धांत—डा० नगेन्द्र (प्र० सं०), प० २५४

२ पञ्चाक्षर साहित्यालोचन के सिद्धांत—श्री लीलाधर गुप्त (प्र० सं०) प० २३६

३ सतसई सप्तक—डा० दयामुन्दर दास (१९६१ प्रयाग) प० २ (भूमिका)

४ एक लहँ तप पुँजन की फल ज्यो तुलसी अरु सूर गुसाईं।

एक लहँ बहु सपत के सब भूदन ज्यों बर वीर बडाईं ॥

एकन का जस ही सों प्रयोजन है रसखान रहीम की नाईं।

दास कवित्तन की चरचा, बुधि बतन को सुख देत सदाईं।

(कविबर भिलारीनास कृत), काव्य निणय—स० जवाहरलाल चतुर्वेदी

कुटिलन सग रहीम कहि साधू बचते नाहि ।^१

ज्यो नना संना करे, उरज उमेठे जाहि ॥ ४०—५० ४

यहाँ रहीम का उद्देश्य है कुसंगति दोष का निवृत्तन । कुटिल जना के साथ रहने मात्र से निर्दोष एवं निरपराध साधु प्रकृति सज्जनो को भी दण्ड सहन करना पड़ता है भले ही अपराध उनके द्वारा न होकर, पड़ोसी^२ या सगी दुष्टों द्वारा किया गया हो । रहीम की रहीमता इस तथ्य की सम्पुष्टि तथा अभिव्यक्तिकरण पद्धति में है जो इतनी मादक एवं सहृदय हृदयानुरजनकारी है कि रस लेते ही बनता है व्याख्यान करत नहीं । यद्यपि रसिक जना को आश्रय, भूभग बुंगला रमणी को आनन्दन नैन सन को अनुभाव इत्यादि मानकर रस सामग्री को उपस्थित किया जा सकता है किन्तु उससे परिचित हुए बिना भी सामा य पाठक गोहे का जो आनंद लेता है वह का य शास्त्रीय याम्या स कही अधिक आह्लादनीय है । रहीम को भी कल्पित यही अभीष्ट हो क्याकि उ हांने भरत के विभावानुभाव संचारी इत्यादि सूत्र को मम्मूल रखकर बिहारी को भाति का रीति सिद्ध का य रही रचा । फिर भी आस्थादाय यहा विभिन्न रस भावादि के कातपय प्रसंग प्रस्तुत हैं—

शृ गार तथा सजातीय भाव

शृ गार रस की भित्ति प्राणि मात्र की उम सवशक्तिमयी भावना पर आधारित है जिसे शास्त्रीय मापा में स्थायी भाव रति की सना दी गई है । निश्चित ही रतिज य यह रस, कविभारती के नवरस चचिरा^३ होते हुए भी अपने में अद्वितीय है ।^४ आश्रय होता है रस सिद्धांत के आदि मनीषिया की प्रतिभा पर जि होने पुत्र विषयक वत्सल भाव तथा देव विषयक श्रद्धादि को भी रति के अंतगत समाहित किया था । क्योंकि युगयुगांतरा के पश्चात् फायड जस मनोविश्लेषक का ओडोयस प्रथि श्रीर चेतन, अवचेतनादि की खोज करते हुए भी लगभग यही तथ्य स्वीकार करना पडा है ।^५ पादघात्य विचारका ने मनोविज्ञान के आधार पर प्रेम वासना तथा उनके वाच्य म योगदान पर विस्तार से विचार किया । उन विचारा को हि दो प्रथा में भी देखा जा सकता है ।^६

१ ज्यो बसिये ज्यो निरहिये, नीति नेह पुर नाहि ।

सगासगी सोचन कर नाहक मन बधि जाहि ॥—बिहारी

२ बसि कुसंग चाहत कुंगल यह रहीम जिय सास ।

महिमा घटी समुद्र की रावन बस्यो परोस ॥—२० रत्ना०, १२७—५० १३

३ नियतिवृत्त नियम रहिता द्वादेकमयी मन-यपरत-ग्राम नवरस रचिरा निभ्रतमादृती भारती जवेजयति । —मम्मट

४ शृ गार एव एको रस इति । —शृ गार प्रकाश ।

५ मनोविश्लेषण—फायड (श्री दवेद्र बदालकार का हिंदी अनुवाद) प० २७८ २६४ तथा ३००

६ देवें मपुर रस स्वरूप श्रीर विज्ञास भाग १—रामस्वाय चौधरी पृ० ८८ ११२

रहीम के स्वभाव की शृंगार प्रियता का उल्लेख हम स्थान स्थान पर करते रहें हैं। फुटकर बरबो तथा शृंगार सारठा के रचयिता की कलम से निकली नीति का भी शृंगार सौरभ में सिंचित हा जाना स्वाभाविक था। नीति काव्य के क्षेत्र में शृंगार सरिता का वह अजस्र प्रवाह तो नहीं जो नगरशाभा अथवा बरबो नायिका भेद म है, परन्तु उसके मधु भीने छोटे अवश्य ही अवलोकनीय हैं। प्रेम और काम सम्बन्धी दोहो में ये छोटे अप्रत्याकृत सघन हैं—

जे सुलगे ते बुझि गये बुझे ते सुलगे नाहि।

रहिमन दोहे प्रेम के बुझि बुझि क सुलगाहि ॥ ६६—प० ७१

मनसिज माली को उपज, कही रहीम नहि जाय।

फल श्यामा के उर लगे, फूल श्याम उर आय ॥ १३६—प० १४

प्रथम दोह में प्रेमाम्नि की लोकाग्नि से भिन्नता प्रदर्शित है। सामान्य अग्नि सुलग कर कुछ देर में बुझ जाती है और जा पहले ही बुझ गई उसका फिर सुलगना क्या ? किंतु प्रेम की अग्नि विचित्र है। यह एक बार लगने पर, बुझने का नाम नहीं लेती, इसीलिए प्रेम की अग्नि का जला प्राणो, बुझ-बुझकर सुलगता है। सुलग सुलग कर बुझने की मिटास निश्चित ही हृदय में एक गुदगुपी उत्पन्न करती है। और यही गुदगुपी रहीम के शृंगार की विशेषता है। वे अपने शृंगार सिंचित नीति का प को उस सीमा तक नहीं ले जाते जहां पहुँच कर वासना की गंध उभरने लगती है। यह शृंगारी कविया का सुवारक रहें। रहीम का काव्य हम मात्र गुदगुदाता है, प्रहर्षित करता है, सरसाता है और इसी के साथ साथ सिखाता भी है। आज भी हम यह गौरी, मुक्षी प्रेमचंद के उपयासा में देख सकते हैं। वे अपने प्रेम प्रसंगों को उस सीमा से आगे नहीं ले जाते जहां से वासना के क्षेत्र का समारम्भ हो जाता है।

प्रेमाम्नि के प्रज्वलक कामदेव का प्रभाव भी विचित्र है। इस मनसिज माली ने लौकिक वनस्पति शास्त्रीय नियमों को ताक में उठाकर रख दिया है। क्याकि फल उसी डाल पर आता है जहाँ फूल हो। वह एक पका हुआ वानस्पतिक गभाशय है^१, जो फूल की पश्चात्तवर्ती उपज है। हा लौकी तोरी बरेल आदि कुछ बेला में भादा फूला में प्रारम्भ से ये जइया दिखाई पडने लगती हैं जबकि सामान्य फूल में प्रलुप्त रहती हैं। परन्तु इतना अवश्य है कि फूल जहाँ लगता है फल वही बनता है। इधर यह नियम मनसिज माली ने भंग कर दिया है। यहाँ फल को देखकर फूला जा रहा है और वह भी अलग अलग व्यक्तित्व के प्रसंग में। फल श्यामा (राधा) के वक्ष पर पहले बन चुके हैं, श्याम का हृदय बाद में फूला है। यह विचित्रता भी कितनी विचित्र है। शृंगार की चोट का ता कहना ही क्या। परन्तु इस का सयमन भाव लालित्य तथा शृंगार की भर्षादित अभिव्यक्ति देवत ही बनती है।

शृंगार के क्षेत्र में नारी के भौतिक शरीर और शरीर में भी कतिपय अंगों का गणन, शृंगार काव्य का प्रमुख विषय रहा है। मात्र उरानो को लेकर भावुक

कविया ने पूरे का य प्र या का प्रणयन कर डाला है। इनमें भी सस्कृत क कवियों की सूझ का तो कहना ही क्या।^१ कमी हि दी कविया न भी नहीं रली। यहा तक विद्यापति और सूरदास इत्यादि भक्त कवियों ने भी एक से एक मादक उत्तिया कही हैं कि तु उही अग को लेकर, नैतिक उदभावना करना, रहीम का ही विषय है। कामुकता के स्थान पर कुचा मे नतितता की प्रेरणा निदिधत ही सराहनीय है—

गुरता फवँ रहीम कहि फवि आई है जाहि ।

उर पर कुच नीके लग, अनत बतौरी आहि ॥ ५१—प० ५

जो अनुचित कारो तिहँ लग अक परिनाम ।

सखे उरज उर बोधिपत, बयो न होय मुत्त स्याम ॥ ६६—पृ० ७

भावनात्मक दृष्टिकोण से भिन्न यदि विगुद्ध शरीर शास्त्रीय वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाय तो उराज है क्या मास के सामान्य पिण्ड। यह मास पिण्ड अपने उरोजत्व को इसलिए प्राप्त हुआ, क्योंकि वह उर पर स्थित है। यदि यही मास हाथ पर गतन इत्यादि शरीर के किसी अन्य अंग में घट जाय तो रसौली या बतौरी (ट्यूमर) कहा जाता है। अतः रहीम ने शृंगार की पत्रिलता से नैतिकता का पक्ष विकसित करते हुए कहा कि गुरता भारोपन गम्भीरता सभी के बस की बात नहीं, वह किसी किसी को ही गोभा देती है, अतिरिक्त मास का अधिग्रहण करके पीनता एवं काठिय उराजा की ही गाभा है अथ अंगो की नहीं। जो प्रकृत्या गम्भीर नहीं है, उह गम्भीर व्यवसाया को ध्यान करन अथवा गाम्भीय का तयाकथिन झाडम्बर बनाये रखने से सफलता भिन्न वाली नहीं। अगल दोह का सदैव नैतिक दृष्टि से और अधिक प्रातिकारी तथा शृंगारिक दृष्टि से और अधिन मादक है। यह उरोजाग्र की क्यामता से सम्बद्ध है। शरीर शास्त्रीय दृष्टिकोण से, उस कृष्णता का जो भी महत्व है, परंतु नीति का भावुक कवि उससे दूरता का उपकार न करने की शिक्षा प्राप्त करता है। उराजा न वा प्रदेग को भद कर ऊपर उठने का दुसाहस किया है। अतः बाला मुँह हाना स्वाभाविक था।

१ मवम कर (७वम) लन वाला सम्राट हाना है पर जा कुच सम्राट से भी कर हाथ ग्रहण करन है व सम्राट से भी श्रेष्ठतर है। पर तु व बटून उचिनन हैं। यौवन सम्राट क धान पर उठ कर सटे हाकर सम्मान करन हैं और जाने पर नन हा जान है—

आदत्त य कर साह स सम्राटिति निचय ।

तस्मादपि करानाज्जानो सम्राटतरो कुचो ॥ ३ ॥

तारभ्यमागत दष्टवा सम्मान क्तु मुत्पती ।

उचिततो कुचावतो प्रस्थाने गिरता नतो ॥ ५ ॥

कुचवत्तम—मारण्य विनायी (ग० १६८१) धावमगड पृ० १

रहीम के नीति काय म भावानुभूति तथा रस

कदाचित् इमीलिए उह निषीडित भी किया जाता है ।^१ यह बात दूसरी है कि निषीडन मे भी यह ग्रान दाभूति करते हा । यह धनुभूति स्वत अपने हाथ से मदन करन पर प्राप्त नहीं हाती । अपन मुह मिया मिट्टू बनने से किसी को वास्तविक प्रादर प्राप्त हुआ है ? आत्मलाघा के फीरेपन की शृ गारपरक अभियक्ति देखिए—

ये रहीम फीकं दोऊ जानि महा सतापु ।

ज्यों तिय कुच आपन गहे आपु बडाई आपु ॥ १५६—प० १५ ॥

दाहे म वरिणित महा सताप की धनुभूति, किसी अभागो विरह विधुरा को ही प्राप्त होती होगी किंतु रहीम के नीति निवचन मे शृ गारिकता के याग का आस्वाद सभी कर सकते हैं । नीति निवचन स सम्बद्ध ऐस कुछ और भी दाह रसिक जना के लिए उद्धत किये जा सकते हैं । जिनम आयाय अगा स सम्बधित बडे ही सरस कथन विद्यमान हैं । नत्रा की दीघता चितवन व वाकेपन तथा अधरा क मिठाम म सम्बधित तीन दोह देखिए—

रहिमन यो सुख होत है, बडत देख निज मोत ।

ज्यो बडरी अंखिया निरखि आखिन को सुख होत ॥ २२०—प० २२

बाकी चितवन चित गड़ी, सूधी तो कुछ धीम ।

गासी ते बडि होत है काडि न सकत रहीम ॥ १८८—प० १३

नन सलोने अधर मधु कह रहीम घटि कौन ।

मोठो भाव लौन प अर मोठे प लौन ॥ ११०—प० ११

विषय का और अधिक लम्बा न करत हुए प्रिय-मयाग सम्बन्धी रहीम के विचारा की चचा कर शृगार विषयक प्रसंग को ममाप्त करेंगे । वस्तुतः शृगार का सार ही किंगार-किंगारी है और उमम भी प्रधान वस्तु है, उनका समाग । मन भावत प्रिय का मयोग भौतिक जीवन का अद्वितीय उपलब्धि है । उमकी प्राप्ति होन पर गीतल, कष्टकर और अधवारपूण निगा दिन व प्रकाश-सुख मे बड़ी अधिक मादक सिद्ध हाती है और टाक कल्पवृक्ष एव बकुण्ठ मे अधिक सुगन्ध प्रतीन होता है । अत यन यही करना चाहिए कि किसी भी प्रकार प्रियतम मे मनमुटाव विराध, वपरीय व वियोग प्राप्त न हा । क्याकि वही सुग है, प्रवास है कल्पवृक्ष है वकुण्ठ है—

रहिमन रजनी ही भली, प्रिय सों होय मिलाप ।

खरो दिवस कहि काम को रहियो आपुहि आप ॥ २०१—प० २०

काह करौ बकुण्ठ ल, कल्पवक्ष को छाह ।

रहिमन टाक मुहावनो जो गल प्रीतम बांह ॥ ३८—प० ४

१ वक्षस्यले स्वमार्याया कुच गेही स्मरस्य वं ।

पातयति च रोपेण दष्ट्यान्मा त युतो युवा ॥

मरो घाना के बिना मरो वस्तु (प्रिया वक्ष) पर काम ने गड क्या बना लिया है । इसी रोप स युवन उसे हाथों से ढाते हैं ।

कुचवत्तम माकण्डेय त्रिपाठी (स० १६८१)

२ बानी को सार बखानी सिंगार, सिंगार को सार सार कितोर कितोरी । —द्व

इस प्रकार विभिन्न शारीरिक अंगों त्रियात्रा तथा घटनात्रा के वर्णन को देख कर रहीम की अतिगम भावुकता एवं शृंगार काव्य क्षमता का स्पष्ट परिचय मिल जाता है। शृंगारिक कवि जिन उपकरणा से केवल कामादीपन का काय लेते रहे हैं, उन्हीं के माध्यम से रहीम ने सरसतापूर्वक नीति निबन्धन करके नीति एवं शृंगार के मणि-काचन संयोग द्वारा एक पथ दो काज सिद्ध किये हैं। परिणामस्वरूप उनके नीति कथन को नौरस उपदेश न रहकर काव्यत्व को प्राप्त हुए हैं। अतः रहीम दोहावली के दोहे नीति के दोहे नहीं नीति-काव्य के दोहे हैं—

प्रोतम छवि मनन बसी पर छवि कहीं समाय ।

भरी सराय रहीम लखि आप पथिक फिरि जाय ॥^१

ज्ञात तथा सजातीय भाव

उपर यह देखा जा चुका है कि रति मानव जीवन की सर्वाधिक प्रभावशाली प्रवृत्ति है। किन्तु यह प्रवृत्ति अपने मूल अमस्कृत रूप में मानवता को घोर पागलिकता स्वाय एवं विनाश के बगार में ढकेल सकती है। और दिव्य एवं सस्कृत रूप में इन्द्र देव राष्ट्र प्रवृत्ति इत्यादि के उस अनुराग तक उठ सकती है जिसका परिणाम आत्मनत्याण एवं समाज कायाण है किन्तु रति का उतना उत्थान सामान्यतः महात्माओं तक के लिए कठिन होता है। मन विपरीत मानवीय आत्मा की एक अय मूल प्रवृत्ति गम या निर्वेद है जो स्वभाव से ही गति प्रणयक है। यही गम या निर्वेद स्थायी भाव वराग्य दुस्वार्ति विभाव स्वायत्याग मोन चितनार्ति अनुभाव तथा घति-स्मृति ग्लानि दन्य आदि सचारी के याग से उतना ही आस्वाद्य बन जाता है जितने अय स्थायीभाव। आम्वादन याग्य भाव ही रम है।^२ अतः गम मूलक इस

१ प्रोतम छवि मनन बसी, पर छवि कहीं समाय ।

भरी सराय रहीम लखि आप पथिक फिरि जाय ।

आप पथिक फिरि जाय टिकन की जगह न पाव ।

तन मन प्रिय रम भरयो ज्ञान अब कहीं समाव ।

मन समुन्हावन चहत हाय अब कहा कर हम ।

मनन द्विग आवत सब, हू जात जु प्रोतम ।

—राधाकृष्ण प्रयावती (रहीम पर ११३ कुण्डनिया वाना अंग) गण्ड प्रथम सम्पाक वा० याममुन्दर दास (१६३०)

२ आचाप विन्वनाय क अनुमार निरीह (निष्काम) अबस्या में आत्म-विधामज मुग ही गम है—

गमो निरोहावस्यायां स्वात्मविधामज मुत्तम ॥ —साहित्य दपण ३ १८०

३ विभावरनु भावच सात्त्विक्यभिचारिभि

आनीयमान स्वाद्यत्व स्थायीभावो रस स्मृत ॥ —दण्डपर

अयान् विभाव अनुभाव, माविक भाव और व्यभिचारी भाव क द्वारा जा स्थायी भाव आम्वादन क याग्य बना गिया जाता है उम रम कहत हैं ।

रस को गान्त रस की रचना दी जाती है। किन्तु घनजय तथा घनिक जमे विद्वाना ने दगारूपक तथा उसकी टीका में शम एव गान्त का जम कर खण्डन किया है। और 'अष्टौ स्यायिनो मता' की घोषणा की है। यन्तुन भरतमुनि ने प्रथम तो उमका वणन ही नहीं किया और जहा भी किया है, वहा न तो अय रसा की भाति उमका लक्षण दिया है और न उसके अनुभाव आदि का ही वणन है। कदाचिन इही सब कारणों से भरत नाय्यशास्त्र के टीकाकार श्रीराम स्वामी शास्त्री ने गान्त में मम्बद्ध नाय्यशास्त्र के छोटे अध्याय के प्रसंग का प्रशिक्षित माना है। किन्तु दूसरी ओर नाय्यशास्त्र के भट्टनायक तथा अभिनव गुप्त आदि सभी टीकाकारों ने गान्त की स्थिति स्वीकार की है। अभिनव गुप्ताचार्य ने ता अभिनवभारती के लगभग सौ पृष्ठा में गान्त रस का विवेचन एव स्थापन किया है। अत स्पष्ट है कि गान्त रस की स्थापना में बहुत मतभेद रहा है। यद्यपि 'अष्टौ नाय्य रसा स्मृता' कह कर आठ रसा की व्याख्या करने वाले आदि आचार्य भरत मुनि ने गान्तार्थि नवमा रस की स्वीकृति दे दी थी और नाटक में स्थान न देते हुए भी^१ घोषित किया था कि सभी रस गान्त से उत्पन्न तथा अन्न में ही अतर्लिन हान हैं। आचार्य अभिनव गुप्त ने प्रायः यही स्वीकार किया है—मवरमानाम् शान्तप्रायएवास्वाद । १० विश्वनाथ की स्थापना ता और भी उदात्त है—

न यत्र दुःख न सुख न चिन्ता न द्वेषरागी न च काचिद्विच्छा ।

रस संगात्, कथितो मुनीन्द्र सर्वेषु भावेषु सम प्रमाण ॥

स्पष्ट है कि विश्वनाथ जी मुनियों की दुर्गाई पर उमी रस का गान्त रस कहते हैं जहा दुःख सुख चिन्ता द्वेष राग इत्यादि से विमुक्त हुए चित्त को समावस्था प्राप्त होती है। आचार्य भिखारीदास द्वारा गान्त रस के उदाहरण में प्रस्तुत एक नवैया दक्षिण—

भूखे, अघाने सिसाने रसाने हित्तु अहित्तुन सों स्वच्छ मने हैं ।

दूखन भूपन, कचन-काँच ओ मृत्तिका मानिक एव मने हैं ॥

मून सौ फूल सौ, माल प्रवाल सौ, दास हिए सम सुख सन हैं ।

राम के नाम सौ केवल काम ते—ई जग जीवन-मुक्त बने हैं ॥^२

इस उदाहरण तथा अयाच्य विवरणों का अध्ययन करके हमारे हृदय में बार-बार यह प्रश्न उठ रहा है कि गान्त केवल पारलौकिक निर्वेद गान्त बराग्य का ही रस है किन्तु जहाँ नितान्त लौकिक आधार पर सफलता असफलता अथवा तमम्बधी नियमाचरणा

१ नट अपना चचलना के कारण गान्त के स्थायी भाव गम का मापन नहीं कर सकता। इसलिए नाटक में आठ ही रस हान हैं—

गान्तस्य गममाध्यस्वन्नटे च तदसम्भवात् । —रसगंगाधर

२ स्व स्व निमित्तमासाद्य गान्तादभाय प्रवचने ।

पुननिमित्तापये च गान्त एवोपलीयत ॥ —नाय्यशास्त्र ६-१०८

३ कवियर भिखारीदास द्वारा कव्य नियम—न० जवाहरानन चतुर्वेदी (द्वि० म०)

आदि की चर्चा है वहाँ नीति का रस होगा। यह निश्चित है कि गाम्भीर्य आधार पर, त्रियात्मक नीति व कथन त्रिगुणित गान व अन्तर्गत नही मान। गान्त रस आम विनाम या निरति का रस है और नीति लाजानुरक्ति का। गान्त रस का मूल भावना मदव उदात्त हानी है जबकि नीति अनुत्तम, घोर एव कठोर भी होती है। मन्मथ हिन म निरत रहने आत्मवत् सन भूता (चाह गधु हो अथवा मित्र) का समीपित करने सभा (सहयोगी विरोधी) प्राणिया व गुण एव निरामय हान म मन्वद त्प सुनभ भाव नीति है किन्तु इन विपरीत गठका गठता स, नीच को दण्ड स प्रल को बूट चाल स वावर्ती बनान व मानवाचित नियम भी नीति है। इमना तात्पय यह नही कि नाति म प्रतिद्विदिता हिमा एव कठारता ही है। दया, ममता लाजापनार नही है। य मन् भी है परन्तु लौकिक सफलता प्राप्त करने तथा दुष्टादि का दमन करने व कारण प्रतिद्विदितादि भी है। हम यह कह सकते हैं कि गान्त रस सवया तप पूत, स्थित प्रन योगी का कठोर सयमी जीवन है और नीति स्वपारा निरत सदगहम्य का व्यवहार जिसम लौकिक भाग दूषण नही भूषण है जन् कि पहल में उह सवया अगम्य अपराध माना जाता है।

तात्पय यह है कि गान्त रस कवल लोकोत्तर अनाय सवया दिव्य त्याग वैराग्य आदि का ही आभसात करता है जब कि नीति पूणतया लाज-साफल्य हनु साम दाम दण्ड भेदादि पर आधारित है। डा० गुलावराय का कथन है ससार को अमारता की आर ध्यान आकर्षित कर उमसे वराग्य उत्पन्न करना और जीव का ईश्वर-मुग्ध करना गान्त रस का पदा का मूढ उद्देश्य रहता है।^१ यद्यपि मोक्ष नीति भी नाति का एक अंग है किन्तु विरोधतया इस अभावमय पापपरित असार ससार की समस्त आपत्ताएँ एव विपरीतताएँ से जुभत हुए उनका अपने अनुकूल बनाकर लौकिक सफलता प्राप्त करने की आगा प्रेरणा एव शक्ति प्राप्त कराना नीति है। दूसरी ओर कुशल कविधा का नीति-नयन भी उसी प्रकार आम्बाद्य बन जाता है जिस प्रकार गान्त रस। अत हमारे विचार म तो नीति का एक पथन रस के रूप म माना जाना चाहिए। साफल्य स्थायी भाव मूलक नीति विषयक रस अपना ही प्रभात्र एव स्वाद रखता है जो शान्त व शास्त्रीय रूप से पथक है। अत नीति का शांत रस म ही समाहित करना उचित नही। या ता रस विनाप के विद्वान अथ सभी रसा का अपन अपने मनानीति किसी एक ही रस म अतर्निहित करत चन आये हैं और उस भाव से नीति भी गान्त व अतर्गत वर्णित की जाता रही है। किन्तु शांत रस की सीमाएँ का ध्यानिक अध्ययन करत हुए यह स्पष्टता अवश्य है। वस्तुत यह रस सिद्धांत व विद्वाना का विषय है और विशाप अध्ययन एव विनयण की अपक्षा रखता है जिसने लिए यहा अवकाश नही। अत इस विवाद म न उलभन हुए हम रहीम के नीति-वाच्य स शांत रस के उदाहरण प्रस्तुत करत है—

कहु रहीम केतिक रही केतिक गई विहाय ।

माया ममता मोह परि अत छले पछिताय ॥ ३३—१० ४

रहीम के नीति-वाक्य म भावानुभूति तथा रम

काह कामरी पामडी जाड गए से पाग ।

रहिमन भूल मिटाइए कस्यो मिल अनान ॥

रोति प्रीति सबसा नलो बर न हित मित गोत ।

रहिमन याही जनम को बहुरि न सगति होत । २४०—प० २३

सोदा करो सो करि चलो रहिमन याही घाट ।

फिर सोदा पहो नहों दूरि जान है बाट ॥ २६१—प० २४

इन सभी दाहा का म्थाई भाव निर्वेद है और आत्म निरीक्षण वैराग्य मवभूत स्नह पुण्य-मचयन आदि अनुभाव है तथा पदचाताप, खीन म-तोष, स्मृति दय चिंता आदि मचारी हैं । अन य दाह गात रम क उपाहरण हैं । साथ ही दाहा की ममानु भूति भी विचारणीय है । पहना दाहा रहीम के स्वकीय आत्मविदनेपण की कहानी कहना प्रतीत जाना है । जीवन क अन्तिम दिना म उह जितना पछताना पडा था उनवी चचा तीवनी प्रमग न हो च्की है । माया ममता के फेर म पडकर धार राजनतिक उचाड-पछाड, गुडा की मार-बाट स भरे जीवन तथा उच्चतम मुगल पदा की प्राप्ति के पश्चात भी अन अन समय की खस्ता जानत पर रहीम ने जन विचार किया होगा तभी दम प्रसार क अनन दाह उनके मानस निभर म फूट पडे हगि और जीवन की पारलौकिक सत्यता का कट्टु अनुभव कर प्रभ म आगामय विश्वास व्यक्त किया जागा—

रन बन ब्याधि विपत्ति मे, रहिमन भर न कोप ।

जो रच्छक जननी जठर, सो हरि गये कि सोप ॥ १५६—प० १६

गहि सरनागत राम [की भवसागर की नाव ।

रहिमन जगत उधार कर, और न बछू उपाव ॥ ४१—प० ५

राम नाम जायो नहों, भई पूजा मे हानि ।

कहि रहीम कयो मानिहें, जम के किकर कानि ॥ २३४—प० २०

ध्यान दन की बात यह है कि दन दाहा म उपदेशका की रूभता नहीं स्वानुभूति की कसक यात रही है । मीनिए तुनमी कवीर और नानक की अनुभूतिमयी पुनीत वाणी की सी गूज है । भाव विमार होकर गाने पर हमारे कथन की सत्यता स्वन स्पष्ट हो जायेगी ।

इन दोहा म रहीम के वैराग्य भाव की भनव भी दयी जा सकती हैं । वैराग्य सम्बन्धी कुछ और भी दाह रहीम दोहाबली म प्राप्य हैं किन्तु उनकी सख्या अधिन नहीं है । कारण स्पष्ट है कि रहीम सन्त महात्मा नहीं थ । फिर प्रदन उठ सकता है कि उहनि वैराग्यभाव की पविता—चाहे मात्रा म थोड़ी ही हो—क्या की ? उत्तर स्पष्ट है कि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन म इस प्रकार के शण आत हैं जब

१ पुराणाते इमगनाते मयुनाते च या मति ।

सा मति सबदा चेत स्यात को न मुच्येत ब्रधनात ॥

अथात पुराण-श्रवण के पश्चात मगान सं लौटन पर तथा मयुन के उपरात जो (वीनरागता प्रधान) बुद्धि उपपन्न जाती है वही यदि सबदा बनी रह तो एना वीन है जो ब्रधन म मुक्त न हो जाय ।—सूक्ति सुधाकर गी० प्रे० गोरखपुर (पृष्ठ म०)—प० १७६

वह बराग्य अनुभव करने के लिए विवश हो जाता है। सत उस भाव में स्थायी रूप से निमग्न रहत है जबकि गहस्थ क्षणिक रूप से। रहीम तो इस भी अनुभूति प्रवण, साधु-संग प्रेमी तथा अततागत्वा पारिवारिक दृष्टि से दुःखी जीव थे। अत इस प्रकार के भाव हृदय में आना अस्वाभाविक नहीं। इसकी अभिव्यक्ति में भी अनुभूति की गहराई है वाच्यविरता है। यही कारण है कि रहीम के बराग्य सम्बन्धी दोहा का जो प्रभाव उत्पन्न होता है वह विहारी मतिराम इत्यादि द्वारा यदा कदा कहे गये दाहा में नहीं है। बराग्य की वह बनि रहीम की आत्मानुभूत ध्वनि है केवल परम्पराभिव्यक्त नहीं जिन पर नौ सौ मूस खाय बिल्ली हज को चली की कहावन चरिताथ हाती है। और जा उपहासास्पन्न प्रतीत हान है। यह बात दूसरी है कि उनकी कविता में गम्भीर हास्य व्यंग्यादि भी हैं।

हास्य व्यंग्य विनोद तथा सजातीय भाव

जावन में गाम्भीर्य के साथ हास्य का भी अपना महत्व है। गारिक दृष्टि से यह पुष्टिकारक तथा मनीना में तल डालने जसा कार्य करने वाला है। हास्य जीवन की नारमता आलस्यादि का दूर कर सरसता उत्पन्नता तथा हृदयपन प्रदान करता है। वाच्यशास्त्र के अनुसार हास्य अष्ट रसा में से एक प्रधान रस है जिसकी उत्पत्ति वाग्य-व्यंग्य आकारादि की अमगति एवं विवृति से होती है—वागादि-वृत्तश्चता विरामा हान दृष्यते।—सा० दण्ड। व्यंग्य कथन कपोल म्पुग्ण ह्यज दीपक्षि मुक्वान आदि अनुभाव रूप चपाना उमुनता अविच्छेदा आदि सचारी भावा से पुष्ट हानर स्थाया भाव हाम रमच का प्राप्त होता है। साहित्यदण्ड में अतपता एवं अतिशयता के आचार पर स्मित हसित तथा विहसित इत्यादि हास्य के छ भेद गिनाये गये हैं।^१ रमगगाधर में आमम्य तथा परम्य हास्य का भी उल्लेख है।^२ इन अतिरिक्त गिष्ट अगिष्ट भी हास्य के अन्वये में हो सकते हैं। सर्वोत्तम हास्य गिष्ट हास्य होता है जिसकी तीव्रता अनुभूति की गहनता व्यंग्य के करारेपन तथा कचाल की गहराई पर आपत है। अपना वाच्य में एम हास्य की मात्रा अधिक नहीं है। ब्रज भाषा में हास्य उमवा गननी मन्वृत प्रथा में भी हास्य रस के चमत्कृत उत्पत्तरणा की कभी है

१ मन्वा का भी लीकितता तथा तीव्रता पत्तार्यों का धान्य गृहण आवश्यकता रहती थी—

साइ इतना दीजिए जा में कुट्टुम समाय ।

मैं भी मूला में रहूँ, साधु न मूला जाय ॥

कबार प्रयासना—सा० पारमगाथ प० ५ ० ०

२ उग्राना स्मित हसिते, मध्याना विहमिता वहसिता च ।

गोदानाम अपहसित तथाति हसित तस्य पटभेद ॥—साहित्यदण्ड

३ आनस्या दृष्टान्तपत्ता विभागे क्षणमात्रे ।

हृदयपर दृष्ट्या विभागाचोपजायते ।

योऽपि हास्यरस्त्रो परस्य परिकीर्तित ॥

—राजगाधर

अनि अभाव है। यदि कही किसी कवि न इस पर उदाहरण प्रस्तुत करन का प्रयास किया है ता वह इतना फूहड़ हो गया है कि कुछ कहा नहीं जाता।^१ किन्तु शिष्ट हास्य क उदाहरण हा ही—एमी बात नहीं। सूर,^२ तुलसी,^३ विहारी^४ आदि रससिद्ध कविया की सखती से शिष्ट हास्य व्यंग्य के भी कतिपय सुन्दर छंद लिखे गये हैं। रहीम का नीति-वाक्य भी इस बचन म अपवाद नहीं। उनके निम्नलिखित दोहे तो गम्भीर एव शिष्ट हास्य के सुदृढतम उदाहरण म स हैं—

कमला फिर न रहीम कहि यह जानत सब कोय ।

पुरुष पुरातन की बधू क्यों न चचला होय ॥ २३—प० ३

कमला फिर न रहीम कहि सखत अघम जे कोय ।

प्रभु की सो अपनी कहे क्यों न फजीहत होय ॥ २४—प० ३

उक्त दाना दाहा म लक्ष्मी के चाचन्य की काव्यात्मक हास्याभिव्यक्ति है। भगवान् विष्णु पुत्र्य पुरातन अर्थात् पुगन पुरुष अर्थात् वृद्ध है। उनका चिरयौवना बधू लक्ष्मी जी चचला क्या नहीं हागी? बूढ़े की युवती बधू का दूसरा का घर भागना स्वाभाविक है। कहावत प्रसिद्ध है कि बाल्यावस्था का विवाह माना पिना क, तरणावस्था का विवाह अर्थात् वृद्धावस्था का विवाह पडोमिया क सुख का कारण हाता है। दूसरे दाह म गान का पुत्र्य पति की ओर स प्रस्तुत किया गया है। लक्ष्मी चचला ही सहा किन्तु है तौ प्रभु (दूसरे) की ही पत्नी। पर स्त्री चाह क्या भी हा उमे अपना समझने वाल परगामी का एक न एक दिन फजीता हागा ही। स्पष्ट है कि हास्य पुट के साथ दाना दाहा म सतिहा नतिक घनि वृद्ध विवाह एव परकानामासक्ति क निषेध स सम्बद्ध है। दुर्भाग म मीड धारण करन वाला का माच विचार कर कदम उठाना चाहिए क्योंकि सखती स विवाह उनसे निए उचिन नहा। दमम उनकी पत्नी चचला बन सवती है और उनक कुल पर कटक रग सवता है। बचन की सम्भावना कम है। कयाकि स्वय लक्ष्मी तक का

१ कविधर भिलारीदास कृत वाक्य निणय—म० जवाहरनाल चतुर्वेदी, प० ८६

२ बूचहि लुभी, आधरहि काजर नकटी पहिरे बसरि ।

मुडली पाटी पारन चाह कौनी अगहि केसरि ॥

बहिरा सा पति मता कर, सो उतर कौन प पाव ।

एसी याव ह ता कह ऊधा जो हम जोग सिखाव ॥—सूरदास

३ विष के बासी उदासी तपोव्रतधारी महा त्रिनु नारी दुखारे ।

गौतम-तीर्थ तरी तुलसी भो कथा मुनि भे मुनि-बद मुखारे ॥

ह्व हैं सिला सत्र चद्रमुखी परसे पद मञ्जुल कज तिहारे ।

कौहीं भली रघुनायक जू, करना कर कानन को पग धारे ॥—तुलसीदास

४ चित पितु मारक जोग मुनि, भयो भये सुत सोय ।

फिर ह्वलस्या जिय जोतपी समुभयो जारज जोग ॥—विहारी

चाक्षत्य किसी से टिपा रही। दूसरा भाग यह है कि अभी का अनावश्यक महत् तथा प्रम व्यय है क्योंकि वह स्वभावतः चञ्चल है रहता नहीं। अतः दान भोग म वजुगी नहीं करनी चाहिए।^१ दूसरे दोहे की ध्वनि तो और भी स्पष्ट है। दूसरे की स्त्री को अपनी समझ कर अनायस्य रूप से पास गगन वात की चन्नामी निश्चित है। पराई स्त्री यदि व्यभिचारिणी भी है तब ना बुद्धिमान पुण्य को और भी मजग रहना चाहिए क्योंकि वह चाक्षत्य के कारण अपनी नार लज्जा खुवा ही चुगी है अतः दूसरा को दुःखने विवली है। इसी प्रकार अनमल विचारों वात चम्पनि पर उहाने मुन्दर हास्य का सफोजन विषा है—

पुण्य पूज देवरा तिय पूज रघुनाथ ।

कहि रहीम दोउन धन पड़ो बल को माय ॥ ११८—५० १२

जिस घर का पुण्य इधर उधर के भाङ्ग-कूट दबो-लथता तथा भूत प्रेतादि के शरणागता पर टकरा मारन वाता हो और स्त्री साक्षिण वृत्ति सम्पन्ना थी राम भक्त हा अघात दानों के विचारों म पराजित भिन्नता हा ता महस्य जीवन का मज्जा चिरकिया हो जाता है। महस्य एक उतगाडी है जो एक मी वृषभ जाडी न ही समुचित रूपण गनिमान रह सकनी है। यदि जुए के एक आर बल तथा दूसरी ओर पाडा अथवा भसा जाड दिया जाय, तो बल भम को अकेलता है और भसा बल को परिणामत चालन के वार-वार पनी मारने पर भी गाडी की चाल वही रहनी है—नीति के अटार्ड कोष। इसलिए महस्य जीवन म ममान विचार होना आवश्यक है। यदि नहीं हैं ता या तो पुण्य स्त्री जसा हो जाय या स्त्री अपने को पुण्य के अनुमार डाल ल। यही बात बड स्तर पर राजा प्रजा,^२ भक्त भगवान^३ आदि के सम्बन्ध म भी मत्य है। नीति-नत्व प्रधान गिष्ट हास्य की अत्रक निम्नलिखित दाहा म दखी जा मरती है—

जो रहीम ओछो बड़े तो अति ही इतराय ।

प्यादे सों फरजी भयो टेडा टेडो जाय ॥ ७५—५० ८

ज्यों नाचत बठपूतरी करम नचावत जात ।

अपने हाय रहीम ज्यों नहीं आपने हाय ॥ ८४—५० ९

रहिमन जिह्वा बाबरी कहि न सग्य पलाल ।

आधु तो कहि भीतर रही जूतो खात कपाल ॥ १८३—५० १८

१ दान भोगों नाशस्तिस्त्रो गतयो भवति वित्तस्य ।

यो न ददाति न भुङ्क्त तस्य नृताया गतिर्भवति ॥—नीतिगणकम् ८३

२ चिरजीवहु जारो जुगन क्यों न सनेह गम्भीर ।

कों घटि ये वयभानुजा के हलधर के वीर ॥—बिहारी

३ जो रहीम रहिओ चहै कहै चाहि के दाव ।

जो बासर को निसि यहै तो कचपची लिवाव ॥ १८८—५० १९

४ ओ३म यदग्ने स्वामह त्व त्व वा धा स्या अहम् । स्युष्टे सत्या इहाशिय ।

रहिमन कहत सु पेट सों, यों न भयो तू पीठ ।
 रीते अनरीत कर, भरे विगारत बीठ ॥ १७३—पृ० १७
 बडे पेट के भरन मे है रहीम दुख बाड़ि ।
 या ते हाथी हहरि क दिये दात द्व काड़ि ॥ १२३—पृ० १२

अद्भुत रस एव सजातीय भाव

विचित्र वस्तु को देख-सुन कर, आश्चर्यचकित होना, मनुष्य की सहज प्रवृत्ति है। शास्त्रीय भाषा म दसे ही अद्भुत रस कहत हैं। एसका स्थायी भाव विस्मय है—

विस्फारदचेतसो यस्तु स विस्मय उदाहृत ॥ —साहित्यदर्पण

विचित्र अथवा अलौकिक वस्तुएँ अद्भुत रस का आलम्बन हैं। नेत्र विस्फारण सम्भ्रम, रोमांच स्वप्न वप अश्रु करतल नाद आदि अनुभाव तथा उत्सुकता, हृष स्मृति आशाका भ्रान्ति तव आवेग आदि संचारी हैं। महाकवि दव का कथन है—

आहचरज देख सुने बाडत विस्मय चित्त ।

अद्भुत रस विस्मय धडे अचल सचरित निमित्त ॥^१

विस्मय की प्रवृत्ति सवसामाय होन के कारण अद्भुत रस का क्षेत्र भी पर्याप्त विस्तृत है। साहित्यदर्पण म आचार्य धमदत्त का मत उद्धृत करत हुए बताया गया है कि चमत्कार सम्पूर्ण रसा का आधार है। अत अद्भुत रस को मत्र रसा म प्रधान स्वीकार करन हुए आचार्य विश्वनाथ ने अपन पूवज श्री नारायण पण्डित का उद्धृत किया है—

रसे सारश्चमत्कार सवत्राप्यनुभूयते ।

तच्चमत्कारसात्वात् सवत्राप्यद्भुतो रस ॥

तस्मादद्भुतमेवाह कृती नारायणो रसम ।

रहीम जस मूक्षम द्रव्य ने अनेक घटनाआ एव तथ्या मे आश्चर्याचिन्त होकर जो दोह निवे हैं, उनम अद्भुत रस की भवक देखी जा सकती है। चारा ओर खड़ी ईंख क बीच म 'रसमर' के नीरम पीरे को दख रहीम आश्चय से पूछ उठत हैं—

रहिमन जो तुम कहत हो सगत ही गुन होय ।

बीच उलारी रसभरा रस काहे न होय ॥ १८७—पृ० १८

इसी प्रकार निम्नलिखित दाह भी विस्मय मूलक ही ह—

कागज को सो पुतरा, सटजहि मे धुलि जाय ।

रहिमन यह अचरज लखी सोऊ खेंचत वाय ॥ ३५—पृ० ४

१ बडे पेट के भरन मे है रहीम दुख बाड़ि ।

गज के मुख विधि बाहि तें दिए दात द्व काड़ि ॥

दिए दात द्व काड़ि प्रगट जग माहि दिखावत ।

मनहु निवारें दांत पेट की बिथा जतावत ॥

लघु सत्तोषी सदा सुखी बचि सब रपेट तें ।

सबहिन भारी पर परे सिर बडे पेट के ॥—राधाकृष्ण प्रयावली

२ देव रमायन—महाकवि दव—चतुर्थ प्रकाण

नैतिक अनुभूति के तीन स्रोत— लोक-तत्त्व, भक्ति एवं प्रकृति

मानव इस ससार का सबसे अधिक चेतना प्रवण प्राणी है। उसकी चेतना समाज सापेक्ष है। प्रत्येक व्यक्ति के विचार तथा संस्कार उसके वातावरण एवं प्रशिक्षण से सम्बद्ध रहते हैं। किंतु कतिपय प्राणी ऐसे भी दसे जाते हैं जो भोग में पलते हुए भी त्याग के प्रति जागरूक रहते हैं नगर में रहते हुए भी ग्राम्यजीवन के प्रति लानाथित रहते हैं। ग्रिम बनाव शृंगार से समवित हाते हुए भी महज स्वाभाविक जीवन में रुचि रखते हैं। रहीम का जीवन एवं व्यक्तित्व कुछ इसी प्रकार का था। वह उच्च अधिकारी था। राजा नवाबा के कुल में जन्म लेकर उसी वातावरण में पालित पालित था। किंतु आश्चर्य यह है कि—उस महापुरुष के काव्य में समस्त चित्रण सामान्य जन जीवन का ही है। राजसी बभ्रव विलास की भलक तक नहीं। उनके नीति काव्य का एक प्रतिगत भी नवाब और सम्राटों से सम्बद्ध नहीं है। गगन नरहरि वीरवल इत्यादि की भांति उनका एक भी दोहा भ्रवबर की प्रशंसा में लिखा प्राप्त नहीं जाता। रहीम यदि चाहते तो भ्रवबर के सम्बन्ध में कुछ भी लिखकर बाहवाही तूट सकते थे। इतना ही नहीं बल्कि युद्ध रत्ना प्रशासन प्रक्रिया इत्यादि पर भी काव्य रचना कर सकते थे किन्तु उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया जान पड़ता। कारण यह है कि रहीम जन जीवन के कवि थे। वे जन सामान्य की हितकारी नीति को जनता जनार्दन के लिए जन जन की भाषा शैली में प्रस्तुत करना चाहते थे। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि रहीम मच्च लोक-कवि थे।

लोक तत्त्व और उसके अंग

बन्धुत लोक काव्य गीत-वार्ता का अंग है जो हमारी समीक्षा प्रणाली के लिए नया मानक है। हमारे ही नहीं पश्चात्य जगत के लिए भी यह शब्द प्राचीन नहीं। लोक-वार्ता गीत अंग्रेजी के फोक-नयर्स गीत के पर्याय के लिए प्रयुक्त हो रहा है। और हम फोक नयर्स का जन्म १८४६ ई० की घटना है। ब्ल्यूम जे० थामस महान्याय न अममृत मानव समुदाय की प्रथाओं एवं भूलाग्रहा के विना इस गहन का निर्माण किया था। हम विषय का राक्षस अतिशय एसास्करोपीडिया रिटनिका में दखा जा सकता है।^१ टेंनर फजर तथा माफिया एयाति विचारका न हम सम्बन्ध में

विस्तार से विचार व्यक्त करके इस पृथक् और दृढ अस्तित्व प्रदान किया है। आप्रहृ यहाँ तक बना है कि गम्भ महादय न इस भी उमी प्रकार विनाम का दर्जा देने की वकालत की है जिम प्रकार कि अय सामाजिक विनाम के विषया की। अय लाक वात्ता का क्षेत्र नितात महत्वहीन अमभ्य मायताया स निकलकर व्यवस्थित लोक धारणाया तक विस्तृत हो गया है। डा० सयद्र क अनुमार लोक-वार्ता शब्द विनाद अय रखता है। इसक अतगत वह समस्त विचार सम्पत्ति आ जाती है जिमम मानव ता परम्परित रूप प्रत्यक्ष हो उठता है। और जिमके क्षेत्र लोक मानस हान है थ लाक मानस जिमम परिमाणन अथवा सस्कार की चेतना काम नहीं करती हाती।^१

वस्तुत लोक वार्ता तथा उमी के अग लाक-वाक्य अथवा लोक-साहित्य का सौदय, आदिम चतना के दिग्गमन म मन्त्रिहित है। नवीन गिशा सस्कार तथा सम्भ्यता की चकाचौध म प्राचीन अवधारणाएँ तथा मायताएँ नमश जजर होनी हुँ विनष्ट हो जाती है। यही कारण है कि नितात सभ्य एव सुमस्कृत समाज उस आदिम सौदय क स्वाद से वचित हाता चला जा रहा है। प्रवृत्त रूप म प्राप्त गाक भाजिया का स्वाद तथाकथित बड़े-बड़े हाटला एव वावर्चीगाना म छोकी भुनी एव तली हुट सजिया म प्राप्त नहीं हा सकता। इसीलिण उम प्रवृत्त स्वाद या आदिम सौदय क दशन क लिए हम अगिभित ग्रामीणा तथा आधुनिक सम्भ्यता की चकाचौध से दूर वम ग्रामा म जाना पटता है। कवल गावा म ही नहीं धरन जगला पहाडा और टापुआ म वमा हुआ वह मानव-समाज जा अपन परम्परा प्रथित रीति रिवाजा और आदिम विश्वासा के प्रति आम्थाशील हान के कारण अगिभित एव अप सम्भ्य कहा जाता है लाक का प्रनिनिबित्त करता है।^२ अत स्पष्ट है कि जिम जिम मान्यताया परि-पाटिया विश्वासा एव कथाया म आदिम रूप सुरभित रहता है व सभी लाक साहित्य वही जाती है। लौकिक धार्मिक विश्वास धम-गाथाएँ कथाएँ वहावर्ते, पहेलिया आदि सभी लोक-वाता क अग है।^३ साहित्य की जिम विद्याया म य तत्व विद्यमान होत है उह लोक साहित्य का सत्ता दी जाती है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी की मायता है कि जिमम चीजे लाकचित्त स सीमे उत्पन होकर सब साधारण का आन्तलित, प्रचारित और प्रभावित करती है व ही लाक-साहित्य लाक गिल्प, लाक-नाटक एव लाक कथानक आदि नामा स पुकारा जाती हैं।^४

रहीम के काव्य की लोक सामग्री

लाक-वाक्य म जिम सामग्री का प्रयाग हाता है उमे लोक-सामग्री कह सकत हैं। इस दष्टि म रहीम क नीति-वाक्य का विवरणण वग्न पर उसम लाक तत्वा क अनक प्रयोग प्राप्त होते है। एमा प्रतीत हाता है माना काई सामाय ग्राम्य परिवार

१ अज लोक साहित्य का अध्ययन—गा० मत्यद्र (द्वि० स०)—पृ० ७

२ हिंदी भक्ति साहित्य मे लोकतत्व—रवींद्र भ्रमर (प्र० स०)—पृ० ७

३ अजलोक साहित्य का अध्ययन—पृ० २

४ विचार और बितक—डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी (प्रथम स०)—पृ० २०६

का अनुभवही यशित अपन ही प्राप्त पाग के व्यक्तियों के लिए वाच्य रचना कर रहा है। प्राकृतिक वस्तु विनियोग के विफलण से तो यह तथ्य और भी स्पष्ट हो जाता है। सम्पूर्ण दोहावली का एक जादू कहा भी गया पद्यारे हमाम, उगातमान स्मरमान गुनाब लाउदी चमनी लहमुणिया पुरराज भाडफागूम, राग रग आदि राजसी वस्तुआ एव गहरी साज-गज्जाआ के दान न हाग। प्रसगत कही गतरज के प्याग परजी ग्यादि की चर्चा एक नगहा म अपवाद स्वल्प भन ही आ गई हो अथवा ममस्त वातावरण जन सामान्य का और विनायक ग्राम का वातावरण है।

मेत की डेंकुली नट की बला मुदी का रेत मेंही का बेंटना रथ कूर का माया खजूर की छाँह, रंग गन्त की गाँठ मूप की बटोर मुई का धागा बलारी का दूध, लीरे की फाँक हल्दी चून का मेत दीपक नी की काजत रट्ट की घडिया चाक की नाग बरतन की वातिय ग्ही का मथना जल-वन कर भस्म होता बरी-बरी का नीन कराना कटहल और राई भाड का भावा आग लगने पर घूरे की गरण कुल घपू का चियडा म समाय रहना दीपक का बड़ना दमडी की मेव पथ के अपत करील जाडा कामरी और पाभरी सतिन का कूप से गाना अमर बल का प्रयोग मिसरी म ग्रीम की फास आदि का सम्बन्ध लाक साहित्य म ही है।^१

रहीम को अपनी कविता के विषय तथा उनकी अभिव्यक्ति के लिए अलकरण एक अर्थ उपादन जन जन के जीवन जगत म से बिचारे जरूर आत है। वे अपने चारों ओर बिचारे ककड पथर को उठा कर इस प्रकार दाहा के आभूषण म फिट करत हैं कि, मणि माणिक्य भी मात वा जात है। अपनी गरज आप न कह जाने के प्रसंग में उठ राजा महाराजाआ का पारस्परिक गज्जानुभव याद नहीं आता याद आता है कुन-बपुआ का पराय घर जात समम लजा जाना। गम्भीर से गम्भीर व्यक्ति के हृदय के रहस्या को जान लेने के लिए राजकीय जामूसी-का विशारत का स्मरण न करके वे सामान्य कच्चे घडे और उसकी गदन म बधी गुन (रस्ती) की सहायता से गहने कूप का जल निकाल लाने की जिगा का इलेप अलकार तथा प्रश्न शली के माध्यम से कुछ इस प्रकार अभिव्यक्त करत हैं कि बात समझ म आत ही पाठक के मन की बाँध खिल उठती है—

गुन ते लेत रहीम जन मलिल कूप ते काडि।

कूपहूँ ते कहुँ होत है, मन काटू को बाडि ॥ ५०—पृ० ५

कनी सामग्री का प्रयोग परोपकार की अभिव्यक्ति में हुआ है। घडा अपन की फदे में फसा कर ही दूसरा की प्यास बुझा पाना है—

रहिमन रीति सराहिए, जो घट गुन सम होय।

भीति आप प डारि क, सब पिपाव तोय। २२८—पृ० २२

१ रहीम रत्नावली—अमग दोहा सं० २३०, २६ २६६ २४८, २७०, २७३ २१६ १६७ २०२ २०७ २०८ १७६ १७६, १६८, १३८, १५५, ११६, १२४, १३३ ८८ १०२, ७८, १६ ७०, ३६, ५०, ७, ३८

परोपकार के प्रसंग में महुँ की का वचन भी लोकानुभूति का ही प्रतिपादक है। उनकी लोकानुभूति गम्भीर से गम्भीर और व्यापक से व्यापक तथ्या को अभिव्यक्ति देने के लिए सामग्री जुगन में सब सक्षम है। पृथ्वी के उस कवि का न पाताल में घसने की आवश्यकता है और न आकाश में उड़ने की। आस-पाम के सेत-खलिहाना, बाग-बगीचा तथा घर आँगना में रहीम के लिए काव्य-सामग्री भरी पडी है—

रहिमन जग की रीति, मैं देख्यो रस ऊँच में।

ताऊ मे परतीति, जहाँ गाँठ तह रस नहीं ॥ २७३—पृ० २७

रहिमन तहाँ न जाइए, जहाँ कपट को हेत।

हम तन डारत डेकुली, सींचत अपनो खेत ॥ २३०—पृ० २३

सामान्यतया कवि, अपनी मूकम भावनाओं का अभिव्यक्तन करने के लिए पारलौकिक तत्वा का सहारा लेते हैं किन्तु रहीम भक्ति ज्ञान तथा वराम्य जैसे तत्वा की अभिव्यक्ति में भी धार लौकिक तथ्या का अवलम्ब बनाते हैं। अथ कवि अपने अलंकरण विधान के लिए कुछ असाधारण दुर्लभ तथा अछूती सामग्री खाज खान पर गव करते हैं किन्तु लोकानुरक्ति का यह कवि विगुद्ध लौकिक ग्राम्य एव गई गुजरी सामग्री का उपयोग कर काव्य को अलंकृत करता है छाज, (सूप)—छाट (हलका पटवन) गुर (गुड) खल (बिनीला एव सरमा इत्यादि से निकला पशु खाद्य) तथा डोल दमामा जसी हल्की फुल्की लोक वस्तुओं का गम्भीर विषयाभिव्यक्ति में विनियोग, रहीम के नीति-काव्य की प्रमुख विशेषता है—

रहिमन राम न उर धरे रहत विषय लपटाय।

पसु खर खात सवाद सों, गुर गुलिपाए खाय ॥ २२५—पृ० २२

रहिमन यह तन सूप है लीज जगत पछोर।

हसुवन को उडि जान व, गरुए राखि बटोर ॥ २१६—पृ० २२

रहिमन छोटे नरन सों, होत बडो नहि काम।

मडो दमामो जात नहि, कहुँ चूहे के चाम ॥ १८१—पृ० १८

इतना ही नहीं रहीम न बडे से बडे राज राजाधिराजा अकबर के पश्चात्कर्ती जहाँगीर, ग्राहजहा तथा रामकृष्णादि पर लिखी अयोक्तिया एव स्तुतिया आदि में भी लोक सामग्री का ही उपयोग किया है—

रहिमन अब वे विरछ कहें जिनकी छाँह गम्भीर।

बागन बिच बिच देखिअत, सँडड-कज करीर ॥ १६३—पृ० १६

रहिमन को कौड का करे, ज्वारी घोर सवार।

जो पत राखन हार है, मालन चाखनहार ॥ १७५—पृ० १७

मुनि नारी पासान ही कपि पसु गुह मातग।

तीनों तारे राम जू, तीनों मेरे अग ॥ १४८—पृ० १५

इसी प्रकार अथ अनक दोहा म लाक सामग्री का विनियोग हुआ है। अति न करन के प्रसंग म संजने के अत्यधिक फूलन का परिणाम,^१ प्रारम्भ की विगडो व न बनने के सप्रसंग म फटे दूध स मरुपन निक्कलन का प्रयाग,^२ आपनि काल म मित्र के शत्रु बन जाने के लिए पूव के आचल आच्छन स मुरभित दीपक का अपन ही हाथ स बुभा देने के उदाहरण का उपयोग^३ आदि अनक घटनाएँ एव प्रसंग रहीम के काय म लाक तवा की प्रचुरता के प्रमाण है। नट का कुण्डला मारकर बठना,^४ मुक्क खात हुए नीद का घाना,^५ बिना मूल की अमरबल का फलना^६ चने की रोटी का परासा जाना,^७ सभी लाक तत्व है। अधिक क्या, उहान ता गावा म आग लगत तथा कूड या घूरे के ढेरा पर चढ जाने तत्र की घटनाआ का विनियोग अपन नीति कयना म किया है। यहा तक विचारे जूत और चाक तक का मुक्क नयी किया गया। प्रगतिगीन लेखक भी घूर लसे और आग इत्यादि का सम्भवत इस प्रकार व्यक्त न कर सने हागे—

दुरदिन परे रहीम कहि दुरथल जयत भागि ।

ठाणे हूजत घूर पर जब घर लागत आगि ॥ ६८—पृ० १०

रहिमन चाक कुम्हार को मणि क्यू न देइ ।

छेद मे डडा डारि के चहै नाँद ल सेइ ॥ १७६—पृ० १८

रहिमन जिह्वा बावरी कहिग सरगपताल ।

आपु तो कहि भीतर रही, जूती खात कपाल ॥ १८६—पृ० १८

प्रचलित भाव, अधविश्वास तथा रुद्धिया

सात-काय के अतगत प्रचलित भावा, अधविश्वासा, रुद्धिया मायतायो सकल्पनाआ एव कुण्डाआ की यथातथ्य अभिव्यक्ति को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। अत उपवास त्याहार सस्वार, रीति रिवाज यहाँ तक कि जादू-टाना इत्यादि की निष्पत्तुप अभिव्यक्ति सात-काय का अंग माना जाता है। समाज जिन जिन भावनाआ स परिचायित है अथवा उस जिन जिन अच्छी-बुरी मान्यताआ स गति प्राप्त होनी है उन सभी का अट्टिम एव अनलवृत्त बणन सात-काय की अनिवाय विरोधता है। डा० रघुवग का कयन है कि सात अभिव्यक्ति साहित्य की सौन्दर्याभिव्यक्ति नहा है। वह तो जीवन की प्रवाहित धारा की उत्तममयी तरंग है जो जीवन के महज यथाय म अविच्छिन्न रूप म बधी है।^१ अमीनिण उहाने अयत्र जीवन रुद्धिया व माय स्वच्छ जीवन की धाराआभिव्यक्ति का भी सात-काय का अंग स्वीकार किया है।^२

रहाम क नाति-शास्त्र म दूग प्रकार क अनक तत्व दगन का मिनत है। अधम म अत्रिन विन-जाग क प्रसंग म उहाने चारी करक हाता रचन का उल्लेख किया

१ स ७ रहीम रत्नावली—आशा म० १६० १०६, ६० ८६, १०७ ७, १०३

२ धीरेइ बर्मा विरोधाक—हिन्दी अनुगीतन—लेख लोकअभिव्यक्ति की भावभूमि।

३ रात्रिय अभिनयन अथ (हि० सा० सम्मेवन तिली प्रयोग) लेख साहित्य और लोक

है।^१ लाक म होलिका दहन के समय ग्वाट-गटा ना, जूझा-पहिया इत्यादि कुछ भी चुराकर जलान तथा क्षणिक मनाविना म अपन ही समाज की हानि करन की प्रथा प्रचलित है। रहीम न इस प्रथा का सम्बन्ध अपन के धन स जाडकर पात्र प्रचलन पर करारा ध्यय किया है। 'पुष्प पूजें देवरा तिय पूजें रघुनाथ' व प्रसंग म भी ऐसा ही ध्यय है।^२ नरकप्रद भगहर प्रदंग न पहुँचन व भय स हाथ-पर बटवाकर, मरन की प्रतीगा म कागी म पडे-पडे नरक भागत रहना^३ तथा बाघ के भरव का अगन जम म घादमगार बाघ बनना^४ इत्यादि इमा शृंगला की मायताएँ है।

कवि-समय

कवि-समय एक ध्यान्वय पद है जिसका अभिप्राय है कविया की परम्परा गन मायताएँ, जो अपन मूल रूप म रूढि बन गई हैं। कवि शिक्षा व अन्तगत कवि-समय का अर्थ है कवि समाज म प्राचीन परम्परा से मानी धाती हुई गान और परिपाटियाँ।^५ इन रूढि मायताभा की सयता असयता पर विचार किय बिना कवि उट्ट निरन्तर प्रयोग करत चले गाय हैं। हमारे समाज म भी ऐसी अनेकानेक मान्यताएँ व्याप्त हो गई है। आरक्ष्य की बात यह है कि इनम स अधिकाग असत्य है परन्तु फिर भी लाक एक साहित्य की परम्परा उनक माध्यम से भावाभिव्यक्त करती चली आ रही है। चकोर का अगार चुगना, चातक का मात्र स्वाति की बूद पीना, स्वाति-बूद का केत, सीपी तथा सपमुख म गिरन मे श्रमग कपूर, मोती एव विष बन जाना, चरन के वृक्ष पर सपों का लिपट रहना रात्रि म चकव चकवी का वियोग हो जाना भवानी का बाँक होना, हस का नार-क्षीर विवक इत्यादि एमी ही अनेक असत्य अथवा अध-मत्य किन्तु परम्परागत कविजनानुमादित मायताएँ हैं। इन्ही को कवि-समय की सना दी जाती है।

कवि-समय की शास्त्रीय पृष्ठभूमि

कवि-समय का सबप्रथम प्रयोग राजगोखर ने अपन ग्रथ 'काव्य मीमासा में किया था। यद्यपि राजगोखर से पूव आचार्य वामन ने काव्य समय शब्द का प्रयोग किया था^६ किन्तु वह छन्द याकरणादि स सम्बन्धित प्रतिष्ठित परिपाटी के रूप म था, कवि-समय के अर्थ में नहा। अर्थ अनेक काव्यशास्त्रिया ने तो दश-काल विराधी तथा व उल्लेख को दाप माना है।^७ किन्तु काव्य मीमासा के १८व अध्याय के आरम्भ म राजगोखर न कहा है कि, 'अशास्त्रीय (गाम्भ्रवहिभूत) अलौकिक (लोक में अगात) तथा केवल परम्परा में प्रचलित जिम अर्थ का कवि लोग वणन करत है वह कवि समय

१ से ४ रहीम रहनावली—श्रमग दाहा म० २३१, ११८ २२८, ११०

५ हिन्दी साहित्यकोश भाग १—पृ० २३०

६ काव्यालकार सूत्र ५ १

७ काव्यालकार ४२ काव्यादा ४३

है।^१ उहान कवि-समया के सगभण एक दजन भेदापभेत् किण है जिह मूनत आकाण पाताल तथा भूमि सम्बन्धा के आधार पर स्वयं, पातालीय और भौम की मना दी गई है और उह पृथक् पृथक् अध्याया में सोनाहरण वर्णित किया गया है। सम्मृत^२ एव हिदी^३ के परवर्ती आचार्यों के प्रेरणा-स्रोत एव आधार राजगोवर ही रह हैं। वेदाव ने 'कवि प्रिया' के चतुर्थ प्रभाव में कवि नियमा के अंतगत कवि-समया का भी सोनाहरण उल्लेख किया है—

कोकिल को कल बोलिबो, बरनत है मधुमास

वरपा ही हरपित कहै, बेकी बेसयदास ॥—कविप्रिया ८ १४

रहीम के कवि समय

रहीम के नीति काव्य में इस प्रकार के अनकानेक कवि समयों का उपयोग किया गया है। रहीम के काव्य की विशेषता है इन कवि-समयों का साभिप्राय एव सप्रयोजन उपयोग। नीति के अभिव्यक्तीकरण में यह विनियोग इतना सटीक है कि कवि समय की सत्यता असत्यता का ध्यान आय बिना पाठक कथ्य का हृदयगम करता हुआ नीति-कथन के रस में आपाद मस्तक निमग्न हो जाता है। कदाचित् इसीलिए कवि समयों से सम्बद्ध दोहे समाज में अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित हैं। अपने कथन की पुष्टि के लिए हम कुछ दोहे उद्धृत करते हैं—

जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसय ।

चदन विष यापत नहीं, लिपटे रहत भजय ॥ ७४—पृ० ८

धन रहीम गति दीप की, जल विष्टुरत जिय जाय ।

जियत कज तजि अन्त बसि, कहा भौर को जाय ॥ १०४—पृ० ११

भावो था उनमान को, पाडव बनहि रहीम ।

तदपि गौरि सुनि वांछ है, बरू हैं सभु अजोम ॥ १३५—पृ० १४

मुकता कर करपूर कर चातक जीवन जोय ।

ये तो बडो रहीम जल, ब्याल-बदन विष होय ॥ १८७—पृ० १५

कवि समय प्रयोग — एक विशेषता

इन दोहों को ध्यान से देखने पर ज्ञात हो जाएगा कि रहीम ने कवि समयों का न केवल प्रयोग किया किन्तु उनसे विषयानुकूल काव्य भी लिया है। उनके काव्य में मात्र कवि रूढि-पालन के लिए कवि समय प्रयुक्त नहीं हुए हैं। नीति निबचन में उनका विनियोग एक पथ दो काज सिद्ध करता है। यही लक्ष्य लोक-तत्त्वा के विषय में है। लोक-तत्त्वा का विनियोग भी नीति-कथन के लिए है और प्रचुर मात्रा में है।

१ काव्यमीमांसा, व्याख्याकार—डा० गंगासागर राय (प्र० सं०) पृ० १६८

२ काव्यानुशासन अध्याय १ तथा काव्यकल्पलतावृत्ति—प्रस्ताव १

३ कवि प्रिया—प्रभाव ४

लोकतत्वाभिव्यक्ति के विभिन्न प्रकार

काव्य में लोकतत्व के प्रयोग विभिन्न प्रकार से हो सकते हैं—

- १ वणनात्मक प्रयोग
- २ कथात्मक प्रयोग
- ३ उदाहरणात्मक प्रयोग
- ४ निष्कर्षात्मक प्रयोग

वणनात्मक प्रयोग वहाँ होगा जहाँ, लोकतत्वा विनोपत ग्राम्य वस्तुआ, आचारा और सम्कारा इत्यादि का वणन केवल वणन के लिए, कवि की अपनी रीम-वीम व अनुमार हा । कथात्मक वणन के अन्तगत लोक-कथाआ अथवा लोक-वात्ताआ का वणन आमगा । अणन तथ्य की पुष्टि के लिए लोकतत्वा का उदाहरण के रूप में विनियाग, उदाहरणात्मक प्रयोग हागा । उनसे कतिपय निष्कर्ष निकालना निष्कर्षात्मक कहा जायगा । रहीम के काव्य में लोकतत्वो का विनियाग अन्तिम दो प्रकार में है और उनमें भी विनोपत निष्कर्षात्मक रीति से ।

लोकपरक भाषा

भाषा लोकतत्वा का एक प्रमुख आधार है । अतिगम्य अलङ्कृत कृत्रिम तथा शास्त्रीय भाषा लोकतत्व की मूल भावना से मेल नहा खाती । लोकतत्व की सारगर्भित अभिव्यक्ति के लिए सहज, स्वाभाविक भाषा का प्रयोग आवश्यक है । ऐसी भाषा जिसमें लोक मानस प्रतिबिम्बित होता हा इसके लिए सामान्य जन जीवन सम्बन्धी दैनिक व्यवहार की शान्तवली किम्बन्ती मुहावरे तथा स्थानीय प्रयोग आदि का आना आवश्यक है । रहीम की भाषा में इस प्रकार का रग भी है और इन रग ने उनकी सहज सुपमा मण्डित साहित्यिक शान्तवली के सौ दय का विकास ही किया है ह्रास नही । याम वर बरेह,^१ अड न वीड रहीम कहि,^२ कागद को मा पूतरा,^३ निठुरा आगे रायबो, आसु गारिवा खीस,^४ घरती की सी रीत^५ घूर घरत निज सीस^६ भार भीव के भार मे^७ भीत गिरी पावान की अरानी वहि ठाम,^८ धिड सक्कर जे खात^९ 'बुआ गनावन लोग',^{१०} पडा प्रेम का^{११} 'गरए राखि बटोर,^{१२} 'साई जगीरै खाय'^{१३} इत्यादि प्रयोग लोकपरक ही हैं । एक ग स्थल एस भी हैं जहाँ इन लोक प्रयोगा का विम्ब अत्यन्त भास्वर तथा स्वर अत्यन्त कठोर तथा व्यग्य अत्यन्त तीव्र है—

रहिमन चाक फुम्हार को मागे दिया न देइ ।

छेद मे उडा डारि क, चहै नाद ल लेइ ॥ १७८—पृ० १८

रहिमन जिह्वा बावरी कहिय सरग पताल ।

आपु तो कहि भीतर रही जूतो खात कपाल ॥ १८६—पृ० १८

१ से १३ रहीम रत्नावली—१३ २०, २५, ८१, १०६ १०७ १३२, १३६ १६६, १६५ २०६, २१६, २५१

पिछले दोहा की अस्खडता में तारतम्य का दर्शन सहज ही किए जा सकते हैं। जहाँ कहा मुहावरा और लोकोत्तियाँ का प्रयोग है, वहाँ साव्य भाषा में भी मिठास और मादक है—

पात पात को सींचिबो, धरी-धरी को सौन।

रहिमन ऐसी बुद्धि को, बहो बरगो कोन ॥ ११७—५० १२

लोकतत्व सम्बन्धी निष्कर्ष

इस विवरण से स्पष्ट है कि रहीम लोक-जीवन के कवि थे। उन्होंने अपने काव्य प्रणयन में साव्य सामग्री और लोक भाषा का प्रयोग किया है। लोक मानस के भावा, लोक जीवन की मायताओं, लोक-वाणी के स्वरा तथा लोक विभूतियाँ का प्रयोगों को दखत हुए रहीम का नीति-काव्य का लावतात्विक अध्ययन निश्चित ही सुखद एवं शिक्षाप्रद है।

रहीम के नीति-काव्य का दूसरा प्रधान स्रोत—भक्ति

भारत की धर्म भावना विश्वविख्यात है। धर्म में जितना प्रमुख स्थान भक्ति का है, उतना न तो योग का है और न साधना का। इसलिए जन साधारण ने धर्म और भक्ति को प्रायः एक ही समझ लिया है। गाँवा में किसी व्यक्ति को तनिक अधिक धार्मिक भाव सम्पन्न सच्चरित्र अथवा सत्संगप्रिय देखकर भगत जी की उपाधि से विभूषित कर लिया जाता है। तात्पर्य यह है कि निरक्षर अथवा अक्षरसंगर समाज में भी भक्ति तत्व का समझा जा चुका है। दूसरी ओर ऊँच-ऊँचे सन्त महात्मा दार्शनिक एवं विपश्चित भक्ति तत्व के निरूपण का प्रयत्न निरन्तर करते चल आ रहे हैं। वेदा के ज्ञान-कर्म-उपासना से लेकर उज्ज्वल नीलमणि के भक्ति रस की व्याख्याओं तक भक्ति को न जान कितने प्रकार से विभूषित एवं वर्णित किया गया है। दक्षिण के रामानुज मध्व एवं निम्बार्क आदि जगत प्रसिद्ध दार्शनिक आचार्यों एवं बल्लभ-विद्वानाँ गणमाय धर्म धुर-धरा से लेकर मूर तुलसी, हरिऔध एवं मधिलीशरण गुप्त आदि कवियों ने भक्ति पर विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार किया है। साहित्य-शास्त्र में यद्यपि भक्ति का एक भाव मान कर देव विषयक रीति के साथ सम्बद्ध किया गया है, किन्तु परवर्ती आचार्य रूप गोस्वामी ने भक्ति रसामृत सिंधु एवं उज्ज्वल नीलमणि नामक ग्रन्थ द्वय में भक्ति का पूरा रस की गरिमा से अभिव्यक्त कर दिया है। उनके अनुसार साक्षात् भगवान् कृष्ण की भक्ति स्वतंत्र रस है—रसरज है। कृष्ण उसके अलम्बन भक्ता के समक्ष में नदी-तीर्थ एवंान्ताँ उदीपन अथ-पल्ल लीला-गान नृत्य कण्ठावरोध, आदि अनुभाव तथा मति र्प्याँ वितर्काँदि व्यभिचाराँ है। आज भी समस्त गाडीय समाज में भक्ति का रसरज माना जाता है।

भक्ति और उसके रूप

भक्ति की व्यापकता को दखत हुए, उसकी किसी परिभाषा की आवश्यकता नहीं है। किन्तु परिभाषा करनी ही पड़े तो भक्ति की सबसे बड़ी परिभाषा होगी—

इष्टदेव के प्रति सब समर्पण पूरा आसक्ति । 'सी एक सत्य को विद्वाना न विभिन्न प्रकार से कहा है । शाण्डिल्य मुनि ने उस सा परानुरक्ति ईश्वर ' कह कर परिभाषित किया है और नारद मुनि ने उस 'सा त्वस्मिन् परम प्रेमरूपा'^१ बताया है । परवर्ती कविया का बल भी इसी श्रोत है । गास्वामी तुलसीदास का कथन उल्लेखनीय है—

जाने बिनु न होइ परतीती बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती ।

प्रीति बिना नहिं भगति दिदाई, जिमि खगपति जल क चिक्नाई ॥

प्रेम प्रथित यह भक्ति भाव जिम प्राप्त हो जाता है उसका जीवन सफल है । भागवतकार ने भगवान के श्रीमुख से कहाया है कि, "ह उद्धव ' जिम प्रकार घषकती हुई आग लकड़िया के बड़े म बड़े ढेर को जलाकर राख कर दती है वस ही मेरी भक्ति, समस्त पापरागि को पूणतया जरा डालती है । योग, ज्ञान अनुष्ठान, पाठ तप तथा त्याग मुझे प्राप्त करने म उतने समय नहीं जितनी दिना तिन बढन वाली अनय प्रेममयी मेरी भक्ति ।"^२ इसीलिए मना ने भक्ति की महिमा का भूरि भूरि गायन किया है—

कबिरा हरि की भगति बिन भिग जीमण ससार ।

धूब केरा धौल हर, जात न लाग बार ॥—कवीर

ध्याम न कयनी काम की करनी ३ इक सार ।

भक्ति बिना पडित क्या, ज्यों खर चदन भार ॥—हरिराय व्यास

सेवा अह तीरथ भ्रमन, फल तेहि कालहि पाप ।

भक्तन सग छिन एक मे परम भक्ति उपजाय ॥—ध्रुवदास

यह श्रेयमयी परम प्रेम रूपा भक्ति आन्तरिक एवं बाह्य आघात पर दा प्रकार की हाती है । अपनी अपनी मायताआ के अनुसार प्रेयस नुमाज चदन हवन प्राणा योग और जप आदि के द्वारा इष्टदेव की उपासना करना भक्ति का बाह्य स्वरूप है । प्रभु प्रेम जीव दया मानव-कल्याण एवं च्ष्ट चितन म अनुरक्ति भक्ति का आन्तरिक रूप है । ज्ये भक्ता की भावना के आधार पर नाना रूपा म विभाजित किया जाना है । भक्ति की आन्तरिक भावना का जल दुग्धादि द्रव पत्थ से उपमित कर सकत हैं । थाली लोटा गिलाम घट एद परखनती इत्यादि जिस भी पात्र म द्रव को डाला जायगा वह उसी का आकार ग्रहण कर लेगा । ठीक इसी प्रकार प्रभु प्रेम भक्त की आन्तरिक भावना के अनुसार विभिन्न रूप ग्रहण करता रहा है । भक्ता ने अपने प्रभु का स्वामी-सखा पुत्र पति आदि अनेक रूपा म स्मरण किया है । इसीलिए भक्ति ने लस्य-मम्य दामय एव मधुर आदि अनेक रूप हा गए हैं । किन्तु वास्तविक महत्व उन रूपा का नहीं आधारभूत भावना का है अनुराग का है उक्थता का है । भगवान के प्रति अनुरक्ति जिनकी अग्रिक गगी उक्थता उनकी तीव्रतर तथा भक्ति उनकी ही

१ शाण्डिल्य—भक्ति सूत्र अध्याय १ सूत्र स० २

२ नारद—भक्ति सूत्र सूत्र स० ३१

३ श्रीमदभागवत ११ १४ १६ २०

दन्तर हाती जायगी। आचाय गुन का कथन है—“प्रमी प्रिय व स्वल्प का जितना जाने रहता है उतन म मग्न होकर भी उसका और जानन के लिए बीच बीच म उचलित हाता रहता है पूण दान का यह उत्पन्ना श्रेष्ठ भनि का लक्षण है।^१

रहीम का भक्ति भाव

श्रेष्ठ भक्ति की काव्यात्मक अभिव्यक्ति का दृष्टि से हिन्दी का भक्तिनाल सावभौमिक स्तर पर भी अपना सानी नहा रफता। दक्षयण से रहीम का जन्म उम समय हुआ था जबकि सम्पूर्ण भारत म भक्ति भावना अपन अनुननीय वैभव व साथ स्थापित हा चुकी थी। अक्बर की उत्तर धम नीति अनुकूल गिणा मस्सृत भाषा का जान गगादि सदकविया की मगति तथा तुलसी आदि सन्ता की मित्रता न उस उत्तर चेता मुसलमान के हृदय म संगुण भक्ति की वही धारा प्रवाहित कर दी जिमक प्रवाह म तत्कालीन हिन्दू समाज व वग से बहा जा रहा था। फुत्कर बरवो मस्सृत श्लाका तथा कतिपय छन्दो म व गणश तथा हनुमान आदि हिन्दू देवी-देवताका की स्तुति कर चुके थे। इस सामग्री को देखकर काई भी निष्पत्त निवाल सकता है कि रहीम के हृदय म ब्रह्मवी भक्ति का अघाह एव निश्छल पारावार तरगायित था। उसम धमगत सकीणता का वही स्थान न था। भक्ति भाव भरे उनक हृदय से जो छन्द निर्मित हुए उह दान यह आभास ही नही जाना कि य किसी मुसलमान की रचनाएँ है। यहां कारण है रहीम रचित छन्द पूजा श्लाका तथा उपासना स्तोत्रा तक म सम्मिलित किय जात है।^२ प० बलदेव उपाध्याय न तो अपन २५० पृष्ठा क विविध विषयात्मक इनाक एकनन म प्राथना दीपक से एक और बवल एक श्लाक उद्धत किया है और वह रहीम का है।^३ भक्ति काव्य की सफलता का इससे बडा प्रमाण और क्या हा सकता है? वस्तुत रहीम विभिन्न वर्मा भारतीय समाज क लिए आदेश बन सकत है। धमनिर्पेक्षता के वतमान युग म ता उनके काव्य का महत्व और भी अधिक है।

जहाँ तक नीति काव्य म भक्ति भाव क समावय का प्रश्न है उनक दसन हम रहीम ढाहावला क प्रथम ढाहा से ही होने लगत है। अच्युत चरण तरगिनी म भगवती गगा का थडा से सम्बन्धित यह दोहा जन प्रसिद्धि के अनुमार रहीम का अन्तिम छन्द था। जिमकी रचना उन्हान मृत्यु गय्या पर की थी। स्मरणीय है कि मृत्यु गय्या पर पड मर तुलसी आदि महाकविया की भी छन्द रचनाएँ प्रसिद्ध है।

१ सूरदास—आचाय रामचन्द्र गुनल (स० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र)—भक्ति का विकास—पृ० २२

२ सूक्ति सुधाकर—(गी० प्र० गारखपुर)—पृ० ७३ ७४ तथा २८

३ सूक्ति सुधावती—प० बनव उपाध्याय मथुरा १८८६ वि०, पृ० २४४

रहीम के भक्ति-भाव की विशेषता

भगवती जाह्नवी की अनन्त श्रद्धा से सम्बन्धित उक्त दोहू के अतिरिक्त, रहीम दाहावली के नीति के दोहा में, कोई अन्य दोहा किसी देवी-देवता की स्तुति-उपामना से सम्बद्ध नहीं है। जहाँ जहाँ भी इस प्रकार के भाव आये हैं, वे सभी भगवान राम या कृष्ण के प्रति निवेदित हैं। यही उनके भक्ति भाव की प्रथम विशेषता है। इस निवेदन में रहीम के हृदय की उमड़ती श्रद्धा तल्लीनता तथा भक्ति भावना अपने उज्वलतम रूप में प्रस्फुटित है। भक्त मुलभ अनुराग के साथ कविजनोचित विदग्धता, उनकी भक्ति के आकषण का द्विगुणित कर देती है। रहीम राम और कृष्ण जैसे अष्ट-देवा के हाते हुए किसी से डरने की आवश्यकता नहीं समझते। सज्जना से तो क्या दुजना से भी नहीं डरते। ज्वारी चार-लवार उनका बिगाड ही क्या मक्केगे जबकि इन सबका मरदार, उनका इष्टद्व स्वयं है। इस लिए उन्हें पौराणिक आश्रय प्राप्त है। 'भगवान (कृष्ण) ने जुआरी गजुनी से पाण्डवा की रक्षा की थी। ग्वाल-वाला की गाय का ब्रह्मा जी ने चुराया तब भगवान ने ही उनको छुड़ाया था। लवार दु गामन से द्रोपदी की रक्षा भी श्रीकृष्ण ने ही की थी।' रहीम ने इन सभी प्रसंगा का जिस चतुराई के साथ दाहे में भरा है वह गागर में सागर भरने की कहावत चरिताथ करता है। यह लाधव तथा विदग्धता रहीम के भक्ति-काव्य की दूसरी विशेषता है—

रहीमन को कोड का कर ज्वारी चोर लवार ।

जो पत राखन हार है माखन चाखन हार ॥ १७५—पृ० १७

मुनि नारी पापान ही कपि पनु गुह मातग ।

तीनो तारे राम जू, तीनो मेरे अग ॥ १६२—पृ० १६

प्रथम दाहे में जो लाधव और विदग्धता भगवान कृष्ण के प्रसंग में है वहीं दूसरे उदाहरण में भगवान राम से सम्बन्धित है। भगवान राम ने पापाणी अहिल्या, पंगु हनुमानानि तथा अकुलीन गुह निपादादि का उद्धार किया था। रहीम कहते हैं य तीनो ही अलग-अलग अर्थान अकर्मणत्व (पापान) ज्ञानहीनता (पंगुव) तथा अकुलीनता (यवन जानि) मेरे शरीर में हैं फिर मेरा उद्धार क्या नहीं करत? कहने की आवश्यकता नहीं कि भक्त हृदय का यह विदग्धतापूर्ण दय निवेदन, हिंसा और मन्डूत के किसी भी भक्त कवि में कम आकषक नहीं।

रहीम की भक्ति भावना की तामरा विशेषता है, उसकी नीति समन्विति। रहीम ने अयाय भक्तिकालीन कवियों की भांति अपने काव्य को काने आत्म निवेदन या

१ रहीम रत्नावली—(टिप्पणी) पृ०—७८

२ इसी भाव पर रहीम का श्लोक भी है—

अहिल्या पापान प्रकृति पंगुरासीत कपिचम ।

गुहो मूच्चाडाल स्त्रितयमपि नीत निजपदम ॥

अह विलनात्म पंगुरपि तवार्वादि करले ।

त्रियाभिन्नाडालो रघुवर नमामुद्धरसि किम ॥—रहीम रत्नावली

राम कृष्णादि के रूप वणन तक सीमित नहीं किया उद्दान अपन भक्ति भावा का नीति कथना से समर्पित करके व्यक्त किया है। इसीलिए उनका दोहे भक्ति से सम्बद्ध होत हुए भी नीति के ही दाह हैं। रहीम का विश्वास था कि सामान्य म सामान्य व्यक्ति भी हार्दिक प्रेम के बल पर, महान से महान व्यक्ति का वग म कर सकता है। इस तथ्य को उनका भक्त हृदय नारायण के वशवर्ती होने का तक देकर गा उठा है—

रहिमन मनहि लगाय क, देखि लेहु किन कोय ।

नर को बस करिबौ कहा, नारायण बस होय ॥ २१४—पृ० २१

रहीम काल के सम्मुख श्रौपधिया की प्रभावहीनता सिद्ध करत हुए अनाथ के नाथ हरि द्वारा रक्षित बन पादपो और खग मृगा का उदाहरण प्रस्तुत करत हैं।^१ मूल के सीचन से सम्पूर्ण शाखा-पत्रादि के अधाने एव फलने फूलने की यात्रा दिनाकर एक प्रभु के साधन करने पर बल देत है। पुरुष पुरातन की बधू का उदाहरण देकर धन सम्पत्ति का चाञ्चल्य व्यक्त करते हैं।^२ व नयन वाणा से वचन का श्रेय केवल भक्ति का ही दत्त है।^३ दीनबधु से बधुता स्थापित करा सकने में समय दिव्य दीनता की सराहना करत नहीं अधात।^४ सभी लोग समय दशा कुल देखकर सम्मान करत हैं। किंतु भगवान के दरबार में ऐसी अव्यवस्था नहीं है। व अपने दीन एव अनाथ भक्ता का महारा स्वयं है—

समय बसा कुल देखि क सब करत सनमान ।

रहिमन दीन अनाथ को, तुम बिन को भगवान ॥ २५२—पृ० २५

रहीम की भक्ति भावना की चौथी और सबप्रमुख विशेषता है उसका पौराणिक आधार। व अपन नीति-कथना के लिए सदाव रामायण महाभारत तथा पुराणा से उदाहरण प्रस्तुत करत हैं। य उदाहरण उनकी श्रद्धा भक्ति निष्ठा तथा हिंदू अभिरचि के प्रतीक हैं।

असमय पडन पर आवश्यकतानुसार मांगन का औचित्य प्रतिपादित करत हुए वे लक्ष्मण द्वारा पारंगत मुनि से नाज मांगन का उल्लेख करत हैं।^५ विपत्ता पडने के प्रसंग में उन्हें चित्रकूट धाद आता है।^६ थोड़ा काय करने पर भी बडा को अधिक श्रय प्राप्त होता दय श्रीकृष्ण द्वारा गावधन तथा हनुमान द्वारा (सतुबधन के समय) अनेक पवता के धारण करने की घटना उद्धृत करत हैं।^७ भावी का अपन हाथ में न होना सिद्ध करने के लिए श्रीराम के कपट मृग के पात्रे जान का प्रमाण दत्त हैं।^८ रामायण प्रसंगा व समान महाभारत प्रसंगा से भी नितर प्रमाण प्रस्तुत करता रहीम का कर्म चिन्तक नहीं। पुष्पाक्ष के सम्बन्ध में भीम की रमाई तथा दुर्दिन पडन पर पाण्डवा द्वारा पाँच विभिन्न रूप धारण करने का उल्लेख विगन प्रसंगा में ही चुरा है। पुराणा के प्रसंग रामायण महाभारत प्रसंग में अधिक हैं। शमा के प्रसंग में विष्णु

१ मे ६ रहीम दोहावली (प्रसंग) गहा म० २१० १, २२, २८ ६४ १० ५६, ६२, ७७

के हृत्प म भृगु की लात,^१ वष्ट तथा दानादि के प्रसंग म दामन श्रवतार^२ सम्मान असम्मान क प्रसंग पर गवर विप पान तथा राहु गीप-उच्छेदन,^३ अपन गात्र के उत्कप के प्रसंग म वागह श्रवतार द्वारा भूमि उत्खनन^४ बडा की गवहीनता के प्रसंग म गेप द्वारा भार वहन,^५ परोपकार के प्रसंग म गिवि और दधीचि का आलेखन^६ आदि अनक पौराणिक गाथाएँ रहीम के भक्ति भाव की प्रतीक है। वामनावतार क्या का ता एकाधिक प्रसंग म विनियोग हुआ है—

रहिमन विगरी आदि की, बन न खरचे दाम।

हरि बाड़े आकाश लों, तऊ यावन नाम ॥ २१०—पृ० २१

रहिमन मांगत बडन की, लघुता होत अनूप।

बलि मख मांगन को गए, परि बावन को रूप ॥ २१६—पृ० २१

रहिमन याचकता गहे, बडे छोट हू जात।

नारायन हू को भयो बावन आंगुर गात ॥ २१८—पृ० २१

अन उठ मक्ता है कि पुराणादि की घटनाआ का नीति-परक विनियोग गाम्भीर्य भक्ति परम्परा म क्या लिया जाय ? हमारा विनम्र उत्तर है कि सगुण निगुण दधी श्वना इत्यादि के प्रति जहाँ भी श्रद्धा एव निष्ठा हीगी, वही भक्ति का समावेश हो जायगा। रहीम के उक्त प्रसंगा म श्रद्धार साहित्य की वान सोचना भी अश्रद्धा होगी। अत श्रद्धापूण ध्यान क कारण ये सभी प्रसंग भक्ति भावना क अतगत हैं।

इनके अतिरिक्त रहीम की भक्ति भावना की एक पाववी विशेषता भी है। यह विापता उन दाहा म दखी जा मरती है जिनम नीति मे अधिक श्रद्धा निष्ठा, वराम्य एव प्रेम के दान हात हैं—

अमर बेलि बिन मूल की प्रतिपालत है ताहि।

रहिमन ऐसे प्रभुहि तजि, खोजत फिरिए बाहि ॥ ७—पृ० १

अजन दियो तो फिरकिरी, मुरमा दियो न जाय ॥

जिन आंखिन लीं हरि लख्यो, रहिमन बलि बलि जाय ॥ १६—पृ० २

रन बन याधि विपत्ति मे रहिमन मर न रोय।

जो रच्छक जननी जठर, सो हरि गए कि सोय ॥ १२६—पृ० १६

रहिमन घोखे नाव से, मुख मे निक्से राम।

पावन पूरन परम गति, कामादिक के घाम ॥ १६८—पृ० २०

राम नाम जायो नहीं जायो सदा उपाधि।

कहि रहीम तिहि आपुनो जनम गेबायो बाति ॥ २३८—पृ० २३

इन दाहा म ध्यवन तल्लीनता निष्ठा और वि-वाम भक्त हृदय की सब स बड़ी निधि के मबम मूयवान सम्पत्ति है। यह निधि अपन मून रूप म रागात्मक होती है।

रम की रागात्मक अनुभूति ही भवित है। किन्तु आशायों क बुद्धि बभव क चक्कर

१ म ६ रहीम वनावली—ताहा म० ५१ ११८ १८३ १६१ १७१ २०८

७ चिंतामणि—आचाय रामचन्द्र गुवन—पृ० ७

समान है जा डारी खीचन पर अपन न दूर अघात उपर आकाश मे चला जाता है और डील छोचन पर (स्मरण इत्यादि न करन अथवा न कराने वालो के) पास आ जाता है। कहत है कि यह दोहा रहीम न उस समय कहा था जत्र दगन करने जाने पर नाथ जी के मन्दिर के पट बन्द कर दिय गय थे और लौट आने पर स्वय नाथ जी प्रमाद लेकर प्रकट हुए थ। चौथ दोहा का सम्बन्ध मयुरा-गमन से पूव श्रीकृष्ण द्वारा गोवधन धारण तथा बाद के मुधि विस्मरण न है। इसम रहीम की निधनता भी व्यग्य है। पाचवें दोहे म ग्राह द्वारा प्रमित हाथी (रहीम) की रक्षा वाना स्वभाव छोडकर, अय तथाकथित सहयोगा हाथिया जमा स्वभाव ग्रहण करन का व्यग्य है। भाव वही है कि प्रभ न श्व दीन-दुखिया की सहायता करना छोड दिया है। छठा दोहा प्रभु की निष्कुरता पर व्यग्य करता है। उहान रहीम को आर्जपित करन के उपरात अपन दशना स वचित कर दिया है। कहत है कि यह दोहा श्रीनाथ जी के मन्दिर के पट बन्द होने के अक्सर पर कहा गया था। भक्तजनोचित सखा मुलम इन योगा के समान ही दाम्यजनोचित दीन भाव स भी रहीम न इष्टदेवा की उपासना की है—

दास्य भक्ति

गहि सरनागति राम की भवसागर की नाव ।
 रहिमन जगत उधार कर, और न कछु उपाव ॥ ८६—पृ० ५
 मुनि नारो पापान हो कपि पसु गुह मातग ।
 तीनो तारे रामजू तीनो मेरे अग ॥ १४४—पृ० १२
 रहिमन करि सम बल नहीं, मानत प्रभु की धाक ।
 दात दिखावत दीन ह्व, चलत घिसावत नाक ॥ १७०—पृ० १७

शांत भक्ति

एक साध सब मध, सत्र साध सब जाय ।
 रहिमन मूलहि सौंचबी फूलहि फलहि अघाय ॥ १६—पृ० २
 रहिमन घोखे भाव से, मुट से निकसे राम ।
 पावत पूरत परम गति, कामादिक को धाम ॥ १६६—पृ० २०

शृ गार भक्ति

मनसिज माली की उपज कही रहीम नहि जाय ।
 फल इयामा के उर लगे फूल ज्याम उर आय ॥ १३६—पृ० ११
 प्रीतम छवि ननन बसी पर छवि कहीं समाय ।
 भरो सराय रहीम लखि पथिक आप फिरि जाय ॥ १६८—पृ० १२

१ थोरे ही गुन रीभते विसराई यह दानि ।

तुमहू काह मनो भये, आजु कालि के दानि ॥—विहारी

भक्ति के इन प्रकारों के अतिरिक्त भक्ति प्रथा एवं वाक्या म सबसे अधिक चर्चा नवधा भक्ति की रही है। श्रीमद्भागवत^१ गीता^२ तथा मानस^३ इत्यादि ही नहीं वेदोपनिषदों^४ म भी नवधा भक्ति के संकेत मिलते हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि सभी शास्त्रों की नवधा भक्ति में परिपूर्ण एकता नहीं है। यहाँ तक कि श्रीमद्भागवत तथा मानस में भी पर्याप्त अंतर है। फिर भी भागवत के श्रवण वीतन स्मरण पादसेवन, अचन, बदन आत्मनिवदनादि की मायता सर्वत्र है। रहीम के नीति-ग्रंथों म प्रायः इन सभी से सम्बन्धित दोहे प्राप्त होत हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

कीर्तन

रहिमन धोखे भाव से, मुल से निकसे राम ।

पावन पूरन परम गति, कामादिक को धाम ॥ १६६—पृ० २०

स्मरण

त रहीम मन आपुनो कीहा धार चकीर ।

निशि बासर लाग्यो रहे कृष्णचन्द्र की ओर ॥ ६०—पृ० ६

बदन

रहिमन मनहि लगाय के दलि लेहु किन कोय ।

नर को बस करिबो कहा नारायन बस होय ॥ २१४—पृ० २१

अचन

राम नाम जायो नहीं, भई पूजा में हानि ।

कहि रहीम क्या मानिहैं, जम के बिकर कानि ॥ २३८—पृ० २३

पाद सेवन

कहि रहीम जग मारियो नन बान की घोट ।

भगत भगत कीउ बचि गये चरन कमल की ओट ॥ २८—पृ० ३

गुण कथन

भेत्ताभेत्ता एवं साधनापाया म रहीम व भक्ति भाव का सबसे बड़ा आधार है गुण-कथन। रहीम को जहाँ भी जिस किसी प्रसंग म अवसर प्राप्त होता है अपने प्रभु व गुण कथन स कभी नहीं अघात। भगवान की लीनबन्धुता पर ता उनका विश्वास और भी अतल है। इसीलिए उहाँन एवं नहीं अनक दाहा म लीन व मलता के गुण गाय हैं—

जे गरीब पर हित करें ते रहीम बड लोग ।

कहा मुदामा चापुरो कृष्ण मिताई जाग ॥ ६८—पृ० ७

१ श्रीमद्भागवत ७.५.२०

२ श्रीमद्भगवद्गीता ८.८.१४ १.१५ तथा ११.२८.४० ८१ आदि।

३ रामचरितमानस अरण्यकाण्ड

४ ऋग्वेद १.१५.० १.१५.१ १.१५.८४ आदि।

दीन सवन को लखत है दीहैं लख न कोय ।
 जो रहोम दीन लख दीन बहु सम होय ॥ ६५—पृ० १०
 मांगि मुकरि न को गयो, केहि न त्यागियो साथ ।
 मांगत आगे मुख लह्यो, ते रहोम रघुनाथ ॥ १४६—पृ० १५
 सतत सपति जान के, सब को सब कुछ देत ।
 दीनबधु बिनु दीन की, को रहोम सुधि लेत ॥ २६२—पृ० २५

भक्ति सम्बन्धी निष्कर्ष

निष्पत्त यह है कि रहोम का काव्य अत्यन्त आस्थावान भावुक भक्त हृदय की सृष्टि है। अपने युग की प्रतिनिधि भावना के समान ही, उनका काव्य वैष्णवी श्रद्धा से आत प्रान है। भगवान राम-कृष्णादि की मगुण भक्ति बोधिका को नीति की पुनीत एव लोनापयागी जलधार से अभिसिंचित करने वाले, इस दुस्लाम धर्मावलम्बी कवि की जितनी मराहना की जाय, थोड़ी है। उन्होंने अपने काव्य के लिए भारतीय लोक जीवन एव हिंदू धर्म-ग्रथा स, जिस प्रकार की सामग्री का सचयन किया है, वह उह भारतीय समाज का प्रतिनिधि कवि बनाने म पूण सगम है। जब जब भी भक्ति एव लोक काव्य की नीति मयी चर्चा होगी उनका नाम अग्रिम पविन म अक्षित किया जायगा। उनका काव्य चरित्रहीनता, नीरसता, निराशा अनैतिकता, असफरता, लाक-विमुखता नास्तिकता सकीणता, धमाधता एव अभातीयता के मूलाच्छन् के लिए राम बाण है।

अनुभूति का तीसरा प्रधान लोन—प्रकृति

प्रकृति मानवीय अनुभूति का विशेष क्षेत्र है। वह मानव की चिर सहचरा है। मनुष्य ने जब सवप्रथम इस घरा धाम पर अपन निदियारे लाचन खाले तभी से उम प्रकृति का सानिध्य प्राप्त है। सच बात ता यह है कि प्रकृति हमारे आदि पुरप स भी पूव विद्यमान थी। उसी के सम्पक स मानवीय चेतना का विकास हुआ। उपा, सध्या पुष्प निभरादि की अवस्था के कारण पर सोचत सोचन वह 'दागनिक' बन गया। उनके किसी अनंत शक्ति सम्पन निमाता की कल्पना कर उसने आस्तिक भाव तथा धर्म को जन्म द डाला। इसी प्रकार प्राकृतिक वस्तु-व्यापारा के सस्लेपण विस्लेपण की जानकारी ने उम वनानिक बना दिया। उसकी अनुकृति की चष्टाआ से कलाकार न जन्म लिया और रूप की रीक खीक स कवि न। मानवीय विचारा की सव प्राचीन थाथी वदिक ऋचाए इस रीक खीक स आपूरित हैं। उप सूक्त ऋषिया क प्रकृति विषयक तरल भाव का प्रमाण है। कगचित इसीलिए उहान अपने काव्य को पावस क मधा की उमडती धुमटती धारा कहा था और अपने परम प्रभु का कवि—कविमनीपी परिभूस्वयम्भू।^१

१ ऋग्वेद ७ ६ १

२ यजुर्वेद (शुक्ल) ४० ८

प्रकृति और उसका विस्तार

विभिन्न दशम ग्रथो म प्रकृति क विभिन्न रूपा की चर्चाएँ हैं। साध्य दशम म तो ये चर्चाएँ और भी विस्तृत हैं।^१ किन्तु उन सत्रम न उलभन हुए हम मानत है कि प्रकृति का अर्थ है—प्रभु की प्रकृष्ट कृति। अपने का क्षेत्र म रखत हुए हम इसे दो भागा म विभाजित कर सकते है। प्रथम—पुष्प प्रकृति तथा द्वितीय—पुरपेतर प्रकृति। श्रीकृष्ण जी ने गविन का विभाजन इसी प्रकार किया था। उहाने एक और अपनी समस्त मेना कौरवा को प्रदान की थी तथा दूसरी और अपना पवन दम पाण्डवा का। मानव से इतर जितना भी ससार है वह सब सहज रूप म प्रकृति-सज्ञा स पुकारा जाता है। इसम ननी पहाड, भरन आकाश पाताल सूर्य चंद्र नीहारिका अग्नि वायु पशु पक्षी फूल, पात सभी समाहित हैं। काय म प्रकृति वणन म तात्पर्य इही मानवतर प्रकृत पदार्थों के प्रयोग से है। आदि कवि से लेकर अद्यावधि इन पदार्थों का प्रयोग देग विष्णु के सभी काव्या म निरंतर रीति से होता चला आ रहा है। डा० रघुवग तथा डा० किरण कुमारी गुप्त आदि ने अपने प्रकृति काव्य विषयक ग्रंथो म इन तथ्या पर विस्तार स प्रकाश डाला है। डा० गुप्ता न ईश्वर की कारीगरी का प्रकृति तथा पुष्प की कारीगरी का कला^२ बतात हुए प्राचीन कविया के द्वारा प्रकृति के सुन्दर असुन्दर सभी रूपा को काव्य म स्थान देने की विस्तार से चर्चा की है। इस रीति-रिवाज म नतिर गिना ग्रहण करन की परम्परा भी पयाप्त प्राचीन है श्रीमद्भागवत के आधार पर तुलसीदास^३ एव नन्ददास^४ आदि ने पयाप्त प्रकृति काव्य की रचना की है।

रहीम क नीति काव्य के तीन ही प्रधान स्रोत है— प्रकृति साक और भक्ति। इनम भी अधिक अंग प्रकृति का है। रहीम रत्नावली म प्रकाशित २७७ दोहा म आधे से अधिक दोहा म प्रकृत उपकरण प्रयुक्त हुए हैं। अपने काव्य कलेवर के इतने बडे अंग को प्राकृतिक उपकरण स परिपूरित करन वाल कवि थोडे ही हाग। उनके समस्त नीति-काय का अनुशीलन करन पर हम नाना प्रकृत पदार्थों क प्रयोग लिखाई देत हैं।

रहीम-काव्य के प्राकृतिक उपकरण

सागर-ननी नगर-ग्राम नीर क्षीर चंद्र-नखत शीत घाम बदरी-बरील, विष चदन उजैरा अधरा दवान बराह मणि मौक्तिक चंद्र चकोर पशु-पक्षी, पेड-पत्ती, बर-बर शीघ्र गरल जल मोन फन-भून कप-तडाग दादुर मोर घर घरा काक पिव,

१ साध्य दशम—कपिल मुनि (प० श्रीराम काजपथी की व्याख्या)—पृ० ३१, ६३, ६६ इत्यादि।

२ हिंदी काव्य मे प्रकृति चित्रण—डा० किरणकुमारी गुप्ता (स० २००६ प्रयाग) प्रकृति स अभिप्राय विषयक शीपक

३ मानस (कित्कि-घा काण्ड) वर्ण एव गरद प्रसंग।

४ नन्ददास प्रयावली—भाषा दशम स्व-प' प्रसंग।

भौर-कज, पक उन्धि, धरती आकाश, रज गज, मृग मृगया, नाद गीष्म हिम हत कुल कमल, दादुर-कोकिल, पछा-बल, करोंग कटहर, हीरा राई दूध मक्खन, नभ-तारे, खेत पत्, मभधार भार वन-उपवन, गिरि भूमि, भीत पत्थान, ढही मही, नभ-सर मानस हस, सफरी-शक, विष अमृत, माघ-पलाश घातक-व्याल, कपि मातंग, श्वेत श्याम, चीता-बाघ क्य-मरिता, धनुष-कमान, भस्म-बलाय, तुरग अग, चन्द्रोप्य चद्रास्त, रन-वन डार-पात, मृग-वराह सहृ-मजन मज्जा र्धिर घी शक्कर हार-पहाड वाट चाट (स्वान की), तम-कज्जल, चूहा चाम, निशा दिवस, हिम अगार, उखारी रमभरा पवन धल मूला वषा, जल जलज, दुग्ध मद्य, मम्पुटी घडियाल हाड माम मोती मानुष बल पिपील खीरा फाक हन्दी-चून खग मृग, घना मग्य सूरज-तारे साप समीत डेकुली खेत, तम उद्योत मँहदी रग, मूखे मर दिवा मसि, नीर-पत्थान बहरी बाज सिंघ विन्दु—व्यादि वस्तुप्रो न सम्बद्ध वणन रहीम के काव्य म प्रकृति की स्थान की बहानी स्वय कहत हैं ।^१

प्रकृति—नतिक उद्भावनाओं का स्रोत

रहीम के काव्य म इन सभी वस्तुआ का उपयोग, अथ अधिकांश कविया की भांति कवन सौन्दर्य चित्रण तथा भाव उद्दीपन के लिए हा नहीं हुआ है। उन्होंने अपने विषय के साथ न्याय करते हुए, प्राकृतिक तत्वाँ का अधिक प्रयोग नीति-कथन के लिए किया है। कहाँ ता के प्राकृतिक घटनाआ अथवा तत्वो को देखकर, उनसे नतिक सिद्धांत की उद्भावना कर लते हैं और वही अपने नीति-कथना के उदाहरणस्वरूप प्रकृति का उपस्थित करते हैं। उनके समस्त नीति-काव्य म प्रकृति का उपयोग विगेषत इही दो प्रकारों से हुआ है। प्रकृति के विविध क्रिया-कलापा को देखकर उनसे नैतिक संदेश प्राप्त करना, रहीम के बुद्धि शैभव का कमाल है। बिना जड मूल का अमर

१ रहीम रत्नावली—अमग दाहा सं ४३ ५४ ५६, ६५, ६८ ७० ७४, ७७ ८३ ८५ ९० ४१ ३८ ३३ ४४, ४५, ५० ८३, ९८ १०१ १०४ १०५ १०६, १०७, १०८ ११०, ११३ ११५, ११७, ११८, १२४, १२५, १२६, १३० १३२ १३३ १३५, १३७ १३६, १४८, १४० १४७, १४३, १४४, १४७ १४८ १४९, १५०, १५१, १५४, १५५ १५७ १५८, १५९ १६० १६१, १६३, १६४, १६६ १६७ १६९, १७६ १८१, १८५ २७१, १८७ १८९ १९५ २०१, २०२ २०३, २०४, २०५, २०६ २०७ २०८, २१०, २२३, २२४, २२८ २२९, २३०, २४७, २४८, २५७ २६३ २७४, २७५, तथा २७७।

बेल को फलते देख व, सभी क पालन करने वाले प्रभु का आश्रय अपनाने की प्रेरणा प्राप्त करते हैं।^१ सूर्य चन्द्रादि ज्योति पिण्डों को एक ही आभा से उज्ज्विल एव अस्त होत हुए देखकर उन्हें मुख दुःख म एकसा बने रहने की स्मृति हो आती है।^२ एक ही दीप स कथ की सम्पूर्ण वस्तुएं प्रकाशित होते दल उहे दगा क दा दीपा के हाते हुए हृदयस्थ प्रेम न छिपने की युक्ति सूझ जाती है।^३ गंगा के जलधि म मिलन पर गंगा नाम लुप्त हो जाने पर उहाने घर पहुँचने पर प्रभुता के नष्ट होने की सीख मिल जाती है।^४ इस प्रकार के न जाने कितने तथ्या से उनके नीति-वाच्य का ताना बाना बुना गया है। साथ ही इन निष्कर्षों का अपना एक आकषण भी है जा मन पर सीधी चाट करता है—

मयत-मयत भाखन रहे, दही मही विलगाय ।

रहिमन सोई मोत है भीर परे ठहराय ॥ १३४—पृ० १४

रहिमन घरिया रहट की त्यो ओजे की डोठ ।

रोतिहि सम्मुख होत हैं भरी दिख्ताव पीठ ॥ १३५—पृ० १८

जिस प्रकार प्राकृतिक घटनाओं को देखकर उनसे नतिक निष्कर्ष निकाले गये हैं उसी प्रकार अपने नतिक निष्कर्षों के लिए प्रकृति को उदाहरण के रूप म प्रस्तुत किया गया है। प्रकृति वणन का यह रूप ऊपर विवेचित रूप की अपेक्षा और भी अधिक प्रयुक्त है। छोट छोटे व्यक्तियों के उचित अनुचित कार्यों के पीछे बड़ा का हाथ रहा करता है। चकोर को अगारे पचाने की शक्ति शशि के सयोग स प्राप्त है।^५ अपने पास धन धायादि का सहारा होने पर ही मित्र रक्षा करत हैं। अबु के बिना अनुज का हित रवि भी नहीं कर पाता।^६ विधाता द्वारा बड़ बनाय हुए व्यक्तियों के दूषण पर ध्यान न देकर ससार उह वडा ही समझता रहता है। चंद्र दुबला-बुबडा रहने पर भी नशत्रा स बडा गिना जाता है।^७ फारसी की कहावत है 'खतारा बजुर्गा गिरफतन खता अस्त'। अर्थात् बडा की त्रुटिया को पकडना भी एक त्रुटि है। जीवन मर्यादा के अनु कूल ही हाना चाहिए। मयादा उल्लघन करत ही उसका विनष्ट होना स्वाभाविक है। जल, तडागादि म उतना ही ठहरता है, जितने म उसके किनारे मर्यान्त हैं। अधिक हो जान पर वह बाहर बह कर पथभ्रष्ट हो जाता है^८ इत्यादि इत्यादि। प्रकृति-समर्थित उनक य नाति-वचन इतन सरल प्रभावशाली तथा प्रसिद्ध हैं कि बच्च-बच्चे की वाणी पर रहते हैं—

जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसग ।

चंदन विष व्यापत नहीं लिपटे रहत भुजग ॥ १३६—पृ० ८

परम्परा निर्वाह, मौलिकता एव सूक्ष्मता

रहाम द्वारा प्राकृतिक वणन म प्रकृति क नाना बन्धु-व्यापारा का विनियोग हुआ है। कहा य वणन नितान परम्परागत हैं और कहा एकत्र म मौलिक। भ्रमर वन हम, चानक मयूर स्वानि आदि स सम्बद्ध मायनाएँ भारतीय समाज म चिर प्रचरित हैं।

माय ही इनस हरजार्दपन एकनिष्ठता पवित्रता, आदि की शिक्षा लना भी बार्द नर् वान नही, किन्तु रहीम इन प्राचीन तथ्या का भी कुछ इस प्रकार व्यक्त करत हैं कि उनके प्रभाव म नवीनता आय बिना नहा रहती । उनका ढग कुछ अपना ही है—

वह चितवन और कछू जिहि बस होत मुजान ।

परम्परागत निवचना म भी उनकी मौलिकता के दखन हान है । छाटा की गोभा बडा के ससग स हानी है वड भी छाटा के सम्पक स लाभान्वित हाते है । दमडी की मेख से बध सहसा क अन्व की गाभा एसी ही है ।^१ अन बडा का प्राप्त कर छाटा का त्याग दन म बार्द बुद्धिमानी नही । सु^२ का काम पडन पर मुर्द ही उपयोगी सिद्ध होगा तलवार नही यद्यपि वह उसम बर्द गुनी बडी और नुकीली है ।^३ वड हा या छाट सभी स सावधान रहन की आवश्यकता है । कुछ लाग बिनम्र हाकर, मुक्कर चलत हुए भी चाट कर जात ह । चीता चार और बमान का भुनना चाट का कारण होना है ।^४ चाट के अक्सरा स सावधान रहने हुए अपने सम्मान की रक्षा करत रहना चाहिए । मानी और मनुष्य आदि की आव (पानी) और मान उज्जा इन्नादि उतर जान पर रङ्ग ही क्या जाता है—

रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून ।

पानी गए न ऊररे मोती मानुष चून ॥ २०५—५० २०

इम प्रकार क अन्वय कथना की सूची बडी लम्बी है । कथ्य मामग्री म प्राचीनता होत हुए भी निष्कप की नवीनता स्पष्ट है । नवीनता के साथ माय प्रकृति-प्रयोग की सूक्ष्मता उनके प्रकृति सम्बन्धी अनुभूति की विशेषता है । उहने प्राकृतिक दृश्य क्रियाआ एव व्यापारा का सूक्ष्मता स दखा है उस पर मनन किया है और पुन अनुभूति प्रवण चतना स उसे नीति के सिद्धांता पर घटाया है । मेंहनी घाटने वाले क पारआ क साल हान से परोपकार की प्रेरणा, रहीम की सूक्ष्म दष्टि का परिचायक है ।^५ निशाकाग मच द्रमा की छटा किस मोहित नही करती किन्तु वही चद्रमा दिन म भी लिवार्द पड जाया करता है । क्या उम समय भी बार्द उमकी ओर आकर्षित होता है ? निश्चित ही रहीम जसे विरग सूक्ष्मदर्शी उसे दन्त हैं और शिक्षा प्राप्त कर पुकार उठत ह—

सपत भरम गेवाइक हात रहत कछू नाहि ।

ज्या रहीम सति रहत है दिक्स अवासहि माहि ॥ २६३—५० २६

वही-वही य बणन सूक्ष्म म सूक्ष्मतम हाने हुए एकदम अशरीरी वस्तुआ स सम्बद्ध हा गय ह । छाया ऐसी हा अशरीरी वस्तु है—

गो रहम मन हाथ है तो तन बहु बिन जाहि ।

जत म जो छाया परे बाया भोजत नाहि ॥ ७६—५० ८

प्रकृति की इसी सूक्ष्म अशरीरी सामग्री से जग की रीति का वणन देखिए—

रहिमन जग की रीति में देखो रस ऊँच मे ।

ताहू मे परतीति, जहाँ गाठ तँह रस नहीं ॥ २३७—पृ० २७

प्रकृति के पत्रों पुष्पा फूला फला को सूक्ष्मता से देखना और उनसे नतिक प्रेरणा ग्रहण करना उनके बाह्य रूप आकार को देखकर मोहित हो जाना ही प्रकृति का अधिक योग्यता की अपेक्षा रखता है। सभी न खीरा देता है तरागा है खाया है बिना उसकी गहराई में सूक्ष्मता से पठ करके तिमिलिखित तथ्यों की अभिनयवित् कितने कवि कर पाय है—

खीरा सिर तँ काटिए मलियत नमक लगाय ।

रहिमन करए मुखन का, चाहियत इहे सजाय ॥ ४५—पृ० ५

रहिमन प्रीति न धीजिए जस खीरा न कीन ।

ऊपर से तो दिल मिला भीतर फाके तीन ॥ २०७—पृ० २०

प्रकृति वणन के विविध रूप

डा० श्यामसुन्दरदास के अनुसार कविया का प्रकृति वणन बहुत बृहत् मत्ता वृत्तिया भावनाया और विचारो पर निर्भर करता है।^१ इस कारण प्रकृति वणन के अनेक रूप हो जाते हैं। सामान्यतया प्रकृति वणन की समीक्षा करते हुए कतिपय पापका के अन्तगत विचार किया जाता है। इन्हें, आलम्बनात्मक उद्दीपनात्मक पृष्ठधारात्मक अलंकारणात्मक उपदेशात्मक परिगणनात्मक सख्यात्मक, मानवीकरण आत्मक अयाक्यात्मक प्रतीकात्मक भयात्मक रहस्यात्मक प्रकृत्यवणनात्मक आदि नाम दिये जाते हैं। सभी कविया के प्रकृति-वणन में ये सभी रूप समान सौम्य के साथ वणित नहीं होने। मुक्तककार की अपेक्षा प्रबंधकार को इन रूपों के वणन का अधिक अवसर प्राप्त होता है। महानाव्य का तो यह एक तत्व ही गिना जाता है। स्पष्ट है कि रहीम के मुक्तक काव्य की अपनी सीमा है। वे नीति के कवि हैं प्रकृति के नहीं। किन्तु ऊपर गिनाये गये कतिपय प्रमुख रूपों का व्यवहार हम रहीम के नीति-काव्य में भी खोज सकते हैं।

आलम्बनात्मक प्राकृति वणन

जहाँ कवि प्राकृति वणन केवल प्राकृतिक दृश्याएव घटनाया के लिए ही करता है वहाँ प्रकृति वणन आलम्बनात्मक होता है। यहाँ कवि का उद्देश्य निरतिष्ठ रूप में मात्र प्रकृति वणन ही होना है। इस प्रकार के सत्रस सुन्दर उदाहरण सस्कृत कविया और बिरोपत आदि कवि वामोक्ति एवं महाकवि कालिदास के काव्य में प्राप्त होते हैं। हिन्दी में रामनरेश त्रिपाठी के तथा पतञ्जी के प्रकृति चित्रण में, आलम्बनात्मक रूप अधिक आँखा उभरा है।^२ रहीम का उद्देश्य प्रकृति चित्रण को

१ साहित्य-सौचन—डा० श्यामसुन्दरदास (छन्द म०)—पृ० ८२

२ दमिए—पवित्र (मण काव्य) तथा वीणा-मालव गुजन आदि का कविनामों।

नतिक अनुभूति के तीन श्रोत

बस प्रकृति चित्रण के लिए प्रस्तुत करना नहीं था। अतः इस प्रकार के चित्र उनके वाक्य में नाम मात्र का ही है फिर भी एक दो उदाहरण प्राप्त हो सकते हैं। जहाँ अयाक्ति मुखरित नहीं बल्कि आलम्बनात्मक रूप उभरता प्रतीत होता है—

दादुर मोर किसाल मन लग्यो रहे धन माहि ।
रहिमन चातक रटनि हूँ सरवर को कछु नाहि ॥ ६३—पृ० १०
दोनों रहिमन एकते जो लौं बोलत नाहि ।
जान परत हूँ काक पिक्, ऋतु बसत के माहि ॥ १०१—पृ० १०

उद्दीपनात्मक प्रकृति वर्णन

मानव हृदय के प्रेम, वात्सल्य घणा, आश्चर्य वर्णना इत्यादि भाव निरस प्रकृति-चित्रण से उद्दीप्ति को प्राप्त होता है वहाँ उद्दीपनात्मक प्रकृति वर्णन माना जाता है। सयोग वियोग के शृंगारिक क्षेत्र में इस प्रकार के प्रकृति वर्णन का विषय भव है। सूर की गाविया द्वारा कहा गया— 'पिय विनु नागिन काली रात', देखियत कालिंदी प्रति कारी' मधुवन तुम कतरहत हरे, इत्यादि पद उद्दीपनात्मक प्रकृति के सुंदर उदाहरण हैं। नीति शास्त्र में शृंगार के सयोगवियोगादि का अवसर अत्यन्त सीमित होने के कारण रहीम दोहावनी में उद्दीपनात्मक प्रकृति वर्णन की संख्या थोड़ी ही है। निम्नलिखित दोहा में इस प्रकार के प्रकृति चित्रण का आम्वाद लिया जा सकता है। यहाँ रजनी मृदुता मलौनापन तथाहाक आदि हमारे भावों के उदाहरण हैं—

रहिमन रजनी ही मली पिय सो होय मिलाप ।
छरो दिवस कहि काम कौ रहिवौ आपुहि श्राप ॥ २२१—पृ० २०
नन सलौन अघर मृदु कहि रहौम घटि कौन ।
मोठो भाव लौन पर, अर मोठ पर लौन ॥ ११०—पृ० ११
कहा करौ बकुष्ठ ले कल्प वच्छ की छाह ।
रहिमन दाक सुहावनो, जो गल प्रीतम बाह ॥ ३८—पृ० ८

पृष्ठधारात्मक प्रकृति वर्णन

किमी भाव छटना या व्यापार विषय के वर्णन करने में पूर्व जब कवि वानावरण निवारण के लिए प्राकृतिक उपकरणों को पृष्ठ भूमि के रूप में प्रस्तुत करता है वहाँ पृष्ठधारात्मक प्रकृति-वर्णन कहा जाता है। प्रिय प्रवास महाकाव्य के अन्त में सगौं का श्रीगणेश इमा प्रकार के प्रकृति-वर्णन से हुआ है। सस्त्र-कविया न नाति कथना की पृष्ठभूमि में प्रकृति को बहुत ही सुन्दर रूप में वियस्त किया है। कश्मीरी कवि दामान्तर गुप्त मञ्जरी के स्वभाव के सम्बन्ध में यह कहना चाहते हैं कि वे जन्म एवं स्वभाव में ही परोपकारी होते हैं। परन्तु इस कथन की पृष्ठभूमि में वे बिना किसी

पन की आकाशा के उदित हान बाल इद्र धनुष का वणन करत है—

मण्डयितु वियदुदयति पुरदूतधनुर्विनव फलवाञ्छाम ।
अनपेक्षितारमकाय परहितकरणग्रह सता सहज ॥^१

आचाय क्षेमद्र इस विधा म और भी पदु है ।^२ स्वय भतृ हरि ने इस प्रकार क अनव श्लोक रच है ।^३ रहीम क नीति काव्य म प्रकृति विषय की यह विधा पुष्कल रूप स प्रयुक्त हुई है । रहीम न प्राकृतिक घटना व्यापारा से अपन नीति-बचन के लिए मुदर पृष्ठभूमि तयार की है । तरवर फल नहीं खात सरोवर स्वयमेव पानी नहीं पीत । दसी प्रकार परोपकारी जीव सम्पत्ति का सचयन दूसरा क ही हिताय करत है । जलहान क्वार क बोध बादल वृधा ही गरज-गरज कर अपनी विगत श्रावण भादो मास की स्थिति की लकीर पीटत है धनी पुरुषा का निधन होने पर पिछले गीत गाना स्वाभाविक है । दही मयने पर अय सब तत्वा द्वारा सहयोग छोड दिए जाने पर भी मक्खन अन्त तक साथ बना रहता है । मित्र वही है जो विपत्ति म थन म भी पृथक् न हो । इन नभी म प्रकृति को पृष्ठभूमि म रखकर तव्य प्रस्तुत किय गय है—

तरवर फल नाह खात हैं सरवर पिपाहि न पान ।
कहि रहीम परकाज हित, सपति सचहि सुजान ॥ ८८—५० ६
बोधे वादर क्वार के जो रहीम घहरात ।
धनी पुरुष निधन भये करें पाछिली बात ॥ ९९—५० ६
मथत मथत माखन रहे दही मही बिलगाय ।
रहिमन सोई मीत है भीर परे ठहराय ॥ १३६—५० १४
कदली सीप भुजग मुल स्वाति एक गुण तीन ।
जसी सगत बठिए, तसोई फल दीन ॥ २२—५० ३
कौन बडाई जलधि मिलि गग नाम भौ धीम ।
केहि की प्रभुता नहीं घटी, पर घर गये रहीम ॥ ८३—५० ५

अलंकारात्मक प्रकृति वणन

मानवीय चेतना का सम्भार सौंदर्य-गज्जा का मूल वारण है । मनुष्य अपन का गुत्तरतर बनान की दृष्टि स विभिन्न प्रकार क उपकरण का धारण करता चला आया है । य उपकरण न अलंकार कहान ह । वाग्बी की गुत्तरतर करन क निष्क्रिय चमत्कारमयी गन्ध-योजना का प्रयाग किया जाना है उम भा अलंकार कहत है ।

१ कुट्टनीमतम (अनु० अत्रिदेव—१९६१ वाराणसी) श्लोक १०, २, पृ० २०२

२ ह्याद गणकस्य रच प्रजास्ताप कृपालो पवनस्य वेग ।

परोपकार करणारतानां महाजनाना सहज स्वभाव ॥—क्षेमद्र

३ स्वाया सागरगुणितमध्यपतित तमोवित्त जायते ।

प्रायेणापममध्यमोत्तमगुण समगो दहिनाम ॥—भतृ हरि

अनुप्रास, यमक उपमा रूपक तथा दृष्टान्तादि गमे ही अलंकार है। अलंकारों के उपकरण जब प्रकृति के प्राण से घन जाते हैं, मयवा जहाँ पुष्प-मृता चन्द्र-मूयादि प्राकृतिक तत्वा का प्रयोग उपमा रूपकादि की सामग्री सचयन के लिए होता है वहाँ प्रकृति वणन को अलंकरणामक कहा जाता है। यह विधा काव्य की चिर प्रचलित विधाओं में से है। युग युगान्तर से सभी कवि यमक प्रयोग करते चल आये हैं। रसमय न अनेक दाहा को अलंकरण सामग्री प्रकृति के प्राण से चुनी है। अतः निम्नलिखित उद्धरण अलंकरणामक प्रकृति वणन के अन्तर्गत समाहित हैं—

रहीम राज सराहिए सति सम मुखद जो होय । २०४—पृ० २०

रहीमन रोति सराहिए जो घट गुन सम होय ॥ २०८—पृ० २०

जो रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय ।

धारे उजियारे लगे, बने अंधेरो होय ॥ ७७—पृ० ८

जो रहीम गति दीप की, भुत सपूत की सोय ।

बे उजरे तेहि रहें, गए अंधेरो होय ॥ ७८—पृ० ८

उपदेशात्मक प्रकृति वणन

प्राकृतिक घटना-व्यापारा से नैतिक उपदेश प्राप्त करने की प्रवृत्ति पर्याप्त प्राचीन एवं सावभौमिक है। आल कवि वट मयव ने स्वीकार किया था कि प्रकृति उमक लिए माता प्रेम्िका एवं उपदेशिका आदि सब कुछ है। वेणुपनिषत् आदि ग्रन्थों की परम्परा से हाना हुआ यह रूप शीमदभागवत में अत्यन्त विकसित हो गया है। तुलसी नेदण्डम आदि से लेकर पत जी तक ये काव्या से प्रकृति से प्राप्त उपदेशों का सम्मेलन किया जा सकता है। प्रकृति साक्षेय इन उपदेशों का ही उपदेशात्मक प्रकृति वणन का सना दी गई है। रहीम के काव्य में प्रकृति के उपदेशात्मक रूप के दर्शन कुछ कम नहीं होते। कहा —“ह स्वाति न तन की बूद मसगनि के प्रभाव की उपदेशिका प्रतीत हानी है” तो कहीं फला में लगे तस्वर परापकार का मन्त्र प्रदान करते हैं।^१ बेर और कर का सग अनमन भनी के परिणामा का दिग्दर्शन करता है^२ और घोड़े जन में तटपती हुई मछली घट उद्यम और बने खन बाल गहम्व की दशा का आभाम दना है।^३ तात्पर्य यह है कि प्रकृति के नानावस्तु-व्यापारा का रहीम ने उपदेशात्मक रोति से प्रयुक्त किया है। यम प्रकार के अधिकांश उपदेश एवं निष्कर्षों में निश्चित ही एक विचित्र आनयण है—

बड़े पेट के भरन को है रहीम दुख नाहि ।

पाते हाथिहि हहरि के दिव दाति द काडि ॥ १२३ पृ०—१०

परिगणनात्मक प्रकृति-वर्णन

कभी-कभी कवि था ही पत्तियां प्रकृति के विभिन्न उपनरणा की सूची गिना देता है। उनका साक्षात् चित्र समुपस्थित करना उमका उद्देश्य नहीं होता। इस प्रकृति वर्णन का परिगणनात्मक प्रकृति वर्णन कहा जाता है। यद्यपि यह रूप न तो प्रभावशाली है और न उत्कृष्ट किन्तु फिर भी प्रायः सभी कवियों का कृतियां प्रकृतियों में अनाधिक मात्रा में दर्शन का मित्र जाता है। प्राचीन सूफी कवियों ने तो ना भर कर लम्बी लम्बी तालिकाएँ प्रस्तुत की हैं। मानस तब में एम वर्णन देगे ना सक्त हैं। आधुनिक युग के प्रथम गद्यांश प्रिय प्रवास में भी एम प्रकार के विस्तृत स्थल प्राप्त हैं। कदा-कही तो वस्तु परिगणन का धुन में हरिदास जान के वस्तुएँ भी गिना देते हैं जो वर्णन के बालावरण में उपन नहीं देती। रहीम के नाति काव्य में एम प्रकार के अवसर प्रायः नहीं हैं। वस्तु परिगणन सम्बन्धी दोहे सायास खोजने पर ही दृष्टिगोचर होते हैं। निम्नलिखित पवित्रा में यह रूप देखा जा सकता है—

दादुर मोर चकोर मन लग्यो रहै घन माहि ॥ ६३—पृ० १०

चीता चोर इमान के नए ते अवगुन होय ॥ ११८—पृ० १५

पानी गए न ऊबरे, मोती मानुस चून ॥ २०५—पृ० २०

सख्यात्मक प्रकृति वर्णन

परिगणनात्मक तथा सख्यात्मक दोनों रूप प्रायः एक स हैं। अंतर केवल यह है कि सख्यात्मक प्रकृति वर्णन में कवि परिगणित वस्तुओं की संख्या भी स्वयं ही बता देता है—

सिंहादेक बकादेक शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात् ।

बाघसात्पञ्च शिक्षेच्चषट् शुनस्त्रीणि गभदात् ॥^१

अर्थात् सिंह से एक बगुले से एक मुर्गों से चार कौब से पांच कुत्तों से छ गध से तीन गुण ग्रहण करने चाहिए। यहाँ कवि ने स्वतः संख्याओं का भी उल्लेख कर दिया है। रहीम ने भी अपने प्रकार से कदा-कही संख्याओं का भी उल्लेख किया है। इस दाहे सख्यात्मक प्रकृति वर्णन के अंतर्गत आते हैं। कुछ पत्तियाँ लीजिए—

बदली सोप भुजग मुल, स्थाति एक गुण तीन ॥ २२—पृ० ३

ये रहीम फीरे दुवो जानि महा सातापु ॥ ११०—पृ० १५

मानवीकरण-आत्मक प्रकृति वर्णन

निष्प्राण प्रकृति का प्राणवत् चित्रित करने की विधा मानवीकरण है। कवि भावावग के समय प्रकृति का नारी पुरुष मित्र प्रेयसी इत्यादि मानकर उसका घटना व्यापारों में मानवीय प्रिया-कलापा का सन्निपादन करता है। छायावाद के काव्य में प्रकृति का मानवीकरण अपने अत्यन्त रूप में चिद्यमान है। प्रलय काल के पदचात

ननिक अनुभूति के तीन खोन

सिन्धु तब न उदित हानी भूमि के सम्बन्ध मे प्रमाद का बचन, मानवीकरण का उत्तम उदाहरण है —

सिन्धु सेज पर धरा बधू, अथ तनिक सकुच बठी सी ।

प्रलय निगा हलचल स्मृति मे, मान किए सी ऐंठी सी ॥—कामायनी

छायावागी कविनाम्रा म नयी पवत, निवा रात्रि आदि का सुन्दर मानवीकरण हुआ है।^१ यद्यपि सर तुलसी ने भी मानवीकरण के चित्र उतारे हैं^२ किन्तु उनका युग प्रकृति व मानवीकरण का युग नहीं था। अतः रहीम के काव्य म भी मानवीकरण का अभाव ही है परन्तु एक तो चित्र बहुत हा सुन्दर हैं। इस नृष्टि स प्रस्तुत दोहे का भाव आम्नाद्य है—

पसरि पत्र भूपहि पितहि सकुचि देत सति मोत ।

बहु रहीम कुल कमल के को बरो को मोत ॥ ११५—पृ० १२

अयोक्तिपरक प्रकृति वर्णन

अयोक्ति का सीधा साधा व्युत्पत्ति परक अर्थ है—अन्य के प्रति कही गई उक्ति। जहाँ प्रकृति व प्रस्तुत विषय पर प्रत्यक्ष बचन होत हुए भी उनका अभिप्राय विशेषतः सामाजिक अथवा राजनीतिक व्यक्ति या पद विशेष पर केन्द्रित रहता है, वहाँ प्रकृति का अयोक्तिपरक वर्णन होता है। बाबा दीनदयाल गिरि हिंदी म अयोक्तिया व वाग्गाह ट। उनके काव्य मे आम बदली बून हाथी आदि स सम्बद्ध सुन्दर एवं मारगभित अयोक्तियां प्रचुर मात्रा म उपलब्ध हैं। रहीम के नोक्ति-काव्य म अनेक बचन अयोक्तिपरक हैं। वर, खीरा अरु केला कोकिला, दादुर मरि वर, मीन मर वागज, पट कुम्हार इत्यादि पर सुन्दर अयोक्तिया की रचना हुई है। उदाहरण व लिए निम्नलिखित दोहे दम जा सकते हैं—

जो घर ही मे घस रहे बदला सुपत सुडील ।

तो रहीम निनते भले पय के अपत करील ॥ ७०—पृ० ७

रहिमन अथ वे बिरछ कह जिनकी छाह गंभीर ।

दागत बिच बिच वेनिअत सेहुं कज करील ॥ १६३—पृ० १६

अट न बौट रहीम कहि दलि सच्चिबकन पाल ।

हस्ती-डबलता कुल्हडिन सहै त तरवर आन ॥ २०—पृ० ३

प्रतीकान्तक प्रकृति-वर्णन

प्रतीक का अर्थ है चिह्न। जहाँ किसी व्यक्ति चरित्र भाव गुणवगुण विशेष की प्रत्यक्ष वर्णन, प्रकृति की विमा वस्तु विशेष म मन्त्रिहित करली जाती है वहाँ प्रतीकान्तक प्रकृति वर्णन होता है। छायावागी काव्य म प्रतीक का सुन्दर विनियोगन

१ शक्ति—पत जा ना नीमाविन्दार निनकर जी की मरे गतपति मरे विनाल तथा डा० रामगुमार कमा की व गनने तारा वान गीपक कविनाएँ।

२ दशरथ—नूरमातर म गानिया का तथा मानम म थाराम का बिरह वर्णन।

हुआ है। प्रसादजी ने तो कहीं-कहीं प्रतीका की भन्नी लगा दी है।^१ रहीम का वाक्य में 'चातक' और 'मीन प्रेम की अनयता के बरतल तथा पान पर कष्टकारक व्यक्ति का, बर तथा केला अनमेल संगति के, याजू टूट जाऊ वृद्ध सेवन के भ्रमर वन स्वार्थी का, नभ के तारे सम्पन्नता के सेन बज करीर अनुत्तर नपति का 'वान धाद्येपन का, पट चाक वृष्णा तथा कजूस के पृथ्वी सहनशीलता का तथा भ्रमरवन आदि आध्यात्मिकता के प्रतीक के रूप में व्यवहृत हुए हैं। पानी का आन्तर का प्रतीक के रूप में रहीम का प्रयोग लोक प्रसिद्ध है—

रहिमन पानी राखिए बिनु पानी सब सून ।

पानी गए न ऊदरे, मोती मानुष चून ॥ २०१—पृ० २०

भयात्मक प्रकृति वर्णन

प्रकृति सदैव सुन्दर ही नहीं होनी विकराल तथा भयानक भी होनी है। पुष्प के साथ कटक तथा तितली का साथ 'याल उद्याना में सत्य देखे जा सकते हैं। बसंत का साथ पतभङ्ग निर्माण का साथ विनाश प्रकृति की अनिवाय लीलाम हैं। प्रकृति के सच्च प्रती उसका प्रत्येक रूप में प्रम करत हैं। इसीलिए काय में वासन्ती वयार के साथ उरग निस्वासा के भी वर्णन हुए हैं। एक ही कृति में प्रसंगान्तर में उपा रहिमया और प्रत्येक तरगा का एक साथ वर्णन देखे जा सकते हैं। कामायनी इसका प्रमाण है। रहीम के काय में चित्ता रुधिर तथा याल इत्यादि भयकर वस्तुओं के प्रयोग भी कहीं कहीं देखने का मिल जात हैं—

एतो बडो रहीम जल, याल बदन बिय होय । १४७—पृ० १५

बधिक बध मृग बान सो, रुधिर देत बताय । १६४—पृ० १६

चित्ता दहति निर्जोव को चित्ता जीव समेत ॥ १७०—पृ० १७

रहस्यात्मक प्रकृति वर्णन

हमारा जितना अधिक सम्पन्न प्रकृति से है उतना किसी अन्य वस्तु से नहीं। सब और प्रकृति ही प्रकृति परि प्राप्त है। हम उसका मनोरम लीला विहार या विकराल विनाश निरन्तर ताण्डव देखत रहत हैं परन्तु उन सबका समझना हमारा बस का नहीं है। उसको समझने की बौद्धिक क्षमता है विज्ञान और उस ज्ञान का आध्यात्मिक प्रयत्न है दान। युग युगांतरों का चिंतन के पश्चात् भी प्रकृति के अधिवाण तत्व आज तक रहस्यमय बन हुए हैं। य तत्त्व, कथि के भाव विभार मानस पटल पर प्रत्यावर्तित हानर रहस्यात्मक रूप में अनन स्थला पर चित्रित हुए हैं। हिन्दी काय में पद्यक से भी रहस्यवाण की धारा प्रवाहित रही है। प्राचीन काल में

१ ऋभा ऋकोर गजन था

धर्पा थी नीरव माला ।

पाकर इस मूय हृदय को

सबने था डरा डाला ॥—आसू

जायसी एव कवीर और आधुनिक युग में महादेवी वमा, रामतुमार वर्मा आदि के काव्य में रहस्यवादी रंग पग पग पर नभक्ता है। रहीम भी प्रकृति के कतिपय तत्वा, समार के उत्तम प्रिया व्यापार तथा प्रभु के पुनीत विस्तृत विधान पर विम्वय विमुग्ध थे। वागज के पुतल का वपों तक वायु खींचते खींचते एक क्षण में क्रिया गूँथ हाँ जाना, धूल की जिस गठरी की गाँठ खूनन ही, पच-तत्वा में विवर जाना तथा लघु बीज में विशाल वृक्ष अथवा छोटी-सी वृक्ष में विस्तृत समुद्र के सभी गुणा का विद्यमान रहना, रहीम को रहस्य का सकेत करते थे। इन्हीं रहस्यों का प्रतिपन्न नभ अनक दाहा में हुआ है—

बिन्दु भी सिधु समान, का अचरज कासों कहैं ।

हेरनहार हेरान रहिमान अपुने आप तैं ॥ २७३—पृ० २७

प्रकृति चित्रण की उपयुक्त रीतियाँ के अनिश्चित ऋतुवर्णन, वारहमासा इत्यादि अथ कुछ विधाएँ और भी हैं जिनका प्रयोग रहीम के नीति काव्य में नहीं के बराबर है। हाँ शृंगारिक वर्णों में ये विधाएँ भी अपने मुदरतम रूप में दग्गी जा सकती हैं।^१ नीति के दोहों में यश बन्धन वसन पावस पागुन इत्यादि का व्यवहार हुआ है किन्तु उन्हीं के आधार पर रहीम के काव्य में परम्परागत ऋतुवर्णन अथवा वारहमासा की वह परम्परा खोजना भूल होगी जिसका जायसी इत्यादि ने अपने अवधी काव्या में तथा मेतापति एव आदि ने ब्रजभाषा काव्या में निवाह किया है।^२

प्रकृति चित्रण सम्बन्धी निष्कर्ष

वस्तुतः प्रकृति वर्णन रहीम का विषय नहीं है। उन्होंने तो नीति की निगाह से प्रकृति की विभिन्न घटनाओं को देखा है और उन घटनाओं से नीति परक निष्कर्ष निकाल कर उन्हें दशतापूर्वक अभिव्यक्त कर दिया है। यह निष्कर्षोत्तरण ठीक वमा ही है जैसा शृंगारिक कवि करता है। उसके नायक नायिकाओं को संयोग के समय विद्युत् विरगण मधु बरसानी प्रतीत होती है मधुर पवन गंध के भाग के दवा प्रतीत होता है। प्रकृति की सम्पूर्ण नीलाएँ अत्यन्त मादक एवं मोहक प्रतीत होती हैं।^३ दूसरी ओर विधाग के समय वायु तप्त तप्त बरसाने लगते हैं पावन उरग श्वास सी

१ लगत असाइ कहत हो चलन किशोर ।

धन घुमड़े छहु आरन नाचत मोर ॥ २६—पृ० ६१

उमडि घुमडि धन घुमडे दिसि दिदिसान ।

सावन दिन मनभावन करत पयान ॥ १७—पृ० ६८

जब से आयी सजनी भास असाइ ।

जानी सवि वा निय के हिय की गाँठ ॥ २६—पृ० ६१

२ देखिए प्रभुपाल मीतल का सरलन—ब्रजभाषा साहित्य का ऋतु सौन्दर्य (साहित्य न्यास मन्त्रालय)

३ देखिए कामायनी—वामनाथ

जान पड़ती है। साथ-साथ यह है कि प्रकृति के समस्त व्यापार दुःखद निश्चिन्त हैं।^१ ठीक उमा प्रकार नीति के कवि रहीम को घरे और गुन की सहायता से गहरे रूप से जन विचारा दरकर गुन (गुण) की सहायता से गहरे से गहरे मन वाला की बात निकाल लन की दृष्टि मिलता है।^२ एग मृग आदि का प्राकृतिक रूप से स्वस्थ रहत दरकर औपनि (आधिक्य) की व्यथता दिखार्ई पडती है।^३ कोयले का सम्पक आद्रे का सग प्रतीन हान लगना है कयानि बट दहन पर अगा को जला डालता है और बुभन पर वाला कर दता है।^४ इन सग तथ्या के देखत हुए हम कह सकत है कि रहीम ने प्रकृति का अधिक उपयोग नतिक निष्पन्न निकालन के लिए किया है। इस यति हम चाह तो निष्पत्तात्मक प्रकृति वणन की सजा द सकत है। यद्यपि प्रकृति वणन के अलकरणामन पृष्ठवारात्मक आदि रूप भी उनर नीति-शास्त्र में उपनय हैं किन्तु उसका अधिकांश निष्पत्तात्मक प्रकृति वणन ही है और निष्पत्तात्मक प्रकृति वणन का दृष्टि से रहाम अपन धन के हिन्दी कविया में अद्वितीय है।



१ मानस—अरण्यवाण्ड

२ से ४ रहीम रत्नाञ्जली—दाहा सं० ५० २१० २७१

रहीम के नीति-काव्य में कल्पना एवं ध्वनि

मनुष्य की प्रत्यक्ष वृत्ति उसकी कल्पना का पररूप है। प्रत्यक्ष मिथ्यात, प्रत्यक्ष यत्र प्रत्येक भाव और प्रत्यक्ष बना उमके निर्माता का किसी न किसी मूल कल्पना का पररूप है। यही कारण है कि कल्पना या तात्त्विक विवेचन दान, बना माहिय मनोविज्ञान एवं मौड्य गान्ध के क्षेत्र म युगा युगा म होता रहा है। अरन्त हीमन गट बाण्ट फायट, श्रीचे रिचड, कालरिज, बड मवय ग्रादि की वृत्तिया इम तथ्य का प्रमाण ह। दनिन अनुभव यह सिद्ध करता है कि हम किसी वस्तु का मृजन करन से पूव उमका एक काव्यनिस चित्र अपने मस्तिष्क म बना लन हैं। बाण्ट के अनुमार मन जा वृष्ट भी बाहर स प्राप्त करता है उमे वह पहल सगठिन करता है और पुन रचनात्मक गति के द्वारा नाना रूपा म व्यक्त करता है। इत प्रकार कल्पना रचनात्मक भी है और सनपणामक भी।

काव्य और कल्पना

विनियम बड मवय न कविता का गति के क्षणा म एकत्रित भावा का अजल प्रवाह बतात हुए बाण्ट के तथ्य का ही समथन किया है।^१ हैजिट न ता काय की परिभाषा ही कल्पना की भाषा बहकर ली है।^२ हउसन भी यही स्वाकार करता है। यह दान दूसरी है कि उमन साथ म भाव को भी जाड दिया है।^३ डा० जानसन न ग्रानद और सत्य क मम्मिथण का कला बतात हुए तरु क लिए कल्पना की सहायता पर बन लिया है।^४ प्रोच काव्य मृजन की प्रक्रिया म प्रथम स्थान कल्पना का देन के बाण्ट ही विचार और बुद्धि का विनियोग स्वीकार करते हैं।

- १ पाश्चाय साहित्यालोचन और हिंदी पर उसका प्रभाव—डा० रवीद्रसहाय वर्मा (गोरखपुर १९६०)—पृ० ८६
- २ Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings. It takes its origin from emotion recollected in tranquillity
- ३ Lectures on English poetry
- ४ Poetry is an interpretation of life through imagination and emotion
- ५ Poetry is the art of uniting pleasure with truth by calling imagination to the help of reason

श्रोत्रे और कालरिज

श्रोत्रे न सीत्स्य गास्त्र व प्रसंग म कल्पना पर विस्तार स विचार किया है। कारण यह है कि सीदधास्वादन को कल्पना-यापार का अनिवाय अंग माना गया है। कवि उसी के सहार वस्तुधा के सहज स्वाभाविक रूप का व्यक्त करने म समय होता है। इसका सम्बन्ध स्वयंप्रकाश ज्ञान स अत्यधिक है। हमस भी अधिन विस्तार से विचार करने वाला म कालरिज का नाम अप्रगण्य है। उसने वाण्ट तथा श्रोत्र धारि की भाति दशन का आधार न लेत हुए शुद्ध साहित्यिक स्तर पर विचार किया है। उसन इमेजिनेशन और फन्सी के एकत्रीकरण की भूल का सुधार करत हुए फन्सी का सम्बन्ध चित्र मघात तथा इमेजिनेशन का सम्बन्ध चित्रोत्पत्ति की मूल विधायिनी शक्ति से माना है। काव्य ही नहीं, मूर्तिकला चित्रकला संगीत इत्यादि के लिए भी कल्पना का मूल विधातृ शक्ति स्वीकार किया है। कलाशास्त्र माध्यम से प्राप्त ज्ञान-दोषलब्धि का श्रेय कल्पना को ही है। काव्य का यही तत्व उस विज्ञान स पर्यव करता है। क्याकि विज्ञान का उद्देश्य मात्र सत्य का उद्घाटन है।^१ वहाँ तथ्या की प्रधानता रहती है और यहाँ (काव्य म) कल्पना की। कलाकार कल्पना की सहायता के लिए तथ्य का उपयोग करता है जबकि वैज्ञानिक तथ्यो के लिए कल्पना का सहयोग मात्र चाहता है।^२ डा० श्यामसुन्दरदास ने तो यहाँ तक कह दिया है कि विज्ञान म जो बुद्धि है, दशन म जा दृष्टि है वही कविता म कल्पना है।^३ वैज्ञानिक हा या दाशनिक तथ्योद्घाटन तो सभी करत हैं कि तु उनक ढग एव साधन भिन्न भिन्न है। कालरिज के अनुसार कवि के लिए वैज्ञानिकता नहीं अपितु दाशनिकता आवश्यक है। उनका कहना है कि कोई भी व्यक्ति गम्भीर दाशनिक हुए बिना अच्छा कवि नहीं बन सकता। दाशनिक की तब विधायिनी कल्पना कविता के लिए अत्यन्त उपयोगी हाती है।^४

रिचर्ड के छः अर्थ

वर्तमान जगत में आर्द० ए० रिचर्ड स कालरिज का भारी पोषण है। उसन पहले कल्पना के छः अर्थ लिखे जा आलोचनात्मक वाक्य विचार म प्रचलित है। पहले अर्थ म कल्पना चाशुष सुस्पष्ट प्रतिमाशा की उत्पत्तिक मानी जाती है। दूसरे अर्थ म कल्पना सालकार भाषा के प्रयोग स सम्बद्ध है। वे साहित्यकार जा रूपका और उपमाशा स अर्थन भाव व्यक्त करत हैं कल्पना-गीत

१ वायोप्रक्रिया लिटरेचर—ज० गात्रास (भाग २)—पृ० २२१

२ Artist treat fact as stimuli for imagination whereas scientists use imagination to co ordinate facts —Arther Koestler
—Dictionary of Thoughts P 292

३ साहित्य-लोचन—डा० श्यामसुन्दरदास (छठा सं०)—पृ० ७८

४ वायोप्रक्रिया लिटरेचर (भाग २) पृ० २७०

कहाता है। तीसरे अर्थ में वह लेखक अथवा पाठक कल्पनागीत कहलाता है जो दूसरे मनुष्या की चिन्तावस्थाया का विरोधतया दूसरा के मनासगा का सहानुभूति पूर्वक प्रस्तुत कर सकता है। चौथे अर्थ में कल्पना युक्ति कौशल की छातक है (सामान्य अत्यन्त तबा का युक्ति से मिलाने वाली है)। पाचवा अर्थ वैज्ञानिक है जो अत्यन्त वस्तुया में भी सादृश्य दिग्ना देना है। छठे अर्थ में कल्पना वह माध्वक और मयोगिन गति है जो विपरीत और विस्वर गणा के मन्तुलन में प्रकट होती है।

कल्पना और प्रतिभा

वस्तुतः य अर्थ कल्पना के विभिन्न उपयोग व ध्यानक हैं। इन उपयोगों में ही कोई रचना अपने विविष्ट वाच्यत्व का प्राप्त हानी है। कदाचित् इसीलिए स्टीवाट न कहा था कि कल्पना की असाधारण मात्रा ही काव्य प्रतिभा का जन्म देती है।^१ काव्य प्रतिभा ही नहीं, जीवनी गति एव आत्मा के लिए भी कल्पना की परम आवश्यकता है। बीबर का कथन है कि कल्पना व विना आत्मा की स्थिति ठीक वमी ही है जसी कि दूरगक यत्र-हीन वेधगाला की।^२ बड सत्य ने कल्पना का एकात्मक गति तथा स्वच्छतम अन्तः पिट का दूसरा नाम कहा है।^३ गक्सपियर की भायता भी कुछ वमी प्रकार की है।^४ कहने का तात्पर्य यह है कि पाश्चात्य विचारका एव कविता में कल्पना तत्व पर बडी मूमना में विचार करके उस काय की मूल विधातृ गति स्वीकार किया है। उसी के बल पर कवि नाना प्रकार के नय-नय दृश्य विधान प्रस्तुत करता है। इसी का अर्थ लेकर कवि अपार काव्य समार का प्रजापति बना हुआ है। हमारे यहां कदाचित् इसी नवनवो-मपगातिनी गति का प्रतिभा का नाम दिया गया था--

प्रजा नवनवो-मपगातिनी प्रतिभा मता

तदनुप्राणनाञ्जीवेद यणनानिपुण कवि ॥—भामह

१ पाश्चात्य साहित्यालोचन—सीलावर गुण प० ५६

२ डिक्शनरी आफ थॉट्स—एण्डस (१६६६)—प० २८१

३ वही पृ०—२८३

४ Imagination which in truth

Is but another name for absolute power

And clearest insight amplitude of mind

And reason is her most exalted mood —Words worth

—The Oxford Dictionary of Quotation P 579

५ And as imagination bodies forth

The forms of things unknown the poets pen

Turns them to shapes and gives to airy nothing

A local habitation and name —Shakespeare

—A Mid Summer Night's Dream

६ अपारे काव्य समार कविरेव प्रजापति

यथात्म रोचते विन्य तथेद परिधतते ॥ —अग्निपुराण

हिन्दी विद्वानों का कल्पना विवेचन

कल्पना और प्रतिभा के सम्बन्ध में गीतम में एक घटक के रूप में उदाहरण का भी प्रयोग है। साधारण मूल का धारणा है— जो हमें मिला है— हम से दूर प्रतीत होती है उसी मूर्ति का मूलकार उत्तर सामान्य का अनुभव करता उदाहरण है। साहित्य का मूल भावना का ^१ और साधारण के साथ कल्पना। जिस प्रकार गीतम के लिए कल्पना और उदाहरण साधारण होता है उसी प्रकार भाषा के प्रवर्तन के लिए भाषा का कल्पना प्रतीत होती है। ^२ कल्पना अथवा विवेचन— साध्य जगत की रचना करे वाली कल्पना का कल्पना ^३। किसी भावार्थ के द्वारा परिचायित कल्पना जय उम भाव के वास्तविक मूल्य का घट छोट कर सामान्य रचना लगती है तब उत हमें मिला कल्पना कल्पना कहते हैं। - गुलाबराय जी ने भी प्रचारार्थ म यही बात कही थी— कल्पना कल्पना है जिसके द्वारा हम अथवा म मानसिक चित्र उपस्थित करते हैं। ^४ ये साहित्यिक चित्र गीतम अधिक मात्रा में कल्पना उतनी ही सफल समझा जायगी क्योंकि विवेचन प्रत्यक्ष जानात्मक अनुभव (पाठ्य परीक्षाएँ एनपीरियंस) का विवेचन और विचारों के रूप में विचारामय स्तर पर रचनात्मक गीतम कल्पना है। ^५ विवेचन अनुभव अपने मूल रूप में कल्पना नहीं है। यथा तो स्मृति है या। विवेचन कल्पना तभी होगी जब उनका आधार पर वास्तविक गीतम की मदद है। रूप अनुभूतियाँ का पुनर्गठन से अपूर्व की अनुभूति उत्पन्न करने की प्रिया या गीतम का कल्पना कहते हैं। वर्तमान का अनुभव करने वाला प्रत्यक्ष अतीत का अनुभव करने वाली स्मृति तथा अनागत का अनुभव करने वाली है कल्पना। ^६ वास्तु गुलाबराय के अनुसार कल्पना वह गीतम है जिसके द्वारा हम अथवा म मानसिक चित्र उपस्थित करते हैं।^६

कल्पना और साहित्य

निष्पत्ति यह है कि कल्पना एक नैसर्गिक मानसिक व्यापार अथवा गीतम है जिसके द्वारा हम सामान्यतया विवेचन और विशेषतया अनागत आधार पर नये नये चित्रों भावों एवं विवेचन का निर्माण करते हैं। ये चित्र गीतम गहरा अनुभूति स्वच्छ एवं प्रभावोत्पादक है कल्पना उतनी ही सूक्ष्म सबल तथा साभिप्राय कहलाती है। विज्ञान के क्षेत्र में नये-नये उपकरणों का निर्माण विज्ञान के क्षेत्र में नवीन अनुभवधारणाओं

१ चिन्तामणि—आ० रामचन्द्र गुप्त, (भाग २)—पृ० २१६

२ सूरदास—आ० रामचन्द्र गुप्त—पृ० २८

३ सिद्धांत और अध्ययन—गुलाबराय—पृ० ६७

४ हिन्दी विश्वकोश—भा० प्र० सभा काशी (भाग २)—पृ० ३८६

५ हिन्दी साहित्य कोश—गानमण्डल वाराणसी,—पृ० १२७

६ सिद्धांत और अध्ययन—आ० गुलाबराय (छठा सं०)—पृ० १०१

की न्यायना तथा नित्य जीवन के अन्तगत स्वप्नादि म' र्म शक्ति का प्रयोग निरन्तर होता रहता है किन्तु कल्पना का सर्वाधिक विनियोग कथा व क्षेत्र म सम्बद्ध है । यदि अपने, नयानक निमाण, परिस्थिति चित्रण भाव निष्पण, चरित्र उमीनत अन्तकार सवाजन गती सस्थापन एवं रस निष्पादन आदि सभी क्षेत्र म कल्पना का आशय ग्रहण करता है । पाठक अथवा श्राम्वादक भी कल्पना के माध्यम मे ही काव्य कथाम्वाद तक पहुँचता है ।

रहीम का कल्पना विधान

कहा तक हमारे चरित्र-नायक रहीम के कल्पना विधान का प्रश्न है कहा हम नि मकाव कह सकते है कि उनके नीति-काव्य म कल्पना का विभिन्न प्रकार से विनियोग हुआ है । रहीम के नीति कथना म जो एक विंगप रमणीयता एक दुलभ प्रभावापादनता है उसका बहुत बड़ा जेय उनका सफल कल्पना विधान का है । कहा उनकी कल्पना स्थूल सिद्धान्तो का मूर्ध्मता से अभिव्यक्त करती है ना कहा नीरम कथना का सरस बनानी है । उसी का सहारा लेकर उपयोगी दुर्वोध एवं अप्राज्ञ का ग्राह्य पयागवाणी अनास्वाद्य एवं अग्निकर को रचिकर बनाकर पाठक व सम्मुख प्रस्तुत कर सक है । र्सी के बल पर कही उद्दति प्रकृति प्राणण से उपदण मग्रहण म सफरता प्राप्त की है तथा कही पुराण पुष्कर से नीति-सौरभ के मकलन म रक्षता । जन-जीवन एवं लाकानुभव की सामाय से सामान्य घटना द्वारा बढी से बढी नीति का प्रतिपादन रहीम व कल्पना विधान का ही कमाल है । इतने पर भी उनकी कल्पना नितात निरायास अद्विजिम एक सबमुलभ है । न उह आकाश के तारे ताडकर लान म विश्वास है और न मागर तल की गहराण्या म पठ कर रजकण एरनित करने का चात्र । उनकी कल्पना व्याप्त वातावरण म चक्कर काट कर ही कुछ ऐसी असामाय उपलधि प्राप्त करती है जो सबया परिचिन लगत हूण भी नवीन एवं अछूती हाती है ।

रहीम की मौलिकता

रहीम का वास्तविक कवि हृदय प्राप्त था । उनकी कल्पना प्रवणता व रक्षा अनेक दाहा म हाते है । प्राचीनता मे नवीनता भरना रहीम की प्रमुख विशेषता है—

नाद रीभ तन तन देते भृग नर धन हत समेत ।

ते रहीम पगु ते अघिक रीभेहु कठ न देत ॥ ११०—पृ० ११

भृग का तनी नाद पर रीभना और पकडा जाना चिर प्रचलित है परन्तु इस प्ररुग से यह कल्पना करता कि जो रीभन पर भी कुठ नही दत, व पगु ता क्या पगु से भा गय गुजर है रहीम की मौलिकता है । स्वार के जन रहिन वादला से निननला

1 Imagination is the ruler of our dreams —Clulow

हिलने म, रग से डालने की कल्पना^१ बुढ़ाप के लिए बाजू टूटे बाज की कल्पना,^२ आटा लगे मृगम व सुस्वर से भोजन की प्रियता सम्बन्धी कल्पना^३ जल मिल दूध व उपनन स मित्र के लिए ली गई आत्माहृति की कल्पना^४ नारी व पट स दीपन को युभता देय असमय पडन पर मित्र व गन्धु बाज जान की कल्पना,^५ प्यान् व फरजी बनने पर टेनी चाल स ओछे व स्वभाज की कल्पना^६ गह व लघुरत्नवर म विगान ग्रय को भरा देय नट की कुण्डली की कल्पना,^७ दूध के फलन स वान व त्रिगहन की कल्पना^८ मयने पर दही व सब तत्या व भलग हा जान पर वजन भाग्यन व निरता रहन स, मुसीवत पडन पर भी सच्चे मित्र व डटा रहन की कल्पना,^९ कुए व रहट की बाटिया से ओछे के व्यवहार की कल्पना,^{१०} इत्यादि सभी स्वाभाविक हैं ।

पडमुत्ती कल्पना विधान

इस कल्पना व्यापार पर विहगम दृष्टि-पात करन स स्पष्ट हो जायगा कि रहीम ने कल्पना चयन विभिन्न क्षत्रा से लिया है । इन क्षत्रा का वर्गीकृत करन स हम उसका पडमुत्ती विधान दृष्टिगोचर होना है—

- १ गन्द क्षेत्रीय कल्पना
- २ प्रकृति क्षेत्रीय कल्पना
- ३ शरीर क्षेत्रीय कल्पना
- ४ मनोविज्ञान क्षेत्रीय कल्पना
- ५ श्रिया-व्यापार क्षेत्रीय कल्पना
- ६ पुराण क्षेत्रीय कल्पना

शब्द क्षेत्रीय कल्पना

—विता, गादिक व्यापार है । कवि के पास अपनी कलाकृति के निर्माणाय न छेनी होती है न हथौडा न तूलिका न रग न चाच और न यत्र । वह मात्र गन्द की पूजी से अपना व्यापार चलाता है । जितना अधिक शब्द भण्डार तथा जितना सुन्दर उसका विनियोग होगा, काव्य उतना ही उत्तम सिद्ध होगा । कुशल कविया का एक एक गन्द माला के माणिक की भांति कुछ इस प्रकार परोया गया होता है कि उसे स्वेच्छा स निकाला नहीं जा सकता । निकाला तो क्या इधर उधर बिसकाया भी नहीं जा सकता । शब्दा का यह विन्यस्तीकरण जब किसी कल्पना विनोप के आधार पर हो तब वहा शब्दाधारित कल्पना कही जायगी । रहीम के काय म ऐसी कल्पना के दशन प्रचुर मात्रा म होने हैं । उदाहरण के लिए पानी, वारे, बडे, पुरप पुरातन अनखाए तथा शोप इत्यादि कितने ही शब्दा को लिया जा सकता है । रहीम की कल्पना ने इन गन्दा के विनियोग म कुछ ऐसा कमाल दिखाया है कि गन्द को

१ से १० रहीम दोहावली, दोहा सरया क्रमश ३३ ३७, ५३, ५६, ६२, ७५ ६६, १२६ १३८, १७८

तनिक भी टम से मत नहीं किया जा सकता । दोहे प्रसिद्ध ही हैं—

रहिमन पानी राखिए विनु पानी सब सून ।
 पानी गए न ऊबरे, मोती मानस चून ॥ २०५—५० २०
 जो रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय ।
 बारे उजियारो लगे, बड अँवेरो होय ॥ १७७—५० ८
 कमला यिर न रहीम कहि यह जानत सब कोय ।
 पुरप पुरातन की बधू बयो न चचला होय ॥ २३—५० ३
 रहिमन अपने पेट सो, बहुत कह्यौ समुभाय ।
 जो तू अनखाए रहे, तो सा को अनखाए ॥ १६२—५० १६
 रहिमन कवहुँ बडेन के, नाहि गव को लेस ।
 भार धर ससार को तऊ कहावत सेस ॥ १७१—५० १७

प्रकृति क्षेत्रीय करपना

प्रकृति मानव की आदि जननी है । उसका जन्म मानव जन्म से युगा पूर्व की घटना है । घम दगन तथा विनान इस तथ्य पर एन मत हैं कि स्यावर सष्टि का जन्म जगम सष्टि स बहुत पूर्व हो चुका था । वैदिक दशन म प्रकृति को आत्मा एव ब्रह्म के ही समान अनादि स्वीकार किया गया है । निश्चित ही मानव का जीवन प्रकृति पर आधारित है । वायु जल अन्न वस्त्र सभी तो प्रकृति स प्राप्त हात ह । भौतिक जीवन के समान है । आध्यात्मिक जीवन भी प्रकृति के प्रागण से प्रेरणा ग्रहण करता है । यम के क्षेत्र म उसके देवता प्रकृति के उपकरण हैं । दशन के क्षेत्र म भी प्राकृतिक तत्वा का महत्व कम नहीं । साख्य-दशन इसका प्रमाण है । फिर नीति भी इसमे अटूती बया रहती । वेद स लेकर भागवत तक सभी न प्रकृति स नैतिक शिक्षा ग्रहण की है । रहीम का नीति-वाच्य भी इसका अपवाद नहीं ।

प्रकृति के विस्तृत उद्यान म भ्रमण करती हुई उनकी नतिक कल्पना नाना नाति कुसुम एकत्रिन करती रही है । इय के पोखरा की गाठ को रसहीन देखकर हृदय म गाठ पडत ही प्रेम की समाप्ति की^१ छिछरी छाह और दूरस्थ फल वाले खजूर को देखकर उपकार विमुक्त तथाकथित बडे लोगा की,^२ दिन के निप्रभ चन्द्रमा को देखकर श्राविहीन धनी की^३ मान मानसरोवर हां म विहार करने वाल मराल स एक-निष्ठ प्रेमी की^४ अपनी गदन का फासी के फटे म डालकर घडे को दूसरा की प्याम बुभान दस परोपकार को^५ जो करपनाएँ रलीम ने की है वे प्रकृति क्षेत्रीय ही हैं । ऐसी कपनाओ की सूची बहुत लम्बी है । अन्न यहा दशना ही कहना पयाप्त हाया कि रहीम की कल्पना न अन्न नीति कथन के लिए प्रकृति के क्षेत्र मे बहुत अधिक मामला ग्रहण की है । उनके कल्पना पट का बहुत बडा अंग प्रकृति के तान-बान से बुना

गया है। उनका रंग जितना आकषक है उतना ही उपयोगी भी है—

रहिमन निज सम्पति विना कोउ न विपति सहाय ।

बिनु पानी ज्यों जलज का, नहिं रवि सक बचाय ॥ २०१—५० २०

रहिमन प्रीत न कीजिए जस खीरा ने कीत ।

ऊपर से तो दिल मिला, भीतर फाके तीन ॥ २०७—५० २०

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसग ।

चन्दन विष व्यापत नहीं लपटे रहत भुजग ॥ ७४—५० ८

शरीर क्षेत्रीय कल्पना

मनुष्य के सत्रसे अधिज निबट उसका शरीर है। शरीर जसी पूण और विचित्र कृति इस सृष्टि में और है भी क्या। जो कुछ ब्रह्माण्ड में है वह सभी इस पिण्ड में भी है—यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे। अतः जन-कवि शरीर को सबथा नजर-दाज नहा कर सकता। यही कारण है कि रहीम की कल्पना दृष्टि शरीरागो पर प्रमुख रूप से ठहरी है। व शरीर के विभिन्न अंगों को देय नाना कल्पनाएँ करत है। ये कल्पनाएँ उह नीति-नयना को अलङ्कृत करने के लिए उपमा-रूप तथा दृष्टान्तादि का अठूठा मगाना प्रदान करती है। रहीम बड़े-बड़े नेमा को देयकर प्रसन्नना अनुभव करन की स्वाभाविक बात में कल्पना का आरोप कर उससे स्वगत एव स्वकुल की समुन्नति का संदेश प्राप्त करते हैं।^१ अपने को वासना की चोट से बचा कर भगवान् के चरणबमला की आट प्राप्त करन की प्रेरणा भी नया से ली है। काले कच्चा में से श्वेत कच्चे को उगाडा जाता देख के दुजना के बीच में सज्जना के अलग होने की कल्पना कर लेत है।^२ अपने ही हाथ को अपने हाथ में समाहित न देख के भाग्य का कम के अधीन होन की कल्पना करत है।^३ कुच के (पीन मांस पिण्ड) का कणस्थल पर शोभित तथा अत्यन्त अनभिवाछित रसीली के रूप में देय के स्थान भ्रष्टा न शोभित की नतिक उदात्त भरत है।^४ कुचा पर तो रहीम न एन नही अनन कल्पनाएँ की हैं। उनमें से कुछ तो इतनी मामिक है कि रहीम की कल्पना प्रवणता की प्रशंसा करनी ही पडती है। मानव शरीराग ही नही पशु-पक्षिया के अनेक अंग भी रहीम की नीति-कल्पना का आहार प्रदान करत है

रहिमन छोटे नरन सा होत बडो नहिं काम ।

मडो दमामो जात नहिं सो चूहे के घाम ॥ १८१ गृ० १८

अतः स्पष्ट है कि अंगों का देयकर रहीम के मन में जो भाव उठत थे वे उनका उपयोग अथाय कविधा की भाँति शृंगारान्गीकृत के लिए न करन नीति-नयन के लिए किया करत थे।

मनोविज्ञान क्षेत्रीय कल्पना

प्राणियों के शारीरिक अंगों के अत्र में रहीम ने जिस प्रकार कल्पना का विनियोग किया उमी प्रकार उनमें मानसिक जगत में उत्तर-तर भी भाँका है।

आधुनिक शास्त्रालयों में हम कह सकते हैं कि उनकी कल्पना ने मनोविज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करने भी नीति की खाज की है। वे धनिशा निधना, राजाशा गुणिमा, कुल्दाशा-कुलबधुमा दारिशा याचना निश्चिन चिन्तातुरा माहिया निर्मोहिषा गम्भीरों छिडोरो स्वाभिमानीया-नुगामशिया, उपकारिया अणकारिया इत्यादि के हृदय की बात खोज निकालने में पटु हैं। उनकी कल्पना विभिन्न प्राणियों के अन्तर्मन में पठ कर उनके स्वभाव का अन्वयन करके जिस तथ्य का आवलोकन करती है वह आपक एवं उपयोगी तो होता ही है सत्य एवं शाश्वत भी होना है—

गरज आपनी आप सों रहि मन कहौ न जाय ।

जसे कुन की कुल बधू, पर घर जात, लजाय ॥ ४८—५० ।

रहि मन अंसुवा नयन डरि, जिय दुख प्रगट करेइ ।

जाहि निकारो गेहते बस न भद कहि बेइ ॥ १६५—५० १६

रहि मन इर जिन वे रह बौच न सोहत हार ।

बापु जो ऐसी बह गई, बौचन पडे पहार ॥ १६७—५० १६

इन दोहों में कुलीन स्त्री का पगल घर जाकर मागत समय लजा जाना दुख के आधिक्य से आसुआ का डलकना पति पत्नी के सयोग की अवस्था में कण्टार तब का अनभिवाञ्छित लगना इत्यादि कथन मनोवैज्ञानिक अथवा भावसिक्त मत्स्य से सम्बद्ध है। इन्हें कवि ने अपनी कल्पना के रंग में बूझ इस प्रकार रंगा है कि हिन्दी काव्य की जावदयमान प्रदर्शनों में इन हीरा की चमक का आच्छादन पृथक् ही बना हुआ है।

त्रिया व्यापार क्षत्रीय कल्पना

प्राणी अन्तर्गत हैं और उनके व्यापार अन्तर्गत। इसी प्रकार वस्तुएँ अनेक हैं और उनके गुण स्वभावादि अन्तर्गत। कवि के मन की जो वस्तु रचिवर प्रतीत होती है वह उस स्त्री कल्पना और कला के आधार पर सवजनस्वाद्य बनाकर प्रगट कर देता है। एतद् ही वस्तु को शृंगार, वराग्य नीति हास्य इत्यादि विभिन्न दृष्टि बाणा के कारण विभिन्न प्रकार से वर्णित किया जाता है। रहीम नीति के कवि हैं। अतः उन्होंने नानाविध वस्तु-व्यापारों को नीति के रंग में रंगकर व्यक्त किया है। मिमरी खात समय मुँह में आइ हुई पास द्वारा, रस में विष उत्पन्न हान के अनुभव से कवि प्रमानापक में माप बोध कटु बचना की विरम स्थिति की कल्पना करता है।^१ डार पान फल पून तथा मूल सभी प्रकार से अनुपयोगी बखूल द्वारा कवि क्रूर प्राणियों के अपकार की कल्पना करता है।^२ दान के काटने तथा चान्न की मोन निषाया के विपरीत परिणाम से कवि का आठे नरा की पर प्रीति का ध्यान आता है।^३ काम के समय सिर पर तथा काम निकलने पर नदी में प्रवाहित हान हुए मोड़ की देखकर कवि ने काज परे कटु और है काज मर कटु और की कल्पना की है।^४ इसी प्रकार के नाना व्यापारों से कवि ने नाना भावों की नविक कल्पनाएँ की हैं।

वही-वही ता इन कल्पनाआ का आवरण देगत ही बनता है। उदाहरणाय हाथी के विभिन्न प्रिया ध्यापारा से सम्बन्धित तीन कल्पनाएँ प्रस्तुत हैं।—

बड़े पेट के भरन को, है रहीम दुष याहि।

याते हाथी हरि क दिये दात ह काहि ॥ १०३—पृ० १२

रहिमन हरि सम बल नहीं, मानत प्रभु की धार।

दात दिषायत दीन ह्व चलत घिसावत नाश ॥ १०२—पृ० १७

घूर धरत नित सीत प बहु रहीम केहि काज।

जेहि रज मुनि पत्नी तरी, सो दूढ़त गजराज ॥ १०७—पृ० ११

पुराण क्षेत्रीय कल्पना

ऊपर दिए हुए अतिम दोहे से रहीम की पौराणिक कल्पना का सम्यक् दान हो जात है। रहीम के व्यक्ति का एक कृतित्व से स्पष्ट है कि वह हिन्दुत्व तथा हिन्दुत्व सम्बन्धी ग्रन्थों का परम निष्ठावान एक विश्वासी अयता था। उनकी श्रद्धा मयी कल्पना में पुराणा का क्षेत्र में जो खानजर विचरण किया है। पुराणा की विभिन्न कथाओं का एक घटनाओं के सम्बन्ध में उद्धान माना भाति की कल्पनाएँ की है। ये कल्पनाएँ इतनी उदात्त एवं सारगर्भित हैं कि उनका सौन्दर्य देखत ही बनता है। नीति निबन्धन कल्पना विनियोग पौराणिक-श्रद्धा अभिव्यक्ति कुशलता तथा चिन्तन गरिमा से ऐसा पुनीत पञ्चमृत तयार किया गया है, कि जिस पान करके निश्चित ही पापी तब भी पार उतर सकत है—

रहिमन मनहि लगाइ के, देखि लेहु बिन कोय।

नर को बस करिबो कहा नारायन उस होय ॥ २१४—पृ० २१

राम न जाते हरिन सग, सोय न रावन साथ।

जो रहीम भावी कतहुँ होति आगुने हाय ॥ २३७—पृ० २३

जे गरीब पर हित करें ते रहीम बड लोग।

कहा सुदामा यापुरी, कृष्ण मिताई जोग ॥ ६४—पृ० ७

छिमा बडन को चाहिए छोटिन को उत्पान।

का रहीम हरि को घटयो जो भगु मारी लात ॥ ५१—पृ० ६

निष्कर्ष

इन पटमुखी कल्पना क्षेत्रों के अतिरिक्त अलंकरण विधान एवं शली सजावन का क्षेत्र में भी रहीम के कल्पना विनियोग का अयन किया जा सकता है। किन्तु प्रसंग का अधिन विस्तार न देते हुए हम निष्कर्ष निकाल सकत हैं कि नीति के सीमित क्षेत्र में भी उनकी कल्पना सरिता विभिन्न क्षेत्रों से होकर गुजरी है। इन क्षेत्रों को उसने सरस सिक्त सुन्दर विनीत तथा उपयोगी बनाया है। उसमें गहराई है किन्तु पाताल तक जाने का व्यर्थ प्रयत्न नहीं उस में ऊँचाई है किन्तु आकाश-सुसुमा का छून का उपक्रम नहीं उसमें रंगीनी है कदम नहीं पावनत्व है पकिलता

नही। धरती की घूल से अभिपिप्त उसके आरोग्य जल का मज्जन पान लौकिक एव पारलौकिक दोनों दृष्टिया से नितान्त उपयोगी है।

ध्वनि और रहीम का नीति-काव्य

भारतीय काव्य शास्त्र में काव्य की आत्मा के सम्बन्ध में पर्याप्त वाद विवाद चलता रहा है। विभिन्न सम्प्रदाया व सत्यापका एव उनके अनुवर्तियों ने अपनी अपनी मान्यताओं के अनुसार काव्य की आत्मा पर आग्रहपूर्वक विचार व्यक्त किये हैं। रस, अनकार रीति ध्वनि एव वक्राति आदि सिद्धांतवादी काव्य की आत्मा अलंकार रस, रीति, ध्वनि एव वक्राति का मानते चने आए हैं। इनमें अंतिम विजय, रस एव ध्वनि और विशेषत रस की ही रही है।

ध्वनि और उसकी व्याख्या

ध्वनि भारतीय काव्य-शास्त्र की अपभ्रंशित परवर्ती कल्पना है। फिर भी ध्वन्यालोक में ध्वनि सिद्धान्त की पर्याप्त प्राचीनता व सर्वत्र दिए गए हैं। ध्वन्यालोककार ने, अपनी कृति के आरम्भ में ही, प्राचीन विद्वानों की दुहाई देकर ध्वनि का काव्य की आत्मा सिद्ध किया है—**वाच्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधय समाभ्यात पूव**।^१ उन्होंने प्राचीनता का सबूत दिया है। किन्तु प्राप्त सामग्री के अनुसार विद्वान ध्वनि का उद्भव और विकास आठवीं शताब्दी से ग्यारहवीं शताब्दी के बीच की घटना मानते हैं। ध्वनि की प्राचीनता मगन ध्वन्याकरण भट्ट हरि के भाष्यप्रदीप से भी सिद्ध है। किन्तु उन्होंने एव ध्वन्याकरण की दृष्टि से शब्द-यत्र व भाग वियोग से उत्पन्न स्फोट को विद्वानों की दुहाई पर ध्वनि की मना दी है—

य सर्वोपविद्योगान्म्या कारण रूपजयते।

स स्फोट शब्दज शब्दो ध्वनिरित्युच्यते बुध ॥

ध्वन्याकरण व इसी ध्वनि शब्द का लेकर आलंकारिका ने पर्याप्त विस्तृति कारण दिया है। व्याकरण में ध्वनि केवल अभिव्यजक शब्द के अर्थ में ही प्रयुक्त होती है परन्तु साहित्यशास्त्र में ध्वनिका प्रयोग अभिव्यजक शब्द और अर्थ दोनों के लिए होना लगा।^२ उल्लेखनीय यह है कि ध्वन्याथ अभिधा लक्षणा एव व्यजना में आग की वस्तु है। “अभिधा केवल प्रसिद्ध (सावेनित) अर्थों का ही समझा सकती है अप्रसिद्ध अर्थों का नहीं। और लक्षणा मुख्य अर्थ में सप्रद अर्थ का ही समझा सकती है और वह भी मुख्य अर्थ व वाचित शब्द पर, किन्तु व्यजना के लिए एसी विसा शक्ति की आवश्यकता नहीं वह तो सब अर्थ प्रतिहत रूप से चरती है।”^३ ध्वनि व्यजना से भी मूल्य और अगती मिलती है।

१ ध्वन्यालोक ११

२ यथाय शब्दो वा तमयमुपसजनीकृतस्वाधी ।

ध्वन्युक्त काव्यविशेष स ध्वनिरिति स्मृतिभि कथित ॥ ध्वन्या० ११३ ॥

३ भारतीय साहित्य शास्त्र चलन्व उपाध्याय (द्वि० सं०) पृ० २१३

४ हिंदी रसगगाधर (पहला भाग) नाग० प्रका० सभा काली पृ० ६४

अस्तु, ध्वनि का प्रयोग—यज्वं गं व्यज्वं अथ, व्यभ्याय, व्यजना यापार तथा व्यग्य प्रधान काय—इन पाँच अर्थों में हुआ है।^१ ध्वनि के अन्वयार्थों का दग्गन से भी विभिन्न अर्थों की साथवता सिद्ध हो जाती है।^२ किन्तु काव्य शास्त्र में गर्वाधिन मायता निम्नलिखित श्लोकाय की है—

प्रतीयमान पुरयदेव अस्वस्ति वाणीषु महाकव्यानाम् ।

यत तत प्रतिद्वावयवातिरिक्त विभाति लावण्यमियाङ्गनाम् ॥^३

अर्थात् महाकवियों की वाणी में वाच्याय से भिन्न प्रतीयमान अथ रमणियाय वं (मुग्ध नयन वशात्) अगोपागो के अतिरिक्त (उनसे भूत हुए) लावण्य वं ममान कुछ और ही है। जिस प्रकार दीपक तथा प्रकाश एक दूसरे से पृथक् किन्तु साधन साध्य भाव से सम्बद्ध है वाच्याय तथा ध्वनि का सम्बन्ध भी उसी प्रकार का है। कवि को साधन और साध्य दोनों की ही अपेक्षा रहती है—

आलोकार्यो यथा दीपनिस्त्राया यत्नवान् जन ।

तदुपायतया तद्वदर्थे वाच्ये तदादत् ॥^४

महान कवियों की सरस्वती उस स्वाद अथ का विकीर्ण करती हुई प्रति भासमान प्रतिभा विधेय का प्रकट करती है^५ जहाँ अथ स्वयं को तथा गन्द अपन अभिधाय अथ को गौण करके उस अथ को प्रकाशित करत हैं वही काव्य विद्या विद्वाना द्वारा ध्वनि कहा जाता है।^६ परवर्ती विद्वाना न इन्हीं तथ्या को अपन अपन प्रकार में दुहराया है। आचार्य भिखारी दास ने बड़े सरल गं गं म ध्वनि की परिभाषा दी है—

वाच्य अरथ से ध्वग मे चमत्कार अधिकार ।

धुनि ताहीं कों कहत हैं उत्तम काव्य विचार ॥^७

ध्वनि के आत्म पद पर आसीन हो जाने के कारण अलवार, रीति वराति गुण, दोष आदि काय के बाह्याणा का महत्व निश्चित ही कम हो गया। उसका स्थान पर काव्य के सूक्ष्म एवं आंतरिक अगो का महत्व स्थापित हुआ। परन्तु यह स्थापना गुडिया का खेल न थी। हमने लिए काव्य शास्त्रियों में बहुत दिनों तक कडा सघष तथा उग्र वाद विवाद चलता रहा था।

ध्वनि की स्थापना

आनन्दबदन के उपरांत ही भट्टनायक ने यजना व अस्तित्व का निषेध करत हुए भाववत्त्व और भाववत्त्व दो काव्य शक्तियों की उद्भावना की थी। किन्तु

१ हिन्दी ध्वन्यालोक (भूमिका) पृ० २४

२ (क) ध्वनति य स व्यञ्जक ध्वनि (ख) ध्वनति ध्वनयति वा य स व्यञ्जकौर्थो ध्वनि (ग) ध्वन्यत इति ध्वनि इत्यादि

३ सं ६ तव ध्वन्यालोक (क्रमग) १ ४ १ ८ १ १६ १ १३

७ काव्यनिर्णय सं जवाहरलाल चतुर्वेदी पृ० ११

अग्निवत् गुप्त न सजल तर्कों द्वारा उनको अन्तर्गत प्रमाणित किया एवं व्यजना की ही पुष्टि की। भट्टनायक के पश्चात् ध्वनिवाद को कतक और महिमभट्ट जैसे परास्तों विरोधिया का सामना करना पड़ा। कतक न ध्वनि को वक्त्रोक्ति के अन्तर्गत ही ग्रहण करके उसको काव्य की आत्मा मानने से दकार कर दिया। उधर महिमभट्ट न कहा कि 'यजना की उद्भावना ही तक सम्मत नहीं है। शब्द भी वेवत् तो ही शक्तिया मानी गई हैं—अभिधा और लक्षणा, यह तीसरी शक्ति कहा स आ गई। वे स्वयं तो शक्ति की वेवत् एक ही शक्ति मानत हैं—अभिधा। वास्तव में जिम व्यजना कहा गया है, वह स्वतन्त्र शक्ति न होकर वेवत् अनुमान का ही एक विाप भेद है—जिस उद्धाने नाम दिया काव्यानुभूति'। इसी काव्यानुभूति के द्वारा सहृदय का रसानुभूति हाती है। महिमभट्ट का यह मिदान्त्र स्पष्टत ही शकुन के अनुमितवाद से प्रभावित था और उसी की तरह यह भी ग्राह्य न हो सवा। भट्टनायक कतक और महिमभट्ट के परास्त हो जान पर ध्वनि का राज्य एक प्रकार स अकण्ठक ही हो गया।^१ आनन्दवदन, मम्मट तथा पटिनराज जगनाथ को इस स्थापना के बृहन्नयी की सना दी जा सकती है।

ध्वनि और रस

ध्वनि की स्थापना भारतीय काव्य शास्त्र में एक युगान्तकारी घटना थी। यद्यपि 'वनि सम्प्रदाय को रस सम्प्रदाय का ही विन्तत रूप भी कह दिया जाता है परन्तु ध्वनि तथा रस दो पृथक् सम्प्रदाय हैं। कारण सर्वाधिक माय रस सिद्धांत की शिपय सीमाएँ थी। द्विभाषानुभाव सचारियों के सवत्र एक साथ एकनित न हो सकन के कारण अत्यंत मनोहारी एवं चमत्कारपूर्ण मुक्तत रस काव्य के अन्तर्गत न आ पाते थ। जबकि उनमें ध्वनि निश्चित ही हो सकती है। 'वनि और रस में ध्वनि सिद्धांत के अनुमार पल्लव ध्वनि का ही भारी है। रस की स्थिति ध्वनि के विाप सभव नहीं है परन्तु ध्वनि की स्थिति रस विहीन हो सकती है। वस्तु ध्वनि अतकार ध्वनि—ध्वनि काव्य के उत्कृष्ट रूप हैं। अतः काव्य में अनिवायता ध्वनि की है रस को नहीं। रस के विना काव्यरव सभव है, ध्वनि के विना नहीं। आनन्दवदन के मत में ध्वनि काव्य की आत्मा है। रस परम श्रेष्ठ तत्व अद्वय है किन्तु आत्मा नहीं।^३ 'वनि की स्थापना से रसतर काव्य को भी सम्मानित स्थान प्राप्त आ गया। इतना ही नहीं ध्वनिहीन काव्य की भी सवथव विगहणा नहीं हुई और उस भी चित्र-काव्य की काटि में अन्तर्भुक्त कर लिया गया। पतिनराज न तो एह पण और प्राण बड़कर काव्य काटिपा की सव्या में एक को और वृद्धि कर दी। उद्धाने सांगतकारा को अधम अर्थालकारा को मध्यम गुणीभूत ध्वन्य का उत्तम तथा ध्वनि को उत्तमात्तम काव्य

१ रीति काव्य की भूमिका—डा० नगत्र (द्वि० स०) पृ० ११४

२ साहित्य शास्त्र का पारिभाषिक शब्द शोध—राजेन्द्र द्विवेदी (१९५५) पृ० १०५

३ भारतीय काव्य शास्त्र की भूमिका (भाग २) डा० नगत्र पृ० ३८६

वहकर वर्गीकृत किया। उन्होंने ध्वनि के स्थान पर रसवाद के प्रवल घ्राग्रह की अत्यन्त बहु आलोचना कर ध्वनि एवं रस का समन्वय सा स्थापित कर लिया। हिन्दी व अधिकांश आचार्यों ने ध्वनि एवं रस को प्रायः एक ही साथ वर्णित किया है। फिर भी ध्वनि का अपना महत्व है अपना क्षेत्र है। उसके भेद प्रभेदादि भी रस से भिन्न है।

ध्वनि के भेद तथा रहीम का नीति काव्य

आनन्दवदनाचार्य ने ध्वनि की स्थापना बहुत ही 'यापक' आधार पर की थी। उन्होंने रस, अलंकारादि सभी का ध्वनि में समाहित कर लिया था। वदचित इसी लिए ध्वनि के तीन भेद किए गए थे—वस्तु ध्वनि, रस ध्वनि और अलंकार ध्वनि। एक को दूसरे और दूसरे का तीसरे भेदों में सम्मिलित करने लोचनकार ने ध्वनि के ७४२० भेद बताए हैं।^१ काव्यप्रकाशकार तथा साहित्यदण्डकार ने इन्हें सुधारत हुए क्रम १०४५५ तक सीमित करने का उपक्रम किया है। पंडितराज ने तो समग्र योग और भी कम अर्थात् ३८७५ तक कर दिया है।^२ किन्तु मोटे तौर पर मूल भेद केवल दो हैं—लक्षणा मूला ध्वनि और अभिधा मूला ध्वनि। इन्हीं का दूसरा नाम क्रमशः अविवक्षित वाच्य ध्वनि तथा विवक्षित वाच्य ध्वनि अथवा विवक्षितार्थपर वाच्य ध्वनि है। डा० गुलाबराय के मत में विवक्षितार्थ परवाच्य का तात्पर्य है वाच्यार्थ का अस्तित्व रहत हुए भी किसी दूसरे अर्थ का रहना। तथा अविवक्षित वाच्य का तात्पर्य है वाच्यार्थ करने की विवक्षा न रहना क्योंकि उसमें तो वाच्यार्थ का बोध (स्वयं) ही जाता है।^३ डा० ग्रामप्रकाश के अनुसार इन दोनों भेदों का आधार विवक्षा का न होना एवं विवक्षा का होना है। विवक्षा का अर्थ इच्छा है। कई बार व्यंग्याय की प्राप्ति में वाच्यार्थ की इच्छा का अभाव रहता है तब लक्षणा द्वारा व्यंग्याय पर पहुँचा जाता है। कई स्थलों पर वाच्यार्थ के बाध से व्यंग्याय की प्रतीति सीधी ही जाती है।^४

लक्षणा मूला (अविवक्षित वाच्य ध्वनि) को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है—अर्थान्तर सन्निहित वाच्य और अर्थान्तर तिरस्कृत वाच्य। इन भेदों का आधार वाच्यार्थ का व्यंग्याय में सन्निहित हो जाना (ममा जाना) अथवा अत्यन्त तिरस्कृत (उपेक्षित) रहना है। 'वनक' भी पदगत एवं वाक्यगत होने से अनन्तक भेद हो जाते हैं। लक्षणा मूला व समान ही अभिधा मूला ध्वनि के भी मूलतः दो भेद हैं—असलक्ष्य क्रम व्यंग्य ध्वनि तथा असलक्ष्य क्रम 'यम्य' ध्वनि। यहाँ विशेष रूप से यह बात ध्यान देने

१ ध्वन्यालोक लोचनटीका तृतीय उद्योत चारिका सत्यः ४३

२ हिन्दी रसगंगाधर (पहला भाग) ना० प्र० स० कागा (द्वि० स०) पृ० १०१

३ सिद्धांत और अध्वयन डा० गुलाबराय (छठा स०) पृ० २५५

४ ध्वन्यालोचन डा० ग्रामप्रकाश गास्त्री, पृ० ३४

५ अविवक्षितवाच्यो यन्तत्र वाच्य भवेद ध्वनौ।

अर्थान्तर सन्निहितमर्थान्तर वा तिरस्कृतम् ॥ (मूत्र ३६) काव्यप्रकाश ८०४

वाक्य है कि ग्रथकार (आचार्य मम्मट) ने उसको 'अत्रमन्यग्रम' न कहकर अलप्यत्रम-व्यग्र ध्वनि कहा है। इसका अभिप्राय यह होता है कि उसमें वाच्य और व्यग्र की प्रतीति का क्रम तो अवश्य है परन्तु 'नीघ्रता' के कारण वह दिखाने नहीं देता। विभाव, अनुभाव आदि की प्रतीति ही रस नहीं है अपितु उनकी प्रतीति रस प्रतीति का कारण है। विभावादि की प्रतीति होने के बाद रसादि की प्रतीति होती है। इसलिए रसादि की प्रतीति में रस अवश्य रहता है, परन्तु जिस कमल के सौ पत्ता को एक साथ रखकर उनमें सुइ चुभाई जाय तो वह उन पत्ता का भेद तो नम स ही करती है परन्तु ऐसा प्रतीति होता है कि वह एक साथ सौ पत्ता के पार पहुँच गयी है इसी प्रकार रस की अनुभूति में विभावादि की प्रतीति का क्रम हान पर भी उनकी प्रतीति न हान से उसको असलक्ष्य क्रम व्यग्र ध्वनि कहा गया है।^१

इसमें रसादि (रस भाव, रसाभास भावाभास, भावाभ्य, भावसिद्धि भाव-ग्वलना एवं भावशान्ति) आठ भेद होते हैं। अतः स्पष्ट है कि रस अमलक्ष्यक्रम व्यग्र ध्वनि का अंग अथवा भेद है। किन्तु रसादि असलक्ष्यक्रम व्यग्र ध्वनि अन्तर्गत तभी आते हैं जब वे वाच्य विशेष में प्रधानतः स्थित हों। अथवा वस्तु अथवा अलकार किसी अर्थ के अंग बनने पर वे गुणीभूत व्यग्र कहलाते हैं अमलक्ष्यक्रम नहीं। असलक्ष्यक्रम के अनिर्दिष्ट विवक्षिताय परवाच्य ध्वनि का दूसरा भेद अमलक्ष्यक्रम व्यग्र है। इसमें अनुस्वानाभ ध्वनि भी कहते हैं।^२ सलक्ष्यक्रम व्यग्र ध्वनि में वाच्य के व्यग्राय का क्रम लक्षित होता रहता है। वहीं यह शब्द पर आघत रहती है वहीं अर्थ पर और वहीं तोना पर। इसी आधार पर हमें तीन भेद किये जाते हैं—(१) शब्द शक्ति सभवा (२) अर्थशक्ति सभवा और (३) शब्दाय उभय शक्ति सभवा। इनके भी भेद प्रभेद हैं किन्तु उन सब में उलझने की यहाँ आवश्यकता नहीं है।

शब्दशक्ति सभवा (अभिधा मूला) सलक्ष्यक्रम व्यग्र

यह ध्वनि कहा मानी जायगी जहाँ ध्वन्याय की प्रतीति किसी शब्द विशेष के कारण हानी हो और उसका पर्याय रखने पर ध्वनि चारुव समाप्त हो जाता है। ऐसी उक्ति में यदि अनकार भी हो तो उस अलकार रूप ध्वनि कहेंगे। और यदि अनकार न हो तो बल्लुक्ष्य ध्वनि कहेंगे। एक उदाहरण लीजिए—

कमला विर न रहीम कहि यह जानत सब कोय ।

पुण्य पुरातन की बधू क्यों न चचला होय ॥ २३—पृ० ३

१ श्री मम्मटाचार्य विरचित वाच्य प्रकाश व्याख्याकार आचार्य विवेकर स० डा० नगत्र (वाराणसी), पृ० ६४

२ अनुस्वानाभ सलक्ष्यक्रम व्यग्रस्थितिस्तु य ।

शब्दार्थोभयशक्त्युत्पत्तिरिषा स कथितो ध्वनि ॥ —सूत्र ५२

प्रथम पक्ति का वाच्य है धन की अस्थिरता। परन्तु इसका ध्वन्यार्थ है कि ससार इतना मूढ़ है कि यह जानते हुए भी कि धन स्थाई वस्तु नहीं उसके सग्रह में जीवनभर लगा रहता है। इसी क्रम में विचार करते हुए अगला भाव निकलता है कि जानबूझ कर भी अथ सग्रह के चरचर में जीवन गवा देना बहुत बड़ी मूर्खता है और उमत्त अगला क्रमिक अर्थ है कि अस्थिर धन सग्रह के स्थान पर जीवन का उपयोग धर्म पुण्यादि स्थिर महत्व की वस्तुओं में करना चाहिए।

दूसरी पक्ति में व्यंग्याथ और भी सीखा एव चमत्कारपूर्ण है। क्याकि पुरुष पुरातन अर्थात् वृद्ध की वधू अर्थात् युवती का चंचला होना स्वाभाविक है। इसलिये आयु से गिरे हुए पुरुषों की नवयुवतियों से विवाह कराते समय भली प्रकार से आगा पीछा सोच लेना चाहिए। क्याकि उनकी युवती वधुओं द्वारा चंचला बनकर बुल मयाग आदि को समाप्त कर दिया जाना संभव है। अतः अगला क्रमिक व्यंग्याथ होगा कि वृद्धों को युवतियों से विवाह नहीं करना चाहिए।

यहां अथ स्पष्ट ही क्रम क्रम से आगे बढ़ता प्रतीत होता है। अतः सलस्य क्रम व्यंग्य ध्वनि है। दूसरी ओर कमला के स्थान पर धन सम्पत्ति—'रहमी' आदि शब्दों के रत्न दान से दोहे का चारत्व समाप्त हो जाएगा। तृतीय चरण पुरुष पुरातन अर्थात् विष्णु से सम्बद्ध है। इसी प्रकार पुरुष पुरातन न कहकर भगवान् विष्णु या वृद्ध पुरुषादि के कहने से भी भाव नष्ट हो जाता है। इतना ही नहीं वध के स्थान पर स्त्री पत्नी दुलिन इत्यादि शब्दों से भी बात नहीं बनती क्याकि स्त्री-पत्नी आदि से आयु का चढतापन—यौवन अथवा चाचल्य आदि व्यक्त नहीं होते और दुलिन अर्थात् नव-नवेली सद्यविवाहिता युवती के भी सग-साथ वाला स परिचय के अभाव में चंचलता की संभावना नहीं है। कमला पुरुष पुरातन एव वधू के स्थान पर पर्याया को रखने से व्यंग्याथ तथा उसका सौन्दर्य समाप्त हो जाता है। अतः यहाँ शब्दशक्ति संभवा ध्वनि है जसा कि ऊपर बताया गया है कि इसके दो भेद वस्तु एव अलंकार ध्वनि है। उस दृष्टि से प्रस्तुत दोहे की प्रथम पक्ति में कोई अलंकार न होने के कारण वस्तु रूप ध्वनि तथा दूसरी पक्ति के पुरुष पुरातन (वृद्ध तथा विष्णु) में अलंकार होने के कारण अलंकार रूप ध्वनि है। इस प्रकार यह दोहा अभिधा मूला सलस्यक्रम व्यंग्य की शब्द शक्ति संभवा ध्वनि का बहुत सुंदर उदाहरण है। निम्न लिखित दोहों में भी यही ध्वनि है—

कमला धर न रहीम कहि लखत अथम जे कोय ।

प्रभु की सो अपनो कहे क्यों न फजोहत होय ॥ २४—पृ० ३

कहि रहीम जग भारियो, ननवान की चोट ।

भगत भगत कोउ बचि गये चरन-कमल की ओट ॥ २५—पृ० ३

१ लक्ष्मी के कहने पर विष्णु से सम्बद्धता में बाधा न पड़त हुए भी उसके कमला सत्व आदि का भाव नहीं बताता। अतः सौन्दर्य कमला कहने से ही सुरक्षित रहता है।

इन म प्रथम दोह का व्यंग्याथ है कि राक्षसी धन ऐश्वर्यादि के उपभाग को स्थिर मान लेना उत्तम नहीं अधम विचार है जा दूसरे की स्त्री को अपनी समझ बैठेगा उसका निरादर निश्चिन्त है। साथ ही 'प्रभु की स अभिप्राय प्रभु की पत्नी तथा अपनी स अभिप्राय अपनी पत्नी स है। किन्तु इन शब्दा स किसी अलंकार की स्पष्ट सिद्धि नहीं। अत्र वस्तु रूप ध्वनि होती है। दूसरे दोह म भौतिक आकषण की प्रबलता, प्रसङ्गता एव घातकता पर भक्ति की विजय व्यंग्य है। इसका मा यम है 'नयन बाण तथा चरन-बमल का रूपक अलंकार। बाण स वचन के प्रसङ्ग मे भगत भगत को भी दौड़ते-दौड़ते या भागत भागत इत्यादि शब्दो से व्यक्त नहीं किया जा सकता क्योंकि वह भागत भागत' के भाव ही भक्त भवन का चोत्तन कर रहा है। कुल मिलाकर दोहे मे बड़ा उदात्त व्यंग्याथ व्यजित है। अत्र यहा अभिधा मूला सलक्ष्य नम व्यंग्य की शब्दात्कृत्युत्थित अलंकार ध्वनि का सौ त्य अपनी सहज सज्जधज स उपयुक्त है।

अथशक्ति सभवा सलक्ष्य ऋम व्यंग्य ध्वनि

जहा सलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि किसी शब्द विशय पर निभर न करक अथ की शक्ति द्वारा व्यजित होती है वहा अथशक्ति सभवा ध्वनि कहलाती है। शब्द विशेष के स्थान पर उसका पर्याय रत्न दन से व्यंग्याथ म किसी प्रकार का आधात उपस्थित नहीं होता—

रहिमन असुआ नयन डरि, जिय दुख प्रगट करेय ।

जाहि निकारो गेह ते कस न भेद कह दे ॥ १५—पृ० १६

यहा अभिधाथ है कि आसू के निकलने स हृदय का दुख प्रकट हो जाता है जिस घर से निकाल दिया जाय वह भेद कह ही दगा। किन्तु इसके व्यंग्याथ नम स कई निकलते जात हैं। भारी से भारी दुख म भी हम दूसरा के सम्मुख अपने आसुआ पर नियंत्रण रखना चाहिए। रोने का अर्थ है ससार के सामन दुख का डाल पीटना। हम अपने घर से किसी को नहीं निकालना चाहिए। सगे सम्बन्धीया मित्रा एव भेद जानने वाला का अपने स अलग नहीं होने दना चाहिए इत्यादि इत्यादि। यहा यदि आसू नयन आदि क स्थान पर इन शब्दा के पर्यायवाची रख दिय जाँँ तो भी ध्वनार्थो म कोई अन्तर नहीं आएगा। अत्र इस दोह म अथशक्ति सभवा अभिधा मूला व्यंग्य ध्वनि है। इसी प्रकार दूसरा दोहा लीजिए—

प्रीतम छवि ननन बनी पर छवि वहाँ समाय ।

भरी सराय रहीम ललि पथिव आप फिरि जाय ॥ १६—पृ० १७

इस दोह का व्यंग्याथ है कि हृदय म किसी सच्चे प्रमी का अनुराग उत्पन्न हान पर मन ससार की सुन्दर से सुन्दर वस्तु पर भी आकषित नहीं हो सकता है। पारलौकिक दृष्टि स ध्वन्याथ होगा कि प्रभु भक्ति म चित्त रमत ही ससार के आकषण भूठे पड जायगे। अथवा भौतिकता स अपनी रक्षा का एकमात्र उपाय है मन म प्रियतम प्यारे परमात्मा की भक्ति उत्पन्न कर लेना। इस दोहे के शब्दा का भी

पर्याया द्वारा स्थानापन करने पर ध्व-याय वही रहेगा। अतः यहाँ अथ सभवा ध्वनि है। इसी प्रकार निम्नलिखित दोहा म बहुत सुन्दर, अथशक्ति सभवा सलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि है—

बड़े पेट के भरन को है रहीम दुख चाडि।

याते हाथिहि हहरि क दिये दात द्व काँ ॥ १२३—पृ० १२

बड़े दीन को दुख सुने, लेत दया उर आनि।

हरि हाथी सो कब हुती, कहू रहीम पहिचानि ॥ १२२—पृ० १२

परजी साह न ह्व सके गति टेढी तासीर।

रहिमन सीधे चाल सो प्याबो होत बजार ॥ १२०—पृ० १२

यहाँ श्रम से अधिक लोभ लालसा का परिणाम दीन दुख-कातरता की महत्ता तथा जीवन के सच्चे-सरल माग का सुफल व्यंग्य है।

शब्द अथ उभय शक्ति सभवा सलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि

गन्द एव अथ पर पृथक् पृथक् तो सलक्ष्यक्रम व्यंग्य आधारित रहता ही है इन दोनों के सम्मिलित रूप म भी ध्वनि सन्निहित रहती है। जहाँ ध्व-याय गन्द और अथ दोनों की क्षमता पर निर्भर रहता है वहाँ गन्द अथ उभय शक्ति सभवा ध्वनि रहती है—

गन्द अथ दूहु सक्ति मिलि द्यग कड अभिराम।

कवि शोबिद तिहि कहन है 'उभय सक्ति' इहि नाम ॥ —आ० भिषारोदास
हमार साहित्य म पानी तथा पानी क पर्यायो स बाने वाल गन्द की बहुसंख्यक अनेकायता प्रसिद्ध है।^१ रहीम के निम्नलिखित सुप्रसिद्ध दोहा म लज्जा सम्मान मर्यादा आदि का महत्त्व अनेकायन पानी (गम चमक जल) गन्द के विशेष प्रयाग से व्यंग्य है। गन्द कथ्य मानी मानग आदि के सामान्य अथ पर निर्भर है। अतः उभय शक्ति सभवा ध्वनि है—

रहिमन पानी राखिए विन पानी सब सूत।

पानी गए न ऊधरे मोनी मानुष चून ॥ २०५—पृ० २०

इस प्रकार क अथ उन्मूलन भी दग जा सक्त है—

कहु रहीम कसे बन अनहोनी ह्व जाय।

मिला रहे श्री ना मिले तासी कहा बसाय ॥ ३४—पृ० ४

जो रहीम गति दीप की सुत सपून की सोय।

बड़े उजरो तहि रह गए अघेरो होय ॥ ७८—पृ० ८

१ (क) अथक अमय अरु बारि पुनि पानी पुष्कर होय।
निग दया मति नाम य सप्या धौनिम जोय ॥६॥

(ख) नार छार चर जुरि मकर बजुरे जल उदोत।
ज हट जल जोरत बमन धि जुरे सागर हात ॥३॥

—नन्ददास अथापनी (नाममाता परिशिष्ट) ग० प्र० स० पृ० १०१ तथा ६१

अयसक्ति सभवा ध्वनि के भी वारह भेद प्रभेद किए जाते हैं। जिनम प्रथमत गणना तीन की है—

१ स्वत-सभवी २ कवि प्रौढोक्ति सिद्ध ३ कविनिबद्धवक्त प्रौढावित।

प्रसिद्ध अथ द्वारा व्यक्त ध्वनि को स्वत सभवी तथा कवि कल्पित अथ द्वारा व्यक्त ध्वनि को कवि प्रौढोक्ति सिद्ध कहा जाता है। और जहां नायक-नायिकादि पात्र कवि कल्पित उक्ति स ध्वनि व्यक्त करती है, वहां कवि निबद्ध वक्त प्रौढोक्ति ध्वनि होती है। इनके भी चार चार भेद हैं—

१ वस्तु से वस्तु

२ वस्तु से अलकार

३ अलकार से वस्तु

४ अलकार से अलकार

वस्तु से वस्तु ध्वनि का उदाहरण

पुरुष पूज देवरा, तिय पूज रघुनाथ।

कहि रहीम दोउन बने पडे बल कौ साथ ॥ ११८—पृ० १२

यहां रामचंद्रजी आदि प्रत्यक्ष भगवान तथा भूता आदि के पूजन म गृहस्थ का मत बभिय तथा दूसरी पक्ति म उसके भसे बल के साथ से (मत बभिय का) दुष्परिणाम व्यंग्य है। अत्र अलकार रहित इस दोहे मे वस्तु स वस्तु व्यंग्य है।

वस्तु से अलकार ध्वनि का उदाहरण

कमला धिर न रहीम कहि यह जानत सब कोय।

पुरुष पुरातन की बधू क्यों न चचला होय ॥ २३—पृ० ३

यहां वस्तु ध्वनि (सभवी चाचल्यादि चाचल्य) पुरुष पुरातनादि के कारण अलकार ध्वनि (दत्त) की व्याख्या पहल ही की जा चुकी है।

अलकार से वस्तु ध्वनि का उदाहरण

भार भौक के भार मे रहिमन उतरे पार।

प बूडे मरुपार मे जिनके सिर पर भार ॥ १३३—पृ० १३,

यहां प्रथम पक्ति म विद्यमान यमक मे वस्तु (लोकाभक्तिपूण जीवन का व्यय विनष्ट होना) व्यंग्य है।

अलकार से अलकार ध्वनि का उदाहरण

सति सकोच साहस सलिल मान सनह रहीम।

बडत-बडत बडि जात है घटत घटत गति सीम ॥ २६५—पृ० २६

यहां अनुप्रास अलकार प्रकट तथा लोप अलकार व्यंग्य है।

१ अयसक्त्युद्भवोऽप्यर्थो ध्यञ्जक सभवी स्वत।
प्रौढोक्तिमात्रासिद्धो या कवे तेनोम्भितस्य वा ॥
—काव्य प्रकाश चतुष उल्लास सू० ५४

एक दरिद्रता में नीरसता ही नीरसता रहती है, रस नहीं होता। उपर भनी का प्रत्यन्त तिरस्कार प्रप हा जायगा कुरी प्रभिवंशिता। शिष्य एक यष्टु का भी प्रार्थना कुछ एगा ही है। तात्पर्य यह है कि दीनता की शिष्यि प्रप्यत्त कत्प्रत्त होती है, क्योंकि दीन-दुनिया के कष्टों की प्रार निष्प समाज प्र्यात्त नहीं गता। कर्त्त भगवान ही उनका रक्षक है। प्रौर जब दीनयष्टु भा यष्टु ग रहे जगा कि प्राय होता है तब कर्त्त दीनता की दुरायस्था का कहना ही क्या? प्रत ध्यायात्त है कि शीत दुनिया की कत्प्र मय दत्ता पर मनुष्य ता क्या भगवान भी दत्ता नहीं करत।

काव्य कोटियाँ और रहीम

पंडितराज न काव्य की उत्तमात्तम प्रथम द्वितीय तथा प्रथम नाम न प्रार काटिया स्वीकार की हैं जयनि प्रथम विद्वात् प्रथम (प्रथम काव्य) द्वितीय (मुनीभूत व्यय काव्य) तथा तृतीय (प्रथम या चित्र काव्य) प्रथम कयत्त तीन ही काटियाँ मानत हैं। यहाँ चित्र काव्य शिष्य व्याख्यात्त है क्योंकि इनका तात्पर्य चित्रों का चित्र प्रस्तुत करने वाला काव्य नहीं प्रपितु प्रथम मोक्ष्य विज्ञान कयत्त प्रनकारात्त की शीटा पर प्रप्राप्त काव्य से है। तीना कोटियाँ क उदाहरण प्रस्तुत हैं—

उत्तम काव्य

कमला घिर न रहीम कहि, यह जानत सब कोय ।
 पुरप पुरातन की यष्टु क्यों न प्रचलता होय ॥ २३—पृ० ३
 प्रीतम छवि ननन यती पर छवि कहीं समाय ।
 भरी सराय रहीम तल्लि प्रप पयिक फिर जाय ॥ ११६—पृ० १२
 रहिमत प्रंसुवा नयन दरि जिप कुल प्रगट करेइ ।
 जाहि निकारो मेहते, कत्त न भेद कहि देइ ॥

मध्यम काव्य

दे रहीम नर प्रथम हैं पर उपकारी प्रग ।
 वांछन प्रारे के लगे, ज्यो मेहदी को रग ॥ २४८—पृ० २४
 सोत हरत तम हरत नित भुवत भरत नहि प्रकू ।
 रहिमत तेहि रवि को कहा जो घटि लल्ल उलूक ॥ २६६—पृ० २६

चित्र काव्य (प्रथम काव्य)

रहिमत तुम हमसा करी करी करी जो तीर ।
 बाड़े दिन के भीत हो, गाड़े दिन रघुबीर ॥ १२—१६

निष्कर्ष

सकड़ा वर्णों के निरन्तर विचार विमर्ग के पश्चात् यह निश्चित हो चुका है कि भारतीय काव्य शास्त्र के अनुसार काव्योत्पत्ति की सर्वाधिक माय कसौटी ध्वनि है। रस, अलंकार रीति तथा वञ्जाति आदि सभी, किसी न किसी रूप से ध्वनि के सौंदर्य के अतगत समाहित हैं। ध्वनि की कसौटी पर रहीम का नीति-काव्य धावन तोले पाव रत्ती उतरता है। ध्वनि सम्बन्धी प्रायः सभी प्राचीन नवीन काव्य गास्त्रिया न ध्वनि भेदा के उदाहरण अधिकांशतः शृंगार के क्षेत्र में जुटाए हैं, किन्तु रहीम की विशेषता यह है कि ध्वनि के प्रायः सभी प्रमुख भेदा के उदाहरण उनके नीति-काव्य में हैं। इसका अभिप्राय यह नहीं कि रहीम ने किसी लक्षण ग्रन्थ के ध्वनि विवेचन को दृष्टि में रखकर अपने नीति-काव्य का सजन किया था। वास्तविकता यह है कि ध्वनि का सूक्ष्म सौन्दर्य उत्तम काव्य की स्वाभाविक विशेषता है और वह रहीम जैसे अनुभवों सहृदय, विद्वान् एवं नैसर्गिक प्रतिभा सम्पन्न कुशल कवि की सृष्टि में सहज ही समाविष्ट हो गई है। ध्वनि, यदि उत्कृष्ट काव्य की कसौटी है, तो रहीम का नीति-काव्य उस पर खरा उतरने वाला कुन्दन है।

विनष्ट होती रहती हैं उसी प्रकार अक्षर तत्व में नाना पन्था उत्पन्न होन एवं उन्मी म लय होन रहते हैं ।^१

उद्धरणीय पाश्चात्य सम्मतियाँ

भारतीया की प्राचीनकालीन भाषा-मकल्पना इतनी महत् है कि "अक्षरों के भाव की गाय यह स्पष्ट कर देती है कि सस्कृत गत भारतीय विज्ञान एवं दान की विचारधारा के पूण स्पष्टीकरण हैं ।"^२ व्मीलिए पाश्चात्य भाषाशास्त्री स्वयं अपनी गति, ग्रीक तथा अग्रेजी भाषा लिपि आदि की असमयता^३ तथा अव्यवस्थितता^४ स्वीकार करत हुए भारत के प्राचीन भाषा शास्त्रियों एवं व्याकरण की वैज्ञानिकता का कृण मानत हैं ।^५ इग्नड क महान भाषा वैज्ञानिक जे० आर० फ्य का कथन उद्धरणीय है—

Our English alphabet and orthography are disgracefully and ridiculously imperfect^६

१ यया मुदीप्तात्पावकात्स्फुलिगा

सहस्रग प्रभवते सरुपा ।

तया क्षराद विविधा सौम्यभावा

प्रजायते तत्र चवापि यति ॥—मुण्डकोपनिषद ॥

२ रनीसा आफ देवनागरी अक्षराज—प्रेमकिशोर भटनागर (दिल्ली) प० ६६

3 and 4 We Europeans 2500 years later and in a scientific age still employ an alphabet which is not only inadequate to represent all the sounds of our language but even preserves the random order in which vowels and consonents are jumbled up as they were in the Greek adaptation of primitive semetic arrangement of 3 000 years ago —Prof Macdonell *A History of Sanskrit Literature* P 424

५ प्रो० एनन न पाणिनी महान से भी पूव के ६८ भाषा शास्त्रियों की मूची प्रस्तुत की है—देविए फोनेटिक्स इन एन्टी इण्डिया लेग्क डल्यू० एस० एनन (यूयाक) पृ० २

6 The most scientific grammar that world has ever produced with its alphabet based on thoroughly phonetic principles was composed in India about 7th and 8th century B C —Goldstucker *Panini and His Place in Sanskrit Literature*

7 Foundation of the science of grammar was laid by the Indians It is a common place of linguist to acknowledge the debt we owe to the Indian grammarians

—H M Lambert *Introduction to the Devnagri script*

(Page— forward)

८ वनी—प्रारम्भिक पारवड का वही पृष्ठ

अर्थात् अंग्रेजी लिपि एवं वण विद्या गरिमाहीन तथा उपहासास्पद सीमा तक अपूर्ण हैं। इतना ही नहीं विश्वविख्यात भाषाविद वजामिन ली हफ का कथन है कि, " जहाँ तक हम जात है आज के रूप में ही, ईसा से कई शताब्दि पूर्व पाणिनी ने इस (भाषा) विज्ञान का गिलान्यास किया था। पाणिनी ने उस युग में वह ज्ञान प्राप्त कर लिया था जो हम आज उपलब्ध हुआ है। (संस्कृत) भाषा के वणन अथवा संस्कृत भाषा के लिपिवद्ध करने के लिए पाणिनी के सूत्र वीजगणित के सूत्रा (फामूला की भाँति हैं। ग्रीक लोग न वस्तुतः इस (भाषा शास्त्र) की अद्योगति कर रखी थी। इनकी श्रुतियाँ से जात होता है कि वनातिक विचारक के रूप में हिंदुओं के मुरादल में ये (ग्रीक लोग) कितने निम्न स्तर के थे (और उनकी भ्रातिपूर्ण विचारधारा का प्रभाव दो सहस्र वर्षों तक चलता रहा था। वास्तव में १६वीं शताब्दि के प्रारम्भ में जब स पश्चिम ने पाणिनी का प्राप्त किया तभी से आधुनिक वनातिक भाषा शास्त्र का प्रारम्भ हुआ। "

भारतीय भाषा शास्त्र एक भाषा के इतने स्मृद्ध ज्ञान पर भी संस्कृत का हास हुआ। इस कारण भी कदाचित् भाषाशास्त्र एवं व्याकरण की उन्नति ही थी। व्याकरण के सम्बन्ध में उस इतना जफड किया कि वह लोकभाषा के विकसित रूप से तालमेल स्थापित न रख सकी। लोकभाषा विकसित होत हुए तथा प्राकृत, पालि अपभ्रंश गान्धि के सोपाना का पार करती हुई हिन्दी के रूप में उन्मि हुई। हिन्दी भी निरन्तर विकसित होती रही है।^१ बीरगाथा काल की हिन्दी आधुनिक हिन्दी नहीं थी। आज तो उसका रूप मध्ययुगीन भाषाओं से भी सामान्यतः भिन्न दिखाई पड़ता है।

मध्ययुग की साहित्यिक भाषाएँ

हिन्दी साहित्य के मध्ययुग में जिस विपुल साहित्य की सृजना हुई है उसमें हिन्दी का सामान्य पाठक भी अपरिचित नहीं। उल्हान जायसी कबीर नानक गूर तुलसी रहीम रमगान मतिराम बिहारी आलम घोषा ठाकुर पद्माकर सनापति वृद्ध भक्ति सभी महान्क मध्ययुग के हीरे हैं। यद्यपि कुछ श्रुतियाँ म डिगन रासम्याना भक्ति का प्रयोग दया जा सकता है किन्तु सप्रचलित दृष्टि से प्राधाय अथवा और श्रेय का ही रहा है। ये ही दो भाषाएँ साहित्यिक का कण्ठहार थीं। वन में समय बढ़िया न दाना भाषाओं का व्यवहार किया है। तुलसी और रहीम एस हा कवि हैं। जिनके दाना भाषाओं का व्यवहार गमान कुशलता एवं दक्षता से किया था।

१ भाषाशास्त्र का स्वरूप २०० उन्मनाराधन विचार (प्र० सं० इनाहारा) पृ० १८ पर उद्धरित।

२ अन्य भाषाओं की भी यहाँ कहना है। अनुमति का कथन है कि— चौकी की भाषा के चौकी की अथवा ना (आज की अथवा) में भिन्न ही है पर तुलसी की भाषा के राजा एत के मन्तव्य के समय का अथवा तो आज किन्हीं भाषा के समान है।

अवधी भापा

हिन्दी के क्षेत्र में अत्यधिक प्राचीन काव्य भाषाएँ में अवधी का स्थान अद्वितीय है। आज भी रायबरेली लखनऊ प्रतापगढ़, सीतापुर, मिर्जापुर, बाराबंकी तथा उन्नाव आदि जिला में अवधी का, जन भाषा के रूप में प्रचलन है। जाज प्रियसन ने अपने सर्वे, बाबूराम सक्सेना ने अपने ग्रंथ 'अवधी भाषा का विकास' तथा विभिन्न भाषा वचनिका ने इसके भाषागत रूप पर विस्तार से विचार किया है। प्राचीनकाल के मूफ़ी प्रेमान्वयन काव्या की तो प्रायः साम्राज्यी अवधी ही थी। कुतबन, जायसी और मन्नन की भाषा में अवधी के स्वाभाविक, सरल एवं अदृशिम रूप के दर्शन होते हैं। "जायसी की अवधी भाषा शास्त्रिया के लिए स्वर्ग है जहाँ उनकी रुचि की अपरिमित सामग्री सुरक्षित है। मधिली के लिए जा स्थान विद्यापति का है, मराठी के लिए जो महत्व जानवरी का है वही महत्व अवधी के लिए जायसी की भाषा का है।" जायसी की सहज एवं अदृशिम अवधी में भिन्न परिष्कृत एवं संस्कृत रूप के दर्शन तुलसी के रामचरितमानस में होते हैं। तुलसी ने जिस प्रकार राम के रूप को निखिल भारतीय बनाया उसी प्रकार राम के क्षेत्र (अयोध्या) की भाषा का भी विस्तृत आधार प्रदान किया। रहीम की अवधी इन दोनों रूपों के बीच की कड़ी है। रहीम की अवधी में जायसी की अवधी का अलङ्करण तथा तुलसी की अवधि का बनाव निखार दाना ही एक साथ देने जा सकत हैं। वरव नायिका भेद की अवधी का मिठास तुलसी एवं जायसी दाना से अनूठा है—

भोरहि बोल कोइलिया बडवत ताप ।

धरी एक धरि अलिया रहु चुपचाप ॥ व० ना० भेद १२

चूनत फूल गुलबदा, डार कटील ।

टुटिगौ बंद अगिअवा फट्ट पट नील ॥ व० ना० भेद १३

नील मनिन के हरवा, नील सिंगार ।

किए रइनि अघिअरिआ, धनि अभिसार ॥ व० ना० भेद ७६

रहीम ने अवधी का उपयोग शृंगार निरूपण में ही किया है नीति-वचन में नहीं। हा, वराग्य एवं भक्ति सम्बन्धी बरवों में अवधी का प्रयोग अवश्य है—

मानुष तन अति दुलभ सहजहि पाय ।

हरि भजि कर सत सगति बह्यौ जताय ॥ वरव ५१ ॥

ज्यों चौरासी ललि में मानुष देह ।

त्योंही दुलभ जग में सहज सनह ॥ वरव ५० ॥

नीति के लक्ष्य में रहीम ने ब्रज का ही सर्वत्र प्रयोग किया है। यह बात दूसरी है कि किमी दाह में अवधी की थोड़ी-बहुत भन्ना दिखाई दे जाय अन्यथा उनके नीति-वाक्य की भाषा गुड ब्रज है।

ब्रज भाषा

ब्रज प्रदेश वृष्णयुगीन भारतवर्ष का चिर विकसित प्रदेश था 'विष्णुपुराण', हरिवंश पुराण^१ तथा भागवत^२ के साक्ष्य इस कथन के प्रमाण हैं। भारतीय इतिहास के मध्य युगीन घटना ब्रज का प्रथम कुछ इस प्रकार चला कि राजनीति सम्मता एवं सभ्यता का केन्द्र पूर्व की अपेक्षा पश्चिम की ओर सरकता गया। उधर धार्मिक दृष्टि से भी वृष्णभक्ति को बढ़ावा मिलता रहा। परिणाम यह हुआ कि ब्रज प्रदेश की भाषा का उत्तरोत्तर अधिकाधिक विकास होता गया। कुछ दिना तक तो अश्वधी और ब्रज दोनों ही साहित्य रचना होती रही किन्तु आगे चलकर अश्वधी पिछड़ गई और केवल ब्रज का प्रयोग ही शेष रह गया। यद्यपि साहित्य में आज ब्रज के स्थान पर खड़ी बोली का प्रयोग हो रहा है किन्तु अब भी ब्रज भाषा एक बड़े क्षेत्र की जन भाषा के रूप में बोली जाती है। मथुरा आगरा अलीगढ़ मनपुरी तथा एटा जिला में तो ब्रज का एक छत्र साम्राज्य है। आधुनिक ब्रजभाषा १ करोड़ २३ लाख जनता के द्वारा बोली जाती है। और लगभग ३८,००० वर्गमील क्षेत्र में पनी है।^३

इतने विशाल क्षेत्र का दैनिक वाप व्यापार चलाने वाली भाषा असमय नहीं हो सकती। और यदि असमय हो तब भी राजाश्रय प्राप्त करने पर वह समृद्ध भाषा से भी बाजी मार लेती है। विश्व साहित्य का इतिहास इस तथ्य का प्रमाण है। अंग्रेजी जर्मन तथा फारसी आदि भाषाओं के विकास में राजाश्रय का भारी योगदान स्पष्ट है। ब्रजभाषा भी इस कथन का अपवाद नहीं है। मुगल बादशाहों ने प्रारम्भ से ही स्थानीय भाषा को प्रश्रय प्रदान किया था। अश्वर की भाषा नीति चाहे राजनीतिक कारण से ही और चाहे सांस्कृतिक कारण से परन्तु थी अत्यधिक उदार। आगरे का मुगल दरवार ब्रज भाषी कवियों का अनाड़ा बन गया था। जहाँ बने हुए हिंदू राजाओं की सभाओं में ही कविजन थोड़ा बहुत उत्साहित या पुरस्कृत किए जाते थे, वहाँ अज बादशाह के दरवार में भी उनका सम्मान होने लगा। कवियों के सम्मान के साथ कविता का सम्मान भी यहाँ तक बढ़ा कि अब्दुरहीम खानखाना ऐसे उच्चपदस्थ क्या बादशाह^४ तक ब्रज भाषा में कविता करने लग।^५ और जिस भाषा

१ विष्णु पुराण २४ ८

२ हरिवंश पुराण ६५ १, १८४२ ६०

३ भागवत १० १ ८ १० ११ १७

४ हिंदी साहित्य कोश भाग १—(ज्ञानमण्डल, वाराणसी) पृ० ५६५

५ अश्वर की कविता का नमूना—

'साहि अश्वर' एक सम चले काहूँ बिनोद बिलोकन बालहि ।

आहट ते अयला निरहयो चकि चौकि चली करि आतुर बालहि ॥

त्यो बडो बेनि सुधारि घरो सुभई छवि यो ललना अरु लालहि ।

घपक चाह कमान चनावत काम जो हाय तिए अहि बालहि ॥

—हिंदी साहित्य का इतिहास—प्रा० रामचंद्र शुक्ल, पृ० १६०

६ वही पृ० १८६

म स्वयं सम्राट् कविता करते हैं। उसकी उन्नति को कौन रोक सकता था ? वैसे ही ब्रजभाषा धार्मिक एवं साहित्यिक दृष्टि से सम्पन्न हो चली थी। मूर तुलसी और रसखान जैसे भक्त कवि और कलाविद् उसकी मेवा में निरत थे। अतः उसका अवधो से आग निकल जाना स्वाभाविक था।

अवधो और ब्रज की एकता

उक्त विवरण से यह तात्पर्य न समझ लेना चाहिए कि अवधो और ब्रज में विराग, वैमनस्य अथवा प्रतिद्वन्द्विता थी। दोना भाषाओं में सहोत्तराशा जसा स्नह था। इसलिए कवि अपनी अपनी रचि के अनुसार कविता करते थे। कुछ कवि तो दोना में समान अविचार से कविता करते थे। इतना ही नहीं कुछ विद्वान अवधो एवं ब्रज के नितांत बिलगाव को ही स्वीकार नहीं करते। पाश्चात्य विद्वान प्रो० जूलिस तथा भारतीय विद्वान डॉ० रामदन भारद्वाज दोना भाषाओं की एकता में विश्वास रखते हैं और उनकी प्रयुक्तता के प्रचार का जाज ग्रियसन की वस्तुतः मानते हैं।^१ जो हा, दोना भाषाओं में अनेक सम्पन्न सत्र होते हुए भी याकरणिक संरचना में पर्याप्त भिन्नता है किन्तु रहीम के समय में अकबरी दरबार के सभी कवि ब्रज को अपना चुके थे।

रहीम की ब्रज भाषा

व्यक्तित्व के प्रसंग में यह स्पष्ट किया जा चुका है कि रहीम नाना भाषाविद् थे। जो व्यक्ति तुर्की और फारसी जसी दो एकदम प्रयुक्त भाषाओं में गति उपलब्ध कर सकता है उसके लिए हिन्दी की ही तो बोलियों में कविता करना कोई कठिन नहीं था। इसीलिए रहीम ने जिस सरलता एवं स्वाभाविकता के साथ ब्रज को अपनाया है वह उनके भाषा बंधारदय का स्वतः प्रमाण है। ब्रजभाषा के उत्कृष्ट में उत्कृष्ट कवि के काव्य में रहीम के दोहा को रख दीजिए उनकी भाषा का सहज सौंदर्य अलग ही दिखाई देगा। उनका गद्य चयन स्वतः बोल उठता है उनकी वण योजना स्वतः चमक उठती है। ऐसा सारल्य ऐसी अद्विष्टता तथा इस प्रकार की स्वाभाविक सम्पन्नता अत्यंत दुर्लभ है।

तत्सम शब्द बहुला ब्रज भाषा

रहीम लोक एवं शास्त्र दोना में ही रचि रखते थे। भाषाओं के तात्पर्यमूर्त पारखी यही। हिन्दी की नाना बोलियों के अनिश्चित संस्कृत काव्य-श्रमता भी कम नहीं थी। अतः ब्रज भाषा में कविता करते हुए संस्कृत के शुद्ध शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक है। उनके जन्म ऊँचे समाज में परिष्कृत भाषा का प्रयोग निश्चित ही अधिक होता होगा। यही कारण है कि रहीम के नीति काव्य में तत्सम व शब्दों का प्रयोग कुछ कम नहीं है। परन्तु यहाँ सरल सामान्य एवं दैनिक प्रयोग के शब्द हैं और स्व प्रकार में शुद्ध हान हुए भी विद्वत् एवं अद्विष्ट नहीं जान पड़ते।

१ गोस्वामी तुलसीदास श० रामदत्त भारद्वाज (दिल्ली १९६०) पृ० २५३

निम्नलिखित दादा के मोटे दादा ग यह तथ्य गगन का मन्त्रा है—

मनसिज गाली की उपज कही रहीम गति जाय ।

पत इषामा व उर सग फूल प्याम उर धाय ॥ १३६—पृ० १८

भूष गनत सपु गुति का गुनी गान सपु भूष ।

रहिमन गिरि तें भूमि ली लगी ता गग प्य ॥ १३७—पृ० १८

यद्यपि अयनि अनेक है रूपयत सरि ताल ।

रहिमन मान सरोवरहि मागा क्या मरता ॥ १४१—पृ० १५

तदभव शब्द बहुला अज भाषा

रहीम की भाषा में तदभव शब्द का प्रयोग भी कम नहीं है। यद्यपि अयन लोचन प्रचलित रूप में प्रयुक्त हुआ है किन्तु मूल उग की दृष्टि में यह मध्य समाज के ही शब्द हैं। एग गगन का प्रसार प्रायः अष्ट गिनि या अन्व गिनि त समाज में अधिक रहता है। अज की भूमि में आज भी गुज गगन बढ़ना भाषा बानन वाले गाँव में उपहास का विषय बनत लग जा सक्त है किन्तु यही गगन अयन तदभव रूप में प्रयुक्त हुआ ता सबय समादृत होत है। रहीम भी इस अयनि त अयनि-चित न हाय। इसीलिए जन कवि की भाषा में एग गगन का प्रयोग स्वाभाविक है। निम्नलिखित दादा में तदभव गगन बढ़ना भाषा का सरलता से लग जा सक्त है—

दुरदिन परे रहीम कहि दुरयल जयत भागि ।

टाडे हूजत घूर पर जय घर सागत आगि ॥ ६८—पृ० १०

दोरघ दोहा अरय के आखर घोडे चाहि ।

ज्यों रहीम मट कुण्डली सिमिटि कूद चडि जाहि ॥ ६९—पृ० १०

देशज विदेशज शब्द बहुला अज भाषा

रहीम के नीति-वाच्य में तीसरे प्रकार की अज भाषा का नमूना उन दोहा में दखा जा सकता है जिनमें देशज तथा विदेशज गगन का वाह्य है। विदेशज गगन से अभिप्राय अरबी फारसी एवं तुर्की इत्यादि के ऐसे गगन से है जो उस युग के मुस्लिम समाज में खूब घुल मिल गए थे। साथ ही लश्कर में सामान्य ग्राम्य समाज से आए हुए सिपाहिया का कमी न थी। वे अपने साथ कुछ क्षेत्रीय गगन भी लाए थे। इन्हें ही देशज गगन कहा जा रहा है। देशज विदेशज गगन बहुला भाषा बान दोह सख्या में अत्यन्त है। दो दाह देखिए—

फरजी साह म हू सके गति टेड़ी तासीर ।

रहिमन सीधी चाल सों प्यादो होत बजीर ॥ १२०—पृ० १२

रौल बिगाडे राज कू, मौल बिगाडे माल ।

सने सन सरदार की चुगल बिगाडे चाल ॥ २४३—पृ० २४

रहीम की प्रतिनिधि अज भाषा

प्रस्तुत प्रसंग में अज भाषा की तीन श्रेणियाँ के उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं— तसम गगन-बहुला तदभव गगन-बहुला एवं देशज विदेशज शब्द बहुला। परन्तु इन

म से किसी को भी रहीम की प्रतिनिधि भाषा नहीं कहा जा सकता। प्रतिनिधि भाषा इन तीनों श्रेणियों का सम्मिलित रूप है। उसमें न देगी विन्गी गद्दा का निरम्बार है और न तद्भव-तत्सम गद्दों की भरमार। वह सामान्य सभ्य समाज में बाली जाने वाली भाषा का रूप है जो किसी भी अति से मुक्त है। रहीम की प्रतिनिधि भाषा में सभी प्रकार के प्रचलित गद्दा का कुछ ऐसा प्रयोग हुआ है कि पढ़ते समय सामान्य पाठक को उनके देगी विन्गीपन अथवा तद्भव-तत्सम रूप का ज्ञान ही नहीं होना। निम्नलिखित उदाहरण हमारे कथन की पुष्टि करेंगे—

उरग तुरग नारी नपति, नीच जाति ह्यिअर ।

रहिमन इहें सँभारिए पलटत लग न धार ॥ १४—पृ० ०

करत निपुनई गुन बिना, रहिमन निपुन हजूर ।

मानहु डेरत विटप चडि मोहि समान फो कूर ॥ २५—पृ० ०

हाय न जाकी छाह डिग फल रहीम अति दूर ।

बडिहू सो बिनु काज ही जसे तार खजूर ॥ २७०—पृ० ०६

खड़ी बोली के प्रयोग

अवधी और ब्रज भाषाएँ व अतिरक्त रहीम के नीति-काव्य में कुछ ऐसे भी प्रयोग मिलते हैं जो इन दोनों से पर्याप्त भिन्न हैं। ऐसे प्रयोग आधुनिक खड़ी बोली के मंत्रिकट पड़ते हैं। यह बात चाह किन्तु ही आश्चर्य की हो किन्तु है सत्य कि खड़ी बोली का बड़ा सुष्ठु प्रयोग अमीर ख़ुमरो ६०० वर्ष पूर्व ही कर चुके थे। यदि उहाँ के प्रयोग मूला का पकड़कर कविगण आगे बढ़ते तो हिंदी भाषा के विकास का इतिहास आज कुछ आर ही होता। अस्तु रहीम के प्रसंग में भी तथ्य याद बहुत ज़रूरी प्रकार हैं। उनका मदनाप्टक यद्यपि मस्कृत हिंदी की खिचड़ी भाषा में लिखा गया है किन्तु हिन्दी के प्रयोग भाषागत दृष्टि से विचारणीय हैं। वे खड़ी बोली के न हान हुए भी, उसके समीप अवश्य हैं। चाद की रोगनाई, काह्ला बगी बजाइ अहह ! ब्रज लना का किस तरह फेर दला जरा वमन वाला गुन चमन दखता था परम प्यार सावने का मिलाआ इत्यादि प्रयोग खड़ी बोली के हैं।^१ मदनाप्टक का दूसरा पत्र तो बहुत ही साफ खड़ी बोली वाला जसा है—

कलित ललित माला वा जवाहिर जडा था ।

चपल चलन वाला चादनी में खडा था ।

कटि तट बिच मेला पीत सेला नवेला ।

अलि वन अलबेला धार मेरा अवेला ॥

—रहीम रत्नावली पृ० ७३

१ इति बदति पठानी मनमयागो विरागो ।

मदन गिरसि भूय क्या बला आन लागो ॥ —रहीम रत्नावली पृ० ७४

२ वही (मदनाप्टक) पृ० ७३

उर, प्रभु दृग नभ सर, नारी, भजुन विप भ्रमृत, राहु मास मोन, कपि यद्यपि, भवनि भनेव, मराल भम्पास, तुरग, व्यवहार निर्जोव दोन, कुटिल समय वमन वज्जल जिह्वा कालिमा दरिद्रतर पाइव, रघवाहक, नलराज परम गनि, कामान्क, धाम, जलज, नीच प्रसग बहु भेपज राग मृग भनाथ, नाथ, भगम्प, बान, मग, मन तुरग पावक प्रेम पथ याचकता त्विस सम गुग भू वृषा, चित्त, मुग्, भधम, विन्दु तथा मिधु इत्यादि इत्यादि ।

प्रमुख तद्भव शब्द

भाषरज भीत भगनिव, सतमग भ्रमास बथान निहवल पवित पून पछी, सारन, सनमान, दसन निसा तिलार जनम जम, हाथ नन धरम सत हत सार, भगुन, भगुनी गुन देस तुरत भ्रास भ्रागुर मारग पावन पाह विप्राति दूप पूरन दुरदिन कुभ्रा पातास चाम काम छट दडा कुम्हार, परनाम नाव दांत लस, चित्त बासन शक्कर पान रन इच्छव स्याम पापान पमु सभू बास, लीन, सीन क्लेस उपदेस दुरयल विसान मोर, बाज नाव मुजन मुक्ता हार, कठपूतरी मरजाद घर मिताई सहसन छिमा उपाव करए, सपति उरज, बाय, स्वारय थिर धुधा जीरन लक्षमन लाज जदपि मुजस इत्यादि ।

प्रमुख देशज तथा विदेशज शब्द

यारो यारी ओछो किरकिरी सुरमा फजीहत मुस्किल पासा धरज गरज हजूर कागज गर खरच खर, खून खांसी खुसी, बतोरी घाटा, दमरी प्यादे वजीर बलाय दाग अनखाय, हूक, गली नाव बाप गल मामिला स्याह नाद गल खस इज्जत, चिपडन गली सिलसिला भजीम पडा दिल, डेंकुली, रील माल चुगल सरदार नगाडा, मुकाम सलाम लसकरी लसकर जगीर सौदा साहब तथा हैरान इत्यादि ।

रहीम की भाषागत विशेषताएँ

इन सूचिया के देखने से रहीम की शब्द चयन क्षमता क्षत्र विस्तार तथा अभिरुचि का पर्याप्त ज्ञान हो सकता है । गुद्ध तत्सम शब्दावली के प्रति उनका मोह तथा उपयुक्त देशी विदेशी शब्दों के प्रति अतिरिक्कार भाव रहीम की भाषा नीति की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं । शब्दों का प्रयोग करते समय रहीम उनके व्यंकरण सम्मत रूप तथा अर्थ क्षमता आदि को सदैव सम्मुख रखते हैं । शब्द चयन में प्रसगानुकूलता का जितना ध्यान रहीम रखते हैं उतना बहुत कम कवि रख पाये हैं । उनकी भाषा में गिष्टता एवं नविकता का अर्थ भी बहुत बड़ी मात्रा में विद्यमान रहता है । इनके अतिरिक्त कुछ अन्य द्रष्टव्य विशेषताएँ भी हैं ।

प्रवाह

रहीम के जितने भी दोहे प्राप्त हैं उनमें श्रौर चाह कोई दोष खोज निकाला जाय किन्तु प्रवाह रद्वता का उदाहरण प्राप्त करना कठिन है । सभी दोहों की भाषा

सी स्वाभाविक गति से प्रवाहित है मानो वह अपना अभीष्ट प्राप्त किए बिना बेराम लेना उचित नहीं समझती। एक शब्द के पश्चात् दूसरे और दूसरे के पश्चात् तीसरे पर से होती हुई भाषा इस प्रकार निर्वाध रूप में गतिमान रहती है जैसे स्वच्छ तथा समतल राजपथ पर यान के पहिए। न किसी बड़ौल शब्द का पत्थर बीच में जाता है और न अनावश्यक संधि-समासादि की कबूटे। शब्द चयन इतना सुथरा, इतना आकार-बद्ध तथा इतना सुयुक्त है कि प्रवाहमानता की दृष्टि से रहीम की भाषा अपने में अपना उदाहरण स्वयं ही है। रहीम का प्रत्येक दोहा हमारे कथन की पुष्टि करता प्रतीत होगा।

मीलित वर्ण योजना

रहीम की भाषा में प्रवाह के साथ ही वर्णों का ऐसा सुखद संयोजन है जिसको पढ़ते समय, वाणी न केवल निर्वाध गति में आगे बढ़ती है अपितु उसकी ध्वनि से एक विशेष तरलता भी निकलती रहती है। यह तरलता उनका मीलित-वर्ण योजना एवं शब्द-संगठन का प्रतिफल है। उनके अधिकांश दोहों में वर्णों का क्रम इस प्रकार सजाया गया है कि वे परस्पर असम्बद्ध होते हुए भी सुसम्बद्ध तथा पृथक् होते हुए भी अपृथक् प्रतीत होते हैं। जैसे जलतरंग-वादक का प्रत्येक प्याला एक विशेष नम से रखा होता है वैसे ही रहीम के शब्द कुछ इस प्रकार के वर्णों से निर्मित हैं कि पढ़ते समय की भङ्गार निकलती चली जाती है। कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

ससि की सीतल चादनी सुंदर सबहि सुहाम । २६४—पृ० २६
सीत हरत तम हरत नित भुवन भरत नहि चूक ॥ २६६—पृ० २६
अच्युत चरण तरगिनी शिव सिर मालति माल । १—पृ० १
ससि सकोच साहस सलिल, मान सनेह रहीम ।
बडत बडत बडि जात है घटत घटत घटि सीम ॥ २६५—पृ० २६

सगीत एवं लय

प्रवाह एवं मीलित-वर्ण-योजना का अन्तिम फल ही सगीत है। उक्त दोनों गुणों के कारण रहीम की भाषा से सगीत एवं लय की कुछ ऐसी सहृदयता निकलती है जो अपने मूल रूप में छन्दों के बंधन के अतिरिक्त शब्द-संरचना से भी सम्बद्ध है। दिल्ली प्रादेशिक साहित्य सम्मेलन द्वारा आयोजित रहीम जयन्तियाँ पर हमने कई बार, रहीम के दोहा का ऐसा गायन सुना है कि जनता भाव विभोर हो उठती थी। सगीत की दृष्टि से दोहों से अधिक अवकाश धनाक्षरियों, सवया एवं पदा आदि अन्तय छन्दों में रहता है। और रहीम के छन्द लय एवं सगीत के भण्डार हैं। उस सगीत का श्रेय भी परम्परागत गति-यति से अधिक रहीम के शब्द चयन का है। हिंदी ही नहीं रहीम के श्लोकों को भी भक्त जब भाव विभोर होकर गाते हैं तो तल्लीनता का जादू सा छा जाता है। भक्तों के मुख से 'रत्नाकरोस्ति मदन' इत्यादि श्लोकों को सुनकर हमने स्वतः उस तल्लीनता का आस्वाद प्राप्त किया है।

असमस्त शब्दावली

रहीम, जीवन-जगत का कवि है। जीवन-जगत का सफ़्त ज्ञान याना नानि का सरल शब्दावली म चतुर्था हूमा यणन रहीम की मयना विगपता है। न य पचीन दाशनिव सिद्धान्ता के चरतर म पड हैं और न याग की टेना-मन्त्री अभिव्यक्तिया क फेर म। सौम्य सज्जा की घुमावदार अभिव्यक्ति भी उह पसत नह। यहा कारण है कि उनकी शब्दावली सरल सीधी एव असमस्त है। लम्ब-लम्ब समास रहीम की भाषा म नाम मात्र को भी प्राप्त नहीं हत। असमस्त शब्दावली रहीम क शब्द चयन की उल्लेखनीय विगपता है। अनेकानेक शब्दा का एक म समुपन करना रहीम की रचि क प्रतिबूत था। दोहावली के सम्पूर्ण दाहा पर दृष्टि डाल जाण शाय ही कोई पविन एसी मिल जिसम दा-तीन शब्दा के समाग एर साथ प्रयुक्त हुए ह। 'अच्युत चरन तरगिनी' इत्यादि प्रथम दाह का छाडकर शय सभी दाह असमस्त पदावला से मुक्त हैं। सभी शब्दा का अलग अलग वियस एक एमी विगपता है, जो समय स समय कविया म भी कम ही देखन की मिलती है। उदाहरण क लिए दा दोह प्रस्तुत है—

रहिमन याह बिघ्राधि है सकहु तो जाहु बचाय ।

पायन बडा परत हैं डोल बजाय बजाय ॥ २०६—पृ० २१

रहिमन बहु भेज करत व्याधि न छाडत साथ ।

खग मृग बसत अरोग बन हरि प्रनाय के नाथ ॥ २१०—पृ० २१

शब्दों का लघु आकार

असमस्त पदावली के प्रयोग से ही मिलती जुलती रहीम की भाषा की अय विशेषता है—लघु शब्दा का प्रयोग। रहीम अनक शब्दा को मिलाकर लम्ब-लम्ब शब्द बनाने के पक्ष म ती ये ही नहीं के पृथक्त्व भी लम्बे एव बडे आकार के शब्दा का प्रयोग नह करत थे। काय जीवन क आरम्भ स ही लघु आकृति के शब्दा क प्रति उनका आकषण देखा जा सकता है। सम्पूर्ण दोहावली को खोजने पर भी छ वर्णों से अधिक का कोई पद शायत ह। हाथ लगे। अमरवेलि सरनागति भवसागर करमहीन जैसे पाच वर्णों स बन शब्द भी दस-पंद्रह से अधिक नहीं हागे। इतना ही नहीं चार वर्णों के शब्द भी कम ही हैं। सम्भवत चार वर्ण ही उनक शब्द चयन की सीमा थी। अधिकांश शब्द दो या तीन वर्णों क ही है। रहीम न कदाचित अपने नाम—रहिमन अथवा रहीम—तीन चार वर्णों को ही अपने वर्ण समूह की सीमा बना लिया था। दोहे सोरठे और बरख जस छोटे छन्द म असमस्त शब्दा के द्वारा केवल दो तीन वर्णों स बन छोटे छोटे शब्दा म अपनी यात को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त कर देना बहुत बडे मवि-वीरल की अपेक्षा रखता है। ऐसे शब्द शिल्पी अधिक नहीं मिलेंगे। रस सिद्धि क समान शब्द मिद्धि भी सामाय विगपता नहीं है। इस विशेषता ने रहीम के प्रत्येक दाहे को एक मुद्गरमाला बना दिया है जिसम छोटे शब्द हरसिगार या मौलियी के फूला की भांति अलग अलग बडे कौशल से पिरोए गए है। इनम से एक

नी पुष्प झीर सगी अर्यों म कलिषा तव को, माला के मूल सौंदर्य के नष्ट किए
बिना इधर-उधर नहीं किया जा सकता। लघु आकार क शब्दा की बहार देगिए—

खर खून खाँसी खुसी धर प्रीति मद पान ।

रहिमन दाबे ना दब जानत सकल जहान ॥ ४७—पृ० ५

समय लाभ सम लाभ नाह समय चूक सम चूक ।

चतुरन चित रहिमन लगी, समय चूक की हूक ॥ २५५—पृ० २५

नन सलीने अघर मधु कही रहीम घटि कौन ।

मीठो भाव लोन पर अर मीठे पर लोन ॥ ११२—पृ० ११

सरल शब्दावली

रहीम का शब्द चयन आकार एवं लाघव की दृष्टि से ही नहीं अपितु अर्थ एवं प्रयोग की दृष्टि से भी सरल है। इधर उधर मिश्र भाव एवं उपकरण जिस प्रकार उनकी कल्पना को प्रेरित करते थे उसी प्रकार दैनिक जीवन में जन सामान्य द्वारा प्रयुक्त शब्द ही उनकी काव्य प्रतिभा का प्राप्ति करते थे। यही कारण है कि उनके काव्य का पढ़न तथा समझन के लिए शब्द-काण्ड के पक्ष उलटने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस दृष्टि से हम रहीम को बेगव का ३६ कह सकते हैं। यहाँ भी रहीम की एक विशेषता है और वह है उनका अर्थ गौरव। रहीम सामान्य शब्द का कुछ इस प्रकार से प्रयुक्त करना है कि उम पर जितना विचार कीजिए उतना ही अर्थ-सौन्दर्य निखरता प्रतीत होता है। साथ ही आस्वाद रम्य से रम्यतर होता जाता है। उजला-अधेरा, सपूत-कपूत तन मन छाया काया दीपक दमा ओट चोटा आदि सभी शब्द ऐसी सामान्य तथा सरल हैं कि बच्चे को भी उनका अर्थ जानने में कठिनाई नहीं होती किन्तु रहीम उन्हीं के प्रयोग से रस ध्वनि, अलंकार, नीति तथा गाभीय भरने में कमाल कर जाते हैं—

जो रहीम गति दीप की कुल कपूत गति सोय ।

बारे उजियारो लगे बडे अघेरो होय ॥ ७७—पृ० ८

जो रहीम मन हाथ है तो तन कहुँ किन जाहि ।

जल मे जो छाया परे, काया भोजति नाहि ॥ ७६—पृ० ८

जो रहीम दीपक दसा, तिय राखत पट ओट ।

समय परे ते होत है वाही पट की चोट ॥ ८०—पृ० ८

आयास हीनता

रहीम की भाषा के सम्बन्ध में ऊपर जितनी भी विशेषताएँ गिनाई गई हैं वे सभी आयासहीन एवं स्वाभाविक हैं। एक शब्द के पश्चात् दूसरा सरल सामान्य सक्षिप्त शब्द इस प्रकार अनायासन आता चला जाता है, जिस प्रकार किसी ऊँचे स्रोत वाले फुहारे से जल। शब्द और अर्थ की ऐसी अनायास सिद्धि मूल तुलसी नन्ददास आदि दो चार कवियों को छोड़कर अर्यों को प्राप्त नहीं। दुर्भाग्य यह रहा कि रहीम

का जीवन अत्यन्त भ्रमला में उलझा रहा। यदि य भी हिन्दी के अत्यन्त महान कवियों की भाँति बेचल भक्त, कवि या गायक रह जान ता हिन्दी काव्य यात्रिका की सुपमा ही कुछ और होती। जिस प्रकार एक मूर न बन पर हिन्दी वाग-व्य भात्र रमात्र का प्राप्त हो गया है कौन जान रहीम का लगनी स निकत्र पुष्पत्र नाति वणा क तिए भी काय गास्त्रिया को एक पृथक् नीति रस की सभावनाप्रा पर त्रिचार करना पटना। परन्तु बलिहारी अत्रर की युद्धि की जिमन उनकी गतिन का अधिअ अत्र गनानतिव म विकसित कराया। जो हो यहाँ हमारा विवय भाषा की आयासहीनता है और उम दष्टि से रहीम की पलावली को दगन पर उसकी सफत्रता अगत्रिग्ध है। उनका यही आयासहीन भाषा सामन आत ही आवाल, वृद्ध सभा का मन मोहित कर तती है। माना यह कथन रहीम क तिए किया गया था त्रि वह कतिना अय वनिना दोना ही व्यय है जो अत्रन पद वियास मात्र स रसिना के हृत्प हरण म समय न हा—

तया कवितया कि वा तया वनितया च किम ।

पद वियास मात्रेण यया नापहृत मन ॥

रहीम परखिया, रहीम सँवरिया

रहीम की भाषा के प्रसगानुरूप गत्र चयन मालित वण याजना गतिमान प्रवाह असमस्त विन्याम लघु आकार तथा यावहारिक पद प्रयोग का दगवर हम यह कह विना नहीं रह सकत कि उनकी जसी सरल सुधरी एव अयगभित भाषा समस्त हिन्दा ससार यहा तक कि मूर तुलमी तक क काय म सबत्र मुलभ नहीं है। गद चयन का सतकता क सम्मुख सामायत यदि कोई ठहरता है तो बेचल नददास। किन्तु नददास भी शत्र के लघु आकार तथा चुस्त प्रवाह का वह निर्वाह सबत्र नहीं कर पाए है जसा कि रहीम के नीति-काव्य म है। उनक नीति काव्य को देखकर हम नि सकोच कह सकत ह त्रि रहीम को गत्र चयन शिल्प म कमाल हासिल था। इस क्षेत्र म उनकी प्रतिभा अद्वितीय थी। अय कवि सायास शत्र घडते है तो नददास सायास गद जडत हैं, किन्तु रहीम उह निरायास ही पकड लेत हैं। उनकी पकड भी कुछ एसी सधी एव सँवरी हुई है कि कविता स्वत प्रभावगाली बन जाती है। गद चयन के क्षेत्र म रहीम की पकड तथा परख बहुत ही सवरी हुई है। अत हम कह सकते हैं कि—

और कवि घडिया नददास जडिया ।

रहीम परतिया, रहीम सँवरिया ॥

भाषा सम्बन्धी निष्कर्ष

रहीम की भाषा के अनकानेक गुणा को देखत हुए निष्कर्ष रूप म यह कहा जा सकता है कि उनकी भाषा अत्यन्त प्रौढ तथा सक्षम है। उह ब्रज तथा अवधी दाना पर ही समान अधिकार प्राप्त है। इसीलिए आचाय चतुरसेन ने अपने इतिहास

म उनकी तुलना गान्धामी तुलसीदास से की है।^१ डा० श्यामसुन्दरदास ने भी उह तुलसी के समकक्ष सिद्ध किया है।^२ गुक्त का अभिमत भी यही है।^३ अत स्पष्ट है कि अथवा तथा ब्रज दोना भाषाया पर रहीम का अधिकार भवमाय है। खड़ी बोली के प्रयोग की दृष्टि से भी उनके काव्य का अध्ययन उपयोगी सिद्ध होगा। कतना ही नहीं यह भी सवमाय है कि उह देग विन्श की अनक भाषाया पर पूण अधिकार प्राप्त था। रहीम के अतिरिक्त इतनी अधिक भाषाया म पूण अधिकार एवं लाभव के साथ कविता करन वाला कदाचित कोई अय कवि तत्कालीन भारत म विद्यमान नहीं था।

अभिव्यक्ति एवं अभिव्यक्ति कौशल

अपन हृदय के भावा का व्यक्त करना मानव की मूलभूत प्रवृत्ति है ठीक वसी ही, जैसी क्षुधा और रति। क्षुधा का प्रवृत्ति न मानव के कृषि-व्यापारादि को जम दिया तथा रति ने विभिन्न प्रकार के सामाजिक सम्बन्ध एवं सुविधा-मक वस्तुआ को। इसी प्रकार अभिव्यक्ति की प्रवृत्ति स ही भाषा कला साहित्य तथा काव्य आदि की प्रेरणा प्राप्त हुद। अयाय प्राणिया की तुलना म मानव की सबसे प्रमुख विगिष्टता उनकी अभिव्यक्ति भमता ही है। अभिव्यक्ति की ललक न ही उसे म्ति कार चित्रकार, संगीतकार तथा साहित्यकार बनाया है। साहित्य म अभिव्यक्ति एवं अभिव्यक्ति-कौशल का महत्व असदिग्ध है। एक ही तथ्य एवं कथ्य को विभिन्न व्यक्ति अभिव्यक्ति कौशल की विभिन्नताया के कारण विगिन प्रकार स व्यक्त करत हैं। इसीलिए उनके प्रभाव की सीमा भी भिन्न रहती हैं। यही कारण है कि प्रत्यक मजग साहित्यकार, अपनी अभिव्यक्ति के प्रति मजग रहा है। प्राचीन-नवीन तथा पौरवात्य-पाश्चात्य सभी विद्वानो न अभिव्यक्ति कौशल क सम्बन्ध म अपने अपने ढंग से विचार व्यक्त किय हैं।

भारतीय मत—रीति एवं वक्रोक्ति

साहित्य म दो ही महत्वपूर्ण गद हैं—क्या और कस। क्या का सम्बन्ध काव्य एवं साहित्य म वर्णित विषय स ह और कस का वर्णन की प्रणानी स। अंग्रेजी म इहाँ का मटर और मनेर कहा जाता ह। काव्य शास्त्रीय गदावला म यही भाव-वक्ष तथा कला-या है। कला पक्ष अयान कस भाव पक्ष अयान क्या स कुछ कम महत्व नहीं रखता। सच वान ता यह है कि कुछ कवि-कलाकार कवल अभिव्यक्ति कौशल के कारण ही अमर हैं। आचार्य-वामन न ता स्पष्ट ही रीति का काव्य की था मा घोषित किया था—रीतिरामा काव्यस्य ॥ रीति स उनका अभिप्राय था पक्ष का विशेष रचना-कौशल—विगिष्टा पद रचना रीति ॥ स्पष्ट ह कि वामनाचार्य ने क्या और कसे म अधिक महत्व कस का प्रदान किया ह।

१ हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास आचार्य चतुरमन पृ० २२७

२ हिंदी साहित्य डा० श्यामसुन्दरदास (१९५२ प्रयाग) पृ० २ /

३ हिंदी साहित्य का इतिहास भा० रामचन्द्र गुक्त (२४वां सं०) पृ०

कम' का घोर भी उपाग रूप में मरणा प्रणत कर। का र काय घामाग म मुत्तव । उता। घादी मरती प्रतिभा के वर पर काय्य 'गन्ध' म 'ध्याति' रग मीरि अन्तर घाति ह्य्याति सभी म रवकर मेरु र वि'पमगीम'गि' विविध सभिता ल्य कवि कम को'गन का मरणा दे' हण यनाति को काय्य को घामा क व' पर घामो'ग रिया । यनाति की परिभागा दे' हण उ'ता'न रिया—

'यनाति प्रगिद्धाभिप्रायति वैकरी विविधाभिप्रा की' पी । य'ग'म'पी भविनि । य'ग'य रियाभाय कवि'कम को'गन लय भ'ग' रियाति तदा भ'गिति । विविधवाभिप्रा यनातिरिगुष्य ।

अर्थात् प्रगिद्ध कथन म भिन्न विविध सभिता अर्थात् य'ग'य म । ह' य'का'रि'त ह । यह कमी ह^२ य'ग'य'क'ग' घमा ग'ग उ'ति' (ही य'का'रि'त ह) । य'ग'य'क' का अर्थ हे वि'ग'य'ता—कवि कम-को'गन उगकी भगिमा मा घामा (घामा) उमर' श'ग' उम पर सभित उ'ति' । (स' १५ म) विविध सभिता (य'ग'य'क'ग'म) ही य'का'रि'त है । सामान्यतया य'ग' सभिव्यति-को'गन कहलाता है ।

मरन शब्द म सभिव्यति रोगन का ह' घामी कह रिया जाता है । त्रिग'रा तात्पर्य ह प्रणता अथवा पदति । मुहुन भट्ट^३ म मुहुमृति क' ए'क' ग'ग'न की टीका करत हण शली का प्रयाग इमी अर्थ म रिया ह—'प्रायण सभितागिय' म'ग'म'ग'ग' मा'य'नाभिधायवि'ग'य'ण विव'ग'ग'ति । घाज'क' ग'मी प्राय अथवा क' ह'ग'य'न' 'ग'ग' का पर्याय बन गया ह ।

पाश्चात्य विचारक तथा स्टाइल

पाश्चात्य विचारक म स्टाइल (शली) पर विस्तार म विचार अथवा रिया है । यह विचार-परम्परा निश्चित ही बहुत प्राचीन ह । प्लेटो क' रिप'ल'क' म ग'मी पर विचार हुआ ह । उता ग'ला का सौ'म्य सरलता म स'नि'र'ित माता ह ।^१ ग्रीक ही नहीं उ'टि'त सागा का मत भी यही जा । ल'टिन म क'हा'व'त प्रसिद्ध ह कि म'गु'ष्य जा कुछ भी बोलना अथवा लिखना ह उसकी ग'ली स ही उग अ'रि'त वि'ग'य को गाना जा सकता ह ।^३ बाल्टर र'न का निष्कर्ष है कि ग'ल'क' क' अ'रि'त'व' का अ'रि'त'म' प्रकटी

१ हिन्दी अश्लोक जीवित—१/१० की वक्ति प० ५१

२ Beauty of style and harmony and grace and good rhythm depends on simplicity

—Plato *The Republic Book III* 400 D

३ (a) Generally speaking an author's style is a faithful copy of his mind. If you would write a lucid style let there first be light in your own mind and if you would write a grand style you ought to have a grand character —Goethe

(b) Style is a man's own; it is a part of his nature —Buffon

(c) Style is only the frame to hold our thought. It is like the sash of a window; if heavy it will obscure the light

—Emmons—*The New Dictionary of Thought* (New York 1951) P 671

ण उसकी गैली ही करती है।^१ अग्रजी विचारको को यही मन विषय मान्य रहा ह। एट महोदय का यह कथन बहुमाय है—“समुचित गन्त का समुचित स्थान पर गे ही शली की सच्ची परिभाषा है।^२ किन्तु गली का सम्बन्ध मात्र गन्त विधान से सीमित कर देना अशाय्य होगा। मुरे महोदय ने अपने गली की समस्या नामक पुस्तक में व्यक्तिवृत्ता—निर्व्यक्तिवृत्ता तथा विषय एवं व्यक्तित्व भावा आदि की उपाय भी उत्तम गली की वृत्ति के लिए आवश्यक माना है। डा० श्यामसुन्दरदास भी गली की विषयता इस बात में मानते हैं कि हम अपनी भाषा को अपने भाषा चारों ओर कल्पनाओं को अधिकधिक प्रभावगाली बना सकें।^३ डा० त्रिगुणायतन मन में भाव पोषण एवं उस चयण की दृष्टि से भाषा गली का महत्व है। भाषा के एक उपादान के रूप में यह सम्बन्ध करन में भी सहायक होती है। भाव मौल्य का साथकता गलीगत मौल्य पर ही निर्भर है। सुन्दर गली के अभाव में भाषा का हान मौल्य भी विह्वल हो जाता है।”

गली—एक निष्कर्ष

अन स्पष्ट है कि गली भाषाभिव्यक्ति की रीति को कहते हैं। यह वह विधान है जिससे कला तथा साहित्य में वर्णित भाव या विचार के प्रभाव तथा रसाभाव में सहायता मिलती है। गली में व्यक्तिवृत्ता का अंग सर्वोपरि है। यही कारण कि गली से व्यक्तित्व भी अभिव्यक्ति हो जाता है। इसीलिए प्रत्येक व्यक्ति का अभिव्यक्ति कौशल भिन्न होता है शली पृथक् होती है—अभिव्यक्ति का माग मूढम भेद परम्पराम्।^४

रहीम के नीति काव्य की विभिन्न शलिया

जिन प्रकार विभिन्न व्यक्तियों का गलिया भिन्न भिन्न होती हैं उसी प्रकार एक ही व्यक्ति भाव विचार विषय तथा परिस्थिति अनुसार विभिन्न गलिया में अपने विचार व्यक्त करता है। कभी वह सरल एवं सामान्य गली अपनाता है तो कभी अलङ्कृत एवं उन्नत। कही वह प्रश्न द्वारा अपनी बात को स्पष्ट करता है तो कही उदाहरण द्वारा। कही वह प्रत्यक्ष उपाय दे सकता है और कही मान तथा का आकलन कर सकता है। कही वह भाव अथवा विचार का विवरण देकर अपने को अभिव्यक्त करता है तो कही अन्तुष्टा की मान गणना ही उसे अभीष्ट होती है। हा इतना अवश्य

- 1 This (style) is the ultimate and enduring revelation of personality
—W Releigh Style P 2
- 2 Proper words in a proper place makes the true definition of style
—Jonathan Swut *The Oxford Dictionary of Quotation*
(Second Edn) P 520
- ३ साहित्यालोचन डा० श्यामसुन्दरदास (१६वीं आवृत्ति) प० २३१
- ४ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त (भाग १) डा० गाविन्द त्रिगुणायतन प० ६१
- ५ काव्यान्त आचार्य दण्डी १/८०

है कि इन विभिन्नताओं में एक विशेषरूपता बनी रहती है। और उस सहज ही पहचाना भी जा सकता है। उदाहरणार्थ यदि हम रहीम को ही लें तो जान होगा कि उक्त सभी शलियाँ भी रहीम न कविता की हैं किन्तु फिर भी सरलता गणवत्ति तथा असमस्त शब्दावली आदि से रहीम के दोहा को हजारों में पहचाना जा सकता है।

१ सर्वाधिक प्रिय दृष्टान्त शली

नीति काव्य के मृजल में कविता को कुछ गतियाँ विशेष प्रिय रही हैं। उपदेशात्मक, सत्यात्मक एवं वणनात्मक गतियाँ ऐसी ही हैं। इनमें भी सर्वाधिक प्रिय है दृष्टान्त शली। मसूत का नीति काव्य इस दृष्टि से बहुत समृद्ध है। रहीम भी अपनी बात का दृष्टान्त देकर पुष्ट करने के माहिर हैं। दृष्टान्त अथवा उदाहरण द्वारा अपने कथ्य का पुष्ट करने का नाम ही दृष्टान्त शली है। अतएव गान्धारी मन्त्रिणी का अस्तिव पृथक् पृथक् है किन्तु शली की दृष्टि से इनमें कोई तादृक् भेद नहीं। रहीम का दृष्टान्त चयन का क्षेत्र नितान्त व्यापक तथा विस्तृत है। एक ओर यह उनके विस्तृत ज्ञान का चोख है और दूसरी ओर सूक्ष्म हिन्दुत्व धर्म का अन्वेषक। उनके अधिकांश दृष्टान्त महाभारत रामायण पुराण आदि के प्रयोग पर आधारित हैं। हिन्दु धर्म के अनिर्दिष्ट दृष्टान्त चयन प्रकृति दैनिक जीवन अथवा प्रवृत्ति मनोविज्ञान एवं सामाजिक जीवन के क्षेत्रों से भी किया गया है। निम्नलिखित उदाहरणों से यह तथ्य स्पष्ट हो जाएगा—

- प्रकृति सम्पत्ति भरम ? (धरम) गेंवाइ क हाथ रहत द्यु नाहि ।
ज्यो रहीम सति रहत है दिवस अकार्त्सहि माहि ॥
२६३—पृ० २६
- जीवन स्वार्थ रचत रहीम सब, औगुन हू जग माहि ।
बडे बड बडे लखे पथ रथ कूबर छाहि ॥
२५८—पृ० २५
- रामायण राम न जाते हरिन संग सीय न रावन साथ ।
जो रहीम भावी कहतहैं होत आपुने हाथ ॥
२३७—पृ० २३
- महाभारत जो पुरपाख्य ते कबहूँ सपति मिलत रहीम ।
पेट लागि बराट घर, तपत रसोई भीम ॥
७१—पृ० ७
- पुराण छिमा बडन को चाहिए छोटन को उरपात ।
का रहीम हरि को घटयो जो भगु मारी लात ॥
२५२—पृ० ६

२ उपदेशात्मक शली

धर्म के क्षेत्र में उपदेश परक छाना का मृजल सामान्य प्रवृत्ति है। अधिकांश सत्ता के बचन बलाचिन्त व्योलीण काय की गरिमा से मण्डित नहीं समझे जाते। नाति के क्षेत्र में उपदेशात्मक छाना का प्रणयन कुछ कम नहीं है। अपभ्रंश भाषा के

जन कविया की अधिकतर कृतिया उपदेशात्मक ही हैं।^१ नीति के कायत्व पर आघात करन वाला का सबसे बड़ा सहारा बदाचित्त यही है। परन्तु यह तथ्य प्रायः भुला दिया जाता है कि उपदेशात्मक भी कवि प्रतिभा द्वारा सरसता तथा कलात्मकता लाइ जा सकती है। हमारे कवि की यही विशेषता है। उनकी उपदेशात्मक शैली की तीन धाराएँ हैं—विध्यात्मक अर्थात् विधि या धर्म रूप में ठोस त्रियात्मक संदेश दन वाली गली निषेधात्मक अर्थात् निन्ही त्रियात्रा क आचरण का निषेध करन वाली या शृणात्मक गली और तीसरी विधि निषेध गेना का साथ साथ निवाह करन वाली शला। तीना के उदाहरण जमा त्स प्रकार हैं—

रहिमन रिम का छाटिक, धरो गरीरो भेस ।

मीठो बोत्रो न चलो सभा तुम्हारे देस ॥ २२६—पृ० २०

रहिमन बहा न जाइए, जहा कपट का हेत ।

हम तन डारत डेकुकी सौचत अपनो खेत ॥ २३०—पृ० २३

रहिमन अनो न कीजिए गहि रहिए निज कानि ॥ १६०—पृ० १६

३ तथ्य कथनात्मक शैली

किमी तथ्य का मोखे साथे ढग म प्रकन कर देना तथ्य कथनात्मक शैली है। नीति कथनात्मक अधिकतर कथन रूप शली म भी प्राप्त होत हैं। अतः यह भी नीति-काय की प्रमुख शैली है। इस शैली म विरोध विदग्धना अथवा वचिष्य गहा हाना। इसीलिए अधिकतर नाति काय का नीरम होने का अपयग भागना पडा है। रहीम के नीति काय म तथ्य कथनात्मक शैली का बहुत अधिक उपयोग नहीं हुआ है। जहा हुआ भी है वहा कवि सहज प्रतिभा क धन पर कथनों का नितात नीरम हाने स बचा गया है—

खर पून गाली खमी दर प्रीन मरवान ।

रहिमन दावे भा दवे जानत सकल जहान ॥ ४७—पृ० ५

जे सुलगे ते बुझि गये बुझे ते सुलगे नाहि ।

रहिमन दाहे प्रेम के बुझि-बुझि क सुलगाहि ॥ ६६—पृ० ७

४ धणनात्मक शैली

तथ्य कथनात्मक शैली का दूसरा रूप वगनात्मक शैली है। दस्ता म अन्त इतना है कि पहन प्रकार म कवि की आमा कुठ रमनी प्रतीत हानी है जबकि इसम कवि रचि रता नहीं जान गता। अतः कवन फज अदायगी मात्र हान क कारण

१ वैराग्य सार क अधिकतर गहा विरोधन १४ ५४ २७, ३१ ६० तथा ७१ आदि मावधम दूहा क अन्त दाह विरोधन १०६ १२६ १३० १२२ आदि तथा उपपम रमायण क अधिकतर दाह नीरम उपदेश ही हैं परन्तु मानवता के लिए वैराग्य का संदेश इनकी अविस्मरणीय विशेषता है।

वात प्राय नीरस ही रहती है। रहीम का नीति काव्य मत्स्य प्रकार के दास श्लोक अधिक नहीं हैं परन्तु हं अवश्य—

अथ रहीम मुसकिल पडो गाडे दोऊ काम ।

संचि से तो जग नहीं, भूठ मिल न राम ॥ ६—पृ० १

५ प्रश्न शली

प्रश्न पूछकर नीति कहने की शली अत्यन्त प्राचीन तथा प्रसिद्ध है। सम्भृत कवियों ने इस शली में विपुल नीति काव्य का सृजन किया है। उन्होंने यही तो सम्पूर्ण छन्द में केवल एक ही प्रश्न पूछा है और वही एकाधिक। वही सम्पूर्ण छन्द में प्रश्ना ही प्रश्ना द्वारा नीति निवचन किया गया है। ये प्रश्न छन्द का आरम्भ में भी हो सजत है अतः में भी और बीच में भी। प्रश्न इस प्रकार रचे जाते हैं कि वे स्वतः अपना आगम यत्न कर देते हैं। और इस प्रकार प्रश्न के माध्यम से ही कवि का लक्ष्य पूरा हो जाता है। छन्द के आदि मध्य अन्त में विद्यमान प्रश्न शली के द्रमण तीन दाह निम्नलिखित हैं—

अथम बचन ते को फत्यो बठ ताड की छाह ।

रहिमन काम न आय है ये नीरस जग माह ॥ २—पृ० १

कहि रहीम धन बड़ि घटे, जात धनिन की बात ।

बड़ घट उनको कहा धास बेचि जे तात ॥ २६—पृ० २

कमला थिर न रहीम कहि यह जानत सय कोय ।

पुष्ट पुरातन की बधू कयो न चचला होय ॥ २३—पृ० २

६ प्रश्नोत्तर शली

जहां प्रश्न के साथ साथ उत्तर भी सन्निहित रहता है वहाँ प्रश्नात्तर शली होती है। हनुमन्नाटक में इस शली का बहुत सुन्दर विनियोग हुआ है। जिनामा उत्पन्न करने तथा तुरन्त ही उसका शमन प्राप्त हो जाने के कारण सामान्य पाठकों की दृष्टि में यह शली बड़ी उपादेय रहती है। रहीम का निम्नलिखित दोहा प्रश्नोत्तर शली का सुन्दर उदाहरण है—

धूर धरत निज सीस पर बहू रहीम कहि काज ।

जेहि रज मुनि पत्नी तरी सोई बटत गजराज ॥ १०६—पृ० ११

७ सवाद शली

प्रश्नात्तर शली की ही एक भिन्न विधा सवाद है। प्रश्नान्तर शली वहाँ होती है जहाँ प्रश्न करने तथा उत्तर देने वाला व्यक्ति एक ही विनयित कवि स्वयं होता है। दूसरी ओर जहाँ प्रश्न काँ और करता है तथा उत्तर काँ और देता है वहाँ शली का प्रश्नान्तर का सवाद कहा जाता है। धार्मिक जगत् में यह शली मूल प्रचलित रही है। अनेक ऐसे ग्रन्थ प्राप्त हैं जिनमें विषय प्रश्न करते हैं और गुन्जी उत्तर देते हैं। ऐसे ग्रन्थों का शली सवाद शली ही है। शान्ति ग्रन्थ में भी

इस गली का प्रचुर प्रयोग मिलता है। नाटका का तो आधार ही मवाद है। तुलसी और केशव के लक्ष्मण परशुराम तथा रावण अगद सवाद प्रसिद्ध ही हैं। मुक्तक कात्यायन इस शली के लिए कम ही अवकाश रहता है। प्रदोत्तर शली के उदाहरण में प्रस्तुत 'घूर घरत आदि दाहे के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि गोस्वामी तुलसीदास ने उक्त दाहे के प्रथम दो चरण लिखकर रहीम के पास भेजे थे अन्तिम दो चरणों की पूर्ति रहीम ने की थी। यदि यह किम्बदन्ती सत्य है तो यह दोहा सवाण गली के ही अन्तर्गत रखा जायगा।

८ तर्क शली

जब कवि अपने किसी बचन या सिद्धांत की पुष्टि के लिए तर्क प्रस्तुत करता है तब वहाँ तर्क शली का विधान रहता है। सख्त मणनात्मक ग्रंथों में शली गली का बानबाना देखा जाता है। नतिक सिद्धांतों का प्रभावोपात्क बनाने के लिए इस गली का अवलम्बन लाभप्रद सिद्ध होता है। रहीम के दाहे में भी इस पद्धति का व्यवहार देखा जा सकता है—

रहिमन भेज के किए, बाल जोत जो जात ।

बड़े बड़े समरथ भए तो न कोउ भरि जात ॥ २१३—५० २१

जो अनुचित कारी तिहें लगे अक परिनाम ।

लखे उरज उर बेधियत, क्यों न होय मुख स्याम ॥ ६८—५० ७

अन्तिम दोहा का तर्क भी कितना मीठा है।

९ अलङ्कृत शली

कवि की सौन्दर्य चेतना जब अपनी मृष्टि को सजान के लिए शब्द आकाश विगोप विधान रचती है तब वहाँ गली अलङ्कृत हो जाती है। नीति जिस उपयोगी किन्तु तथाकथित गुणक विषय में मुख्य प्रभाव तथा चमत्कार उत्पन्न करने के लिए अलङ्कृत गली का विधान अर भी आवश्यक है। यही कारण है कि समस्त कवि अपने नीति-बचन और नीति ही क्या सभी विषयों के लिए उपमा रूपक, दृष्टान्त यमकालि का प्रयोग करते हैं। रहीम की शली स्वभावतः ही अलङ्कृत है। विगोपता यह है कि यह अलङ्कृत आयाजन्म न होकर अपने सहज रूप में प्रयुक्त हुआ है। निम्नलिखित दाहे अनुप्रास, यमक तथा रूपक आदि की स्वाभाविक अङ्गुलिम एव सौम्य आभा से आभासित हैं—

ससि संकोच साहस सलिल मान साह रहीम ।

घटत-घटत बनि जात हैं घटत घटत घटि सीम ॥ २६१—५० २५

रहिमन अपने पेट सों बहुत बह्यो समुभाय ।

जो तू अनवाये रहे तो सा को अनवाय ॥ १६२—५० १६

रहिमन यह तन भूप है लीम जगत पटोर ।

हलुवन को उडि जान द गदए राखि बटोर ॥ २१६—५० २०

रहिमन राज सराटिए सति सम सुखद जो होय ।

बहा थापुरो जानु है तथी तरयन तोय ॥ ०८—पृ० ००

१० सख्यात्मक शली

नाति रयन क शेष म वस्तुआ की एउ दो तीन चार इत्यादि सख्याएँ गिना कर उनक गण कम स्वभाव इत्यादि कहन की परम्परा पर्याप्त प्राचीन है । मस्तूत क अनेक कविआ न यह गनी प्रस्ताव है । सख्याआ का स्वयं उक्त्य हान के कारण आ इन सख्या मत्र नाम दिया गया है । मन्मति चाणक्य न एउ म्यान पर निरन्तर गान गनाका म बीम तन सख्या गिनाकर विभिन्न पशुआ क मन्थीय गणा का आर ध्यान आट्टि किया है ।^१ हि ी क मन्थुगीन कविआ न भा अनन्य स्थता पर नीति रयन म म गला का उपयोग किया है ।^२ रहीम क कुठ ग । म सख्यात्मक शली गता जा सकती है—

एक साथे सब सध, सब साथे सउ जाय ।

रहिमा मूलहि सींगिबो पूनहि फलहि अघाय ॥ १६—पृ० ०

य रहीम फीरे दुबो जानि मदा सतापु ।

ज्यो निय कुच आपन गहे आप वडाई आपु ॥ १५५—पृ० १५

रहिमन तीन प्रसार ते, हित अनहित पहचानि ।

परदत पर परीस बस परे मामिला जानि ॥ १६१—पृ० १०

अरज गरज मान नहीं रहिमन ए जन चारि ।

रिनिया राजा मागता काम आतुरी नारि ॥ ६—पृ० २

११ परिगणनात्मक शली

सख्यात्मक शली मे मिलनी जुलती एक शली परिगणनात्मक शली है । म सनी म भी दा चार उ वस्तुआ को गिनाकर उनक गुण स्वभाव आदि क सम्बन्ध म मन व्यक्त किया जाता है । अन्तर केवल इतना है कि सरयात्मक शली की भांति दा चार छ आदि सख्यात्मक गता का उल्लेख नहीं रहता । रहीम के भी कुछ दोह परिगणनात्मक शला म लिख गए है—

उरग तुरग नारो नपति नीच जाति हथियार ।

रहिमन इहैं सेंभारिए पलटत लय न बार ॥ १८—पृ० २

१ चाणक्य नीति—अध्याय ६ श्लोक १६ स ०२ तक ।

० राजा तिया सनार त्रिटिया रोक्य आग जल ।

पासा सापिन हार ए दस होंड न आपन ॥ आलम - (माधवानल काम कदला)

पूत कपूत कुत्तुछनि नारि लराक परीस लजावन सारो ।

बध कुतुद्धि पुरोहित लम्पट चाकर चोर अतोय धुतारो ॥

साह्य सूम अराक तुरग कितान कठोर दिवान नकारो ।

ब्रह्म भन सुनु साह अकरर बारहो बाध समुद्र मे डारो ॥ (ब्रह्म कवि वीरबल)

यह रहीम मान नहीं दिल से नवा न होय ।

चीता, चोर इमान के, नए ते अवगुन होय ॥ १५४—पृ० १५

१२ अयोक्ति शली

अयोक्ति का शाब्दिक अर्थ है—अर्थ के प्रति कही गई उक्ति । जहाँ सावम्प के कारण उक्ति का विशेषार्थ प्रत्यक्ष वर्णित वस्तु के अतिरिक्त किसी अर्थ पर घटित होता है वहाँ अयोक्ति मानी जाती है । यह नीति कविता की प्रिय शली है । संस्कृत में तो इसी शली में पूरे के पूरे अर्थ रचित हो चुके हैं । गणपति जगन्नाथ वीरद्वार सामनाथ विजयगणि नीलकण्ठ आदि अनेक कविता ने अयोक्ति तक व अयोक्ति का गणक जस अनेक नीति प्रथा का प्रणयन किया है । बाबा दीनदयाल गिरि इत्यादि हिन्दी कवियों ने उन्नी परिपाटी का अनुसरण किया है । किन्तु हिन्दी में अयोक्ति का इतना प्रचार रहीम के वाद की घटना है । रहीम के नीति काय में कुछ ही दोहा में अयोक्ति शली प्रयुक्त हुई है । बाज (स्वामिभक्त सेवक) स सम्बन्धित दो दाह दलिए—

रहिमन बहरी बाज गगन चड़े फिर क्यों गिरे ।

पेट अधम के कारणे, फेर आय बधन परे ॥ १६३—पृ० १६

काम न कहूँ आवई मोल रहीम न लेइ ।

बाजू टूट बाज को साहब चारा देइ ॥ ३७—पृ० ४

पान^१ स्वान (देसी)^२ तबला^३ दजूर^४ इत्यादि कतिपय अर्थ विषया पर भी रहीम ने अयोक्ति का लिखी है ।

१३ प्रतीकात्मक शली

संलिप्त एव गहन भावा को प्रतीको द्वारा व्यक्त करन की परम्परा आदि कालीन है । बल्कि वाङ्मय में प्रतीका का प्रयोग अलम्ब नहीं । प्रकृति के लिए वृक्ष तथा आत्मा के लिए पक्षी के प्रतीक प्रसिद्ध ही हैं । लौकिक, संस्कृत तथा प्राकृत अपभ्रंश पाणि में प्रतीका का प्रयोग निर्विवाद है । नाया सिद्धा तथा मतो न अपनी योग एव आत्मात्म विषयक चर्चा में प्रतीका का प्रयोग सुलभकर किया था नीति काय में प्रतीका का प्रयोग अतना प्रचलित तो नहीं रहा, परन्तु उसका संख्या अभाव भी नहीं । रहीम ने अपने नीति काय में यत्र-यत्र प्रतीकात्मक शली अपनाई है । उन्हीन विपरीत स्वभाव के लिए दर-केर मानव शरीर के लिए कागध का पूतरा (कागज का पुतला) का प्रयोग किया है । इसी प्रकार ढाक सामान्य स्थिति का खीरा कपटपूण व्यवहार का मडला सच्चे प्रेम तथा चातक एकनिष्ठता का प्रतीक है । एक ही साथ अनेक प्रतीका की योजना लीजिए—

सरवर के खग एक से, वाइत प्रीति न थीम ।

प भराल को मानसर एक ठौर रहीम ॥ २५६—पृ० २१

१ से ४ रहीम रत्नावली दाहा म० २० १०८ १६६ तथा २०० इत्यादि

५ मु० उपनिषद—३ १ १

१६ सम्बोधनात्मक शली

तारायनि ससि रन प्रति, सूर होहि मसि गन ।

तदपि अधरो है सखी ! पीड न देखे नन ॥ ११—पृ० ७८

१७ प्रबोधनात्मक शली

पानग बेलि पतिप्रता रिति सम सुनो सुजान ।

हिम रहीम बेली दही सत जोजन दहियान ॥ ११३—पृ० ११

१८ आत्म प्रबोधनात्मक शली

रहिमन अपने पेट तो बहुत कह्यो समुभाय ।

जो तू अनखाय रहे तो सों को अनखाय ॥ १६२—पृ० १६

१९ रहस्यात्मक शली

रहिमन यात अगम्य की कहन सुनन की नाहि ।

जे जानन ते कहत नाहि कहत ते जानत नाहि ॥ २११—पृ० २१

२० कूट शली

चरन छुए मस्तक छुए तेड नाहि छाडत पान ।

हियो छुवत प्रभु छाडि द कहू रहीम का जान ॥ ५२—पृ० ६

२१ निणयात्मक शली

नाद राभि तन देत भृग नर धन हेत समेत ।

ते रहीम पशु ते अधिक रोभहु कह्यु न देत ॥ ११०—पृ० ११

निष्कर्ष

रहीम के नीति काव्य में प्रयुक्त विविध शलिया का अध्ययन कर लन व पश्चात् सृष्ट हो यह निष्पन्न निकाला जा सकता है कि उहान अपने नीति कथन व लिए अनन्य कविजनोंचित शलिया का प्रयोग किया है। सस्या की दृष्टि से सर्वाधिक दाह्ये सुबोध शली में लिय गए हैं। यदि शली की सुबोधता एव सुगमता को काव्य की कमीकी मान लिया जाय तो चोगी व चार छ कवि भी समवन रहीम व नम्म्युन अन तक न टिक सकेंगे। किंतु मात्र सुबोधता ही तो रहीम की शली का गुण नहा सुबोधता व माय ही स्वाभाविक अनकरण, उत्तिवचिन्य शली बविध्य तथा साथ और मुन्दर व साथ गिव का विगप विनियोग निश्चित ही रहाम का उत्तम शलाकार व रूप म काव्य जगत व सम व प्रस्तुत करत हैं। अन निस्मबोध कथा जा सक्ता है कि अन्विज्यनि-वैगन का दृष्टि स रहीम का काव्य सनया प्रौढ़ पुष्ट एव स्यापनीय है। निश्चिन हा व आत्म शलीकार थ।

* सम्बोधनात्मक शली में किसी दूसरे का सम्बोधन किया जाता है। प्रबोधनात्मक शली में दूसरे का सम्बोधन करने व साथ उपरान्त अपना प्रबोधन का भाव रहता है। आत्मप्रबोधनात्मक शली में सम्बोधन शक्ति अपने लिए ही है।

छन्द-विधान एव अलंकार-सौन्दर्य

छन्द भारतीय वाङ्मय का अत्यन्त गौरवपूर्ण गङ्गा है। छन्द का जितना व्यवस्थित सूक्ष्म एवं विस्तृत अध्ययन भारत में हुआ है उतना विश्व की प्राचीन अर्वाचीन किमी भी भाषा में कदाचित् आज तक नहीं हा पाया। प्राचीनता की दृष्टि में तो यह कवन और भी अधिक सत्य है। कारण छन्द का प्रयोग विद्वान् के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में ही प्राप्त हो जाता है। कीच ब्लूमफील्ड तथा निदबबयु गास्नी की बर्दिक पदा नुक्रमणिकाओं में छन्द और उसके यावरणिक रूपा के गतना प्रयोग मुगमतापूर्वक दखे जा सकत हैं। छन्द की बहुलता के कारण ही बर्दिक भाषा को छन्दस की सना दी गद थी। श्रौतसूत्र निदान सूत्र ऋक्सप्रतिमाख्य तथा निरुक्तन में बर्दिक छन्द का सुन्दर विवचन किया गया है। वैदिक वाङ्मय में छन्द का इतना महत्त्व हान के कारण ही छन्द का कलागत में सम्मिलित किया गया है। इन बन्द पडागा (गिक्षा कल्पानुक्त छन्द, ज्यातिप और व्याकरण) में सबसे पहल छन्द की गणना करत हुए, पाणिनीय गिक्षा में उस बन्द के चरण की सना दी गई है—छन्द पादौ तु वेदस्य।^१

छन्द का व्युत्पत्ति लभ्य ग्रन्थ

निघण्टु में छन्द को प्रसन्न करने के ग्रन्थ में एक पृथक धातु ही मान लिया गया है। वस सामान्यत छन्द शब्द की व्युत्पत्ति छन्द धातु से है,^२ इसका अर्थ है आच्छादित करना, आवृत्त करना, रणा करना, यवस्थित करना तथा प्रसन्न करना आदि छन्द का काय भी यही है। छन्द द्वारा आच्छादित और व्यवस्थित होन पर कवि के विचार सुरक्षित, अमर पठनीय एवं प्रसन्नताप्रद हा जात हैं। कदाचिन् इसीलिए सायणा चायन कहा था—अपमृत्यु वारयितु माच्छादयतीति छन्द ॥ इस प्रकार और भी बहुत से उल्लेख हैं। छांदोग्य उपनिषद् में दचनाभा द्वारा मृत्यु भय के कारण अपन

१ छन्द पादौ तु वेदस्य हस्ती कल्पोऽय पठयते ।

ज्योतिषामयन घञ् निरुक्त श्रोत्रमुच्यते ॥

गिम्हा प्राण तु वेदस्य भुक् व्याकरण स्मृतम् ।

तस्मात् सांगमपीयव ब्रह्मलोके महीयते ॥

—पा० गि०, ८१ ४२

२ निरुक्त, ७ १२

घात का रोग म ठक सत का यणत है । एषा य मृत्याविष्मया विद्या प्रसिद्ध ॥
महामुनि याम्ना का मण्ड करत एग दुगावाय न ए का यत घायरण माना है त्रिम
घोड कर एकात अमरुत प्राय करत ३—

यहभिरात्मानमाष्टादशत् दया मृत्याविष्मया तच्छस्ता इत्ययम् ॥

छद्म शास्त्र का समाारम्भ—नेप-गहड कया

यन्त्रि कचाया म छ क म मण्ड का एगकर ही सोरित ममृत म एका
की विष्मृत याजना की गई होगी और आग बनकर छ साम्ना एग म्वा पून साम्ना क
रुप म अयनिष्ठ दृष्टा हागा । एग साम्ना क घाति आचाय निगन गा जात है उहा के नाम
पर विगन साम्ना छ साम्ना का पर्याय बा गया है । किन्तु विगन म पूव भा गप जी
द्वारा मण्ड का छ साम्ना पढाया जात प्रसिद्ध है । त्रिने विचरणा म य कया विग्नार
स वर्णित है ।^१ कहत है कि जय एक बार घायरण मण्ड जा द्वारा पकट निग मण ता
उनात अयन गाय जान स पून अपनी विगय विद्या (एग साम्ना) को प्रकाश म म्ना की
इच्छा प्रकट की और विद्या नाप क कारण मण्ड को मव छ का विधात यनात दृग
अन म भुजग प्रयाति एका नभणयनात दृग साम्नाचानुय और साधक म अयन भागन
की सचना देकर समु म विगत गण । मण्ड जी द्वारा घागा घडी का आरोप लगाय
जाने पर गप जी न समु म स ही (भुजग प्रयाति-स्थाण बनान क समय) अयन द्वारा
कथित पूव सूचना रूप काव्य का स्मरण करा लिया—चतुर्भिमवार भुजग प्रयाति ।^२

विगल का आदि आचामत्य—सदिग्ध

लोक म भी यह प्रसिद्ध है कि विगल महोत्सव गप क अवतार थे । वृत्तर
गिणी म फनपति भारव तथा वृत्त विचार म फनपति करत अगान आति गग इसी
लोक प्रसिद्धि के सूचक ह । हमारा अनुमान है कि छ साम्ना विगलाचाय स भी पूव
अव्यवस्थित रूप म विद्यमान था । गप एग ही समय के (विगल पूव) आचाय रह
हागे । विगल द्वारा छ साम्ना को व्यवस्थित रूप दिया गया होगा और उहा क द्वारा
अध्ययन अध्यापनादि का विनोप प्रसार एव प्रचार होने के कारण लोक म उही की
प्रसिद्धि आदि आचाय के रूप म हो गई होगी । ऐसा अय प्रसगा म भी होना
है । महर्षि बाल्मीकि स भी पूव च्यवन ऋषि अपनी रामायण लिख चुके थे^३ परंतु
आदि कवि क रूप म व ही प्रसिद्ध है । साव्य दशन सम्वधी विचार अपने मूल रूप म
महर्षि कपिल से भी प्राचीन है^४ किन्तु उह व्यवस्थित रूप देने के कारण ही महर्षि

१ हिन्दो विश्वकोश—खण्ड ४ (ना० प्र० स० काशी) पृ० ३०५

२ कदाचित पाठका को रहीम बीरबल खेल की मीमायम मीमायम घटना का
स्मरण हो जाय ।

३ देखिए—बी० वर्धाचाय कृत संस्कृत साहित्य का इतिहास, अश्वघोष एव
बाल्मीक प्रसंग ।

४ देखिए—वास्पति गैरोला कृत भारतीय दशन, सारय दशन प्रसंग ।

कवित्त का साम्य दान का प्रयत्न माना जाता है। इसी प्रकार पून रूप से विद्यमान होने पर भी छन्द शास्त्र के प्रवक्तार का श्रेय आचार्य विंगल का ही प्राप्त है।

छन्द शास्त्रीय परम्परा और हिन्दी

परवर्ती छन्द शास्त्रीय सस्कृत आचार्यों की सूची बहुत लम्बी है।^१ सस्कृत की पश्चात्कर्त्ता प्राञ्चन अथवा प्राचीन भाषाभाषा में भी छन्द शास्त्र के ग्रन्थ प्रणीत होकर रहते हैं। यह परम्परा गुजराती मराठी तथा हिन्दी प्राचीन आधुनिक भाषाभाषा में भी अद्यावधि चलमान है। इन भारतीय भाषाभाषा में छन्द शास्त्रीय परम्परा की दृष्टि से हिन्दी अग्रगण्य नहीं अधिक सम्मान है। 'हिन्दी की तरफ सम्भवतः किसी भी आधुनिक भारतीय भाषा में छन्द शास्त्र का विराम नहीं हुआ।'^२

हिन्दी के प्राचीन,^३ अर्वाचीन^४ सभी विद्वान् पूर्ववर्ती सस्कृत प्राकृत आदि के आचार्यों का उत्तरग करत हुए हम सगाधिन परिवर्धित और परिभाषित^५ करत रहते हैं। मुख्यतः मिथुन तथा अग्रज अथ 'वृत्तविचार' में फनिद मुनि अथवा विंगलाचार्य के साथ नाम और अग्रस्त, ऐसे नये आचार्यों का उत्तरग किया है,^६ जिनके नाम भाष्यतया अग्रज दायन गुणन में नहीं आते। इन आधुनिक काल में आकर छन्द का महत्त्व समाप्त होना जा रहा है। और यदि यही प्रगति रही तो हिन्दी में छन्द तथा छन्द शास्त्र केवल पुस्तकीय अथवा परीक्षायुगी विषय ही रह जायगा। श्रियात्मक वाच्य प्रणयन में छन्द का निराल बहिष्कार होना अग्रभव नहीं परन्तु यह एक दुर्भाग्यपूर्ण अतिवाच के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा।

रहीम की दृष्टि में छन्द और विशेषतः बरव का महत्त्व

आज की स्थिति चाहें जो है परन्तु रहीम के समय में छन्द का महत्त्व अस्मिन् दिखे था। छन्द रहित कविता की कल्पना भी उस युग में नहीं की जा सकती थी।

१ देविग—हिन्दी विश्वकोश (ना० प्र० सभा काशी) अण्ड ८ छन्दशास्त्र प्रसंग।

२ हिन्दी साहित्य कोश (ना० म० वाराणसी) भाग १—पृ० २६३

३ प्राकृत भाषा सस्कृत लति बहुत छन्दो ग्रन्थ।

दास कियो छन्दारणव भाषा रचि शुभ ग्रन्थ ॥ छन्दशास्त्र ७

४ इस ग्रन्थ का हमने शोधित भट्ट हलायुध के सटीक प्राचीन सस्कृत छन्द शास्त्र श्रुतबोध, बलरत्नाकर, छन्दोमञ्जरी बलदोषिका छन्दसारसग्रह इत्यादि ग्रन्थों के आधार से बनाया है—जगन्नाथ प्रसाद भागु छन्द प्रभाकर (सूक्तिका)

५ किसी रचना के प्रत्येक पद में मात्राया अथवा वर्णों की नियत संख्या, क्रम योजना एवं यति के विनाप विधान पर आधारित नियम को 'छन्द' कहते हैं।

—डॉ० आनन्दप्रकाश शास्त्री काव्यालोचन, पृ० २८८

६ वेद अंग है छन्द ताते पदिसत प्रात नित।

भायत कवि कुल छन्द भाग अग्रस्त फनिद मुनि ॥ व० वि० ।

रहीम ने स्वतः अपनी बहुविध छन्द रचना का उल्लेख किया है। इतना ही नहीं उह काव्य के लिए सवथा नवीन छन्द बरव को जन्म देने का श्रेय भी प्राप्त है। अतः स्पष्ट है कि रहीम काव्य प्रणयन के लिए छन्द को अत्यन्त आवश्यक उपकरण मानत थे। भक्ति के उस युग में रीति विषयक नायिका भेद की म्वाविष्टत सवथा नवीन छन्द बरव में रचना करना रहीम की आघायत्व क्षमता का प्रमाण है। बरव नायिका भेद के आरम्भ में उहाने बरव के महत्व का बखान स्वतः किया है—

कवित बह्यो दोहा बह्यो तुल न छप्पय छन्द ।

विरच्यो यहो विचारि क, यह बरवा रस कद ॥१॥

बेधक अनियारो बडो, समुक्त चतुर सुजान ।

सुनत जात चित्त चाव प यह बरव के वान ॥२॥

१ बरव-लक्षण और रहीम के बरव

छन्दा को विनोपत, वक्तिक और लौकिक दो प्रधान वर्गों में विभाजित किया जाता है। लौकिक छन्दा के भी पुनः दो भेद हैं—मात्रिक छन्द और वाणिक छन्द। मात्रिक छन्द तीन वर्गों में विभाजित है—सम मात्रिक अथ सममात्रिक और विषम मात्रिक। बरव अथ सममात्रिक छन्द है। अथसम का अर्थ है—जिसके चारों चरण न पूणत विषम हों और न पूणत सम। सममात्रा तथा विषम मात्रा दोना क समवय में इस छन्द का निर्माण किया गया है।

सभी जानत हैं कि बरव छन्द के आन्ति जनक रहीम हैं। अतः प्राचीन सस्कृत पिगल शास्त्र में इसका लक्षण का प्रश्न ही नहीं उठता। हिंदी में भी रहीम पूर्व इसके अस्तित्व की विद्यमानता न होने के कारण किसी प्रकार का लक्षण निर्माण असंभव था। परवर्ती आचार्या ने बरवा के लक्षण अवश्य लिखे हैं—विषम बारह बरव सम दिन जात अथात् बरव के विषम (१ और ३) चरणों में बारह बारह तथा सम (२ और ४) चरणों में सात-सात (द्वि) मात्राएँ हानी हैं और अतः में जगण (१५) आता है। वस ता इस नियम का अपवाद भी है किन्तु सामान्यतया यही प्रथम उचित बढता है—उत्तरणाय बरव नायिका भेद का प्रथम दाहा प्रस्तुत है—

० ५ । । । । ० । । । । ० ।

बदा देवि सरदया, पद कर जोरि ।

। । । । ० । । । । । । । ० ।

बरनत काव्य बरवा, सगइ न खोरि ॥

अंगी काव्य का अन्तिम बग्व भा दलिए—

। । । । । । । । । । । । । । । ।

बिहंसत भँउह चड़ाय धनुष मनोज ॥'

१ तुमनाय—भुक्त कुलत सावन सगो, कर बलाय मुमनाय ।

गाड़े गहे उरोज पिय बिहंसो भौह चड़ाय ॥ —मनिराम

१११ ॥ ११११ ॥ ११११ ॥ ११११ ॥

सावत उर उपटनवा ऐठि उरोज । ११६

रहीम अन्मव प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे प्रणामकत्व, संनानायकत्व तथा वीरत्व के साथ ही कवित्व प्रतिभा का समावेश कुछ कम विचित्र बात नहीं। कवित्व के साथ आचायत्व और गवीकार के गुण भी उनके व्यक्तित्व में विद्यमान थे। काफ़ उह अन्मव मिना ज्ञाता। बरख छन्द का निर्माण तो अपने में महत्वपूर्ण है ही, साथ ही हिन्दी से सबथा भिन्न फारसी भाषा में बरख छंदा का सजन, शायी की दृष्टि से और भी महत्वपूर्ण है। मात्रादि की पूर्ण शुद्धि के साथ उन्होंने कतिपय बरख फारसी में भी लिखे हैं। उदाहरणार्थ दा बरख लीजिए—

दिलबर जद बर जिगरम तीर निगाह ।

तपीदा जा मो आयद, हरदम आह ॥ ६५—५० ७१

क गोयम अहवालम पेश निगार ।

तनहा नजर न आयद, दिल लाचार ॥ ६६—५० ७१

२ मालिनी और रहीम

संस्कृत कविता का कतिपय छन्द अपेक्षाकृत अधिक प्रिय थे। मालिनी छन्द उही छंदा में से है। पिगलाचार्य ने इस समवृत्त वाणिक छन्द का लक्षण—मालिनी नाम्यो (७ १५) दिया है। तापय यह है कि नन म य-य—से मालिनी बनती है। बाद में ८ ७ वर्षों का नियम विकसित हुआ। भारत में इसी को 'मालिनीमुख्य' की संज्ञा दी थी।^१ हिन्दी में इस छन्द का विशुद्ध प्रयोग करने वाल कवि इन गिने ही हैं। रहीम ने मोति ग्रंथ में तापय छन्द का प्रयोग नहीं किया हा उनका मन्नाटक मालिनी में ही रचित है—

न न म य य
 १११ ११ १११ १ १ ११११

शरद निशि निगीये चाँद की रोशनाई ।

सघन बन निकुजे काह बगी बजाई ॥

रति पति सुत निद्रा साइया छोड भागी ।

मदन शिरसि भूय क्या बला आन लागी ॥ म० ॥

३ सबदा और रहीम

सबदा ब्रज भाषा का अल्प न लालना छन्द है। सबदा के घनी रमलान के समय वस्तुतः रस की खान ही है। तुलसी की कवितावली के सबदा भी बड़े टकसाली हैं। इस छन्द में २२ से २६ वर्षों तक का विधान है। आकृति (२२ वण) विवृति (२३ वण) संस्कृति (२४ वण) अतिवृति (२५ वण) एव उत्कृति (२६ वण) के सभी वृत्तों को सबदा की संज्ञा दी जाती है। यह एक लघुमूलक छन्द है। मध्य युग में रणाट्ट

तथा भक्ति के लिए सबय व एक स एक सुन्दर प्रयोग उपलब्ध हैं। रहीम के सबयो म भक्ति और शृंगार के साथ नीति विषयक सबये भी देख जा सकत हैं। वणकम एक वण सख्या व अनुसार सबय के अनक भेद हो सकत ह। इन म प्राय छ अधिक प्रसिद्ध हैं। इन छ मे भी विशेष प्रयोग चार का ही हाता है। रहीम के काय स चारा प्रकार के सबया व उदाहरण प्रस्तुत है—

(क) मत्तगयद सजया

विद्वृति जानि का २३ वर्णों व प्रत्येक चरण वाला वह छन्द जिसम वण मान भगण तथा दो गुरु व यम स विद्यस्त रहत हैं मत्तगयद कहलाता है। भाष्य के महत्व का परिचायक रहीम का निम्नलिखित सबैया मत्तगयद ही है—

भ भ भ भ भ भ भ गुरु
 ५। । ।। ५। । । । । ५। । । ५
 दोन चहे करतार जिहें मुख सो तो रहीम डरे नहि टारे ।
 उद्यम धीर्य कौने बिना धन आवत आपुहि हाथ पसारे ॥
 दब हसे अपना अपना विधि के परपच न जात बिचारे ।
 बटा भयो दमुठेय व घाम श्री दुदभि वाजत नद के द्वारे ॥^१

मत्तगयद का एक अन्य उदाहरण नीति—

न भ भ भ भ भ भ गुरु
 । । । । । । । ।
 जानि हुवी सनि गोहन म मा मोहन का ननि व लनचानो ।
 नागरि नारि नई अरु वी उरु नदनाल को राभिओ जाओ ॥
 जानि न निरिख चितई तर भाय रहीम घटे उर आना ।
 ज्यों वमनत दमायन म निरितीर गों मारि रा जान निताओ ॥^२

(ग) सुन्दरि तयथा

मत्तगयद का २३ वर्णों का धारण जानि का वर छन्द जिसक चरणाम व वर धारण के तयथा एक व यम व रम जात है। तयथा का नाम माधुरी नाम ना शिवा है। प्रथम वा चरण मया मया म आपुग्नि रयाम वा सुन्दरी मयया प्रस्तुत है

म म म म म म म म
 । । । । । । । ।
 पुनरा अनुमान करे मितर मनि सागि यो वट पाहु परयो ।
 शिखर दण्डि मण्डि हा वा है कथिय को बहा बहा है रति परयो ॥

सूधे चित नन हाहा करें हू रहोम सु तो बुव जात न मटो ।
ऐसे बठोर सो ओ चित चोर सों कौन सी हाय घरी भइ भैंटो ॥^१

(ग) किरोट सवैया

जिस छन्द क प्रत्यय चरण म वण आठ भगण क नम से रमे गए हा, वह किरोट सवैया कहलाता है । जानकी जीवन को जन हूँ जरि जानु सो जीह जा जाचत ओरहि न्यादि कवितावली (७, २६) का प्रसिद्ध सवैया किरोट ही है । कवि रसगान का सवप्रसिद्ध सवैया—मानुष हों तु वही रसगानि —इत्यादि भी किरोट सवय का सुन्दर उदाहरण है । लाज और मौन की उमग भरी कचोट ना प्रत्यय रहोम की किरोट सवैया लाजिए—

म भ म भ म भ म भ
 S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I

सोखिह ऐसो रहोम कहा इन नन अनोखे धु नेह कि नाधन ।
ओट भये रहते न बने कहते न बने बिरहानल राधन ॥
पुयन प्यारे सों भैंट भई सुप मौन कुमग मिली अपराधन ।
म्याम सुधानिधि आनन की मरिये सखि सूधे चितवे की साधन ॥^२

(घ) दुमिल सवैया

यह सस्वृज जाति का वह छन्द जिसक प्रत्यय चरण म आठ भगण हात है । जानकी प्रवास प्रसंग पर आधारित भाग्य की प्रवणता का वणन रहोम ने दुमिल सवये में किया है । अन्तिम पंक्ति की गत ग्रीडा भी ध्यान देने योग्य है । ऐसी आयासमाधता रहोम के काव्य म अत्यन्त कदाचित ही मिल । सवैया नम प्रकार है—

म स म म स स स म
 I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I

जिहि वारन बार न लाम कछू गहि सभ-सरसन दोय किया ।
गये गेहहि त्यागि के ताहि सम सु निवारि पिता बनबास निया ॥
कहे बीछ रहोम रह्यो न कछू जिन कीना हुतो उन हार दिया ।
बिधि यो नसिया रसवार सिया कर बार सिया पिय सा रमिया ॥^३

३ घनाक्षरी और रहोम

कवित्त, मनहरण अथवा घनाक्षरी हिन्दी क मुक्तक वाणिक गूढ छन्द म सर्वाधिकप्रिय छन्द है । प्रसिद्धि की दृष्टि स यह सवय क समथ ही है । अपन आकार क कारण रस प्रपञ्च की पूण सामग्री का एक ही स्थान पर उपस्थित कर दन म अत्यन्त

समर्थ है। यही कारण है कि रोज़ यौग्य योभंग तथा उगार छात्रि प्रायः सभी रमाक लिए उस छन्द का प्रयोग सफलतापूर्वक किया गया है। रमाका की दृष्टि में भी यान उपयोगी है। छन्द में यान हीन यन्ता है। यानों का प्रयोग रमिका व रमिगी नियम विधि में आयुद्ध न जान व कारण रमिका प्रयोग यथा गुणरता एव यन्त्रता में किया जाता रहा है। यना री यज्ञ नापा का यनता छन्द है। गुरु में गुरु यग प्रयोग प्राप्त नहीं होत। किन्तु गुरु और उनर गमगामयित तथा परवर्ती कविया में अद्वितीय द्रुत गति से प्रसिद्ध हुआ है। मुफिया और गता का छन्दर प्रायः अधिराग भक्तिकालीन कविया न यनाधारिया रिया है। रीतिरान में ता रमिका प्रचयन और भी अधिक हा गया था। भारत में रमाकर रमिगोध गण तथा यन्य प्रभति अनक स्वनामधेय यडा बोना व रमिया न रम रान का यग्य अनाया है। माराय यह है कि— 'स हिन्दी का राष्ट्रीय छन्द माना जा सकता है।'

गठन की दृष्टि में रम मुता रमव का एव भू माना गया है। रमर प्रयक चरण में ३१ यण १६ ११ पर यति तथा अन्त में गग यन्ता है। रहीम की सामाय प्रवृत्ति इतन बड छन्द की अर नहीं थी किन्तु व यन्यमोता जाय थ। यन काय वानन का यनाक्षरी की यान यन ग वनित क्या रगत। उगार भक्ति तथा नीति में स प्रयक यिपय स गम्बयित एव एक यना री प्रानुत है—

(क) शृंगार यनाश्वरी

अति अनियारे मनो सान दे सुधारे महा
विषक विपारे ये करत परतगत हैं।
ऐसे अयराधी देल अगम अगाधी यहै
साधना जो साधी हरि हिय में अहात हैं।
बार बार धोरे याते लाल लाल डार भये
तोह तो रहीम धोरे विधिना सखात ह।
धाइक धनर दुख बाइक है मेरे नित
मन वान तरे उर बेधि बेधि जात हैं।^१

(ख) भक्ति यनाक्षरी

पट चाहे तन पट चाहत छदन मन
चाहत है धन जेती सपना सराहिबी।
तेरोई क्हाय क रहीम बहे दीनय
आपनी विपत्ति जाय काके द्वार काहिबी।
पेट भर दायो चाहे उद्यम यनायो चाहे
कुटुम जियायो चाहे कात्रि गुन साहिबी।

१ हिन्दी साहित्य कोश भाग १—पृ० २८

२ रहीम रत्नावली पृ० ७७

जोविका हमारी जो प श्रौरन के कर डारो,
ब्रज के बिहारी तो तिहारी कहा साहिवो ।^१

(ग) नीति घनाक्षरी

बडेन सों जान पहिचान क रहोम काह,
जो प करतार ही न सुख देतहार है ।
सीतहर सूरज सों नेह कियो यही हेत
ताऊ प कमल जारि डारत तुपार है ।
क्षीर निधि मांहि धस्यो गकर के सीस बस्यो
तऊ ना कलर नस्यो सति मे मदा रहे ।
बडो रिभिवार है, चकोर दरवार है,
कलानिधि सो धार तऊ चाखत अंगार है ॥^२

४ पद

भक्ति युगीन काव्य मात्रा म पं का स्थान नितान्त महत्वपूर्ण है । कृष्ण भक्ति गाथा क अविर्भाव कविया न पदा का प्रयोग बहुत अधिक मात्रा म किया है । विद्यापति सूर अष्टछाप के अथ कवि तथा मीरा इत्यादि का काव्य पदो के आधार पर ही निर्मित है । राम भक्ति गाथा क कविया न भी पदा की रचना की है । तुलसी की गीतावली तथा विनय पत्रिका म उत्कृष्टतम पद रच जा सकते हैं । मिर्जा नाथा तथा मीरा म भी पद गरी का प्रचुर प्रयोग रहा है । सावित्रीना म भी पदा का परिपाटी अनुष्ण है । पदा किमी छन्द विनय का नाम न होकर गली विनय का नाम है जिसका मुद्रा आधार उमका प्रथम पक्ति अथवा टक हानी है । अतः मात्रा प्रयोग म रहोम क बचन दा ही पद प्राप्त होने हैं । य शैली पदा रहोम की मजन प्रतिभा के प्रचुर परिचायक है । इह पढ़कर जान होगा है कि रहोम यदि कवल पद ही लिखत ता निर्दिष्ट ही व सूर-तुलसी म कम सफल न हान । प्राप्त शैली पदा म सुगुण है—

छवि आवन मोहन लाल की ।
काद्ये कछनि कलिन मुरली कर पीत पिछोरी सात की ॥
बक तिलक केसर की कौने दुति मानो विषु बाज की ।
बिसरत मांहि सयो भी मन ते चितवनि नयन बिसाल की ॥
नीशो हंसनि अघर सघरनि का छवि छीनो सुमन गुलाल की ।
जल सो डारि शिया पुरदन पर डोलनि डोलनि मुकुता मात की ।
छाप मोच बिन मोलनि डोलनि डोलनि मदन-गोपाल की ।
यह सारूप निरख सोइ जान इम रहाम क हाल का ॥^३

ब्रह्मण इव मनसि को उनमानि ।
 विस्तरत नाति तपो मो मन ते मह मह मुमुक्षुनि ॥
 यत् ब्रह्मनि बुद्धिं यत्प्राप्तं ते यत्तः परतः समन्तानि ।
 यमुपा को ब्रह्म करो मपरता मुपा तपो यत्प्राप्तानि ॥
 यद्गो रते विप उर विमान का मुमुक्षुमान यत्प्राप्तानि ।
 मय समय पीताम्बर हृ को यत्प्राप्ति यत्प्राप्ति यत्प्राप्तानि ॥
 धनुस्त्रिंशो यद्वाचन ब्रह्म ते वाचन वाचन जानि ।
 य रहीम धिन ते म टरति है मदन श्याम का जानि ॥^१

५ छप्पय

यह विषय मानित है । घोर असा वि ताम म हा म न है ए नय म छ
 पय हात है । यह एक मयान है जो गाना (११ १० तथा उत्ताना
 (११ + १) का योग म यान है । छप्पय म यत्तः परतः याना क तथा छत्तिम ना
 यान उत्ताना क जान है । प्रथम चार पादा मय का पदाव तथा छत्तिम ना म
 उताह रहता है । यही कारण है कि यह चार रग क निरु छप्पय उपयजन है ।
 अथवा दा बाल तथा छानि काम म अथिह प्रचलित रहत का कारण भी यही है ।
 भूषण मून तथा पचावर दयानि त मयरा यर्थात् प्रयोग किया है । तुमगी म जा
 ने भवित क लिए भा दस प्रयुक्त किया था । रहीम न स्वत नायिका भू क प्रारम्भ
 म छप्पय लिगन का उन्वग किया है— यवित कायो दोष कायो तुय न छप्पय
 छत्त । विन्तु म न है कि उनर निरु छप्पय प्राप्त नहीं जात । उनरा यवन एक
 छप्पय रहिमन विलास तथा रहीम रत्नायली (पृ० ८२) म प्रकाशित है घोर यह भी
 रहीम क अपन ही श्लोक का धनुवा^१ है । रहीम न एगा यद्यप भी किया है । धनु
 छप्पय इस प्रकार है—

बबहुं क लग मृग मोन बबहुं मरकट तन धरि क ।
 बबहुं क मुर नर असुर-नाग मय आकृति हरि क ॥
 नटयत सख घोरासि स्वाग धरि धरि में आयो ।
 हे त्रिभुवन के नाथ रीझ को बछू न पायो ॥
 जो हो प्रसन्न तो देहु अय मुक्ति दान मांगहुं बिहंस ।
 जो प उदास तो बहहु इमि मत धरु रे नर ! स्वाग अस्त ॥^१

रहि० वि० पृ० ७३ ॥

१ आनीता नटवमया तव पुर श्रीकृष्ण या भूमिका ।
 श्योमाकाश खलाचरार्थिसुवत त्वत्प्रीतयेऽद्यावधि ॥
 प्रीतिस्तव यदि चेनिरीक्ष भगवन् स्वप्रायित देहि मे ।
 नोचेद ब्रूहि कदापि मानय पुनस्वतादगो भूमिका ॥ रहीम रत्ना०, पृ० ८१

यह भाव अथ वचनो वा भी वृत्त पसन्द आता
तथा एक अन्वय वचनो के रूपमें प्राप्य भी है ।^१

६ सोरठा

सोरठा अर्द्ध सम मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम और तृतीय अर्थात् सम चरणा म ११—११ तथा द्वितीय एवं चतुर्थ अर्थात् विषम चरणा म १३—१३ मात्राएँ होती हैं विषम चरणा म अन्वय म लघु रहता है और सम चरणा के आदि म जगण (१०१) नहीं आता। मामागत पहल तीसर चरण म ही तुक मिलती है, दूसर और चौथ म नहीं। ऐसे भी सारठे अन्वय म आता है जिनका चारो चरण सुकान्त हान हैं।^१ परन्तु यह अपवाद ही समझना चाहिए। मामागत सभी न दस दाहे का उल्लेख दम्बीकार किया है। प्राकृत पगलम म सारठे के साथ अथ सारठा एवं सोरठा का और उल्लेख है। उह भी उह का विपरीत कहा गया है।^२ प्राकृत पगलम म सोरठा का उल्लेख इमकी प्राचीनता का प्रमाण है। इतना ही नहीं स्वयम्भू की रामायण के मिथ्या के काव्य तथा नाया की वाणिया^३ म सारठे के पुत्रक रूप कहा कही प्राप्त हात रह है। हिंदी म तो चन्द्रवरदा^४ केवल दो स्थानो पर जायसी^५ कबीर^६ सूर^७ तुलसी^८, विहारी^९ भारत^{१०} मधिलीशरण गुप्त^{११} तथा प्रभाकर^{१२} आदि सभी प्राचीन नवीन कवियों म सोरठा की रचना की है।

१ रहीम रत्नावली पृ० ८१—पाद टिप्पणि

२ वही पृ० ७६

३ लिखकर लाहित नेव डूब गया है दिन अहा।

योम सिधु मे सखि देख तारक बुद बुद दे रहा। —माकत

४ प्राकृत पगलम ? १७०

५ हिंदी काव्यधारा—राहुल सांकृत्यायन पृ० ११८

६ हिंदी साहित्य का बहत इतिहास भाग—१ (ना० प्र० स० वाराणसी) १०

भोदाकर काव्य का नव पृ० ३६०

७ गोरखबानी टा० चन्द्रशाल—पृ० १७६

८ चन्द्रवरदाई और जनका काव्य टा० त्रिवेणी पृ० २४१

९ अल्लरावट म दोह सारठे एक के बाद एक क प्रम स हैं।

१० कबीर काव्यवली —डा० श्यामसुन्दरदास (माखी) २० ८ २८ ३३

११ सूरसागर—स० आचार्य गण्डुलारे वाजपयी पद स० ३८८

१२ रामचरितमानस प्रारम्भिक काला प्रसंग तथा दोहावली ६

१३ विहारी—टा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र (चतु० स०)

२०४ २०७

१४ मुद्राराक्षस द्वितीय अंक

१५ साधत नवम संग

१६ काननकुसुम (चित्रकूट)

राग का विषय है कि अथ छाया विगपन तोहा सबया आनि अथ छाया क अनुपान म सोरठ का प्रयोग हिन्दी म बहुत ही कम है। जना ही नही गाम्बरान राह का लक्षण कहने क उभरात सोरठे क सम्प्रथ म कापी तुउ विगन की आवयकता ही अनुभव नही करत। उगहरण र दिण रत्नारत जी न कविबर विहारी नामक ग्रथ म राह का बहुत ही सूक्ष्म और सारगर्भित विवचन किया है। उहान भ्रमर भ्रमर गरभ श्यन मडूक मकट करभ और नर श्यादि १ प्रकार क तोहा का जानि प्रकचन दिया है। वण प्रम की दष्टि स तो लान क २२ ०४ ६३ १६ रूपी की गणित सकलित चर्चा लगभग बारह पृष्ठा म की है किन्तु वरार सोरठ पर वारत पक्तियां भी नही लिखी गई। कताचित इसका कारण भी यही है कि विन्दी क मान मी म अथक दोहा की सतसई म सारंग की मय्या गान म अधिक नही है। हिन्दी म लान इम छन्द का प्रयोग उनना अधिक न हुआ है किन्तु हिन्दी स जन्त भाषाप्राम मोरठा बहुत अधिक प्रचलित रहा है। सब पूछिण ता सारठा मूलत दात का उलग करक पदन की सोरठा लन की एक विधि मात्र थी। इम सम्प्रथ म आचार्य विष्णनाथ प्रसाद का निम्नलिखित कथन उद्वरणोप है—

राग को विषयमन् करके सोराट्ट दग म विगप प्रकार की पद्धति प्रचलित हुई। अर उमका नाम सोरठा पड गया यह नाम ही बतना दता है कि इस प्रकार की गली का मूल स्थान कहा था। वम ही जम सारठा राग अपन मूल स्थान का पता पता है।

सोरठ का सम्प्रथ साराट्ट म हो या न हो हमार चरितनायक का सम्प्रथ मोराट्ट गुजरात अहमदाबाद तथा समस्त विगन स वरापर रहा है। सारठे का प्रयाग भी उनक काय म हिन्दी क अनन कविया म अधिक है। कहत हैं कि उहाने एक पृथक ग्रथ तुगार मोरठ की रचना की था। आज उनक तुगार सम्प्रथी कुछ ही सारठे प्राप्त हैं। तुगार क छ सोरठे रहाम रत्नावनी म प्रकाशित हैं—

। 5 । । । । 5 । । । । ।

गई आगि उर ताय आगि नेन आई जो निय ।

लागी नहीं बुझाय भभकि भभकि बरि बरि उठ ॥ ११॥

तुरुक गुरक भरिपूर डूनि डूनि गुर गुर उठ ।

चातक जातर दूरि देह देह विन देह को ॥२॥

दीपक दिए छिपाय नवन बधू घर ल चली ।

कर विहीन पडिताम कुव नदि तिन सीत धुन ॥३॥

पलटि चली मुमकाम दुति रहीम उपनाय अनि ।

बाती सी उसकाय, मानो दीनी दीप की ॥४॥

१ कविबर विहारी—जगनायकाग रत्नाकर (प्र० सं०) पृ० २२

२ हिन्दी साहित्य का अतात (भाग २)—आ० विष्णनाथप्रसाद मिश्र पृ० ३६६

३ जा पर अधिक वन न हान कारण मात्रा ह्रस्व (जु) है ।

यक नाहीं यकपीर हिय रहीम होती रहे ।
 बाहू न नई सरोर रीति न वेदन एक सी ॥५॥
 रहिमन पुतरी स्याम मनहुँ जलज मधुकर लस ।
 केधों गालिग्राम रूपे के अरपा धरे ॥६॥^१

लगभग इतन ही सोरठे नीति सम्बन्धी भी है—

श्रोत्रे को सतसग रहिमन तजहु अंगार ज्यों ।
 तातो जारे अग सीरे प कारो लग ॥२७१॥
 रहिमन को तो प्रीति साहब को भाव नहीं ।
 जिनके अगनित योन हमे गरीवन को गन ॥२७२॥
 रहिमन जग की रीति में वेष्ट्रो रस ऊच मे ।
 ताहू मे परतीति जहा गाठ तेंह रस नहीं ॥२७३॥
 रहिमन नीर पवान बूड प सीभ नहीं ।
 तसे मूख्व ज्ञान बूभ प मूक नहीं ॥२७४॥
 रहिमन घटरी वाज गगन चने फिर क्यों तिर ।
 पेट अयम क काज, फेर आय वधन पर ॥२७५॥
 रहिमन मोहि न सुहाय अमो विप्राव भान त्रिनु ।
 बर विष दय बुलाय मान सहित मरिचो नतो ॥२७६॥
 त्रिडु भी त्रिनु समान का अचरज कासों कहे ।
 हेरनहार हेरान, रहिमन अपने आपत ॥२७७॥

इन मारठा के अतिरिक्त वावू ब्रजरत्नदाम न रहिमन विलाम म १ सोरठ
 आर लिखे हैं—

रहिमन मन की भूल सेवा करत करील की ।
 इन ते चाहत फूल जिन डारन पत्ता नहीं ॥ रहि० वि०—पृ० २८
 चुल्हा दीहो वार नत रखा सो जगिगयो ।
 रहिमन उत्तरे पार भार नीक सब भार में ॥ रहि० वि०—पृ० २८

७ दोहा इतिवृत्त और विशेषता

अध-मममात्रिक छन्द म दाट का स्थान मवप्रमुख है । अध मममात्रिक ही
 नहीं अत्रिनु द्विती क सम्पूर्ण छन्दो का एक स्थान पर एकत्रित क किया जाय ता
 सम्भवन मोहा की कुल सख्या द्विती म प्रयुक्त किमी भी छन्द से अधिन सिद्ध नाही ।
 कहन हैं कि— 'दोहा ही वह प्रथम छन्द है जिमम तुक का (मवप्रदम) उपपात
 हुआ । तै क अनुकरण से तै गायद अन्य अपभ्रं ग छन्द म तुक का प्रयाग (आरम्भ)

१ रहीम रत्नावली प० ८०

२ वही प० २६ २७

हुषा ।^१ श्लोक का आरम्भ कब म हुषा यह तो पता चला जा सकता कि तुलसीदास का मान है कि १५०० वर्ष म लगभग तो साहित्य चला है । रामायण की म प्रथम शताब्दी का यह प्रमाण न माना जाय तब तो रामायण का साहित्य काल प्राचीनतम माना जायगा । इतना तो विदित है कि रामायण का जन्म ही नहीं प्राचीन म भी था । प्रथम चिन्तामणि का विम्वरिणित इतिहास कब का प्रमाण है—

पहला साध न अनुकर, गोरी मुकुटमल्ल ।

अष्टिद्वी पुनि उनमई पडिपपती चन्द्ररत्न ॥^२

श्री० धर्मवीर भारती का कथन है कि— प्राचीन काल म रामायण की परम्परा सम्भवतः मगध प्राचीन और मगध म प्रथम व्यापार है । 'कालिका म तो श्लोक की व्याख्या तब मन्ता निश्चय ही सम्भव है । श्री० ज्ञानप्रसाद विवेकी न रामायण का प्रथम काल मानता है । श्री० विश्वनाथप्रसाद मिश्र क अनुसार रामायण का जन्म मगध की राजा का मगध मगध है और गाथा काल म प्राचीन का बस ही कहा जाता है । तत्काल कविता न दास का गुणगान भी किया है । सिद्ध महाराज (६वीं शती) न स्वयं रामायण स कहा था—

णउ णउ दोहाच्छन्दे बहुविण विष्णु गोप ।

प्रथम शताब्दी परवर्ती विद्वान् एव कवि यत्र नत्र दोह का गुण मान करत २२ है । इतना होने पर भी दास का स्वरूप सतचित्तता तक निश्चित न हो पाया था । गार्गी दत्तासी महोदय न दास या दास को मसमाना कविता का बत बता दिया है । परन्तु यह कथन इतिहासिकता कया तुलनात्मक दृष्टि स भी बहुत उपयुक्त नहीं जान पड़ता । श्लोक अपन नाम स ही अपनी दो पक्तियाँ क स्वरूप की घोषणा करता है । अतः उसकी 'युत्पत्ति द्विपदा' श्लोक से मानना तर्कसंगत ही है । इन दो पक्तियों का चार चरण क निश्चय मात्र स काम नहीं चलता क्यकि श्लोक का स्वरूप मात्रिण है और दास की मात्राया का निश्चित मानकीकरण प्रथम शताब्दी म तो कया हिन्दी के साहित्य काल तक म नहीं हो पाया था ।

१ मात्रिक छन्दों का विशास डा० गिवनन्तप्रसाद (पटना १९६४) प०, ८११ पर उद्धृत आ० द्विवेदी का कथन

२ भँह जानिग मियलोगणी गिसपरु कोई हरेइ ।

जाव णा णाव जालि सामन धारा हरु बरसेइ ॥ वि० उ० अक्ष ४

३ हिन्दी साहित्य का आदिकाल—डा० ज्ञानप्रसाद द्विवेदी (तृ० स०) ६८ पृ० स उद्धृत ।

४ सिद्ध साहित्य—श्री० धर्मवीर भारती—प० २८१

५ हिन्दी साहित्य का आदिकाल (तृ० स०) प० ५७

६ बिहारो—आ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र (चतु० स०) प० ८०

७ हिन्दुई साहित्य का इतिहास—गार्गी दत्तासी (अनु० लक्ष्मी सागर वाण्य) पहला संस्करण पृ० २५

यद्यपि प्राकृत पगलम म भ्रमर भामर आदि दाह के २० सूक्ष्म भेद किए गए थे और उससे विषम सम चरणा म नमशा १३ ११ मात्राओं का विधान कर दिया था किंतु वस्तु नियम की सच्चाई के साथ पालन भवितकाल तक म नहीं हाता था । सता के दोहा म मात्राओं की 'यूनाधिकता स्पष्ट है । सूफी कविया का स्थिति भी यही है । भृगावती (रचना काल १/०३ ४) म १३ ११ मात्राओं वाले दाहे छाजन पर ही मिलग । हा बहा दाहा के विषम चरणा म १६ १२ मात्राओं का बहुधा प्रयोग अवश्य सरलता से मिल जाता है । इतना ही नहीं बहा १५ और १७ मात्राओं वान विषम चरण भी दलन को मिलत है ।

पश्चात्पूर्वी कृति पश्चात्त म भी यही अ यवस्था है । एक दो दस बीम नहा पचासिया दोहा की एसी सूची बनाई जा सकती है जिनके प्रथम और द्वितीय चरणा म १६ ११ मात्राएं हैं । पश्चात्त क प्रसिद्ध भाष्यकार वामुदेव गरण अग्रवाल ने उसे दोह का एक प्राचीन भेद ही स्वीकार कर लिया है जा १३ ११ मात्राओं वाले दाहे क प्रचार क पश्चात्त छटकन लगा था । अत धीरे धीरे समाप्त हा गया । उनका कथन है कि दोह के अनेक भेदा म से यह (१६ ११ मात्राओं वाला) भी एक माय भेद हि दी काय म उस समय स्वीकृत था जिसकी परम्परा मुस्ता दाऊद क समय (१३७५ इ०) से जायसी के काल तक अव्यय विद्यमान थी । ^३ अग्रवाल जी की मायता यदि १६ ११ मात्राओं से सम्बन्धित स्वीकृत हो भी जाय तब भी काम नहीं बनता क्याकि वहा अय व्यवस्थाएं भी हैं । पश्चात्त म १२ ११ मात्राओं के दाहा की भी कमी नहीं । उदाहरणार्थ एक दोहा प्रस्तुत है—

रुपवत्त मनि माथे चद्र घटि बहु दाडि ।

भेदनि दरस तुभानो अस्तुति विनव ठाडि ॥ म्पा० १^२

अग्रवाल जी न जिस मस्ता दाऊद की चचा की है उससी कृति चदायन म यह अयवस्था कदाचित सबसे अधिक है । वहा तो ११ ११ ११ १२ १ १० तथा १७ ११ आदि मात्राओं के अनियमित दाहे भी बड़ी मात्रा म है ।^४ १६ ११ मात्रा वान दोह ता बहुत अधिक है ही । तात्पर्य यह है कि भवितकाल तक म भी दोह की मात्राओं का मानकीकरण ठीक सं नहीं हा पाया था । महा तक कि मानस म एम प्रयोग देख जा सकत ह जिनम १२ ११ मात्राएं नहीं हैं । उदाहरण क लिए निम्न-त्रिस्तित षट का विषम प १० ही मात्राओं का है—

भोजन करत चपन चित इत उत अवसर पाइ ।

भाजि जले किलकत मुख, दधि ओदन लपटाइ ॥^५

१ प्राकृत पगलम १७८

२ पश्चात्त—म्पा० वामुदेवगरण अग्रवाल (प्रारम्भ) पृ० १२

३ चदायन—म्पा० परमेश्वरीनाथ गुप्त (प्र० स) पृ० २५

४ रामचरितमानस—बालकाण्ड १० म० २०३

विषय की दृष्टि से भक्ति बराबर तथा श्री गुरुदेव की अपेक्षा अधिवृत्ता नीति का दोषा की है। प्राप्त पाठों में नाति के पाठ अथ विषया (जिनमें से ६०% शृंगार के हैं) की तुलना में टेरा गुण का नगभग है।

रहीम सतसई—गालिव ये रयाल अच्छा है

रहीम रत्नावली में प्राप्त ५० पृष्ठों पर २१० बरव तथा ८२० पाठों का जोशकर याग ६६१ वाता है। कर्त्तव्य कि गान्वाभी तुलसीदास जी ने अपनी गद्दा वाली का अन्तिम पाठा मित्रता प्रमाण के रूप में रहीम का रत्ना है। इसी प्रकार एक एक दोषा जड़ता बधि तथा मार्गमत्त का आदर रत्न के लिए भी लिया गया था और भी एक पा पृष्ठ पर छन्द इधर उधर प्रकाशित मित्रत है। उदाहरणार्थ मुनिहो विटप प्रभु इत्यादि छन्द रत्नाम का नाम से प्रसिद्ध है परन्तु यादविक जी ने उम सम्पादित नहीं किया है।^१ आनीना नरवमया आदि रत्ना पर आधारित एक अथ छप्पय भी रहीम विहित प्रतया जाता है। कहने का तात्पर्य है कि रहीम के छन्दों की संख्या अन्त तोगत्वा ३०० का भी जानी है। नगर गामा प्रसंग पर श्री यादविक द्वारा पथक से उद्धृत १६ बरव हमारे अनुमान में रत्नीम के हो ह। यह न भी माना जाय तब भी रहिमन विलास में के १० पाठ २ मारठ तथा ३ बरव रहीम रत्नावली के अति रिक्त है। दूसरे ३० ममर बहादुरसिंह ने ग्रथान्त में जो बरव जान ह उनमें भी अतिम बरवा अधिग है। अत कुल मिलाकर हमारे पास रहीम के छन्दों की संख्या विटारी सतसई में कम ता किसी प्रकार नहीं है। गभी स्वीकार करते बल आ रह है कि रहीम ने किसी सतसई की रचना की थी। अत जय नव हिन्दी-साहित्य मसार को उमके उपलब्ध हान का सीमाग्य प्राप्त न ही तब तक इन्हीं छन्दों का रहीम सतसई ममभ सतोप करने के लिए बाध्य है—

दिस के बहलाने को गालिव ये रयाल अच्छा है।

सतसई परम्परा और रहीम

सतसई का अर्थ है—सात सौ मुक्तक छन्दों का संग्रह। अपन आम्वा अथवा वक्तव्य-शोध के लिए पूवापर छन्द निरपल रचना को मुक्तक कहते हैं। इस रचना

- १ सुनिये विटप प्रभु पट्टप तिहारे हम
- राखिये हमें तो सीमा रावरी बडाई हैं।
- तजि हो हरप ता बिरप हैं म चारी कछु
- जहाँ जहाँ जहाँ तहाँ दूनी छवि पाइ हैं।
- गुरम चढ़गे गुर-नरन चढ़गे हम
- सुकवि रहीम हाय हाय ही तिकाई है।
- देस में रहेंगे परदेस में रहेंगे
- काह भेय में रहेंगे पर रावरे बहाइ है ॥

—मन्दुरहीम गान्वाना टा० ममरबहादुरसिंह प

प्रक्रिया का आदि उत्स तो विद्वाना न बना म राज लिया है ।^१ किन्तु उनसे किसी सख्या कम स सप्रहीत करन की परम्परा उतनी प्राचीन नहीं है । १० श्यामसुन्दर दास के अनुसार सतसई लिखन का आदिम आर्य सातवाहन की गाथा सपत्नी न ही उपस्थित किया था ।^२ किन्तु हिन्दी म रहीम से पहले किसी मतसई का उल्लेख नहीं मिलता । तुलसी व नाम पर जा सतसई प्रचलित है उस अधिकांश विज्ञान प्रामाणिक नहीं मानत । विहारी मतिराम आदि की और जितनी भी मतसईया है व सभी पश्चात्पूर्व है । अत स्पष्ट है कि आदिदर्शी रहीम न ही हिन्दी म सतसई परम्परा का समारम्भ किया था । यह बात दूसरा है कि दुभाग्य स उनकी मतसई आज हम प्राप्त नहीं किन्तु हिन्दी म सतसई परम्परा व श्रीगणेश का श्रेय रहीम को ही प्राप्त रहेगा । नीति शृंगार विषयक दोहा व उन जैसे रचयिता व लिए सत्तर इकहत्तर वष के दीर्घ जीवन पय त सतसई लिख डालना किसी प्रकार भी संदिग्ध नहीं है ।

छन्द सम्बन्धी निष्कर्ष

निष्कर्ष यह है कि रहीम न अपन भाव प्रकान व लिए कवित्त सबय छप्पय मोरठे तथा दोह इत्यादि विभिन्न छन्द का सफल प्रयोग किया है । दोह छन्द के मानकीकरण म रहीम का स्थान अद्वितीय है । स्वरूप को निवारने म गोस्वामी तुलसीदास तथा अशुभीम खानखाना का योगदान अविस्मरणीय रखा । वस्तुतः सिद्धा ने दोह का तुलसी वाणी स रस्य की कुछ बातें कहलाई और नाया न उमकी कुमारोचित स्वच्छता स कुछ अस्पष्ट कथन कराये । डोना मारु तथा सदेसरासक ने उस यौवन प्रेम और सदाय विद्याय व मधुभीन अनुभव लिए । कबीर आदि सत्ता न उस कल्याणकारी उलाड पछाड मिलाए । किन्तु तुलसी न मर्मणि एव भक्ति की पुनीत गम्भीर ऊच नाच का समभासर उमके अतभाव का एक नया मोड प्रकान किया । रहीम ने नीति और शृंगार का परिधान पहनाने उसन व्यक्तित्व का कुछ एस ठोस रूप म जन समाज व सम्मुख प्रस्तुत किया कि वह वनमान एव भविष्य व प्रत्यक्ष भावना का भार वन करन म सबया सत्य सफल एव सतम हो गया । मरस नीरस नीकिन पारनीकिन कामन कठोर निमी भी परिस्थिति म अपन सन्तुलित चार चरणा पर घडिग एव सफल रूप स सत्त हान की क्षमता प्राप्ति व लिए दाहा तुलसी और रहीम व चार चरणा की मन्व वना करना रहेगा ।

१ भारतीय मुक्त परम्परा १० राममागर त्रिपाठी (दिना १८६०) प० १८६

२ सतसई सप्तक डा० श्यामसुन्दराम भूमिवा प० ।

३ प्राप्त दाहा म शृंगार व सत्त वृद्ध कम है । मभव है कि रहीम रचिन सतसई म म किमा त शृंगार के दाहा निराकर नीति आदि व दाहा का एक छोटा सा मह किया हा और अत्र वही प्राप्त है, शृंगार का भाग युक्त हा गया है । रहीम न मतसई न निमी हा हम प्रकार का अनुमान करना वृथा प्रतीत होता है ।

यद्यपि आज तक रहीम रचित मुप्रसिद्ध सतसई प्राप्त नहीं हो सकी है किंतु दाहा का सात सौ की मर्यादा सकलित करके सतसई लिखन की जो परम्परा हिन्दी में प्रचलित रही है उसके संस्थापन का श्रेय रहीम को ही प्राप्त है। इतना ही नहीं हिन्दी के शृंगार-नीति भक्ति मुक्तक काव्य परम्परा में रहीम को योगदान सबथा सराहनीय है।

रहीम के नीति काव्य या अलंकार-सौन्दर्य

अलंकार का गार्हिक अर्थ है गहना आभूषण अथवा सौन्दर्य सज्जा के उपकरण गरीर गह वस्त्र इत्यादि अपनी प्रत्यक्ष वस्तु को सुन्दर बनाना, अथवा बनाने का प्रयत्न करना मानव की प्रमुख आकांक्षा रही है। इसी स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार वह वाणी को भी अधिक सुन्दर बनाने का प्रयत्न करना है। वाणी अथवा काव्य-सौन्दर्य की माधना के उपकरण ही अलंकार है। ये उपकरण किसी न किसी रूप में उतने ही पुराने हैं जितनी मानव की साहित्य चेतना। सौभाग्य से मानव की इस धापी का प्राचीनतम लिखित रूप भारतीयों के पास बरत में सुरक्षित है। इसलिए विद्वान अलंकारों का आदि उद्देश्य वेदा में खोजने हैं। कुछ महानुभावों का इस बात से चिढ़ है कि इस प्रकार के प्रयत्न वेद से क्या आरम्भ किये जाते हैं? हमारा विवेक उत्तर है कि जब मानवता की प्राचीनतम निधि है ही वेद और बरत में काद वस्तु पद अथवा भाव विद्यमान हैं तब उस भाव वस्तु अथवा गीत विशेष के आदि स्थान का निर्देश करना कोई पाप तो नहीं।

अलंकार और अलंकार शास्त्र

विधान में न पड़ते हुए इतना वह दना आवश्यक है कि वेदा की भाषा अतृप्त है। वेद के अर्थ का सम्यक् अर्थात्कार करने के लिए अलंकार का ज्ञान अपेक्षित है। वेदाचिन इसीलिए स्वामी देवानन्द सरस्वती तब का अपने ग्रंथ ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के अन्तिम अध्याय में अलंकारों पर विचार करना आवश्यक हो गया था। वैसे भी उपमादि गीतों का प्रयोग ऋग्वेद^१ में है निरुक्त^२ में उनकी व्याख्या भी देखी जा सकती है। यास्वाचाय न निरुक्त में अपने पूर्ववर्ती आचार्य गार्ग्य के उपमा निरूपण का सम्यक् उल्लेख किया है। पाणिनि के सूत्रों कात्यायन के वार्तिक तथा पतञ्जलि के महाभाष्य में अलंकार सम्बन्धी पारिभाषिक गीतबली का उल्लेख है। आचार्य भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के षोडश अध्याय का नामकरण ही अलंकार-लक्षण है। और अग्निपुराण में बड़े प्रभावशाली गीतों में रम के साथ अलंकार के महत्व की भी घोषणा की गई है और कहा गया है कि अर्थानुसाररहिता विधवव भारती। अग चल कर चन्द्रलोका प्रणेता जयदेव न ता और भी आरम्भ समथन किया है। उनका

१ ऋग्वेद १७.१.१५ तथा ५.३.३८६

२ निरुक्त, अध्याय ३

कथन है कि जो शब्दाय विशिष्ट काव्य को अलंकार रहित मानते हैं वे अग्नि को उष्णता से रहित क्या नहीं मान लेते—

अग्नी करोति य काव्य शब्दायावनलकृती

असौ न भयते कस्माद्नुष्णमलकृती ॥ चन्द्रालोक १ ॥

हिन्दी में महाकवि केशव इसी परम्परा के आचायक थे—

जदपि सुजाति मुलच्छनी, सुवरन सरस सुवत्त ।

भूपन बिन न विराजई कविता बनिता मिस ॥ कवि प्रिया ५ १॥

यद्यपि वर्तमान कवियों की कविता में अलंकार का महत्त्व समाप्त-सा है किंतु आधुनिक विद्वान भी सिद्धांत रूप में केशव के स्वर में स्वर मिलाते हुए अलंकार का महत्त्व स्वीकार करते रहे हैं। गुलाबराय जी की भावना थी कि—‘अलंकार भी शस्त्री की उत्कृष्टता में सहायक होते हैं। वे इतने उपरी नहीं हैं जितने कि समझे जाते हैं। उनका भी रस से सम्बंध है। इनकी भी उत्पत्ति हृदय के उसी उरलास से होती है जिससे कि काव्य मान की—(नारी के भौतिक अलंकारों को धारण करने में भी एक मानसिक उरलास है। उनके अभाव में विधवा स्त्री अलंकार नहीं धारण करती।)—इसीलिए हृदय का ओज उरलास अलंकारों के मूल में माना जाएगा। अलंकार रसानुभूति में भी सहायक हाथ हैं।^१ कविवर पतंजलि ने बहुत पहले अलंकारों को भावा की अभिव्यक्ति का द्वार माना था। उनके मत में अलंकार वाणी के हास अथु स्वप्न और हाव भाव हैं।^२ डा० ओमप्रकाश शास्त्री के अनुसार—अलंकार एक शुद्ध मनावनानिर्णय प्रक्रिया है। जिसका सम्बंध भाव सामांय की उद्दीप्त अवस्था से होता है।

अलंकार का सम्बंध मनावनानिर्णय से सीधा है और अलंकार मनावनानिर्णय होकर पाठकों की बुद्धि एवं हृदय को अपने चमत्कार से भावाङ्ग में लीन कर देता है।^३ किंतु अलंकारों के सम्बंध में इतनी उच्च धारणा प्राचीन नवीन सभी विद्वानों की नहीं है। अलंकार सम्प्रदाय के विद्वानों ने ही काव्य में अलंकारों को इतना महत्त्व प्रदान किया है अन्यो ने नहीं। हाँ इतना अवश्य है कि भारत की काव्य शास्त्रीय परम्परा में अलंकारों पर युगा युगा तक सूक्ष्म विचारदुष्प्रा है और यही कारण है सम्प्रति काव्य शास्त्र को अलंकार शास्त्र के ही नाम से पुकारा जाता रहा है। डा० विजयदत्त स्नातक का यह कथन नितान्त सत्य है कि आचार्यों की गवेषणात्मक प्रवृत्ति और अतिशय अग्र्यवसाय के कारण भारतीय अलंकार शास्त्र को आज विकचनत्मक साहित्य में प्रमुख स्थान प्राप्त है।^४

काव्य में अलंकारों का स्थान

अलंकार सम्प्रदाय के आदि आचार्य मामह से लेकर आज तक के समस्त अलंकार समर्थकों के युग-युगांतर के प्रयत्नों के पदचिह्न भी अलंकारों के काव्य की

१ सिद्धांत और अध्ययन (छठा सं०) पृ० २३१

२ पल्लव श्री सुमित्रानन्दन पन्—भूमिका

३ काव्यालोचन—१० आमप्रकाश शर्मा शास्त्री (प्र० सं०) पृ० ७६

४ हिन्दी साहित्य कोण, पृ० ६६

आत्मा का स्थान प्राप्त नहीं हो सका। यद्यपि सम्पूर्ण काव्य-सौन्दर्य को अलंकार में समाहित करने का प्रबल आग्रह व्यक्त किया गया था।^१ किन्तु अन्ततोगत्वा अलंकार को मूल गोभाकारक धर्म न मानकर उह मात्र शाभा म अभिवद्धि करने वाले धर्म ही स्वीकार किया गया—

गन्दाययोरस्थिरा ये धर्मा शोभाति गायित ।

रसादीनुपकुयतिऽलंकारास्तेऽङ्गदाविवत् ॥—साहित्य दपण

अथान् गन्ध के अस्थिर धर्म तथा अगाति के समान सौन्दर्य म अतिशयता लाने वाले रसादि के उपकारक धर्मों को अलंकार कहते हैं। वास्तव्य विचारक शोधे न अलंकार को गोभा के लिए बाहर से जोड़ी हुई वस्तु माना है स्वतः अनुभूत प्रान्तिरिक्त प्रशिया नहीं।^२ आचार्य रामचन्द्र गुवल ने भी इस मत का पुष्ट किया है।^३

तात्पर्य यह है कि काव्य के नित्य धर्म रसभावादि ह और अनित्य धर्म अलंकार। काव्या म भाव विचार और कल्पना उसी अन्तरात्मा के मुख्य स्वरूप कहे गए हैं, और वास्तव मे काव्य की महत्ता इही के कारण प्रतिपादित तथा यजित होकर स्थिरता धारण करनी है। अलंकार द्म महत्ता को बढ़ा सकते हैं उसे अधिक सुन्दर और मनोहर बना सकते ह परन्तु भाव विचार तथा कल्पना का स्थान ग्रहण नहीं कर सकते और न उनके आधिपत्य का विनाश करके उनके स्थान क अधि-कारी हो सकते हैं।^४ बात स्पष्ट है कि आभूषण उसी को गोभा देने हैं जिनम जान है यौग्य की उपा है स्वाभ्य की साक्षिमा है मुर्दे का उससे कोई सम्प्रघ नहीं। ठीक उसी प्रकार अलंकार काव्य मे वही गोभिन होत ह जहां रस भाव एव विचार आदि का सौन्दर्य विद्यमान हो। जब कथ्य ही जानदार हो तो भाषा चाह कुछ भी क्या न हो शली चाहे कसी भी क्या न हो, सब निष्प्राण ही रह्यी। अलंकार भी अन्ततोगत्वा भावाभिव्यक्ति की शली ही है और कुछ नहीं। डा० भगीरथ मिश्र न अलंकार के प्रयाग की परिस्थितिया पर विचार करत हुए यही निष्कप निकाला है कि अलंकार सुष्ठु अभिप्रजना प्रणात्री ही है।^५ हमारे विचार से अभिप्रजना का सौन्दर्य मूल रूप स उसकी निश्चयना आयासहीनता एव स्वाभाविकता पर निर्भर रहता है।

रहीम द्वारा प्रयुक्त अलंकार

रहीम के अलंकरण विधान की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उमम कही भी अस्वाभाविकता कृत्रिमता तथा अतिशयता नहीं है। उनके अलंकार चाह शब्द-मूलक ह। अथवा अर्थ मूलक, चाहे सादर्य मूलक ह। और चाहे विरोध मूलक, सभी

१ सौन्दर्यमलंकार—काव्यालंकार सूत्र १ १ २

२ Croce Aesthetic—Expression and Rhetoric—P 113

३ चिन्तामणि आ० रामचन्द्रगुवल—भाग २ प० १७३

४ साहित्यालोचन—ग० श्यामसुन्दरदास (१२वा स०) प० २४०

५ काव्य शास्त्र—डा० भगीरथ मिश्र (चतु० स०) प० १४७

प्रकार से स्वाभाविक हैं सहज हैं, अनारापित हैं। उदात्त भारी भयम अनाराग का वा कही प्रयाग नहीं किया। निम्नलिखित वियरण द्वा तप्य को प्रकट करने में महा यक होगे—

१ शब्दालंकार—अनुप्रास

ससि की सीतल चाँदनी सुन्दर सर्वाह मुद्राय ।

लगे चोर चित्त में लटी घटि रहीम मन प्राप ॥ २६४—पृ० २६

ससि संभोच साहस सलिल मान सनेह रहीम ।

बढ़त बढ़त बढ़ि जात हैं घटत घटत घटि सीम ॥ २६५—पृ० २६

यहाँ स्वरा की नियमता हात हुए भी स 'ट ध छ, इत्यादि व्यंजना का समता एवं आयत्ति व कारण अनुप्रास की सुन्दर छटा विद्यमान है। साथ ही यह भी देखा जा सकता है कि यहाँ अनुप्रास की योजना में कोई विषय अप्रह पूरा प्रयत्न नहीं किया गया। यदि ऐसा होना तो कवि प्रथम दोह के प्रथम चरण में की के स्थान पर सा तथा तृतीय चरण में तय के स्थान पर 'चल इत्यादि रत्नर वृत्तान्ति का और बना सकता था। इसी प्रकार द्वितीय दोह के द्वितीय चरण में मान के स्थान पर सान (मान गीत) तथा 'जाता है के स्थान पर बाडव इत्यादि कर सकता था। किन्तु उसे यह ज्ञानिन नही क्या कि वह सहज अलंकरण प्रवृत्ति का ही परिपोषक है। निम्नलिखित पंक्तियाँ में भी यह प्रवृत्ति है—

सीन हरत तम हरत नित, भुवन भरत नहि चूरु । २६६—पृ० २५

सर खून साँसी लसी, 'बर प्रीत मद पान । ४७—पृ० ५

रहिमन कठिन चित्तान से, चित्त को चित चेत । १७०—पृ १७

२ यमक अलंकार

जहाँ 'ग' की भिन्न भिन्न अथा में अनेक बार आयत्ति हो वहाँ यमक अलंकार होता है—

टूटे सुत्तन मनाइए जो टूटें सी वार ।

रहिमा फिर फिर पोइए टूट मुक्ताहार ॥ ८५—पृ० ६

रहिमन अपने वेद सो, बहुत कह्यो समुभाय ।

जो तू अनलाम रहे तो सा को अनलाम ॥ १३६—पृ० १६

प्रथम दोहे में सुत्तन के साथ टूट का अर्थ किन्तु कारणों से पयक हो जाना तथा मुक्ताहार एवं सी वार के साथ टूट का अर्थ है भजन होना या टट कर टुकड़ टुकड़े हो जाना। दूसरे दोह में तृतीय चरण के अनलाम का अर्थ है 'बिना भोजन किए हुए तथा चतुर्थ में अनलाम का अर्थ है बुरा मानना अथवा घणा करना इत्यादि। अतः यहाँ 'ग' के पृथक् पृथक् बार पृथक् पृथक् अर्थों में प्रयुक्त होने के कारण 'यमक अलंकार है। इसी प्रकार अग्रलिखित पंक्तियाँ भी यमक अलंकार की उदाहरण हैं—

भार भौंक के भार मे रहिमन उतरे पार ॥^१ १३३—पृ० १३
रहिमन तुम हम सौं करी करी करी ज्यों तीर ॥^२ १६२—पृ० १६

३ श्लेष अलंकार

श्लेष धातु का अर्थ है चिपका हुआ। जहाँ गन्द के एक अर्थ के साथ उसका दूसरा अर्थ भी साथ साथ चिपका रहता है वही श्लेष अलंकार जाना है। यमक अलंकार में एक शब्द बार-बार पृथक् पृथक् अर्थ में प्रयुक्त होता है परन्तु श्लेष में गन्द एक ही बार प्रयुक्त होते हुए भी इस कौशल में वियस्त रहता है कि उससे एकाधिक अर्थ की प्राप्ति हानी है—

जो रहीम गति दीप की, कुल अप्सृत गति सोप ।

वारे उजियारो करे वड़े अंधेरो होय ॥ ७७—पृ० ८

रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून ।

पानी गए न ऊबरे, मोती मानस चून ॥ २०५—पृ० २०

यहाँ प्रथम गाने में वारे और वड़े के दो अर्थ हैं। वारे का अर्थ है, जलान पर तथा वचन में बने का अर्थ है बुझ जाने पर तथा आयु में बढ़ने पर। इसी प्रकार दूसरे दाह में पानी गन्द ने जन यमक, हय (गम) का अर्थ है। अतः एक शब्द के साथ दो तथा ग से अधिक अर्थ चिपके रहने के कारण ये दो श्लेष अलंकार के प्रतिष्ठ उदाहरण हैं। इसी प्रकार निम्नलिखित दोहा में गुण तथा पुरुष पुरातन के दो अर्थ लिए गए हैं—एक तो गुण का शुभ गुण तथा दूसरा रम्मी। इसी प्रकार पुरुष पुरातन भगवान विष्णु तथा बुद्ध व्यक्ति—

गुण तें लेत रहीम जन, सगिल कूप तें बाडि ।

कूपहें ते कहें होत है मन बाण को बाडि ॥ ५०—पृ० ५

कमला पिर न रहीम कहि यहि जानत पत्र कोय ।

पुरप पुरातन की वधू कपों न चचला होय ॥ २३—पृ० ३

४ पुनरुक्ति प्रकाश

जहाँ भाव का अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए एक ही गन्द का एक ही अर्थ में अनेक बार प्रयोग किया जाय वहाँ पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार माना जाता है। यह अलंकार रहीम के काव्य में प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हुआ है—

बहु रहीम केतिक रहा केतिक गई विहाय ॥ ३२—पृ० ८

काज पर बछु और है काज सरे बछु और ॥ ३६—पृ० ४

रहिमन दाह प्रेम का बुझि बुझि के सुनगाहि ॥ ६६—पृ० ७

पाँयन बरा परत है दान बजाय बजाय ॥ २०८—पृ० २०

१ भार = बाँध तथा भड़भूज का भाँड

२ करी = किया तथा हाथी

७ अर्थालंकार

अलंकार चमत्कार जहाँ अर्थ पर निर्भर रहता है वहाँ अर्थालंकार की व्याप्ति रहती है। किसी शब्द विशेष का पर्यायवाची रख देने पर भी जहाँ अर्थालंकार विशेष के निर्वाह में बाधा उपस्थित न हो वहाँ अर्थालंकार माना है अर्थात् चमत्कार तथा काव्य-सौन्दर्य निखार में अर्थालंकार का महत्वपूर्ण योगदान है। अग्निपुराण में शब्द सौन्दर्य की मनाहरता के लिए अर्थालंकारों को आवश्यक माना गया है—

अलंकरणमर्थानामर्थालंकार इष्यते ।

तस्मिन् शब्दसौन्दर्यमपि नास्ति मनोहरम् ॥ अ० पु० ३४३ ॥

रहीम का प्रिय अर्थालंकार—दृष्टान्त

या तो अर्थालंकारों की संख्या अनाधिक है किन्तु काव्य में सामान्यता प्रयुक्त होने वाले अर्थालंकार इतने अधिक नहीं हैं। रहीम के काव्य में प्रयुक्त अर्थालंकारों में सबसे प्रमुख अलंकार दृष्टान्त है। प्रयोगाधिक्य का देखकर यदि कह दिया जाय दृष्टान्त रहीम की काव्य शैली की एक प्रमुख विशेषता है तो कोई अत्युक्ति न होगी। यह अर्थालंकार रहीम के काव्य में इतना अधिक है कि अर्थालंकार मद्रह कर्त्तव्यों का वही अर्थान भटकने की आवश्यकता नहीं। उदाहरण के लिए टक्कद गान्धी ने अपनी 'अर्थालंकार पारिजात' में दृष्टान्त अलंकार के छ उदाहरण दिए हैं। इन में न पाँच रहीम के हैं।^१ रहीम दार्शनिकता का कार्य पृष्ठ उठा लाजिए, उसी में दृष्टान्त अलंकार के दो चार गूढ़ अर्थ मिल जायेंगे।

निम्नलिखित दाह जन-गमाज में बहुत अधिक प्रसिद्ध ०—

बिगरी बात बन नहीं लाग करे किन शोष ।

रहिमन फाटे दूध की मय न मालन होय ॥ १०६—पृ० १३ ॥

रहिमन भ्रमुवा नयन डरि जिय दुय प्रकट करेय ।

जाहि निकारो गह तें कस न भेद कहि देय ॥ १६५—पृ० १६ ॥

जे गरीम पर हित कर ते रहीम बड लोण ।

कहा मुदामा यापुरो कुण्ण मितार्ई जोग ॥ १६४—पृ० ७ ॥

प्रातम छत्रि ननन वसी पर छत्रि कही समाय ।

भरी सराय रहीम लखि, आयु पयिक फिरि जाय ॥ ११६—पृ० १० ॥

गुस्ता फव रहीम कहि फवि आई है जाहि ।

उर पर कुच नीर लग अन्त यतीरो आहि ॥ ५१—पृ० ५ ॥

यहाँ प्रयोग गूढ़ में दो ममान वाक्य हैं और श्लोक में विम्ब प्रतिविम्ब भाव है। अर्थ ऊपर के सभी दाह दृष्टान्त अर्थालंकार के सुन्दर उदाहरण हैं।

१ अर्थालंकार पारिजात—श्री० टक्कद गान्धी (नई दिल्ली १९५६) पृ० १००

इम गौरव क अनुमार उपमा को अर्थानवार वणन म अधिवागत प्रथम स्थान प्राप्त होना रहा है। भूषण त्रिपाठी ने गिवराज भूषण म इस तथ्य का लेख भा किया है—

भूषण सब भूषणनि मे उपमहि उत्तम चाहि ।

यात उपमहि आदि दे, वरणत सफल निवाहि ॥

आचार्य वेणवदाम न प्रथम स्थान न देत हुए भी उसका विस्तृत वणन किया है। उपमा भद अन्व हैं में वरणे इक्वीस। ससृष्ट म तो भेदाभेद प्रपञ्च और भी अधिक है। काव्य प्रकार म पूर्णोपमा के छ तथा लुप्तोपमा के उनीस भेद गिनाय गय हैं।^१ इतना होने हुए भी मूल भद दो ही हैं—पूर्णोपमा तथा लुप्तोपमा। हम भेदाभेद के फेर म न प ते हुए रहीम के नीति जाय स उपमा क उदाहरण प्रस्तुत करत ह—

रहिमन राज सराहिये, सति सम सुन्द जो होय ।

कह्य बापुरो भानु है तथी तरयन खोय ॥ २२४—प० २२

परती को सी रोनि है सीत धाम अरु मेह ।

जसी परे सो सहि रहे त्यों रहीम यह देह ॥ १०६—पृ० ११

अमृत ऐसे वचन मे रहिमन रित की गाम ।

जसे मिसिरिहू म मिली निरस घांस की फांस ॥ ८—प० १ ।

यहा सति सम सुन्द गाय वरनी की सी रोति तथा अमृत ऐसे वचन म उपमा अलंकार है। रहीम न नर्द तोहा म गरीर की उपमा कागज क पुतन म ती और उसके वायु वचन पर आचय प्रकट करत हुए जरा सी नमी म धूल जान की सम्मानना से गरीर की क्षणभंगुरता व्यवन की है। एक अर्थ यह म गहान मन का प्रभ (राजा) और नत्रा को दीवान क दीमान जसा माना है—

कागज को सो पूतरा सहजहि मे धुलि जाय ।

रहिमन यह अक्षरज लखो सोऊ खंचत बाप ॥ १३५—पृ० ७

मन सो कही रहीम प्रभ, दग सो कहा दिवान ।

देख दगन जो आदर, मन तेहि हाथ दिवान ॥ १७०—प० १७

१० रूपक अलंकार

वाचक गत और साधम्य के अभाव म उपमेय और उपमान का एक रूप हो जाना ही रूपक है। इसम उपमेय पर उपमान का अभेद आरोप रहता है—

उपमा औ उपमेइ ते वाचक धरैम मिटाई ।

एक करि आरोपिए सो रूपक कहि जाइ । का० नियम प० २४४

यद्यपि विद्वाना न रूपक की परिभाषा अपनी अपनी मायताया के अनुमार भिन्न भिन्न प्रकार स ती हैं किन्तु अभेद साधम्य पर सभा का मतमय है। सभी न अलंकार सभार म रूपक व्यापार का विनाप महत्व स्वाकार किया है भामह न ता

रूपक का निरूपण उपमा से भी पूर्व किया है। लब्धी न उपमा और रूपक का भ्रम निगम करत हुए लिखा है कि गुण क्रिया, द्रव्य आदि किसी भी प्रकार से उचित सादृश्य उपमा है किन्तु उपमान और उपमेय का संबंध भ्रम मित्र पर स्पष्ट हो जाता है।^१ रहीम के नीति काव्य में कुछ रूपक बहुत ही सुन्दर धन पडे हैं—

मनसिज माली की उपज कहि रहीम नहि जाय ।

फल श्यामा के उर लगे, फूल श्याम उर आय ॥ १३६—१८

कह रहीम इक दीप ते, प्रकट सब छुति होय ।

तन सोह कसे बुरे दग दीपक जह दीय ॥ २७—पृ० ३

कहि रहीम जग मारियो नन-बान की चोट ।

भगत भगत कोउ बचि गय चरन कमल की ओट ॥ २८—पृ० ॥

इन दोहा में क्रमशः मनसिज पर माली का दूग पर दीपक का तथा नन पर बाण का अभेद आरोप किया गया है। अतः तीनों दोहा में रूपक का संनिवेश है। इसी प्रकार निम्नलिखित पंक्तियाँ भी रूपक की छटा देना जा सकती हैं—

विरह रूप धन तम भयो अवधि प्राप्त उद्योत ॥ २८७—पृ० २८

रहिमन यह तन सूप है लोज जगत पछोर ॥ २१६—पृ० २२

११ निदशना अलंकार

दा वाक्या में असमता हान हुए भी जब ऐसा सम्बन्ध स्थापित किया जाता है कि उभय साम्य प्रतिभासित होने लगे तब निदशना अलंकार जाना है। दोना वाक्या का महत्वपूर्ण अर्थ फल सादृश्य पर निर्भर रहना है। फल सापेक्षता ही इसे लक्ष्य से अलग करती है। दृष्टांत के समान यहाँ विष्व प्रतिविष्व भाव नहीं रहता परन्तु निदशना में विष्व प्रतिविष्व भाव न होने पर भी दोना वाक्य एक दूसरे पर निर्भर रहत है। रहीम के नीति काव्य में निदशना का प्रयोग भी कुछ कम नहीं है—

थोथे वादर बजार के ज्यो रहीम घहरात ।

धनी पुरख निधन भये कर पाछिली घात ॥ ६१—पृ० ६

जे रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसंग ।

चदन विष यापत नहीं निपटे रहत भुजंग ॥ ७८—पृ० ८

यहाँ बजार के वादला एक निधन हुए धनी पुरखा तथा दूसरे दोह के उत्तम प्रकृति पुरखा एक चरन वृथा में कोद रूप अथवा विष्व प्ररिदशनागत साम्य न हाने हुए भी फल सादृश्य स्थापित किया गया है। पहले का फल है बाधा प्रदान तथा दूसरे का फल है विकार मुक्तता। अतः यहाँ निदशना का सम्यक दर्शन हाने है।

१२ अर्थान्तरण अलंकार

किसी विशेष कथन का सामान्य द्वारा अथवा सामान्य कथन का विशेष द्वारा समर्थन करने पर अर्थान्तरण अलंकार होता है—

सामान्य या विनेपो या तदर्थेन समर्थते ।

यत्तु सोऽर्थांतरयास साधर्म्येतेरेण व ॥ का० प्रका० १० १०६

रहीम के काय म अध्यान्तरयास अलंकार का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा म है—

(सामान्य)—छोटे सों सोहै बडे कहि रहीम यह रेख ।

(विनेप)—सहसन को ह्य बांधिपत ल दमडो की मेख ॥ ५६—पृ० १

(विनेप)—कौन बडाई जलधि मिलि गग नाम भो धीम ।

(सामान्य)—केहि की प्रभुता नहि घटी पर घर गए रहीम ॥ ४३—पृ० ५

१३ स्वभावोक्ति अलंकार

विमी स्वभाव, वस्तु-व्यापार अथवा विचार का स्वाभाविक विन्तु प्रभावशाली ढंग स बणन करना स्वभावोक्ति अलंकार कहलाता है । रहीम के अधिकांश दाह निश्चित ही स्वाभाविक एव महज हैं । वा एक उदाहरण प्रस्तुत है—

जाल परे जल जात यहि तजि मीनन को मोह ।

रहिमन मछरी नीर को तऊ न छाडत छोह ॥ ६१—पृ० ६

काह करों धकुण्ड बसि कल्पतरु को छाह ।

रहिमन टाक मुहावनो जो गल प्रीतम बाह ॥ ३८—पृ० ८

कहि रहीम सपति सग, दनत बहुत बहु रीत ।

विपति कसौटी जे कसे सोहा सांवे मोत ॥ ३१—पृ० ५

१४ लोकोक्ति अलंकार

छंद म जहा अधीक्षित श्रय का किसी लाकोक्ति द्वारा समर्थित कराया जाय वहा लाकोक्ति अलंकार माना जाता है । भाषा को प्रभावशाली बनाने के लिए इसका प्रभाव अत्यन्त प्राचीन है—

पात पात को साँचिबो धरी बरी को लौन ।

रहिमन ऐसी बुद्धि को कहा बरगो कौन ॥ ११७—पृ० १०

कसे निबह निबल जन करि सबलन सों गर ।

रहिमन बनि मागर विपे, करत मगर सा बर ॥ ४१—पृ० ८

सब को सब कौज कर क समान क राम ।

हित रहीम तब जानिये जब कछ अटक काम ॥ २१०—पृ० २८

यहा पर रेखांकित पद-ममूह म लाकोक्तिपणा होन स लाकोक्ति अलंकार है ।

१५ दीपक अलंकार

वण्य और अण्वण्य के एक ही धम का एक ही साथ एक क्रिया द्वारा आग्यान दीपक अलंकार कहलाता है । एक ही धम द्वारा प्रस्तुता एव अप्रस्तुता का प्रकाशन उमा प्रकार होता है जिन प्रकार एक दीपक द्वारा अडोस पडोस की वस्तुभा का प्रकाशमान होना ।

रहिमन पानी रागिये बिजु पानी तब मून ।

पानी गय म ऊचरे मोती मागुग घू ॥ १०१—१०० ००

उरग सुरग मारी मयनि नोद जाग हविषार ।

रहिमन इहाँ संभासि पचरत तग न थार ॥ ११—१०० ०

रागि साह गाहग रागि माग मोह रहीम

बहुत बहुत बहि जात है घटत घटा गनि नीम ॥ १०१—१०० ००

यही प्रथम श्लोक में चमत्कार तथा विषय का चमत्कार विद्यमान है। 'बहुत' (बहुत) जाना गया बहुत घटा घटा घटा है। यह विषय का चमत्कार है।

१६ परिवार अलंकार

विशेषण व साभिप्राय प्रयोग का परिवार कहा है। यह परिवार (साभिप्राय) का प्रयोग म व्यंग्याय तब चमत्कार की प्रयोगता रहती है। विशेषण का म शब्द न शब्दता व विशेषण का प्रयोग किया है। यह प्रयोग म शब्दता व शब्द का तथा अन्वय भाव पर ता चमत्कार ही माग म प्रथम मन्वित विद्यमान की चमत्कार प्रथम म माग जाग भरी शब्दता व विशेषण की चमत्कार भी मन्वित है—

विषय शब्दता के रहति को जाने जग बधु ।

ननी विचारी शोका शो बधु से बधु ॥ १०३—१०० १०॥

इसी प्रकार निम्नलिखित श्लोक म चमत्कार व विशेषण का साभिप्राय प्रयोग होने म परिवार का सुन्दर प्रयोग है—

अच्छुत चरण तरगिणी गिय तिर मातति मात ।

हरि न बनायो गुरमरो कीशो इबय भाल ॥ १—१०० १

१७ परिकराकुर अलंकार

जिस प्रकार साभिप्राय विशेषण का प्रयोग म परिवार अलंकार होता है उसी प्रकार साभिप्राय विशेषण के प्रयोग म परिकराकुर अलंकार रहता है ऊपर के दोहा म बधु तथा हरि सुरसरि आदि शब्द साभिप्राय प्रयोग हैं। अतः ये दोहे पर परिकराकुर के भी उदाहरण हैं। निम्नलिखित सुप्रसिद्ध दोहे म पुरुष पुरातन बधु तथा चंचला आदि शब्द बहुत ही साभिप्राय प्रयोग हैं—

कमला बिर न रहोम बहि यह जानन सब कोय ।

पुरुष पुरातन की बधु बयो चंचला होय ।

कतिपय अन्य अलंकार

इन प्रमुख रूप से प्रयुक्त अलंकारों के अतिरिक्त रहस्य के नाति-वाच्य म कतिपय अन्य अलंकारों का प्रयोग भी दया जा सकता है। कुछ व उदाहरण निम्नलिखित हैं—

१८ सहोक्ति

जहाँ महत् साध तथा सग इत्यादि शब्दों के प्रयोग से सहभाव का चमत्कार हो वहाँ सहाक्ति अलंकार माना जाता है—

रहिमन नाचन सग बसि लगन कलक न ताहि ।

दूध बलारिन हाथ लखि मन् समझाई सत्र ताहि ॥ २००—५० २०

१६ असंगति

जहाँ काय एव कारण की भिन्नता से चमत्कार उपन किया जाता है वहाँ असंगति होती है ।

फल न्यामा क उर लग, फल न्याम उर आहि ॥ १७८—५० १४

२० विशेषोक्ति

कारण रहन हुए भी काय का न होना विशेषोक्ति है—

रहिमन कबहुँ बडेन क नहीं गव कौं लेस ।

भार धरे ससार कौं तऊ कहावत सेस ॥ १७१—५० १७

२१ रूपकान्तिशयोक्ति

जहाँ केवल उपमान का ही कथन करके उपमय का प्रकट किया जाय वहाँ रूपकान्तिशयोक्ति होती है । रहीम न केवल कागज क पुनन का ही बणन दकर, गरीर की क्षण भगुरता मिद्ध की है—

ते रहीम अग्र कौन है ऐतो लखत बाय ।

सस कागद को पूतरा नमी माहि धुत्त जाय ॥ ६८—५० ६

२२ सार

पूर्वकथित वस्तुग्रा का उत्तरांतर अपकथ प्रथवा उत्कथ प्रकट करना सार कहलाता है—

रहिमन बे नर मर चुके जे कहूँ भागन जाय ।

उनते पहिले बे मुए जिन मुव निरसत नाहि ॥ २६१—५० २३।

२३ अयोध

दा वस्तुग्रा में परस्पर एक ही निर्या अथवा समान सम्बन्ध का वर्णन अयोध अन्वय है—

मीठो भावे लोन प अरु मीठे प लौन ॥ ११०—५० ११

२४ परिसरथा

जहाँ कोई वस्तु अन्य स्थानों में हट कर एक ही में वर्णित रहती है वहाँ परिसरथा अन्वय होता है—

यद्यपि अर्वाणि अनेक है कूपवत सरि ताल ।

रहिमन मान सरोवरहि मनसा नरत मराल ॥ १५१—५० १५

२५ अन्वय

जहाँ उपमान और उपमय का एक ही वस्तु में कथन हो वहाँ अन्वय अन्वय कहलाता है—मानसिंह की मराहता करत हुए रहीम न कहा था—

हरि दग हैं, हर एखदग रवि द्वावग विधि मान ।

तोसों सुहो जहान म मेद महीपति मान ॥ १७—५० ७३

यह दोहा भ्रमम अनवार का भी उदाहरण है क्योंकि कवि की दृष्टि म मसार म मागिह व उपमान (समता) का अभाव है ।

२६ अतिशयोक्ति

विषय (उपमय) का अर्थ यथा यथा कर दिया गया वणन अतिशयोक्ति है । जडडा कवि की प्रशंसा म कहा गया रहीम का निम्नलिखित दारा अतिशयोक्ति ही है—

घर जडडी अम्बर जग जडडा महइ जोय ।

जडडा नाम अलाहदा धोर न जडडा कोय ॥ ५० ७८

२७ उत्प्रेक्षा

उपमय की उपमान म सम्भावना प्रस्तुत करना उत्प्रेक्षा है । मनु तब माना जाना प्रायः अतिशयोक्ति उत्प्रेक्षा काव्य मान जात है—

करत निपुनई गुन बिना रहिमन निपुन हजूर ।

मानहु डेरत विटप घडि मोहि समान को धूर ॥ २५—५० ३ ॥

२८ काव्यलिङ्ग

किसी वस्तु का कवय या श्रव का काव्यलिङ्ग उक्ति अथवा प्रमाण द्वारा समान करना काव्यलिङ्ग है ।

रहिमन देख बनेन को लघु न दोजिए डारि ।

जहाँ काम आव मुई कहा कर तरवारि ॥ १६७—५० २० ॥

२९ सम

समान वस्तुआ के सगठन ससग एव वणन म सम अलंकार माना जाता है—

तयन सलोने अघर मृदु इह घाटि कहि कौन ॥ ११२—५० ११ ॥

३० विपरीत

जहाँ हित साधक ही अहित साधन करता दिखाया जाय वहाँ विपरीत अलंकार हाता है । इस अलंकार का लक्षण एव उदाहरण प्रस्तुत करने वाले एतनात्र आचार्य केगव ही हैं—

जा रहीम दीपक दसा तिय राखत पट ओट ।

समय परे ते होत है याही पट की चोट ॥ ८०—५० ८ ॥

३१ तदगुण

अपने रग रूप, गंध एव गुण का त्याग करके, पास की किसी वस्तु का गुण ग्रहण कर लेना तदगुण है ।

कदली सीप भुजग मुख, स्वाति एक गुण तीन ।

जसी सगनि बठिये, तसोई फल दीन ॥ २२—५० ३ ॥

३२ अतद्गुण

ससग म रहत हुए भी समीपस्थ वस्तुका का गुण ग्रहण न करना अतद्गुण है—

रहिमन जो तुम कहत हो, सगत हा गुन होय ।

वीच उतारो रस मरा, रस बाह ना होय ॥ १८३—५० १९ ॥

३३ मीलित

समान धर्मा एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ म मवधा मिल कर खा जाना मीलित अलकार है ।

रहिमन प्रीति सराहिए, मिले होत रग दून ।

ज्या भरदी हरदी तज, तज सपेदी छून ॥ २०८—५० २१ ॥

३४ उमीलित

अतिशय भावदय भाव एव समान धर्मा हान के कारण एक दूसरे म विनीत हान हुए भी कारण विरोध न अन्तर स्पष्ट हा जाना उमीलित अलकार है—

दोनों रहिमन एक से जो लीं बोलत माहि ।

जान परत है काक पिर श्रुतु वसत के माहि ॥ १०१—५० १० ॥

३५ उल्लास

जग एक न गुण या दोष स दूसरे म गुण या दोष का उत्पन्न हाना मित्र किया गाय, वहा उल्लास अलकार हाना है—

ये रहीम नर घय हूँ पर उपतारी अग ।

याटन वारे के लग ज्यों भेहदी का रग ॥ २४८—५८ २४ ॥

३६ अनुज्ञा

दोष वाले पदार्थ को अनुकूल समझ कर उमी को इच्छा करना अनुज्ञा है—

रहिमन रजनो ही भली प्रिय सा होय मिलाप ।

सरो दिवस बेहि काम की, रहिबी आपुहि आप ॥ २२१—५० २२ ॥

३७ अधिष

आधार म अध्याय न अधिन या बडे हावान पर अधिक अलकार हाना है । श्रीकृष्ण का हाय आधार तथा गोवधन आशेष है—

जा रहीम करिबो हुतो अज की इहै हवाल ।

तो पाहे कर पर घरयो गोवधन गोपाल ॥ ७६—५० ८ ॥

३८ उत्तर अथवा प्रश्नोत्तर

राजिर जवाबी न इस अलकार म प्रश्न का जम्बवारी उत्तर दिया जाना है—

पूर घरत निज सीत पर कहु रहीम बेहि काज ।

बेहि रज मुनि पत्नी तरी, सी दूदत मजरान ॥ १०७—५० ११ ॥

३६ उदात्त

महापुरुष व उदात्त चरित्र एव ममृद्धि मग्नाति इत्यादि का विलक्षणता यान उदात्त अलकार व अतगत घाता है—

भाग्ये मुक्तरि न को गयो, कृति न त्यागियो साय ।

भाग्यत धाम्ये मुक्त सद्यो ते रहीम रघुनाथ ॥ १४६—१० १५

४० ललित

प्रत्येक का अर्थ। अत्र प्रत्येक की विशेष चर्चा करा यान इन अत्रकार म अमीर वान का स्पष्ट रूप स न बहुर उक्त प्रतिविम्ब मात्र का हा उक्त किया जाता है। रत्नम न दाहावली व प्रथम ग्राह म गंगात्री व प्रति अनी अर्द्ध का प्रतिविम्ब मात्र ही छन्दोमय किया है—

अच्युत चरण तरगिनी गिव सिर भालति भाल ।

हरि न बनायो गुरसारी बीजो इदय भाल ॥ ६—१० १

४१ विभावना

कारण व विषय हान पर भी फल की प्राप्ति विभावना है—

वरत निपुनई गुन धिया रहिमान निपुन हजूर ।

मानहु डेरत बिटप चडि मोहि समान को झूर ॥ २५—१० ३

४२ विनोक्ति

एक के विना दूसर के असुन्दर होन तथा न भी होन पर विनाक्ति अत्रकार माना जाता है। ऊपर व दाह म विना शब्द का स्पष्ट प्रयोग है। अत यहाँ विनाक्ति भी है।

४३ अलकार सप्तष्टि

एक ही छंद म एक से अधिक अलकारा अर्थालकारा अथवा दोन प्रकार के अलकारा का स्थिति निर्वक्ष प्रयोग सप्तष्टि है। सप्तष्टि म अलकारा की स्थिति, तिल-तण्डुल भाय से मानी जाती है। अर्थात् विद्यमान एकाधिक अलकार स्वतः स्पष्ट रहत है। उह खाजने क लिए मिले हुए अथवा चावला (तण्डुल) को काले तिला से पृथक् करन के समान किसी सधम प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती। इसीलिए काव्य प्रकाश म 'यथासम्भवमप्योय निरपेक्षतया वाक्याश का प्रयोग किया गया है। रहाम के नीति का य से कुछ उदाहरण लीजिए—

(यमक + अन्वय) कहि रहीम जग मारियो, नन वान को चोट ।

भागत भगत बीउ बधि गये चरन कमन को ओट ॥ २८—पृ० ३

(पुनः + अन्वय) नन सलौन अधर मधु कहि रहीम घटि कौन ।

मीठी भाय लौन य, अरु मीठे पर लौन ॥ ११२—पृ० ६

(रूपक + उदाह.) बिरह रूप धन तम भयो अवधि प्राप्त उद्योत ।

ज्यो रहीम भादो निहा, चमकि जात खद्योत ॥ २४७—पृ० २४

४५ अलकार मकर

एक ही छन्द में एकाधिक अलकारों के नीचे शीघ्र विवेक से मिलते रहने पर अलकार मकर' माना जाता है। इन्हें पृथक् पृथक् करने के लिए विशेष बौद्धिक प्रयास अपेक्षित रहता है। काव्यप्रकाशकार ने मकर अलकारों की स्थिति, अगाधिभाव से मानी है—अज्ञातित्व सङ्कर ।^१ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(रूपक + असंगति) मनमिज माली की उपज, कही रहोम नहीं जाय ।

फल श्यामा के उर लग फूल श्याम उर आय ॥ १३६—पृ० १४

(दृष्टान्त + इलप) कमला धिर न रहोम कहि, ग्रह जानत सब फोष ।

रुप्य पुरातन की थपू बयो र चंचला होय ॥ २३—पृ० ३

(विभा० + असंगति) करत निपुई गुन विना रहिमन निपुन हजूर ।

मानहु टेरत छिटप छड़ि मोहि समान को कर ॥ २५—पृ० ३

इन दोनों में क्रमण रूपक, दृष्टान्त तथा विभावना ती सग्लतापूर्वक समझ में आ जाते हैं किन्तु क्रमण असंगति, इलप तथा (पुन) असंगति का खोजने के लिए प्रयत्न करना पड़ता है। इसीलिए इन्हें अलकार मकर के अन्तर्गत रखना उचित होगा।

अलकार सम्बन्धी निष्कर्ष

इस अध्ययन के आधार पर हम कह सकते हैं कि रहीम मद्यपि सहज स्वाभाविक गली के बन्धु है, किन्तु फिर भी उनकी कविता अलकार सौन्दर्य से किसी प्रकार भी विपन्न नहीं। उनके काव्य में अलकार उतनी ही सजधज से वियस्त हैं जितने कि किसी अन्य महाकवि की कृति में। हा इतना अवश्य है कि रहीम ने किसी भाँ दाँद में, किसी अलकार को बख्खम ठूमने का प्रयत्न नहीं किया और न ही किसी अलकार का उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए किसी छन्द की रचना की। हम रहीम का अलकार-समन्वयन के लिए प्रयत्नपूर्ण सत्परता के प्रति कही भी सचेष्ट नहीं पाते। उनकी कविता-नामिनी न तो सामान्याशा की भाँति आपादमस्तक अलकारों से लदी है और न विधवाशा की भाँति खवया अलकार विहीना ही है। गिण्ट कुल चलनाशा की भाँति सहजरूपेण समलकृत है और अलकार भी (आप-हृति-भ्रम-एनावली आदि की भाँति) भारी भरकम न हाकर सरल एव स्वाभाविक हैं।

१ काव्य प्रकाश (आ० विश्वेश्वर व्याख्या) डा० नगेन्द्र पृ० ५५२

२ वही सूत्र २०७—पृ० ५५४

शब्द शक्ति विवेचन भारतीय चिन्तन-परम्परा की विश्व-वाङ्मय को महत्त्वपूर्ण देने है। यहाँ अत्यन्त प्राचीन काल से शब्द तथा अर्थान्ति के प्रसंग में सूक्ष्मतम विवेचन होता रहा है। यह विवेचन न्याय भीमासा व्याकरण तथा वाच्य शास्त्र के अन्तर्गत आज भी उपलब्ध है। शब्द का दूसरा नाम पद भी है। 'याय' में 'या' के प्रमाण का, भीमासा में पद समूह (वाच्य) का तथा व्याकरण में 'पद' विभाग का विधेय विवरण रहता है। कदाचित् इसीलिए 'याय' का प्रमाण शास्त्र भीमासा का वाच्य शास्त्र तथा व्याकरण को 'पद शास्त्र' कहा जाता है। वाच्य शास्त्र तो विद्या ही पद लालित्य की है। पद तथा पदार्थ विवेचन के लिए वाच्य शास्त्र 'याय' और भीमासादि की अपेक्षा व्याकरण से अधिक सम्बद्ध है। वाच्यशास्त्र का शब्द शक्ति विवेचन भी व्याकरण पर आधारित है।

शब्द शक्ति की परिभाषा

भारतीय व्याकरण की अत्यन्त मौलिक स्थापना उसका स्फोट सिद्धांत है। सबसे प्रथम महामुनि पातञ्जलि ने स्फोट का प्रयोग किया था। स्फोट ही अर्थ का स्फोटक है—स्फुल्यर्धोऽस्मादिति स्फोटः । स्फोट से ही किसी शब्द की ध्वनि तथा नाद का अर्थ का ज्ञान होता है। वाक्यपदीयकार भट्ट हरि ने स्फोट तथा नाद में व्यंग्य व्यञ्जक सम्बन्ध स्वीकार किया है—'व्यंग्यव्यञ्जक भावनं तथैव स्फोटनादयो ॥' यद्यपि नैयायिक इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते। किन्तु व्याकरण उसकी विज्ञान नहीं करते हुए, सदैव से स्फोट को नित्य तथा इसी आधार पर शब्द को भी नित्य मानता चला आया है। शब्द के साथ अर्थ का सम्बन्ध भी नित्य माना जाता रहा है।^१ अर्थ के ले

१ —वाक्य पदीय—१ ६८

२ (क) सिद्धे शब्दाय सम्बन्धे—महाभाष्य वृत्ति १ १

(ख) एकस्यैवात्मनो भेदो शब्दार्थावप्यवस्थितौ ।—वाक्य पदीय २ ३१

(ग) वागर्थ्याविव संपृक्तौ वागर्थ प्रतिपत्तये ।—कालिदास (रघुवत्स)

(घ) गिरा अर्थ जल बीचि सम कृष्यत भिन्न न भिन्न ॥—तुलसी (मानस)

(ङ) शब्द और अर्थ को नित्य इसीलिए कह सकते हैं कि मनुष्य में शब्दवान और उसके द्वारा अर्थ घोषित करने की शक्ति स्वाभाविक है और कालक्रम में विकसित हो जाती है।

—डा० गुलाबराय (सिद्धांत और अध्ययन पृ० २३८)

चलने की निया का सम्पादन करने अथवा नान करान के कारण ही शब्द को 'पद' सजा दी गई है—पद्यन गम्यत नायत योजनेति पदम् ।' पद अथवा शब्द के उच्चारण से लेकर उसके अर्थ-वाचन होने तक की जो भी प्रच्छन्न एव परोक्ष प्रक्रिया अथवा व्यापार है उस ही पारिभाषिक शब्दावली में शक्ति की सजा ली गई है । इसी से शब्द-पद-वाक्य तथा प्रसगादि का अर्थ व साध निश्चिन सम्बन्ध स्थापित होना है । शब्दादि का निश्चित अर्थ से सम्बन्ध स्थापित कराने वाला व्यापार ही शब्द शक्ति कहलाता है—शब्दाय सम्बन्ध शक्ति ।

संख्या

शब्द शक्तियों का संख्या के सम्बन्ध में संस्कृत विद्वानों में पर्याप्त मतभेद तथा वाद विवाद चलता रहा है । कुछ विद्वान शब्द की केवल एक ही शक्ति मानते हैं और वह है अभिधा । कुछ विद्वान दो शक्तियाँ मानते हैं और कुछ तीन । इस सम्बन्ध में विशेष भ्रष्ट ध्वनि की सत्त्वता के पश्चात् प्रारम्भ हुआ । कारण यह था कि वाक्य शास्त्रियों का एक बहुत बड़ा बग ध्वनि को मायता देना नहीं चाहता था । अतः वे व्यंजना को फूटी आँखों नहीं देख सकते थे । परन्तु लक्षणा मान लेने पर उन्हें सिद्धांततः व्यंजना तक जाना ही पड़ता था । अतः न रह वास न बजे वामुरी, के अनुसार उन्होंने व्यंजना को भी अमान्य घोषित कर लिया और शब्द की एक ही शक्ति अर्थात् अभिधा की भरपूर वनालत की । मुकुल भट्ट जैसे विद्वान द्वारा समूचा अर्थ अभिधावृत्ति मानिका, अभिधा की स्थापना के लिए ही लिखा गया था । सभी भीमासक अभिधावादी थे । अनुमान है कि भट्ट सोलन्ट भी अभिधा के ही हिमायती थे । उन्होंने कहा था कि जिस प्रकार एक ही वाण कवच को तोड़कर वक्ष को छेत्ता हुआ अतः प्राण हर लेता है उसी प्रकार अभिधा-व्यापार भी नीर्घातिदीघतर है—सोऽयमिपोरिव दीघदीघतरं व्यापार । महिम भट्ट, आचार्य कुतक, भोज तथा उनके टीकाकार रत्नवर आदि विद्वानों ने अभिधा का ही समर्थन किया है । प्राचीन हिन्दी आचार्यों में देव तथा आयुनिक विद्वानों में आचार्य रामचन्द्र गुक्ल प्रबल अभिधा समर्थक रहे हैं । देव का निम्नलिखित कथन सर्वथा उद्धरणीय है—

अभिधा उत्तम वाच्य है, मय लक्षणा लीन ।

अधम ध्यंजना रस विरस, उल्टी कहत नवीन ॥ शब्द रसायन

यह सब कुछ हाते हुए भी ध्वनि का पश इतना प्रबल पुष्ट एव तक सम्मत था कि अभिधावाक्यों की एक न चल सनी और आज प्रायः सबन यही माना जाता है कि शब्द की तीन शक्तियाँ हैं—अभिधा लक्षणा तथा व्यंजना । सब ने मूलतः अभिधा का स्वीकृति दी तथा उसी का वर्णन पहले किया गया । वाक्य निष्पत्ति के प्रथम दोहे में प्रकारान्तरे से यही स्वीकृति है—

पद वाचक औ लाच्छनिर् विजक तीन विधान ।

साते वाचक भेद कों पहलें करों बखान ॥—भियारीदास

उनका वाच्यार्थवर्णन प्रसंग का निम्नलिखित दोहा और भी महत्वपूर्ण है—

अनेकाय हूँ सद्यः मे एक अर्थ को भक्ति ।

तिहि वाच्यारथ का कहूँ सज्जन अभिधा-सक्ति ॥—भिव्यारोपस

अभिधा और उसकी व्याख्या

अभिधा का शाब्दिक अर्थ है—नाम । किसी वस्तु का नाम लेते ही उसका निश्चित अर्थ, व्यापार गुण अथवा आकृति हमारे सम्मुख आ जाती है । उदाहरणार्थ गौ शब्द कहते ही टांग पूछे वाले पशु विनाश की एक ऐसी आकृति हमारे मस्तिष्क के सम्मुख उपस्थित होती है जो निश्चित ही हाथी अथवा सिंह आदि शब्दों के द्वारा आभासित आकृति से भिन्न है । यही अर्थ उस शब्द का मुख्य अर्थ अथवा अभिधेय अथवा वाच्यार्थ होता है । इसी मुख्यार्थ का वाचन कराने वाले शब्द-व्यापार को अभिधा की सत्ता दी गई है—स मुत्पोऽथस्तत्र मुख्यो व्यापारोऽस्याभिधोच्यते ।^१ मम्मटाचार्य ने शब्द व्यापार विचार आदि छोटे से प्रकरण अथवा मीमांसके के अर्थ का लक्षण करने कायाकरण सम्मत अर्थ की प्रबल पुष्टि की है । महान् कायाकरण भन्तु हरि ने अभिधान एवं अभिधेय के सम्बन्ध नियमन को अभिधा कहा था ।^२ वही परम्परा का अनुसरण करते हुए उद्भट आदि काय शास्त्रियों ने अपने अपने प्रकार से अभिधा का परिभाषित किया है । आचार्य विद्वनाथ के अनुसार शब्दाथ का प्रथम बोध कराने वाली शब्द की प्रथम शक्ति अभिधा है—तत्र सकेतित्वाथस्य बोधनादग्रिमा अभिधा ॥ राम गंगाधर ने भी शक्ति और अभिधा को पर्यायवाची ही मान लिया गया है । हिन्दी आचार्यों ने अभिधा की परिभाषाएँ इसी आधार पर की हैं । प्रतापसिंह जी की काव्याथ कौमुदी का निम्नलिखित दोहा देखिए—

मुख्य अर्थ को बोध जहूँ होय शब्द व्यापार ।

तासां अभिधा कहत है, वाच्य रूप निरधार ॥

अभिधा के भेद

सामान्यतया अभिधा के भेद नहीं माने जाते किन्तु कतिपय विद्वानों ने अभिधा के तीन भेद स्वीकार किए हैं—

(१) रुचि

(२) योगिक

(३) योग रुचि

रुचि अभिधा के अन्तर्गत के शब्द रम्य गये हैं जो अपनी रचना में प्रकृति प्रत्यय आदि की दृष्टि से अविच्छिन्न एवं अग्रन्ति हैं तथा निश्चित अर्थ में स्पष्ट हो चुके हैं । घडा घर राजा राग इत्यादि एम ही शब्द हैं । इन्हें घ + र तथा रा + जा

१ काव्य प्रकाश—२ ११

२ वाच्य पत्नीय—२ ४०८

इत्यादि म ताडने से कुछ अथ न निकलेगा और अखन्ति रहते हुए वही अथ निकलेगा जो प्रसिद्ध एव रूढ है। दूसरे भेद अर्थात् योगिक का अथ है एक से अर्थित पदा के याग से बन शक्त जस पाठक पाचक इत्यादि। इ हें पाठ + अक तथा पच - अक म तोडने पर भी वही प्रसिद्ध अथ निकलेगा अर्थात् पाठ करने वाला तथा पाक करने वाला। याग रूढि म व गद आत है जो दो या गो से अर्थिक शक्त म बन है और दो या दो से अधिक अथ दन की क्षमता रखत हुए भी केवल एक ही अथ म रू हा गए है जस पकज वारिज, जलज आदि। जा पक + ज तथा वारि - ज स बन है और जल म उत्पन्न हान वाले कृमि दुग्ध निवार आदि अथ देने की क्षमता रखत हुए भी केवल मात्र कमन क अथ म रू हा चुक है। पडितराज न रमगगाधर म अभिधा के एक चौथे भेद की चचा उन गता के लिए की है जा योगिक तो ह परंतु एक स अधिक अथ म रूढ है जसे पयाधर (उरोन तथा बादल) निगात (घर तथा प्रभात) एव अश्व-गधा (घांटा का दू वाली तथा असगध की जड़ी) इत्यादि। किंतु यह भेद मान्य नहा अथा मान्य केवल तीन ही भेद हैं और हमारी सम्मति म ता अभिधा का अपना गौरव उम एक और अखण्ड रखन ही म है। वह एक अखण्ड तथा मवप्रथम शक्त गति हैं। इन उमके भेद प्रभेदा म पटना व्यय है।

रहीम और अभिधा व्यापार

रहीम सत्य और तथ्य प्रिय भावुक जीव ये। वे अपन काय्य म दूर की कौडिया लाने क फर म नही पडे। यद्यपि हम उनके काय्य म लक्षणा व्यनना आदि के प्राय सभी रूप प्राप्त हुए ह किन्तु सच पूछा जाय ता रहीम अभिधा के ही कवि हैं। उनका समस्त काय्य और विगपत नीति-काय्य अधिकाग रूप म अभिधा व्यापार पर आधारित है। अभिधा शक्त गति के उदाहरण म उनक नीति-काय्य के अधिकाग दोहे प्रस्तुत किए जा सकत हैं। पाठक को दाहा का अथ समझने म या कथ्य का आत्मसात करने के लिए किसी प्रकार की मगजपच्ची नही करनी पडती। अधिकाशन उनका सीधा सरत अथ मव की समझ म आसानी स आ जाता है।

अमर बेल बिन मूल को प्रतिपालत है ताहि।

रहिमन ऐसे प्रभुहि तजि खोजत फिरिए काहि ॥ ७—पृ० १

आपाम नीति के इस दाह म मूल प्रभु इत्यादि शब्द अखण्ड अथच रूढ प्रति-पात शक्त प्रकृति प्रययात् कि संयोग के कारण योगिक तथा अमर बलि एक विगिष्ट लता क अथ म रू हुआ याग रू शक्त है। इस अभिधा प्रधान गेह म रहीम न प्रभु विश्वाम का सदेग दिया है। दो अथ दाह लीजिए—

जब लजि बित्त न आपुनो तब लजि मित्र न कोय।

रहिमन अमुज अम्बु चिनु रवि नाहिन हित होय ॥ ५८—पृ० ६

जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सक्त कुसग।

चंदन विप व्यापत नही लिपटे रहत भुजग ॥ ७४—पृ० ८

यहाँ उत्तम विप चन्दन मित्र रवि घाति गान् रुढ हैं। ऐस ही गान् का प्रयोग रहीम की भाषा शली का प्रतिनिधि गुण है। कुसग प्रकृति घादि गान् यौगिक हैं और अम्बुज योग रुद्धि हैं जिसका अर्थ केवल कमल म रुढ हो गया है। वसे तो भुजग गान् भी अनेकार्थी है। कोण मे इसके साप जाद, पति सीसा अश्लपा न तत्र आठ की सरया तथा विदूषक आदि अनेक अर्थ गिनाए गए हैं।^१ किन्तु गान् केवल एक ही अर्थ सप म सीमित है। अर्थ परिसीमन क अनक कारण हैं। आचाय विश्वनाथ न मुख्याय सकेत ग्रहण के व्याकरण उपमान कोप आप्तवाच्य व्यवहार वाच्यगेप विवृति तथा साध्निध्य—आठ कारण गिनाए हैं।^२ उपयुक्त उदाहरण म भजग का सप अर्थ च दत्त के साध्निध्य से जाना गया है। कु उपसग व्याकरण म बुर के त्रिए आता है अत कुसग का, बुरी सगति अर्थ व्याकरण के कारण प्राप्त हुआ है। रहीम अपने गान् का चयन कुछ इस प्रकार से करत है कि वे प्राय अपन रुढ अर्थ म ही सीमित रहत हैं। पाठन को कोप खोलने अथवा व्याकरण उठाने की आवश्यकता ही नहा पडती किन्तु इस सरलता एव स्वाभाविकता म भी सहृदया पर भार करने वाला न जान बया जातू भरा रहना है—

रहिमन असुवा नयन ढरि जिय दुख प्रगट करेइ ।

जाहि निकारो गेह तें कस न भेद कहि दइ ॥ १६५—पृ० १६

रहिमन तीन प्रकार ते हित अनहित पहचानि ।

परबस परे पडोस बस परे मामला जानि ॥ १६१—पृ० १६

लक्षणा—लक्षण और व्याख्या

गान्त्र लोच व्यवहार तथा वाच्य म हम ऐस अमय्य प्रयोग देतत है जिनका अभिधा द्वारा साकेतिक अर्थ करने पर प्रयोक्ता के वास्तविक अभिप्राय तब नही पहुचा जा सकता। इसलिए ऐस कथनो म मिलत जुलत अर्थ का अघ्याहार कर लिमा जाता है। महाभाष्यकार पतञ्जलि ने प्रयोगादाग्यायाम सूत्र का भाष्य करत समय गगायाधोप अर्थात् गगा म आभीरी की बस्ती का उदाहरण दिया था। तब से यह उदाहरण इतना प्रचलित हुआ कि लक्षणा का निरूपण करते समय प्राय सभी साहित्य शास्त्रिया न इसका प्रयोग किया है। गगा म बस्ती कहन पर सा शत अर्थ होगा गगा म अर्थात् गगा की घार म बस्ती। परंतु घार क बीच म काई बस्ती टिक नही सकती। अत वाक्य का अर्थ होगा गगा के किनार पर बस्ती। इसी प्रकार सभा म गौर दहाड रहा है स किमी निर्भीक व्यक्ति क भाषण करन तथा कलिंग वीर है से कलिंग दग क निवासिया की वीरता अभिप्रत है। कारण न गौर सभा म उपस्थित

१ बहुत हिन्दी कोण (नानमण्डल वाराणसी) वृ०स० —पृ० १०१७

२ गान्त्रि ग्रह व्याकरणोपमान—

कोपाप्तवाच्योद ध्यवहारतच ।

वाच्यस्य गोपाद्विबतेवदति

सान्निध्यत सिद्धपदस्य वद्धा । साहित्य दण

होकर दगाड सकता है और न कोई देश (उसकी भूमि, जड प्रकृति तथा सीमा इत्यादि) धीर हो सकती है। इसी प्रकार 'सरला गऊ है तथा 'सुनील बैल है से सरला की सरलता तथा सुनील की मूखता का ज्ञान होता है। य अथ उक्त कथनों के प्राकृत, वास्तविक अथवा मुख्य अथ नहीं आरोपित अथ हैं। लक्षणा मे ये अमुख्य अथवा आरोपित अथ ही सन्निहित रहते हैं—

प्रयोजनाच्च मुख्येन अमुख्योऽर्थो लक्ष्यते यत
स आरोपित गन्द व्यापार सातराय निष्ठो लक्षणा ।^१

आचार्य मम्मट ने लक्षणा का वर्णन करते हुए, उसे निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया है—

मुख्याय बाधे तद्योगे रुदितोऽय प्रयोजनात् ।
अयोऽर्थो लक्ष्यत यत सा लक्षणारोपिता त्रिया ।^२

अथात् मुख्याय का बाध होने पर उसके साथ सम्बन्ध रखने वाला, रुदि अथवा प्रयोजन विनोप मे जा अथ अथ लक्षित होता है वह आरोपित व्यापार लक्षणा कहलाता है। अथ आचार्यों के मत भी प्राय यही है—

मुख्याय बाधे तदयुक्तो ययाऽयोऽय प्रतीयते ।
ए प्रयोजनाद्वाऽसौ लक्षणा शक्तिरपिता ॥ सा० दपण
मुख्यार्थानुपपत्तौ तदयोगे रुदितोऽयवाऽपि फलात् ।
अयोऽर्थो यदि लक्ष्यो भवति तदालक्षणाऽभिमतता ॥—एकावली

हिन्दी विद्वाना के अपन विवरणो न सम्पन्न आचार्यों का ही आधार बनाया है। ऐसे अनेक लक्षणा का एक ही स्थान पर उपयोगी विवचन विद्वान लेखक डा० राममूर्ति त्रिपाठी ने लक्षणा और उसका हिन्दी-काव्य मे प्रसार नामक ग्रथ मे किया है। वही न सवधी सोमनाथ भिंगारीदास तथा भानु के उद्वरण प्रस्तुत है—

मुख्याय को छोडि क, पुनि तिहि के दिग और ।
कहै जु अथ सुलक्षणा वक्ति कहत कवि मोर ॥—रस पीयूष
मुख्य अथ के बाध तें शब्द लाक्षणिक होत ।
रुदि और प्रयोजनवती, द्व लक्षणा उदोत ॥—काव्य निणय
मुख्य अथ के बाध तें, पुनि ताही के पास ।
और अथ जाते वन कहैं लक्षणा तास ॥—काव्य प्रभाकर

हिंदी सस्कृत के सभी लक्षणो को दर्शने से स्पष्ट है कि लक्षणा क लिए तान तत्त्व आवश्यक है—

- १ मुख्य अथ अथवा अभिधेय अथ मे बाधा ।
- २ उसी स मिलत जुलन किमी अथ अथ की प्रतीति ।
- ३ इस अथ की किसी रुदि अथवा वक्ता के प्रयोजन के आधार पर सिद्धि ।

१ काव्य प्रकाश—द्वितीय उल्लास, पृ० ५२

२ वही सूत्र १२ पृ० ५१

इसमें आचार्य ने 'नवमं वाक्यं' की शुरुआत की है। 'नवमं वाक्यं' का अर्थ है—
 गद्य ही उच्छ्वासे पर भी शब्द बंधित है कि शब्दों के अर्थ से। अतः नवम वाक्य
 गद्य ही—उच्छ्वासे पर भी शब्द बंधित है कि शब्दों के अर्थ से। अतः नवम वाक्य
 गद्य ही—उच्छ्वासे पर भी शब्द बंधित है कि शब्दों के अर्थ से। अतः नवम वाक्य

अतः नवम वाक्य का अर्थ है—

अतः नवम वाक्य का अर्थ है—

अतः नवम वाक्य का अर्थ है—

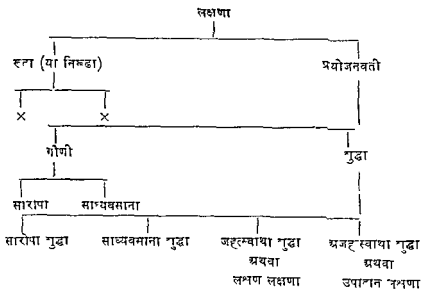
अतः नवम वाक्य का अर्थ है—

अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—
 अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है— अतः नवम वाक्य का अर्थ है—

लक्षणा के भेद

लक्षणा के भेद प्रकृत पर लक्षणा, दास्यलक्षणा तथा लक्षणा उच्यते अतः लक्षणा
 द्वयं तद्विचारं क्रिया है। साहित्यशास्त्रिका में यही भी यथावत् लक्षणा का ही भाष्य किया है।
 लक्षणा लक्षणा के अन्वयानुसार भेद क्रिया है। अतः लक्षणा का साहित्यशास्त्रिका में गणमात्र
 प्रथम भी है। किन्तु उक्त विचार में न केवल लक्षणा ही है अतः लक्षणा के अन्वयानुसार ही लक्षणा
 भी है। जसा कि पूर्वोक्त परिभाषायां से स्पष्ट है कि लक्षणा के अन्वयानुसार ही लक्षणा
 रूढा (निरूढा) तथा प्रमादजननी। प्रारम्भ में रूढा के अन्वयानुसार ही लक्षणा के अन्वयानुसार ही लक्षणा
 वर्ती आचार्यों ने रूढा के दो भेद माने—गौणी और गुढा। साहित्यशास्त्रिका में लक्षणा
 भी प्रायः भेद प्रकृत करते हुए उनकी संख्या सोनह तक पहुँचायी है। परन्तु रूढा के अन्वयानुसार ही लक्षणा
 वचन अथवा धर्म है। रूढा में कोई चमत्कार नहीं होता। रूढ़ा का लक्षणा को देगन ही
 हम उसका रक्षित अर्थ की प्रतीति होती है। उक्त वास्तविक अर्थ पर तो ध्यान ही
 नहीं जाता।

प्रयोजनवती लक्षणा गुण साध्य के आधार पर दो प्रकार की होती है—
गौणी एवं शुद्धा। गौणी के भी विषय एवं विषयी (उपमेय और उपमान) की उप-
स्थिति एवं अनुपस्थिति के आधार पर सारोपा एवं साध्यवसाना नामक दो भेद किए
जाते हैं। उधर प्रयोजनवती शुद्धा के चार भेद होते हैं—आरोप्य एवं आरोप्यमान
दाना की विद्यमानता के आधार पर प्रथम भेद सारोपा शुद्धा और द्वितीय साध्यवसाना
शुद्धा। तीसरा और चौथा भेद मूल अर्थ से युक्ति एवं युक्ति के आधार पर त्रमश
जहत्स्वार्था शुद्धा एवं अजहत्स्वार्था शुद्धा है। अर्थात् दीर्घ ने अपने अर्थ 'वृत्तिवातिक'
में इन दोनों के बीच का एक तीसरा भेद जहदजहत्स्वार्था की कल्पना की है। किन्तु
नागार्जुन भट्ट इस प्रकार की संभावना का पण्डित पहले ही कर चुके थे। कारण, यह
किसी न किसी रूप में अर्थ दो भेदों में समाहित हो जाता है। इस प्रकार शुद्धा
और गौणी के अतिरिक्त चार प्रकार की शुद्धा और दो प्रकार की गौणी कुल मिला-
कर लक्षणा के आठ प्रमुख भेद होते हैं। चाहे तो इसमें से भी नागार्जुन भट्ट के उक्त भेद
के आधार पर सारोपा शुद्धा तथा साध्यवसाना शुद्धा की छुट्टी कर सकते हैं क्योंकि वे
भी किसी न किसी प्रकार से सारोपा गौणी और सारोपा साध्यवसाना से सम्बद्ध हो ही
जाती हैं। अतः सब प्रमुख भेद छह ही रख सकते हैं। प्रचलित परम्परानुसार आठ
भेदों की निम्नलिखित तालिका द्वारा सरलता से समझा जा सकता है—



रूपा (या निरूढा) लक्षणा और रहीम

१० और अर्थ का अध्ययन करने के पश्चात् भाषा विज्ञान में निष्कर्ष पर पहुँचा है कि देव काल परिस्थिति प्रवाह प्रयोगादि के अनुसार १० के अर्थ में

प्रसार सकोच उत्पन्न अपकर्षादि होने रहते हैं।^१ प्राचीनकाल में कुशल का अर्थ कुशाघात को उखाड़कर लान की योग्यता अथवा क्षमता रखने वाला था किन्तु अब कुशल का अर्थ स कोई सम्बन्ध नहीं है। अब इसका अर्थ है दण्ड। इसी प्रकार प्रवीण वीणा बजान में निपुण स प्रत्येक कार्य की निपुणता में तथा अनुकूल किनारे किनारे स आगे आकर भाव साहचर्य क अर्थ में रूढ़ हो गया है। आचार्य मम्मट ने कम कुशल तथा आचार्य विश्वनाथ ने भाहसा कालिग आदि प्रयोगों को रूढ़ क उदाहरण रूप में प्रस्तुत किया है। चोर चौकने हो गए पंजाब लड़ रहा है तथा गांधी को पट्टी इत्यादि प्रयोग आधुनिक समाज में रूढ़ हो चुके हैं। यहाँ चौकने का अर्थ चार कान बाजा न होकर सतत पंजाब का अर्थ प्राप्त विषय न होकर उसने निवासी तथा गांधी का अर्थ हाट मास वाला व्यक्ति विशेष न होनेर उसकी विचारधारा या गांधी जी के दर्शन से है। कालान्तर में प्रसिद्ध उपमान प्रतीक मुहावरे आदि अपने मूल प्रयोग से हटकर एक निश्चित अर्थ में रूढ़ हो जाते हैं। अतः रूढ़ा समय सापक्ष्य है। जो नया राज नवीन है वह कालान्तर में रूढ़ि बन सकता है जो पहले नया था आज रूढ़ है। यही नम आदि काल से चला आ रहा है। यहाँ तक कि बंद तर में अनेक नये निसी अर्थ विनाश के लिए रूढ़ हो चुके हैं। तमसोमा ज्योतिगमय इत्यादि में तम का अर्थान ज्योति का ज्ञान मृत्यु का विनाश तथा अमृत का शाश्वतत्व आदि क अर्थ में प्रयोग रूढ़िगत ही है।

रहीम क काव्य में अनेक लक्षणा का प्रचुर प्रयोग है। उनके द्वारा प्रयुक्त मुहावरों लोकोक्तिया तथा प्रतीका क अधिकांश प्रयोगों को रूढ़ा क ही उदाहरण समझना चाहिए। निम्नलिखित पक्तियाँ प्रस्तुत की जा सकती हैं—

(क) जो रहीम मन हाथ है तो तन कहु कित जाय ॥ ७६—पृ० ८

(ख) जो विषया सतन तभी मूढ ताहि सपटाय ॥ ८३—पृ० ६

(ग) रीतहि सम्पुग होत है भरी दियाव पीठ ॥ १०८—पृ० १८

(घ) रहिमान थोरे निन का कौन करे मुख स्वाह ॥ १६८—पृ० १६

इन पक्तियाँ में अमन मन का हाथ में होना इन्द्रिय निग्रह के विषयों से लिपटना उनमें सलग्न रहने क पीठ दिखाना विमुख हान के तथा भुग स्वाह करना अपराधी हान क रूढ़िगत अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं। दूसरी ओर मन का शरीर से बाहर निकलकर हाथ में आ जाना तथा निराकृति विषयों में निपट जाना शौतिक एवं लौकिक दृष्टि से अपने शारीरिक अर्थ में असम्भव है। अतः अर्थ की बाधा भी स्पष्ट है। कहने का तापय यह है कि उनमें अभी पत्तियाँ में रूढ़ा लक्षणा है। अने प्रकार निम्नलिखित पक्तियाँ में भी रूढ़ा के सुप्रसिद्ध शास्त्रीय प्रयोग दण्ड जा सतत हैं—

करत निपुनई गुन जिना रहिमान निपुन हजूर।

मानहु डेरत विटप चडि मो समान को कूर ॥ २५—पृ० १

बसि कुमग चाहत कुमल यह रहीम जिय सोस।

महिमा घटि समुद्र की राखन बस्यो परोस ॥ १०७—पृ० १३

२ प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम

रूढा लक्षणा व अतिरिक्त लक्षणा का दूसरा मूल भेद प्रयोजनवती लक्षणा है। यहाँ यथार्थ की सिद्धि किमी रूढ अथवा प्रसिद्ध के कारण नहीं अपितु वक्ता के विषय प्रयोजन के कारण उपलब्ध हानी है। मुख्य अर्थ के बाधित होने पर जो उससे मिलता-जुलता अर्थ लगाया जाता है उसमें वक्ता का विशेष प्रयोजन सन्निहित रहता है। इसलिए इसका नाम प्रयोजनवती रखा गया है। अतः स्पष्ट है कि रूढा एवं प्रयोजनवती का अन्तर इतना ही है कि रूढा का आधार कोई रूढि अथवा जो प्रसिद्धि जाता है जबकि प्रयोजनवती का आधार कवि का विशेष प्रयोजन या तात्पर्य है। मम्मट तथा विश्वनाथ दोनों ने ही 'गंगा म घर को इसके उदाहरण में प्रस्तुत किया है क्योंकि वहाँ वक्ता का उद्देश्य गंगा की धार का सामीप्य प्रगट करता है। सर पर चढ़े रहना, छानी पर सवार रहना आदि वनमान प्रयोग भी ऐसे ही हैं। किमी व्यक्ति का वीरता वायरता लम्बाई तथा मूखता आदि प्रगट करने के लिए उम दोर गीण्ड व तथा बस बतान में भी प्रयोजनवती ही सन्निहित रहती है।

प्रयोजनवती जब रूप आकार धर्मादि की समता अथात् गुण सादृश्य पर आधारित हो तब गौणी कहलाती है—गुणत सादृश्यमस्या प्रवति निमित्त ॥ एकावती ॥ साहित्य रूपण के अनुसार इसका प्रमुख आधार है दा नित्त त भिन्न वस्तुधा में सादृश्य का अतिगम्यता के कारण भेद का खिचार्ह न देना। भुष का चन्द्रमा तथा कर का कमल कन्दन में गुण सादृश्य के कारण गौणी ही हानी है। गुण सादृश्य से विगुद्ध (भिन्न) सम्बन्ध के आधार पर गुद्धा नाम दिया जाता है। ये सम्बन्ध कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे गंगायामधाय में सामीप्य कर गुही वणी में (उगनिया के लिए कर के प्रयाग के कारण) अगागिभाव सम्बन्ध तथा बड़ड़ का काम करने वाले ब्राह्मण को भी बड़ड़ कहना तात्पर्य सम्बन्ध है। पून निर्देशित विभिन्न भेद प्रभेदा के आधार पर रहीम के नीनि काव्य का अध्ययन निम्नलिखित है।

सारोपा गौणी प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम

सारोपा का अर्थ है आरोप को साथ रखने वाली। जिस लक्ष्याय में आरोप्य (उपमेय) और आरोप्यमान (उपमान) साथ साथ प्रयुक्त होने हैं उसे सारोपा कहते हैं। आचार्य मम्मट ने उपमेय और उपमान के लिए विषयो एव विषय का प्रयोग करते हुए यही लक्षण दिया है—सारोपाया तु यत्रोमी विषयो विषयस्तथा।^१ कविवर निवारीणस ने सारोपा का उल्लेख करते हुए लिखा है—

और थापिए और कू बयो हूँ समता पाइ।

सारोपा सो लच्छना कह सकल कविराय ॥ —काव्य निणय

यह आरोप जब उपर लिने गौणी लक्षण के अनुसार सादृश्य सम्बन्ध पर आधारित रहता है तब गौणी सारोपा कही जाती है। शेखर कवि ने सारोपा का जो

लक्षणा किया है वह वास्तव में गौणी सारोपा का लक्षण है—

जहँ जाको आरोप ते दोउ पद पाइए ।

सदश वस्तु कहि ओप सारोपा सो लक्षणा ॥—रसिक विना

रहीम का नीति काव्य में आरोप्य और आरोप्यमान की सदृश्याधारित सहव्याप्ति अनेक दोहा में दर्शा जा सकती है। मुन्दरिया के नेत्र-वाणा से मुरभित रहन का एकमात्र उपाय वे भगवान के चरण-कमला की झाल को समझते हैं। दग रूपी दो दो दीपका के जलते हुए भी स्नेह को छुपा सकना रहीम की सम्मति में असंभव है। कामदेव के घाड़ पर सवार होना अग्नि-यव की यात्रा के समान घतरनाक है—

कह रहीम जग मारियो नन दान की चोट ।

भगत भगत कोउ बचि गये चरन कमल की ओट ॥ २८—पृ० २

कह रहीम एक दीप तें प्रगट सब दुति होय ।

तन सनेह कैसे दुर दग दीपक जुरी दोय ॥ २७—पृ० ३

रहिमन मन तुरग चढि चलियो पावक माहि ।

प्रेम पथ ऐसी कठिन सब कोउ निबहत नाहि ॥ २१७—पृ० २१

यहां भेदकता का गुण का कारण नन पर दान का पवित्रता कामना मुन्दरिया गुणा का कारण चरण पर कामना का प्रकाशतादि गुण का कारण दग पर दीपक का तथा चांचल्य गुण के कारण कामदेव पर तुरग का आरोप किया गया है। अतः गौणी लक्षणा स्पष्ट है। साथ ही उपमय और उपमान दोनों ही साथ उपस्थित हैं। अतः सारोपा भी है। कुल मिलाकर ये दोह सारोपा गौणी लक्षणा के मुन्दर उदाहरण हैं। वस्तुतः सारोपा गति और रूप अलंकार प्रायः एक ही वस्तु है। अतः ये दोह रूप अलंकार के भी उदाहरण हैं।

साध्यवसाना गौणी प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम

अवसान का अर्थ है समाप्ति और अवसान का अर्थ है पूरी प्रकार से समाप्ति। कभी कभी कवि अतिशय एकता का चमत्कारिक आख्यान करने के लिए उपमय का संवधा अध्यवसान करके केवल उपमान की विद्यमानता से अपना प्रयोजन सिद्ध करता है। एतदवसर पर साध्यवसाना रहती है। आचार्य विद्वनाथ का अनुसार लिपिया का द्वारा निमीण (निगती) हूँ विषयवस्तु की उसी से साध्य प्रतीति साध्य वसाना है। रसगगाधर का हिन्दा व्याख्याकार पुरपोत्तम चतुर्वेदा का सर्ग गद्या में विषय और विषयी में एक का वह कर दूसरे का उसमें अभेद मान लेना अर्थात् वगत बहाना है। यह नहीं है वहा अवसाना है। किन्तु इस परिभाषा में केवल मात्र विषया की उपस्थिति पर जल निया जान से परिभाषा अपूर्ण रह गता है। पत्तिराज द्वारा उद्धृत पक्ति है पुनः स्मिन् नीच गिषर चन्द्रराजी विराजत। अर्थात् एतत् पुर का मन्त्रा की छाना पर चन्द्रमाया की पक्ति विराजमान हो रही है। प्रकृति में केवल एक ही चन्द्रमा का ज्ञान से चन्द्रमा की पक्ति या उदय अथवा प्राणा उपस्थित

कर रहा है। वस्तुतः कवि का तात्पर्य चन्द्रमुखी मुन्दरिया की पक्षितया स है। कथन केवल उपमान का है उपमेय का सवथा अर्धवमान है। और चूँकि चन्द्र एव मुख म गुण सादश्य है अतः गौणी भी है। इम प्रकार यह पक्षित गौणा साध्यवसाना लक्षणा की है।

रहीम न भी कुछ दोहा म केवल उपमान का कहकर ही अपना अभिप्राय सिद्ध किया है। व शरीर को वागज के पुतल जमा क्षणिक मानत है जो केवल मृत्यु रूपी रात्रि की नमी (आस) पात ही घुल जाता है। आश्चर्य यह है कि यह पुतला वायु लक्षता है—

वागद का सो पूतरा, सहजह मे घुलि जाय ।

रहिमत यह अचरज लखी सोऊ खेचत बाय ॥ ३१—५० ८

त रहीम अब कौन है ऐती सचत बाय ।

सस वागद को पूतरा, नमी माहि घुल जाय ॥ ८८—५० ९

यहा उपमेय शरीर की सवथा परिममाप्ति तथा क्षणभंगुरतादि के गुण सादश्य पर आभारित केवल उपमान अथात् वागज व पुतल का वर्णन है। अतः इन दोहा म गौणी साध्यवसाना का सीदय है।

सारोपा गुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम

यह निर्वदन किया जा चुका है कि सात्त्विकतर मन्त्र वा म शुद्धा हाती है। व भाल घुसे चने आ रह हैं तथा इन लाल टोपिया न तप कर रमा है इत्यादि म भाला स तात्पर्य भाले लिंग आत्ममणकारिया तथा लाल टाभिया से ता पय उह धारण करन वाल पुलिस के सिपाहिया स है। निश्चित ही यहा विषय एव विषयी म धाय धारक सम्बन्ध है। अतः य वाक्य गुद्धा सारोपा व अच्छे उदाहरण है। रहीम व निम्नलिखित दोहा पर ध्यान दन से जात होगा कि उनके दाहा म लक्षणा के इस भेद का सफल एव सुष्ठु प्रयाग हुआ है। दा० इत प्रकार हैं

रहिमत यह तन सूप है लोड जगत पछोर ।

हलुवन को उडिजान द गए राखि बटोर ॥ २१६—५० २२

विरह रूप धन तम भयो अवधि आस उद्योत ।

ज्यो रही भादो निस्त चमकि जात खच्छीन ॥ २४७—५० २८

मनसिज माली की उपज, कहि रहीम नहि जाय ।

फल इयामा के उर लगे, फूल इयाम उर आय ॥ १३६—५० १४

कहि रहीम सम्पत्ति सगे, बनत बहुत बहु रीत ।

विपति बसौटी जे बसे, सोही साचे भीत ॥ ३१—५० ८

इन सभा दोहा म उपमान और उपमेय दोना की विद्यमानता हान व कारण सारोपा है। साथ ही तन पर सूप व विरह पर तम व अवधि आस पर उद्योत के मनसिज पर माली के विपत्ति पर बसौटी व आरोप से यह सिद्ध है कि आरोप्य तथा आरोप्य मान म सात्त्विक गुण स भिन्न सम्बन्ध है। अतः गुद्धा है। कुन मिलाकर दाहा म गुद्धा सारोपा का सुन्दर विनियोग हुआ है।

साध्यवसाना शुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम

साध्यवसाना का लक्षण उपर दिया जा चुका है। धन उम गम्भीर म लक्षणा उल्लेखनीय और है कि साध्यवसाना म लक्षणा तथा लक्षणातिगर्भाति लक्षण म लक्षणा प्रत्य एव ही है क्योंकि लक्षणातिगर्भाति म भी वस्तु उपमात द्वारा ही उपमाय का बोध करा गया जाता है—लक्षणातिगर्भाति-रूप्य रूपक मध्यमम्। लक्षण नी न साध्यवसाना के लक्षण दन के लक्षण उक्त एव गुण उदाहरण प्रस्तुत किया है—

बरिन बहू विद्यायती किरि किरि गज वृग्गानु ।

तुंने न मेरे प्राण धन घटत घात्र बहू जान ॥

दासजी न ब्रजभाषा तिलक टीकाकार न इस शुद्धा साध्यवसाना का ही उदाहरण माना है जो सबथा उचित है क्योंकि यहाँ धन उपमाना का नाय गज पर विद्यमान जाने जान पूना का लिए वृग्गानु (घग्गानु) का गुण प्रमाण हुआ है। गुद्धा सारोपा का प्रसंग म उक्त मासिज मानी लक्षणा दाह का तीतर परण म लक्षणा के उदोज का लिए मान उपमान फल (धीषन) का उल्लेख है। धन वहाँ साध्यवसाना ही है। एक श्लोक म रहीम न चिन्ता का लिए साध्य स भिन्न धनरत्न (साध्यक प्रग्नि) का प्रयोग किया है कि तु विना का उत्पन्न न होन का कारण यहाँ भा शुद्धा साध्यवसाना है।

अतर दाव सगी रहे धुवां न प्रगट सोय ।

क जिय जान धापुनो जा तिर बीति होय ॥ २१—पृ० ३१

इसी प्रकार भक्ति निवदनात्मक निम्नलिखित दोहे म भी प्रकारान्तर स शुद्धा साध्यवसाना ही है—

मुनि नारी पायाण ही कपि पशु गृह मातग ।

तीनों तारे रामजू तीनों मेरे अग ॥ १४८—पृ० १५

जहत्स्वार्था शुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा और रहीम

जहत्स्वार्था का व्युत्पत्ति मूलक अर्थ होगा छोड़ दिया है अपना अर्थ जिसने ऐसी। जहाँ लक्ष्याय सिद्धि के लिए मुख्य का साथ बिलकुल छोड़ दिया जाता है वहाँ जहत्स्वार्था लक्षणा होती है। इसी का दूसरा नाम लक्षण लक्षणा है। यहाँ भी लक्षण स तात्पर्य मूल अर्थ के त्याग—स्वसमपणम—से है। गंगा म बरती का प्रसिद्ध उदाहरण जहत्स्वार्था का भी उदाहरण है क्या वहाँ म अपना अर्थ खोकर तट

१ जाकी समता कहन की, वही मुख्य कहि देइ ।

साध्यवसाना लच्छना, त्रिय नाम नहीं लेइ ॥ साध्य निगम, पृ० २५ ।

२ बरिन सखी का वृसान फूल को और प्राणधन पति का बहू प सखी फूल और पति सूर्य न बहू, जात साध्यवसाना लच्छना कहिये । यहाँ केवल आरोप्यमान रहने स साध्यवसाना और सादश्य-सम्बन्ध के न रहने के कारण शुद्धा प्रयोजन वती है ॥—वही पृ० २५

पर का अर्थ धारण कर लेता है। विपरीतायक प्रयोगों में जहत्स्वार्था ही काय करती है। किसी अनर्थकारी को देखकर यह कहना कि 'आपने तो मेरा बड़ा उपकार किया है अथवा किसी बचक मूख को बृहस्पति का भवतार बना देना, जहत्स्वार्था ही है। रहीम क नीति-वाक्य में इस प्रकार लाक्षणिक प्रयोग बहुत अधिक हैं।' कुछ पंक्तियाँ लीजिए—

फूल न्यामा के उर लगे, पून श्याम उर आय। १३६—५० १४

अथम बचन से को फन्यो, बठ ताड की छाँह॥ २—५० १

जसी सगत बठिए तसोई फल दीन। २२—५० ३

देखि दगन जो आदर, मन तेहि हाय विकान। १८०—५० १४

जो रहोम पगत परो, रगिर नाक अरु सीस। ८१—५० ८

यहाँ जर्मन फूल ने अपने सुमन का, फन्यो तथा फल न पद पर खरने वाल फल का, बिनन न विजय का तथा रगडन न घिसन का अर्थ एकदम छोट कर प्रसन्न हान, उत्तम परिणाम प्राप्त करन, आधीन होने तथा दय प्रगट करन का अर्थ ग्रहण किया है। अतः यहाँ जहत्स्वार्था है। सभी पंक्तियों के आधार सादृश्यतर हान क कारण गुद्धा से सम्बद्ध हैं। अतः इन पंक्तियों में जहत्स्वार्था गुद्धा का सुन्दर विलास देखा जा सकता है।

अजहत्स्वार्था शुद्धा प्रयोजनवती और रहीम

जिस प्रकार जहत्स्वार्था का अर्थ है अपने अभिधेयाथ का छोड़ने वाली उमी प्रकार अजहत्स्वार्था का अर्थ है अपने अर्थ का न त्यागकर उमसे सम्बद्ध रहने वाली। लक्षणा क भेद में अर्थवाच्य होन हुए भी थोड़ा बहुत अपने मूल अर्थ से सम्बद्ध रहता ही है। इसीलिए इस उपादान लक्षणा भी कहते हैं। उप अर्थात् थोड़ा तथा आदान अर्थात् लेना अर्थवाच्य बनाए रखना। अतः स्पष्ट है कि जिन लाक्षणिक प्रयोगों में अपने अभिप्रेत अर्थ की सिद्धि के लिए भिन्न अनुस्यू अर्थ का ग्रहण करत हुए भी मूल से सबथा पृथक् नहीं हो जाता वहाँ अजहत्स्वार्था हाती है। यहाँ आधार और आधेय भाव की प्रमुखता रहती है। कदाचित् इसलिए सोमनाथ न कहा था—

आधार र आधेय कौं जहाँ जानिए भाउ।

तहाँ उपादान कहत हैं रसिक सुबुद्धि सुभाउ ॥—रसपीयूष

मम्मट ने इस का उदाहरण कुता प्रविगाति अर्थात् भाले चले आ रहे हैं किया है। यहाँ भागे से तापय है भाले धारण किए हुए व्यक्ति। विश्वनाथ ने अजहत्स्वार्था का उदाहरण दिया है— 'कौश्र स नही की रना करो। वहाँ कौश्र क साथ अन्य सभी बधि भन्ना पक्षिया से अभिप्राय है। बाबू गुलाबराय ने द्वार रनाए रहना को गुद्धा उपादान लक्षणा के उदाहरण में प्रस्तुत किया है और बताया है कि द्वार का अर्थ न केवल दरवाजा अपितु घर आगन सभी कुछ है। हम मममत हैं कि कुत्तों को

१ रहीम रत्नावली दोहा सं० ६६ ७६, ८१ ८३ १३४, १४० १४६ १५६

२२६ तथा २५३

सलाम है तथा 'गाधी टोपी जीत गई' इत्यादि वाक्यांश म सुन्दर अजहल्स्वार्थी है क्योंकि कुर्सी का अर्थ है कुर्सी स सम्बद्ध अधिकारी तथा गाधी टोपी स अभिप्राय है उसके धारक का प्रसन्न पार्टी के सत्स्य ।

लक्षणा का यह रूप रहीम के काव्य म सर्वाधिक प्रयुक्त हुआ है । उहान लाभणिक प्रयोगा म पाठन की कुछ इस प्रकार का मसाला प्रदान किया है कि वह सरलतापूर्वक लाभणिकता का आस्वात् लेते हुए वास्तविक प्रयोजन तक पहुँच जाता है । रहीम दाहावली का गायद ही ऐसा कोर पृष्ठ हो जिसम अजहल्स्वार्थी के उगा हरण न खाजे जा सक । यहाँ उदाहरण क लिए कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत है —

टूट स्वजन मनाइए जो टूटें सौ बार । ८५—१० ६

ऊगत जाही फिर सौ अथवत ताही भाति । १५—५० २

कहि रहीम धन बढ़ि घट जात धनिन की बात । २८—५० ३

कौन बडाई जलधि मिलि, गग नाम भो धीम । ४३—५० ४

जिहि अचल दीपक दुरयो हयो सो ताही गान । ६२—५० ७

जसे दीपक तम भव कज्जल यमन कराय । १७६—५० १८

भावी काहू नः दही भावी दहू भगवान । १३४—५० १३

इन सभी उदाहरणांश म रेखांकित शब्दों के अर्थ बाधित हैं । सम्बन्धी शीशे क यनन नहीं जो टूटेंगे । अतः टूटन का अर्थ होगा पृथक् हाता नाराज होना इत्यादि । उगता है बीज, कि तु मृग्य क अर्थ म उसका अर्थ होगा निकलना चढना उन्नत होना । बात क पर नहीं जा जायगी अतः बात जान का अर्थ है सम्मान का चल जाना या समाप्त होना । धीमी गति या चाल हाती है नाम नहीं अतः नाम के साथ उसका अभिप्राय है अस्तित्व का विलय । हनना मारन या बध करन क लिए प्रयुक्त हाता है । दीपक क साथ उसका प्रयोग बाधित है । अतः यहाँ लभ्याय है बुझना । भयन का अर्थ भयान करना खाना परन्तु दीपक जमा जड पत्थ कया खा पायगा । अतः यहाँ अभिप्राय समाप्त करना हरना इत्यादि । दहन का अर्थ है जलना । भाग्य या भावी अग्नि नहीं जा जला टालगी । अतः यहाँ दहन का प्रयोजन उन सभी कष्टा पीडाया आपत्तियां म है जा जलन म अनुभव हा सक्ती हैं । इस प्रकार स्पष्ट है कि ये सभी प्रयोग बाधित हात हुए भी किसी न किसी प्रकार अपने मुख्यार्थ स सम्बद्ध ह । ये सम्बन्ध भी सादृश्य म भिन्न ह । अतः निश्चित हा इन प्रयोगांश म गुद्धा अजहल्स्वार्थी ह ।

इस अध्ययन क आधार पर कहा जा सकता है कि रहीम का नीति काव्य लाभणिक प्रयोगांश म भरपूर है । गान गक्तियां क दरजार म सतना क परिवार क लिए मुर्दा इन सभी आम्ना पर रहीम क गान अपनी स्वाभाविक सजधज एव गरिमा मय आभा क साथ आमान हो सक्ती हैं ।

रहीम के काव्य का व्यञ्जना सौन्दर्य

अभिधा शीशे न गाना गक्तियां का क्षेत्र सीमित है । इन दाता की वाय समाप्ति क पञ्चान गान की त्रिम तासरी गति का सहारा लिया जाता है उम व्यञ्जना कृत

हैं। जिस अर्थ को न अभिधा पानी है न लक्षणा खाल मक्नी है उस व्यजना निर्दिष्ट कर देती है। व्यजना का अर्थ ही है विगिष्ट अजन। जिस प्रकार श्राँख म अजन लगान से घुघलपन समाप्त हो जाता है और दूर के उपकरण अथवा पाम की सूक्ष्म वस्तुएँ स्पष्ट दिखाई पडन लगती हैं उसी प्रकार व्यजना गति से काव्य में निहित सूक्ष्म अर्थ-मो-दय प्रगटित हो जाता है। डॉ० भोलागकर व्यास के अनुसार 'यह (व्यजना) वह गति है जो पदों से ही विद्यमान किन्तु गूढ सौन्दर्य को उसी प्रकार प्रगट कर देती है जिस प्रकार अवगुण्डन के हटन पर रमणी-मुख चमकन लगता है।' यह कथन कुछ उसी प्रकार का है जिस प्रकार ध्वनिवार न ध्वनि के सम्बन्ध में कहा था। वस्तुतः — ध्वनि की स्थापना का अर्थ व्यजना की स्थापना ही है। इसलिए व्यजना से प्राप्त अर्थ को ध्वन्याय भी कहते हैं। व्यंग्याय के अतिरिक्त उसे सूच्याय आशेषाय प्रतीयमानाय आदि नाना सन्नाम्ना से अभिहित किया जाता है। यह विगिष्ट अर्थ न केवल गद्य में अपितु अर्थ में भी सन्निहित रहता है। इस तथ्य का उल्लेख आचार्य विश्वनाथ न व्यजना की परिभाषा के साथ ही कह दिया था—

विरता स्वभिधाद्यामु अर्थो लभ्यते पर।

सा वक्ति-यजना नाम गदस्यार्थादिकस्य च ॥

अर्थात् अभिधादि गतिव्यापक निवृत्त हो जान पर जिस अर्थ अर्थ का बोध होता है उस वृत्ति का व्यजना कहते हैं। और वह न केवल गद्य में अपितु अर्थों में भी रहती है। यह स्मरणीय है कि अभिधा एव लक्षणा दाना गदाधारित गतिव्यापक हैं जबकि लक्षणा गद्य से भाग अर्थाधारित भी है।

नागेश भट्ट तथा अप्पय दीक्षित का व्यजना-विवेचन

व्यजना विवेचन में नागेश भट्ट तथा अप्पय लीखित के याग्यन का अपना ही महत्त्व है। उन्होंने पहिले ही स्पष्ट कर दिया था कि व्यजना हम मुख्य अर्थ से सम्बन्ध रखन वाले अर्थ के साथ ही समाने सम्बन्ध न रखन वाले अर्थों का भी समझ देता है। इसीलिए व्यजना द्वारा प्राप्त अर्थ सूक्ष्म से सूक्ष्मतर एव मधुर से मधुरतर होना दृष्टा भाग देता है। हा इतना अवश्य है कि व्यजना सहस्रद्वन्द्वयानुरजक व्यापार हो जा सकता एव श्रोता दाना की विगिष्ट प्रतिभा पर आधारित रहता है। नागेश ने तो इस न केवल सहकारी अपितु परम्परया कारण तक कह दिया था। सत्य भी यही है। क्याकि प्रतिभा एव विगिष्ट गति के अभाव में व्यजना सम्भव ही नहीं है। इसीलिए इस प्रतापसिद्ध न अधिक से अधिक अर्थ-वाह्यत्व का व्यजित करन वाली गति कहते हुए तिर्यकता से उपमित किया था—

जहाँ गद्य त अर्थ बहु अधिक अधिक दरसाय।

तिर्यकता से व्यजना कहते सकल कविराय ॥—काव्याय कोमुनी

१ ध्वनि सम्प्रदाय और उसके सिद्धांत—भाग १ डॉ० भोलागकर व्यास (ना०

प्र० म० काशी) पृ० १८१

२ हिन्दी ध्वन्यालोक डॉ० नगद, प्रस्तावना, पृ० २८

इन तथ्या को एक प्राचीन उपाहरण से समझा जा सकता है। किसी न कृता 'सूय' डूब गया। अभिधा सूय का डूबना बताकर समाप्त हो गई। किन्तु सूय कोई व्यक्ति नहीं जो डूबेगा। अतः लक्षणा तर्कदि एव जा प्रगतिद्धि का मन्त्रा सकर यता दिया कि सध्या हा गई। यही गतिन द्वय का व्यापार समाप्त है। अथ व्यजना का काय क्षेत्र आरम्भ हुआ और उससे यस्ता एव श्रोतादि की विगिष्णता से अनन्तर अथ हमारे सम्मुख उपस्थित कर लिए। यदि वाना वानि मनावन्स्वी है तो अथ लगा — चलो सध्या करें। यदि सगुणावासन निष्ठावान भजन है तो समभंगा—'आन' शब्द भक्तवत्सल भगवान की आरती उतार। यदि मुगलमान है तो यही गान् मन्त्रिक की नमाज अदावगी का सन्तान एव। यदि विद्यापीठों का अथ हाता पाठ बन करा। यदि गहिणी है तो समभंगी—सध्या प्रती कर। यदि कुनटा है तो अभिसाराति की तयारी का अथ लगी। यदि वार है तो अथ आगा—मध कुम्बल आदि के लिए ठोर-ठिकाना राजा मजदूर है तो तात्पर्य हागा काम बन करो वत्यादि वत्यादि। एक ही वाक्य से उत्तर गीध अथ से पृथक् एतत् अधिन इनन सूत्र और इतने व्यंग्यपूर्ण अथ यजना ही द सक्ती है। अन्वीनिए आचाय भिगारीगत न कहा था—

सूधी अथ जु यचन की तिहि तजि औरे वन।

समुभि पर तिहि कहत हैं सक्ति विजना ऐन ॥—का० तिणय

व्यजना के भेद

यह सिद्ध हो चुका है कि व्यजना का काय क्षेत्र अभिधा और लक्षणा के समान केवल गान् तक सीमित नहीं है अपितु गान् और अथ दाना तत्र विस्तृत है। इसी आधार पर यजना के दो प्रमुख भेद किए गए हैं—गान्दी व्यजना और आर्ची यजना। गान्दी व्यजना सामान्यतः गान् पर आधारित रहता है और आर्ची व्यजना अथ पर। न गान् के बिना अथ का अस्तित्व सम्भव है और न अथ के बिना गान् का। डा० भागीरथ मिश्र का कथन है कि शब्द और अथ गत यदा भेद कहने का है। क्योंकि आर्ची में भी गान् है और गान् में भी अथ है। और जब दोनों में गान् अथ हैं, तो फिर गान्दी और आर्ची भेद क्या महत्त्व रखते हैं।^१ डा० सत्यदेव चौधरी का कथन भी उल्लेखनीय है— इन दोनों भेदों का अभिप्राय यह नहीं है कि गान्दी यजना में केवल गान् ही और आर्ची यजना में केवल अथ ही व्यंग्याथ के प्रतिपादन में व्यजक होते हैं अपितु दाना अवस्थामा में गान् और अथ व्यजक हाकर एक दूसरे के सहायक बनते हैं। हा गान्दी व्यजना में व्यजक गान् की प्रधानता रहती है और व्यजक अथ की गौणता और आर्ची व्यजना में यजक अथ की प्रधानता रहती है और व्यजक गान् की गौणता। यह प्रधानता ही गान्दी अथवा द्वितीय उल्लास के आर्ची नामा का कारण है।^२ यह कथन नितांत उचित है। स्वयं मम्मट ने भी

१ काव्यशास्त्र डा० भागीरथ मिश्र पृ० २१५

२ भारताय कायाग डा० सत्यदेव चौधरी पृ० ७२

द्वितीय उल्लाम के अंत में स्वतः यह संकेत कर दिया है—

यत् सोऽर्थांतरयुक्तं तथा ।

अर्थोऽपि व्यञ्जकस्तत्र सहकारितया मत ॥^१

शाब्दी व्यजना

जहाँ यग्याथ किसी शब्द विशेष पर निर्भर रहता है वहाँ शब्दी व्यजना होती है। उम शब्द विशेष के स्थान पर यदि उसका पर्यायवाची शब्द रख दिया जाय तो व्यजना समाप्त हो जाता है। स्पष्ट है कि ऐसा तभी होगा जब शब्द अनवश्यक हो। अर्थी व्यजना के लिए इस प्रकार का प्रतिबंध नहीं है। यह भाषा की निजी सौंदर्य सम्पत्ति है तथा कवि के शब्द चयन कौशल की विशेष अपेक्षा रखती है। इसीलिए दूसरी भाषा में शब्दी व्यजना युक्त कविता का अनुवाद करना यदि एकदम असम्भव नहीं तो नितांत कठिन अवश्य ही हो जाता है। कहा नहीं जा सकता कि वाचक जैसे शब्द शिल्प कुशल कवि की तुर्की कृति का फारसी अनुवाद करते समय रहीम न वाचक की शब्द व्यजना युक्त पत्तियाँ के अनुवाद में सौंदर्य निवाह किस प्रकार किया होगा। परन्तु उनमें निजी काव्य में शब्दी व्यजना का निर्वाह कुछ दाहा में बहुत ही सुंदर हुआ है। एक उदाहरण लीजिए—

कमला धिर न रहीम कहि यह जानत सब कोष ।

पुरुष पुरातन की बंधू क्यों न चंचला होय ॥ २३—पृ० ३

यहाँ लक्ष्मी का शाल्व्य वर्णन है किन्तु उसमें आग भी कुछ व्यजना है जो वृद्ध विवाह के दुःख प्रकट कर रही है। ऐसा पुरुष पुरातन शब्द के विशेष प्रयोग के कारण संभव हुआ है। विष्णु एवं वृद्ध आदि अनवश्यक इस शब्द के स्थान पर यदि हरि पुण्डरीकाक्ष, कमलापति अथवा वृद्ध शूरा आदि शब्द रख दिए जाएँ तो ध्वनि सौंदर्य गाय नहीं रहेगा। अतः शब्दाधारित हान के कारण यहाँ व्यजना शब्दी है, अर्थी नहीं। इसी प्रकार निम्नलिखित दोहा में भी भगत (प्रभु भक्त तथा भागत भागत) और गुन (गुण या रस्मी) आदि दो अर्थ रखने वाले शब्दों के प्रयोग के कारण शाब्दी व्यजना है। अतः अमंग वासना के ऊपर भक्ति का तथा दुराग के ऊपर बुद्धि कौशल का महत्त्व यग्य है। दाह इस प्रकार है—

कह रहीम जग मारियो, जन बान की चोट ।

भगत भगत कोउ बधि गयो, चरन कमल की ओट ॥ २८—पृ० ३

गुन ते लेत रह्योम जन सज्जि ब्रू ते काडि ।

कूपहो ते कह्यो होत है मन काहू को नाहि ॥ ५०—पृ० ५

दोष अलंकार तथा शाब्दी व्यजना

दोष अलंकार और शब्दी व्यजना दोनों ही अनवश्यक शब्दों के प्रयोग पर आशय हैं। अन्तर केवल यह है कि अलंकार में कवि को शब्दों के एकाधिन अर्थ

स्वतः वाञ्छित रहते हैं, जबकि शास्त्री व्यजना में ऐसा प्रायः नहीं होता। श्लेष युक्त छन्द में भाव पूरा ही नहीं हो सकता यदि शब्द के दोनो अर्थ न लिए जायें। किन्तु शास्त्री व्यजना में यह अनिवायता नहीं। हम रहीम के काव्य से ही दोना का अन्तर स्पष्ट कर सकते हैं। रहीम का निम्नलिखित सुप्रसिद्ध दोहा लीजिए—

ज्यो रहीम गति दीप की कुल कपूत गति सोय ।

बारे उजियारो लगे बडे भ्रंघेरो होय ॥ ७८—पृ० ८

यहाँ दीपक तथा कपूत का सम्बन्ध सिद्ध ही नहीं होगा जब तक कि बारे (बचपन तथा बालना) तथा बडे (आयु में बढने तथा बुझने) के दोनो अर्थ न लिए जायें। अतः यहाँ दोना अर्थ कवि का स्वतः वाञ्छित है। इसी प्रकार उनका दूसरा दोहा लीजिए—

रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून ।

पानी गये न ऊबरे मोती मानस चून ॥

उनके रहिमन पानी राखिए इत्यादि दोहे में जब तक पानी के तीनों अर्थ—चमक हवा (गम) तथा जन न लेंगे कवि द्वारा गिनाय गये कमल मोती मानस और चून का उल्लेख ही अर्थ प्रद न होगा। अतः यहाँ भी श्लेष अनिवाय है और उसकी अनिवायता कवि का अपेक्षित है। दूसरी ओर ऊपर ध्वनि प्रसंग के दोना के भगत भगत तथा गुन आदि शब्दों के दोना अर्थ न भी करें तब भी अर्थ में कोई बाधा उत्पन्न न होगा। हाँ यदि सहृदय पाठक इनका दूसरा अर्थ भी लें तो विषेय का अर्थ चमत्कार आह्लास और आनन्द प्रायगा। कमला फिर न रहीम इत्यादि दाह में तो पुरुष पुरातन के दोना अर्थ करन पर इस काव्यान्तर्गत सीमा नहीं रहती। हम समझते हैं कि श्लेष तथा शास्त्री व्यजना का अन्तर स्पष्ट करन के लिए यह विश्लेषण पर्याप्त है।

शास्त्री व्यजना अर्थ निश्चय और रहीम

काव्य शास्त्र में शास्त्री व्यजना के प्रसंग में (कही कही अभिधा प्रसंग में भी) उन व्यापारों का भी उल्लेख किया गया है जिनके कारण अनर्थार्थों का एक ही अर्थ में निश्चय होता है। ये कारण प्रायः चौदह माने गये हैं। हिन्दी में कहा-कहा यह शब्दों का भी है। उदाहरणार्थ काव्य निणय में तरह हा है।^१ डा० भागीरथ मिश्र ने बारह ही वर्णित किए हैं।^२ काव्य प्रमाण तथा वाक्य पत्नीय में इन चौदहों का सवाग विप्रवाग सादृश्य विरायता अर्थ प्रकरण विग अर्थ गमनिधि सामर्थ्य औचित्य देग वाद (पूर्ववगन्त्यानिगम्य) व्यक्ति अर्थ स्वर के क्रम में गिनाया गया है।^३ इनमें से प्रमुख का अर्थ प्रकार समझा जा सकता है—

१ काव्य निणय मध्या० प० जगद्वानन्द चतुर्वेदी । पृ० ११ ग १८

काव्यशास्त्र ग० भागीरथ मिश्र पृ० १८

मयागा विप्रवाग सादृश्य विरोधता ।

अर्थ प्रकरण विद्वान् काव्यशास्त्राचार्य सतिनिधि ॥

सामर्थ्य औचित्य देग वादा ध्वनि स्वरान्य ।

गद्यावस्थानान्तर विद्वान्मूर्ति हतव ॥

१ सयोग और विप्रयोग

‘शश्व चक्र-युक्त हरि तथा शश्व चक्र रहित हरि चक्र-सयोग विप्रयोग के प्रसिद्ध उदाहरण हैं। क्योंकि बन्दर, यम चन्द्र सिंह पानी किरण, पवन सप शुक, दादुर अश्व सूय तथा विष्णु आदि के अर्थों में प्रयुक्त हरि जब शश्व चक्रान्ति के रहित एव संहति के साथ प्रयुक्त होता है तो उसका अर्थ विष्णु ही होगा कुछ और नहीं। रहीम रत्नावली के प्रथम दोहे में अच्युत चरण तरनिणी अन्ति क साथ आया हरि शब्द भी तोना बन्दर आदि अर्थ गन नहीं दे सकता। अतः निम्नलिखित दोहा सयोग द्वारा अर्थ नियामकता का सुन्दर उदाहरण है—

अच्युत चरण-तरनिनी, शिव तिर मालनि माल ।

हरि न बनायो सुरसरी बीजो इत्य भाल ॥ १—पृ० १

२ साहचर्य और विरोध

अनेकायक गण किसी अर्थ प्रसिद्ध नाम धर्मान्ति के साथ अथवा उनका विरोध में प्रयुक्त होने पर एक ही अर्थ में निबद्ध हो जाता है। अनेकायक राम^३ शब्द राम लक्ष्मणी अन्ति प्रयागा में दाशरथि राम का अर्थ देता है और रामाजुन आदि प्रयागा में विरोध के कारण (अजुन के विरोधी) कानवीय अजुन के अर्थ में नियन्त्रित हो जाता है। रहीम के निम्नलिखित दोह में राम का अर्थ हिरण मारीच के साहचर्य से बवल भगवान राम हागा, परगुराम अथवा बलराम, भाडा तथा बग्ण इत्यादि नहीं—

राम न जाते हिरण सग सोप न रावन साथ ।

जो रहीम भावी कतहु होति आपुन हाथ ॥ २३७—पृ० २३

३ अर्थ और प्रकरण

अनेकायक गण किसी अर्थ (प्रयोजन) विशेष अथवा प्रकरण (प्रसंग) विशेष के कारण एक ही अर्थ में नियन्त्रित हो जाते हैं। ठूठ खूटा तथा गिवादि अनेक अर्थों के लिए प्रसिद्ध श्याणु गण ‘श्याणु भज भवच्छिष्ट’ अथात् मसार में पार उतरने के अभिप्राय में बवल गिवा का ही अर्थ दगा। रहीम के श्लोक में प्रयुक्त ‘पय’ शब्द अपने प्रयोजन विशेष से ही मात्र दूध का अर्थ देता है पानी का नहीं और व्याल गण बवल सप का अर्थ देता है सिंह विष्णु, हाथी, टग अन्ति का नहीं क्योंकि प्रकरण श्रान्ति की दृष्टि में सम्बद्ध है—

१ इन्द्र चन्द्र सरविद अलि कपि केहरि भानद ।

कचन काम-शुरग दन धनुष दड-नभ चद ॥

पानी पावक पवन पय गिरि-भाज नाग नरिद ।

य हरि इव मुकुट मनि हरि ईश्वर गोविद ॥ नान्यस त्रय पृ० ५३

२ राम पशु विरोधे श्या-जामदग्ये हलापुधे ।

राथदे धामिते श्वेते मनोजेऽपि च वाच्यवत ॥

रहिमन लाख भली करी, अगुनी अगुन न जाय ।

राग मुनत पय पियत हूँ, साप सहज घरि लाय ॥ २३६—पृ० २०

मुक्ता कर कर पूर कर चातक जीवन जाय ।

ये तो बडो रहीम जल, ब्याल बदन बिप होय ॥ १४७—पृ० १५

रहीम ने और भी अनेक दोहा म अनेकायक शब्दा का प्रयोग किया है जहाँ अथ विशेष शास्त्र-वर्णित अनेक कारणों से एक ही अथ म परिसीमित हो गया है। सर सूखे पच्छी उडे^१ रहिमन दीन अनाय को,^२ तन सनेह कसे दुर^३ लपटे रहत भुजग^४ आदि प्रयोग ऐसे ही हैं।

शाब्दी व्यजना के भेद

कही-कही पर एक अथ का निश्चय कराने वाले उक्त चौदह कारणों का शाब्दी व्यजना के भेद मान लिया गया है। परन्तु वह भ्रम है। शाब्दी व्यजना के तो अभिधा एक लक्षणा के आधार पर प्रयुक्त दो भेद होते हैं जिन्हें अभिधामूला शाब्दी व्यजना तथा लक्षणामूला शाब्दी व्यजना कहा जाता है। अनकार्यी शब्दों को एक अथ म में सन्निहित हो जाने के पश्चात् भी बिना किसी अथ बाधा के उही शब्दों से अथ सूक्ष्म अथ का ध्वनि भी महाकवियों की वाणी से होता रहता है। उस सूक्ष्म अथ का ध्वनि करने वाली शक्ति को अभिधा मूला शाब्दी व्यजना कहते हैं।

अभिधा मूला शाब्दी व्यजना और रहीम

रहीम के दाहा म व्यजना व्यापार अभिधा पर भी आधारित है। बिना किसी अथ बाधा के निम्नलिखित दोहा से उमंग दीना की एकनिष्ठ प्रभु भक्ति तथा शठ गाठय समाचरेत की नीति ध्वनित होती है। अतः ये दोह अभिधा मूला शाब्दी व्यजना के उदाहरण हो सकते हैं—

सर सूखे पच्छी उड और सरन समाहि ।

दीन हीन बिनु पच्छ के कहु रहीम कह जाहि ॥ २५७—पृ० २५

रहिमन लाख भली करी अगुनी अगुन न जाय ।

राग मुनत पय पियत हूँ, साप सहज घरि लाय ॥ २२८—पृ० २२

२ लक्षणा मूला शाब्दी व्यजना और रहीम

मुख्य अथ का बाधित होने पर किसी पयाजन विगम के कारण लाक्षणिक शब्दों पर आधारित ध्वनय की प्रतीति कराने वाली शब्द शक्ति का लक्षणा मूला शाब्दी व्यजना कहते हैं। चाहे काव्य प्रकाश के आधार पर प्रयोजनवती लक्षणा का कुल बारह भेद मान या काव्य-रूपण के आधार पर चौमठ, उतन ही भू लक्षणा मूला के

१ सर ४ तक उमंग दाहा संख्या २५७ २५० २७ ७४ तथा सर=सरावर, तीर चिता-भरण्या अनाय=दान मानृ पिनु विहीन, राजा हीन सनेह=तन प्रम भुजग=साप गार । पति ।

भी होगा। अतः उन प्रसंगा में दिए हुए जितने भी शाब्दी व्यञ्जना युक्त उदाहरणों से व्यंग्याय की सिद्धि हो वे प्रायः सभी लक्षणा मूला शाब्दी व्यञ्जना के उदाहरण होंगे। अधिक फेर म न पड़ते हुए हम दो दोहों प्रस्तुत करना चाहेंगे—

कह रहीम जग मारियो नन बान की चोट ।

भगत भगत कोउ बच गये, चरन कमल की श्रोत ॥ २८—पृ० २

गुन ते लेत रहीम जल सलिल कूप ते फाडि ।

कूपेंहु ते कहें होत है मन काहू को गाडि ॥ ५०—पृ० ५

यहां प्रथम दोह में प्रभु की भक्ति एवं शरण का तथा द्वितीय में मानवीय गुण तथा कौशल का महत्त्व व्यंग्य है। साथ ही अनवाक्य शब्द भगत एवं गुन के प्रयोग के कारण व्यञ्जना शाब्दी है। कहने का तात्पर्य है कि उक्त दोहा में लक्षणा मूला शाब्दी व्यञ्जना सरलता से देखी जा सकती है।

आर्थी व्यञ्जना और उसके भेद

जिस प्रकार प्रमुखन शब्द पर आधारित व्यञ्जना को शाब्दी कहा जाता है उसी प्रकार प्रमुखन अर्थ पर आधारित व्यञ्जना को आर्थी कहा जाता है। वक्ता, बोधव्य, वाक्य वाक्य, वाच्य, अर्थसन्निधि, प्रस्ताव देण, काल तथा चेष्टा आदि दस आधारा पर अर्थ की विलक्षणता प्राप्त होती है। अतः आर्थी व्यञ्जना के दस भेद हो जाते हैं। इनमें से प्रमुख को रहीम के वाक्य से समझा जा सकता है।

१ वक्तव्यशिष्टय पूर्ण आर्थी व्यञ्जना और रहीम

रहिमन राज सराहिए, ससि सम सुखद जो होय ।

कहा बापुरो भानु है तयो तरयन खोय ॥ २२८—पृ० २०

वैसे ता यह दोहा सामान्य है किन्तु जब यह पात हो जाय कि कहने वाला जहाँगीर के शासनकाल में दुर्गम व्यक्ति रहीम है ता इससे उसके राज्यकाल में प्रजा की कष्ट पूर्ण स्थिति व्यञ्जित होती है। रहीम के अर्थ दोहा में भी यह व्यंग्याय देखा जा सकता है—

रहिमन अब बे विरछ कह, जिनकी छांह गभीर ।

बागन बिच बिच देखियत सेहुड कज करोर ॥ १६३—पृ० १६

२ बोद्धव्य वशिष्टय पूर्ण आर्थी व्यञ्जना और रहीम

चिप्रकूट में रमि रह रहीमन अबध-नरेस ।

जा पर विपदा पडत है सो आवत यहि देस ॥ ५४—पृ० ६

यहाँ आर्थिक सहायता की याचना व्यंग्य है और वह विनोयकर बोद्धव्य अर्थात् रीवा नरग पर आधत है। उनके पास इस दात का लकर (निधनता के कारण अपने द्वार आय का दान द मचन में धर्ममय) रहीम का याचक गया था। और उसे रीवा नरग से एन लाय का तान प्राप्त भी हुआ था। दोह की दूसरी पंक्ति से यही व्यञ्जना निकलती है कि विपत्ति पड़ने पर लाग आन देण में आनर वाण गरण प्राप्त करत रहे हैं। अतः इस याचक का कष्ट भी आन (रीवा महाराज) निवारण करें।

३ काकुवशिष्टय पूण आर्या व्यजना और रहीम

जे गरीब पर हित करें ते रहीम यह लोग ।

वहा मुदामा वापुरो वृष्ण मिताई जोग ॥ ६६—५० ३

काकु का अर्थ है (विशेष प्रकार की) कण्ठ ध्वनि । यहाँ प्रश्न सूचक वहा का विशेष प्रकार से बोलने पर नरार की व्यजना हानी है अर्थात् मुत्तमा जमा दग्द्री क्या राजाधिराज वृष्ण की मित्रता व योग्य था—क्यापि नहीं । निम्नलिखित दोह म भी भोरे के हरजाईपन का तिरस्कार वहाँ व काकु ही से किया गया है—

धनि रहीम गति मीन की जल विछुरत जिय जाय ।

जियत कज तजि अत बसि, वहा भौर के भाय ॥ १०४—११

कमी प्रकार अयान्य भेदा व उदाहरण भी लाज जा सकत है । किन्तु भ्रम प्रभेद की सीमा नहीं । दस भदा म स प्रत्यक वे वाच्याय लयाय एव व्यग्याय व आधार पर तीन तीन भद और हो जान व कारण व्यजना व कुल भ्रम तीस हो जात है । परन्तु बात तीस पर ही समाप्त नहीं हानी । अथ-व्यजना की नई पुरानी अतत सम्भावनाए हो सकती है । उहे तीस स गुणा भरन पर न जान कितने भद बन सकत ह । अत उस सब के पचड म न पडत हुए मूल आर्या व्यजना के सौ ग्य स आपूरित दोह प्रस्तुत हैं । इनम नीच पुरुषा का स्वभाव और उनका लक्षण व्यग्य है । राजा महाराजा एव अधिकारिया को सावधान किया गया है कि व नीचा को बहुत ऊच पद प्रदान न करें क्याकि उहे प्राप्त कर व उल्टे ही चलन ।

जो रहीम ओछो बड़ तो अति ही इतराय ।

प्यादे से फरजी भयो टेढो टेढो जाय ॥ ५—५० ८

फरजी साह न ह्व सक गति टेढी तासीर ।

रहिमन सीधे चाल सो प्यादो होत बजीर ॥ १२०—५० १२

एक अय दाहा भी लीजिए—

सौदा करो सो करि बलो रहिमन याही घाट ।

फिर सौदा पहे नहों डूरि जान है वाट ॥ २६१—५० २५

मूलत इस दोह म ससार की प्रसारना जीवन की क्षण भंगुरता मानव नेह की बहु मूल्यता चौरासी लाख योनिया की दूरी की भयकरता अथच दरोपनारनिरतता तथा धम परायणता के लिए सदेग व्यग्य है । किन्तु इसी दाह का श्रोता अथवा वक्ता काद मनचला युवक हा तो व्यग्याय शृंगार परक होगा । इसी प्रकार स्थान यति

१ होत अरय विजकन को दस विधि मुअ्र बिसेलि ।

पहले व्यक्ति बिसेल पुनि है बोधय मु लेलि ॥

काकु बिसेलो वाक्य अर, वाय बिसेल गिनाई ।

अनसनिनि प्रस्ताव पुनि दस काल नय भाई ॥

है चेष्टा मु बिसेल पुनि दसम भेद कवि राइ ।

इनक मिल मिल करि, भेद अतत सखाइ ॥ काय निणय प० ३३

सामान्य बाजार है तो और अर्थ होगा, वेद्यालय है तो और अर्थ होगा, गंगा तट है तो और अर्थ होगा तथा आयरामा गयारामा की धारासभा है या समद भवन है तो व्यंग्याय निश्चित ही कुछ और गुल पिलायगा। कहने का तात्पर्य है कि बचना, थाता आदि ऊपर गिनाय दस आधारा पर इसके अर्थ की व्यजनाएँ भिन्न भिन्न हो सकती हैं और भी ऐसे अनेक दाह रहीम की नीति काय से प्रस्तुत किये जा सकते हैं। विस्तारभय से केवल एक छंद प्रस्तुत करते हैं। सुगामदिया से घिरे जहागीर का नश्य करके भुगतन साम्राज्य पर प्राण यौछावर करने वाले नवधा याग्य एव वार सनापति रहीम न अपन को पृथक् आन्त्र सम्मान एवं महत्व प्राप्त न हाता दाय कर ही बचाचिन निम्नलिखित छंद निम्ना होगा—

मुनिपे विटप प्रभु ! पट्टप तिहारे हम
 राखिये हमें तो मोना रावरी बडाइ हैं ।
 तजिहो हरप तो विरख हैं न चारी कछू
 जहा जहा जहैं तहां डूनी छवि पाइ हैं ।
 मुरन चोगे मुर-नरन चोगे हम
 सुकवि 'रहीम हाथ टाय ही जिकाइ हैं ।
 देस मे रहेंगे परदेस मे रहेंगे
 काहू नेप मे रहेंगे प रावरे कहाइ हैं ॥

इस छंद से रहीम की विनय साम्राज्य के प्रति उत्तरदायित्व निभान की लक्ष्य स्वामि भविन आय कही चले जान पर भी समान्त्र प्राप्त करन की क्षमता पर आधारित घुडकी आदि अनेक अर्थ व्यजित हैं। अतः यह छन्द आर्थी व्यजना का सुन्दर एवं सटीक उदाहरण है। और अधिक उदाहरणों के लिए निम्नलिखित गीतों का प्रस्तुत किया जा सकता है—

करम हीन रहिमान लखी धंस्यों बडे घर चोर ।
 चितन ही बड लाभ के जागत है गो भोर ॥ २६—पृ० २
 काम न काहू आवई मोल रहीम न लेइ ।
 बाजू टूटे बाज कों साहय चारा देइ ॥ ७—पृ० ८
 रहिमान थोरे दिनन को कौन करे मुख स्याह ।
 नहीं छलन को पर तिया नहीं करन को चाह ॥ १६४—पृ० १८

यहां अमग हपातिरेक का हानि राज्याय तथा पत्नीव्रत व भाव व्यंग्य है ।

शब्द शक्ति सम्बन्धी निष्कर्ष

गण गतिया व काय गान्त्रीय विवचन और उम अलि म रहान से नीति काय का अध्ययन करन में जान होता है कि रहीम की नीति काय में अनेक अर्थों का जिनता सूक्ष्म और गान्त्रिक विनियोग हुआ है उतना अर्थों का जिनता सूक्ष्म है। नीति जम विषय में गान्त्रिक का एसा नपानुता आन्त्र सम्मान के उदाहरण काव्य कीर्तन का प्रमाण है। यदि रहीम की नीति काय का अध्ययन करे तो

घोड़ा भी इस धार मजग रह होवे तो रमगिद्ध एवं तपगिद्ध होने के साथ ही उग्र-
रीति गिद्ध कवि भी वा मजत थ । तादिका भेद तथा नबोत करण ता के प्रयोग
न उाकी सातापत्य प्रतिभा तो गहू ही गिद्ध है ।

मुहावरे सोबोविनयां तथा रहीम का नीति-शास्त्र

मनुष्य युग स अगती भाषा को ग्राह्य कर । का उतरम करणा रहा है । इसके
लिए वह जाने अनजाने नाता गम्य रहा एवं व प्रयोग का शक्यता करता रहा है ।
कुछ सागरन गम्य प्रयोग लोक म अम्यता प्रपन्नित हा । व कारण निश्चय अर्थात् म अ
हो गए है । इहा प्रयोग न कालांतर म साबोविनयां एवं मुहावरों का रूप धारण कर
लिया है । युग युग तरा स प्रसिद्धि रहने के कारण इतने मानव की नीति-नीति अनु-
भव अम्यात मायताए एवं धारणाए समाहित हा गई है । धा नीति का कवि तथा
नीति का अम्यता शान ही मुहावरों की उा न रहा कर सता । 'यत्(साताविन)पामात
जनता का गतिगतर है । साताविनयां मातरी गान व पनीभूत रहा है । जिनम बुद्धि
और अनुभव की विरण फटा यात्री याति प्राप्त हाती है । साताविनयां प्रति व
स्फुलिंग (रडियो एक्टिव) तत्वा की भांति प्रतर विरणें धारा और फनाता रहती है ।
साताविन साताय ससात व नीति साहित्य (विद्यम सित्टेचर) का प्रमुस अग है ।
सासातिक व्यवहार-पटुता और सामाय बुद्धि का जसा निष्पान कहाया म मिनता
है वसा अयत्र दुलभ है । ' इस उद्धरण स साताविन तथा नीति का सम्बन्ध स्पष्ट
हा जाता है । वस तो यत् मूधम दष्टि स देखा जाय तो साताविन तथा मुहावरों म
अन्तर दिवार् देगा किन्तु सामायतथा दोनों का एव ही प्रकार स और प्राय एव ही
अथ म व्यवहृत किया जाता है । हमारा दृष्टिकोण यहाँ सामाय ही है ।

मुहावरे और तथ्य—मणिकाचन सयोग

रहीम जसे उच्छुष्ट नीति कवि एव सागरत अभिव्यजना गिल्पी व लिए मुहा-
वरा का तिरस्कार असम्भव था । अपनी विषय सीमा के अनगन उहे जब अवसर
मिला तभी उहाने मुहावरों का प्रयोग किया । वे सामाय मुहावरे के प्रयोग स
गभीर तथ्या की अभिव्यक्ति करन म सिद्धहस्त थ । सामाय प्रयोग के साथ ही कुछ
एसी गभीर बात कह जाते थ कि उसके सयोग म स्वय मुहावरे की भी गोभा बढ
जाती है । मुहावरे के सयोग से तथ्य भी स्पष्टतर हो जाता है । मुहावरे और तथ्यो
का यह मणिकाचन सयोग दखत ही बनता है । उदाहरण के लिए हम एक लोहा ल
सक्त है जिसमे व शरीर की क्षणभंगुरता चित्रित करना चाहते है । किन्तु उहाने
सता की भांति 'पानी केरा बुन्दबुदा बताकर परम्परागत रीति नही अपनाई है । वे उस
धूल म मिनने तथा अत धूर की धूर स स्पष्ट करत है ।

१ हिन्दी साहित्य कोश (गानमण्डल) पृ० ६६३

२ विनोप अययन के लिए दगिए—कहावत कोश—सम्पा० डा० माधव (वि० रा०
प० पटना) भूमिका (ड)

रहिमन ठठरी घूर की रही पवन ते पूरि ।

गांठ युक्ति की खुलि गई, अन्त घूरि की घूरि ॥ १८६—पृ० १६

गरीर क्या है ? पृथ्वी तथा पवा आदि तत्त्वा का सघान । रहीम ने उस घूर की गठरी की सजा दी है । यदि बाहर तीव्र पवन चल रहा हो तो गठरी की पूर तभी तक सुरक्षित रहती है जब तक कि उसकी गांठ बधी हुई है । ज्याही गांठ खुलेगी धूल उड़ जाएगी । गरीर भी इसी प्रकार है । जब तक युक्ति की गांठ नहीं खुलती तभी तक कुशल है । इस प्रकार दाह स ध्वनि निकलती है कि यदि युक्ति तक और दूर-दर्शिता स काम न लिया गया तो यह जीवन व्यय है । इस गभीर भाव का कवि ने 'अन्त घूर की घूर जम मुहावरे का सहारा लेकर बड़ी सरलता के साथ व्यक्त कर लिया है । प्राणा की बाजी लगाना तथा सागर म रहकर मगरमच्छ से वैर आदि मुहावरा के प्रयोग देखिए—

यह न रहीम सराहिए, देन लेन की प्रीत ।

प्राणन बाजी राखिए, हार होय कं जीत ॥ ११२—पृ० १५

कसे निवहें निबल जन करि सबलन सौ गर ।

रहिमन बसि सागर विष करत मगर सों वर ॥ ८१—पृ० ४

रहीम के एक छंद में एकाधिक मुहावरे

ऊपर के दाहा म केवल एक एक मुहावरा प्रयुक्त हुआ है किन्तु एम भी दाहा हैं जिनमें एक से अधिक मुहावरे प्रयुक्त हैं । म प्रयोग किसी मन की मीज अथवा मस्तिष्क की संनक का प्रतिफल नहीं अपितु विषय की आवश्यकता तथा अभिव्यक्ति कोणल के अनिवाय अग बन कर आण हैं—

रहिमन करि समबल नहीं मानन प्रभु की धाक ।

दात निम्बावत दीन हू, चलन घिसावन नाक ॥ १७२—पृ० १७

जो रहीम ओछो बन ता अति ही इतराय ।

प्याइ सा फज्जी भया टडा टडा जाय ॥ ८५—पृ० ८

दुख नर मुनि हामी कर घरत रहीम न धीर ।

कही सुन मुनि मुनि करें, ऐमे वे रघुवीर ॥ ६७—पृ० १०

यहां प्रथम दोहा म धाक मानना, दात दिवाना नाक घिसाना तीनों मुहावरों का प्रयोग है । तीना न हाथी का दंत प्रदान व्यक्त है । साथ ही मूड का नीची करक तथा पृथ्वी का सुघन चलन की हाथी की आश्रय व वान म जहाँ एन धार कवि का आत्मिक कल्पना श्रेणी ना गवती है वही किमा द य विरोध म अन्त ही अनुक्त अथ लगान (इष्टरप्रतिगत) की गति भी प्रगट है । दूसरे दाह म आछा का घटना अथवा इतराना तथा टडा टडा जाना आदि प्रयोग मुहावर ही हैं । धार उनका प्रयोग इतना सरल तथा मठीक हुआ है कि दोहा जन-जन की जिह्वा पर चढ़ गया है । इस प्रकार तीसरे दाह म इसी करना 'धीर न घटना' अति भी प्रसिद्ध मुहावरे ही हैं ।

पूरे छन्द मे मुहावरे ही मुहावरे

ऊपर के दाहा म मुहावरा के एकाधिक प्रयोग व उदाहरण देखे गए हैं किन्तु रहीम के नीति वाच्य म कतिपय दोहे ऐसे भी मिलते हैं जिनम मुहावरा ही मुहावरो का प्रयोग हुआ है। और य प्रयोग भी न विषय सीधे की दृष्टि से अनुचित हैं और न अभियोजना कौशल की दृष्टि से। मजे की बात तो यह है कि सामान्य-पाठन को यह ध्यान भी नहीं आता कि यहा कवि मुहावरे का जादू चला रहा है। उदाहरण लीजिए—

एकहि साधे सब सधे सब साधे सब जाय ।

रहिमन मूलहि सींचिबो फूलहि फलहि अघाय ॥ १८—पृ० ७

पात पात को सींचिबो, बरो बरी मे लौन ।

रहिमन ऐसी बुद्धि को कहो बरगो बोन ॥ ११७—पृ० १७

भार भोंकि के भार मे रहिमन उतरे पार ।

प बूडे मभधार मे जिनके सिर पर भार ॥ १३३—पृ० १३

इन छंदा मे एक का साधना सर का साधना मूल सीचना अघा कर फूलना फलना पात पात का सीचना बरी बरी म नोन दना बुद्धि का बरना भाठ भाकना अदि सभी प्रयोग ता मुहावरे है और सभी स्वाभाविक हैं। कही दूर तक भी यह गध नहीं आती कि कवि न अपने मुहावरेदानी की कलावाजिया स्थाने क लिए मुहावरो का दगल जुटाया है। सभी सहज हैं मभी सरल ह स्वाभाविक और विषय अनुकूल है। इतन अधिक अर्थात् तीन तीन और चार चार मुहावरा का दोह व चार चरण म रस स्वाभाविकता के साथ विनियोग कर देना रहीम को मुहावरे प्रयोग का कुतूहल गिल्पी सिद्ध करता है।

मुहावरो के समकक्ष कुछ नये प्रयोग

रहीम की भाषा म प्रचलित मुहावरा का प्रयोग तो प्रचुर मात्रा म है ही साथ ही ऐसे भी प्रयोग है जिनको मुहावरा की भाँति प्रयोग म लाया जा सकता है। ऐसे प्रयोग म प्राय व सभी गुण है जा मुहावर अथवा लोकोक्ति म होने चाहिए। ऐस मगन प्रयोगो को मग्रह करन पर एक नम्बी मूची तयार हान की सम्भावना है। हम उदाहरणस्वरूप कुछ प्रयोग प्रस्तुत करन हैं—

जागीर खाना—

सब पहाय लसकरी सब लसकर बँह जाय ।

रहिमन सेहू जोइ सहे सोई जगीर खाय ॥ ७५१—पृ० ७५

नवन पट क टन—

नलो भयो घर त छुट्यो हस्यो सीम परिसेत ।

बार बार नवत हम अपन पेट के हेत ॥ १२७—पृ० १३

नौब न घान गद—

निज कर क्रिया रहाम कहि निधि भावो के हाय ।

पाँस अपने हाय म दाँव न अपने हाय ॥ १११—पृ० ११

थोथे बादर क्वार के—

थोथे बादर क्वार के ज्यो रहीम घहरात ।

धनी पुरुष निधन भये, कर पाछिली बात ॥ ६१—पृ० ८

यहा जगीर खाना पुरस्कार प्राप्त करने के अथ म, नवत पेट के हेत, आजीविका के लिए गिडगिडाने के अथ म, दाव न अपने हाथ फन प्राप्ति भाग्याधीन हान के अथ मे तथा थोथे बादर क्वार के—अधजल मगरी छलकत जाय के अथ मे प्रयुक्त हुआ है । मरलता, सक्षिप्तता अथवत्ता तथा विदग्धता आदि गुणा के कारण य प्रयाग मुहावरा के समान ही चल निकलन की शक्ति रखते है ।

मुहावरो मे प्रेरित विषय

लोकाक्तिया मुहावरा तथा उनस मिलत-जुलत प्रयोगो के अनिरिक्त रहीम ने बहुत कुछ दोह मुहावरा की विषय वस्तु से प्रेरित हाकर भी लिखे है । उनम यद्यपि मुहावरे का स्पष्ट प्रयोग नही हुआ किन्तु उनके पीछे का न कोई मुहावरा वाक्य प्रनीत हाता है । सीख वाका दीजिए जाका सीख सुहाय 'अरे के आग रोना' पठ उठना आदि मुहावरा से प्रेरित निम्नलिखित दाह अवलोचनीय है—

अनकीहोँ बातें कर जागत ही रहि सोय ।

ताहि सिखाय जनायिबो रहिमन उचित न होय ॥ ३—पृ० १

जो रहीम पगतरी परो रगरि नाक अरु सोस ।

निठुरा आगे रोइबो, आमु गारिबो खीस ॥ ८१—पृ० ८

सोदा करो सो करि चलो रहिमन याही घाट ।

फिर सोदा पटो नही दूर जान है बाट ॥ २६१—पृ० ५५

कतिपय अ य मुहावरे

ऊपर के विवरण म प्रयुक्त मुहावरा, लोकाक्तिया एव तदानुकूल प्रयाग क अनिरिक्त अथ बहुत से मुहावरा का प्रयोग उनके नीति काय म हुआ है । दास के पठन मात्र से निराशासन प्रभावित करन वाले कतिपय प्रयाग निम्नलिखित हैं ।

इन प्रयाग का दहन म स्पष्ट हा जाता कि रहीम वा मुहावरा । प्रेम सहज । स्वाभाविक या । उ हान अपने भाव, विषय एव वणन तौगल के अनुरूप ही प्रचलित मुहावरा वा प्रचुर प्रयाग किया है । य मुहावरे उनके नाम नान अनुभव । बाहुल्य एव सामाजिक सम्पर्क की दुर्लभ त प्रतीत हात हैं । अनरी लघुता एव उपयुक्तता ने इनके प्रभाव का और भी बढा दिया है । प्रमुख मुहावर के प्रकार हैं—

ताड़ की छाय बग्या¹ बकार का घाट पध्या² मडिबत पदना³ मोरत
 रगता⁴ मिगरी म पमि⁵ काम धारा⁶ पद । डेर म सगता⁷ मडिबर मपुकरा
 ता⁸ घति घति जाता⁹ घाट रार मगना¹⁰ पत्रीरत होता¹¹ पद बकर
 रता¹² कर्मशीर होता¹³ घाट रता¹⁴ पाग धपता¹⁵ डेर डेर कर जाता¹⁶, कमी
 मता¹⁷ घाट पलताता¹⁸ मग रिभता¹⁹ घाटोती होता²⁰ घमरत मगता²¹ क र
 रता²², काम ड घाटा²³ भुग कुमता²⁴ मर कता²⁵ (मागता²⁶ डार पर रता²⁷
 म धामा होता²⁸ मर तार कता²⁹ कडम मुग होता³⁰ गता का रताता³¹
 रप मगता³² पर घाटा³³ मर रता³⁴ रम रता³⁵ रि, न रान³⁶ रार र
 ता³⁷ हृय म भीर बगता³⁸ बगकर कता³⁹ मुग ररम रता⁴⁰ रम
 रता⁴¹ मर का शय म रता⁴² ररि का घाट शय रता⁴³ रिपना म रि
 ना⁴⁴ गी पार रता⁴⁵ पार पारता⁴⁶ रुरि र पता⁴⁷ पदपार भयता⁴⁸ रार
 रता⁴⁹ मिपना कल मरता⁵⁰ मर मगता⁵¹ नरा म बगता⁵² पार मगता
 ता⁵³ पदपार रता⁵⁴ ररा रर होना⁵⁵ मग रर मार रता⁵⁶ रार रि
 ना⁵⁷ मर पता⁵⁸ ना रर र ररा का रता⁵⁹ रर रर रता⁶⁰ भीर
 रता⁶¹ मर का रिता⁶² डीर ररता⁶³ प्राणा का वाता रगता⁶⁴ रगता होता⁶⁵
 घमरत पर मा जाना⁶⁶ घति परता⁶⁷ गहरी ररि रता⁶⁸ कारिण रता⁶⁹ रार
 रानना डीठ रिगता⁷⁰ पर रगता⁷¹ पाठ रिगता⁷² जे रगता⁷³ रार रता
 ररर परा म वडी पडता⁷⁴ घाटि की रिगती होता⁷⁵ मर लगता⁷⁶ पाधर म
 रनना⁷⁷ क ररना⁷⁸ जे रता⁷⁹ छार हा जाता⁸⁰ हाय का (म) जाना⁸¹ घन
 राय हाना⁸² घाट (घोर) की घान (घोर) हा जाना⁸³ घाटा याम कथ का रगता
 रगता⁸⁴ काम घरता⁸⁵ रर ही डीर हाना⁸⁶ हृयानि रत्यानि ।

मुहावरे सम्बन्धी निष्पद्य

निष्पद्य यह है कि रहीम ने अपने काव्य में मुहावरे का प्रचुर प्रयोग किया है। उनमें अधिसंख्य मुहावरें अरब भाषा में लिखी गयी हैं। कहा-कहा का एक ही दोहरा में एक से अधिक अर्थात् दो-तीन यहाँ तक कि चार-चार मुहावरे का भी प्रयोग हुआ है। किन्तु ये प्रयोग अपने सच्चे अर्थों में मुहावरे ही हैं मुहावरे की

- १ स ८७ तर रहीम रत्नावली बोहा सख्या (क्रमण) २ ४ ६ ७ ८ १३ १४,
 १७ १९ २१ २४ २५ २६ २८ २९, ३० ३१ ३२ ३३ ३४, ३५ ३६
 ३७, ३९ ४० ४२ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५१ ५३, ५४, ५८ ६१ ६३,
 ६७ ६९ ७१ ७९ ८२ ८३ ८५ ८७ ८८ ९० ९१ ९२ ९३ ९४,
 १२० १२२, १२३ १२५ १२९ १३२ १३३ १३४ १३७ १३८ १४०
 १४४ १४२ १४५ १४९ १६०, १६३ १६८ १७२ १७३ १७५ १७८
 २०७ २०९, २१२ २१४ २१७ २२२ २२३ २३१, २३६ २३७ २४४,
 २४९, २५० २५६ ।

गुणमय नहीं। लोकाविति की सख्या मुहावरो से कम हैं। मुहावरे अथवा लोकोक्तिया जा भी हैं सरल, सहज, स्वाभाविक और विषयानुकूल हैं। एक भी भारी भरकम मुहावरा अथवा लोकोक्ति उनके काव्य में खोज निकालना कठिन है। उनकी सरल स्वाभाविक भाषा में छोटे छोटे मुहावरा के प्रचुर प्रयोग न चार चाद लगा दिये हैं। वस्तुतः सरल, मुहावरेदार और चुभती हुई भाषा लिखने में रहोम बजोड़ हैं। वे सादा बयानी के उम्ताद तथा सहज सुलभ सरस काव्यात्मक अभिव्यक्ति के आदर हैं।

गुण और उसकी परम्परागत परिभाषा

गुण सामान्य जन जीवन का परिचित शब्द है कि तु काव्य शास्त्र में लोकाविति का सामान्य अर्थ में सम्बद्ध रहता हुआ भी अपना विशिष्ट अर्थ रखता है। काव्य शास्त्र में गुण विवक्षित भरत में ही आरम्भ हुआ था। उद्धान गुणा का अभावक तत्त्व अर्थात् दापा का विषय माना था—गुण विषयाद् एषाम् माधुर्योत्पलभणा । डा० नगद के निष्पन्न के अनुसार भरतमुनि के मत में यह वपरीय सामान्य है, विशिष्ट नहीं।^१ इसके पदचान काव्य शास्त्र की लम्बी परम्परा में गुण की मध्यक परिभाषा मधुप्रथम आचार्य वामन ने दी थी। इनमें पूर्व आचार्य दण्डी ने गुण का भागोभा विधायक हान के कारण एक प्रकार से अलकार रूप ही मान लिया था।^२ किन्तु वामनाचार्य ने इस धर्म का निराकरण किया और बताया कि शब्द और अर्थ के वेधम जो काव्य का गोभा सम्पन्न करते हैं गुण कहलाते हैं। वे आज प्रसाद आदि हैं—यमक उपमा आदि नहीं क्योंकि ये अकेले काव्य गोभा उत्पन्न नहीं कर सकते। इसके विपरीत आज प्रसादादि अकेले ही काव्य का गोभा सम्पन्न कर सकते हैं। वे नियत हैं उनके बिना काव्य में शोभा नहीं आ पाती।^३ निष्पन्न यह है कि वामन ने काव्य शास्त्र में प्रथम बार अत्यन्त निभात शब्दों में गुणा की स्थापना की और उह काव्य के (नित्य) शोभा वारक धर्म धापित किया—काव्य शोभाया क्तागोधमा गुणा । ध्वनि वार ने इस स्थापना को थोड़ा माट देकर गुणा का अर्थ नहीं अग मानकर अगो अथवा दमक आश्रित धर्म बताया—रमथमवलम्बत यन्निर्गतं तं गुणा स्मृता ॥ इनी माधता को स्वीकार करत हुए आचार्य मम्मट ने लक्षण को और स्पष्ट करत हुए आत्मा ने गौर्यादि (गुणा) की भांति रस के उत्कपकारी अचल स्थित धर्म का गुण धताकर परिभाषित किया है—

य रसस्यागिनो धर्मा गौर्यादिव इवात्मन ।

उत्कपहेतव ते स्यु अचलस्थितया गुणा ॥—का०प्र० ८ ६६

१ भारतीय काव्य शास्त्र की सूचिका (भाग २) पृ० ५०

२ गोभाकरत्व हि अलकार लक्षण, तल्लक्षणयोगात् तैजवि (रत्नपात्र्या दगुणा धवि) अलकार—धही पृ० ५८

३ काव्यालकार सूत्र ३ १

रहीम और माधुर्य

माधुर्य का अर्थ है मधुरता । भरतमुनि के लिए माधुर्य का अर्थ श्रुति मधुरता था ।^१ गुण के वास्तविक प्रतिस्थायक आचार्य वामन ने माधुर्य का शब्द के रूप में समास-साहित्य तथा अर्थ के रूप में उक्ति वैचित्र्य से सम्बद्ध किया है ।^२ भामह का लक्षण भी यही है—अथ नातिसमस्तार्थ काय मधुरमिष्यते ।^३ मम्मट ने काव्य प्रकाश के आठवें समुल्लास में आह्लादकता तथा चित्त की द्रुति का कारण मानकर माधुर्य का विशेष सम्बन्ध शृंगार से स्थापित किया है और करण, विप्रलम्भ तथा गान्त में तो उस अतिशय चमत्कारोत्पादक माना है—

आह्लादकत्व माधुर्य शृङ्गारे द्रुतिवारणम् । मूत्र ८६
करुणे विप्रलम्भे तच्छान्ते चातिशयावितम् ॥ मूत्र ९०

माधुर्य का इन्ही रसा में प्रयोगीचित्य आचार्य विश्वनाथ को भी भाग्य है । चित्त की द्रुति तथा आह्लाद भी उन्हें स्वीकार है—चित्त द्रवी भावमयोह्लादो माधुर्यमुच्यते ॥ उहान माधुर्य-बीजल पर भी विचार किया है और बताया है कि माधुर्य में ट वग का छाडकर क से म तक तथा मूष य और अत्य वर्णों का प्रयोग ही विहित है ।^४ अन दास जी ने अटवग की सना दी है—

अनुस्वार औ वग युत सब बरन अटवग ।

अच्छर जामे मडु परें तो माधुर्य निसग ॥ का०नि०, उल्लास १६

कहन का तात्पर्य यह है कि रेफ (अर्द्ध स्वार) समास सयुक्तान्तर तथा ट वग से रहित तथा अनुस्वार एवं मृदु वर्णों से युक्त गान्धर्वली के प्रयोग में माधुर्य गुण रहता है । यह शृंगार कम्प तथा शांत रस के लिए विशेषतः उपयुक्त है ।

रहीम के काव्य के सम्बन्ध में पहल ही निवेदन किया जा चुका है कि समस्त असमस्तता उनकी काव्य शैली तथा शब्द-संगठन की प्रथम विशेषता है । सच पूछिए तो रहीम दीर्घ समासों के दुश्मन हैं । जहाँ तक ट वग तथा सयुक्तान्तरो का सम्बन्ध है वह भी उनके काव्य में नाम मात्र को ही प्रयुक्त हुआ है । घटत घटत अति सीम 'वठि ताड की छाँह तथा मडए तर की गाठ जसी ट वगयुक्त शब्दावली का प्रयोग प्रयास करन पर ही कहीं कहीं देवर्न का मिलता है—कहूँ कहूँ वृष्टि गारदी थोरी ॥ दोहावनी के पीने तीन सौ गह्रा में से पीने तीस दोह भी ट वग बहुला गान्धर्वली से सयुक्त नहीं मिलेंगे । जिन दाहा में ट वग का प्रयोग हुआ है वहा और भी अर्थ वर्णों के साथ ट ठ ड आदि का प्रयोग मध्यमान् (औसत) १३० से अधिक नहीं होगा । कहन का तात्पर्य यह है कि रहीम के काव्य में ट वग बहुला गान्धर्वली का प्रयोग प्रायः नाममात्र का ही है । कहीं-कहीं तो यह प्रयोग कुछ ऐसे कौशल एवं

१ नाटयशास्त्र पृ० १८ १०१

२ काव्यालंकार सूत्रवृत्ति १२१ तथा ३-११

३ वामन काव्यालंकार पृ० २३

४ साहित्य दपण ८ १, ३

चमत्कार से हुआ है कि वे अपनी स्वाभाविक वण बटुना छोड़कर प्रीति और मिठास उत्पन्न करते प्रतीत होते हैं। निम्नलिखित दोहा में 'बकुष्ठ', उमेठे' तथा 'मीठ आदि शब्द हमारे कथन की पुष्टि करेंगे—

बाह करौ बकुष्ठ ल कल्पवृक्ष की छाह ।

रहिमन ढाक सुहावनो जो गल प्रीतम बाह ॥ ३८—पृ० ८

कुटिलन सङ्ग रहीम कहि साधू बचते नाहि ।

ज्यो नना सना कर उरज उमेठे जाहि ॥ ४०—पृ० ४

नन सलीने अघर मधु, कहि रहीम घटि कौन ।

मीठो भाव लौन प अरु मीठे प लौन ॥ ११२—पृ० ११

य दाहे अपने माधुय के लिए रसिक समाज में अत्यन्त प्रसिद्ध रह है। कविरत्न नवनीत चतुर्वेदी ने अपने रहिमान गतक में इन पर सुन्दर कुण्डलिया भी प्रकाशित की थी।^१ गद्य प्रयोग के अतिरिक्त रस की दृष्टि से भी रहीम का वाक्य गान्त तथा शृंगार से विशेषतः सम्बद्ध है। अतः रसोचित्य के कारण भी उनके वाक्य का गुण माधुय ही उद्भूत है। इतना होते हुए भी रहीम ने विहारि आन्ति की भाँति माधुय के सभी लक्षणों को पूरा करन मधु वर्णों का ठूसने और ट मार को जानबूझकर बहिष्कृत करन का प्रयास नहीं किया है।^२ यही कारण है कि उनके मधुरतम दाहा में भी आवश्यकतानुसार ट ठ ड आन्ति का थोड़ा बहुत प्रयोग देखन को मिल ही जाता है—

वे रहीम नर धय हैं, पर उपकारी अग ।

बाँटनवारे क सग ज्यो मेहदी को रग ॥ २४८—पृ० २४

रहिमन मन तुरग चडि, चलिवो पावक माहि ।

प्रेम पय ऐसी कठिन सब कोउ निबहत नाहि ॥ २१७—पृ० २

यहाँ रहीम यदि बरबस माधुय लान क फेर में हान तो बाँटनवारे के स्थान पर पीसनवार तथा चडि' और कठिन क स्थान पर भी अग गद्य रख सकत थे। किन्तु

१ (क) उरज उमेठे जाहि तुच्छ परसग न बीज ।

रावण हित मारीच भरण निच करि लोज ।

नीति नित्य परिहरी विगुनता अग सुन्ति कौ ।

जज सौ पार बसाय, सग बीज न कुटिल कौ ॥ ३२ ॥

—रहिमन गतक (मथुरा सं० १६८१) पृ० १२

(ख) मीठे हूँ पर सौन सलीने पर ज्यों मीठी ।

बिन मीठे पर सौन सौन बिन मीठी सीठी ॥

कहे 'नीति कविराज काग बोउन सौं हौन ।

कहु रहीम घट कौन अघर मधु नन सलीन ॥ २३ ॥ —वही पृ० ३२

२ अजन रजन हूँ बिना सजन भजन नन ।—बिहारी

उनकी सरस्वती धारा ता निरायास प्रवाहित होती थी। उसमें आयास तथा कृत्रिमता के लिए कोई स्थान न था। ग दाहा की सहज मधुर काव्य विदग्धता का आस्वाद सीजिए—

मनसिजम माली की उपज कहि रहीम नहि जाय ।

फल स्यामा के उर लगे फूल स्याम उर आय ॥ १३६—पृ० १४

प्रीतम छवि ननन बसी, पर छवि कहा समाय ।

भरी सराय रहीम लखि आप पथिक फिरि जाय ॥ ११६—पृ० १०

श्लो ज गुण और रहीम

जिस प्रकार माधुय का सम्बन्ध चित्त की द्रुति से है, उसी प्रकार आज का सम्बन्ध चित्त की दीप्ति से है। श्लोज वही हाता है जहा पर चित्त प्रदीप्त हो। यही कारण है कि दमकी स्थिति बीर रम बीभत्स रस तथा रौद्र रम में अधिक मानी जाती है।^१ श्लो सघटना की दृष्टि से यह माधुय के विपरीत है। आज गुण में ट ठ ड ढ श प आदि का प्रयोग और लीघ ममासा तथा क्लिष्ट सगुक्ताक्षरा का प्रयोग जाना है।^२

जसा कि माधुय के प्रस्ता से स्पष्ट है कि रहीम के नीति-काव्य में उक्त शली का प्रयोग नहीं के बराबर है। अतः स्पष्ट ही रहीम के काव्य में आज का अभाव है। बस यह रहीम जैसे बीर मनापति तथा आनस्वी व्यक्ति के स्वभाव के विपरीत है। रहीम न बीर रसात्मक कुछ काव्य लिखना अवश्य होगा परन्तु आज यह कथन कारी

१ दाना दोहा पर प० नवनीत चतुर्वेदा की कुण्डलिया—

(क) मनसिज माली की उपज कहि रहीम ना जाय ।

फूल स्याम के उर लगे फल स्यामा उर आय ।

फल स्यामा उर आय लगत मोरे मदकारे ।

स्यामा हृदय अति फूल होति लख आनन्द भारे ॥

कहि नवनीत विचित्र वाटिका विधि स्याली की ।

रहिमन उपज अनूप यहै मनसिज माली की ॥

—रहिमन गनक पृ० १०

(ख) प्रीतम छवि ननन बसी पर छवि कहा समाय ।

भरी सराय रहीम लखि आप पथिक फिरि जाय ।

आप पथिक फिरि जाय यहाँ प जग न कोई ।

त्योही चलनि चकोर चन्द तजि तकें न कोई ।

प्रिय नवनीत अनूप रूप की रासि रही पवि ।

इन ननन में बसी लगे यह प्रीतम की छवि ॥—रहिमन गनक, पृ० १०

२ दीपयात्मविरसुतेहेतुराजो बीररस्थिति ॥ मूत्र ६१

बीभत्सरोद्ररसपोस्तस्पादिशय जनेण च ॥ मूत्र ६०

—काव्य इकाण अष्टम् समुत्तास

कल्पना ही कहा जायगा। समुद्र प्रायः वायु व आकाश पर निर्भर नहीं करता है कि रहीम में मात्र गण का अभाव है। एक ही उदाहरण अर्थात् स्थूल रूप का अभाव है जग

घट न घोंद रहीम बहि इति सविस्तर पाल ।

हस्तोऽक्षरा कुस्त्रिंशत् सहे त तद्वर धान ॥ २० गृ० ३

घर रहती रहगो घरम गणत्रासी नरमाण ।

अमर बिसभर ऊपर रागा महघो राण ॥ १०—गृ० ३८

एन दाना नाम की गली अर्थात् मात्रगुण है किन्तु प्रथम मात्र व बहुत अल्प नही बटता। सच बात तो यह है कि एक ही कल्पना पर जहाँ मात्र की गुंजायती थी वहाँ भी रहीम ने उमरा उपाय नही किया। वरुण गुण की गुंजायती प्रथम उपाय ही था। यथा स्थिति निम्नलिखित श्लोक का है—

भसो भयो घर से इत्यो हस्यो सोम परि संत ।

बाह बाये नयत हम अयन पेठ व हेत ॥ १२०—गृ० १२

अन स्पष्ट है कि एम मात्रगुण योद्धा की वायुवृत्तिया का अभाव की दृष्टि में अल्पवन वरुण पर प्रायः निराग ही जाना प्यगा। अज्ञानि एमका कारण यह भी है कि रहीम शृंगार और गान रम व कवि है बीर रोगानि व नही।

प्रसाद गुण और रहीम

प्रसाद व्याप्ति का गुण है। एमका विस्तार प्रायः सभी रसा में रहता है। वस प्रसाद का गान्धर्व अर्थ है प्रसन्नता। किन्तु गुण व सादभ में एमका अभिप्राय आरम्भ से ही सरलता में सम्बद्ध है। अर्थात् अर्थ भरण न स्व छटा सरलता तथा सहज ग्राह्यता का प्रसाद गुण कहा था।^१ अर्थात् अर्थ भरण न दा विरोधी तत्त्व अग्नि और जल का उदाहरण दूर प्रसाद की व्याख्या की है—

गुप्ते धनाग्निवत् स्वच्छजलवत्सहस्य य ॥

व्याप्तोऽयं यत् प्रसादोऽसौ सवत्र विहितरिचति ॥ सूत्र ६८

अर्थात् सूते धन में अग्नि के समान अथवा स्वच्छ (धूल हुए वस्त्र में) जल व समान जो चित्त में सहसा व्याप्त हो जाता है, वह सवत्र (सब रसा में) रहने वाला गुण प्रसाद कहनाता है। हिन्दी टीकाकार अर्थात् वि वे वर के अनुसार— यहाँ अग्नि और जल का उदाहरण अर्थ का अभिप्राय यह है कि जब बीर रौद्र आदि उग्र रसा में प्रसाद गुण हाता है तब वह गुप्ते धन में अग्नि व समान चित्त में व्याप्त होता है और जब शृंगार-कर्मण आदि वामल रसा में होता है तब स्वच्छ वस्त्र में जल व समान चित्त में व्याप्त हाता है।^२ कहने का तात्पर्य है कि प्रसाद की व्याप्ति कोमल-कठोर सभी परिस्थितियों में है।

१ नाट्यशास्त्र १७ ६८

२ काश्य प्रकाश—सम्पा० डा० नगद्व पृ० २६०

रहीम का समग्र काव्य प्रायः प्रमाद गुण का काव्य है—सरन, स्वच्छ और सबग्राह्य । न काश की आवश्यकता है और न मदम ग्रन्थों की । यदि प्रमाद गुण का आदश बताना हो तो रहीम के काव्य का पूरी निर्भक्ता व साथ प्रस्तुत किया जा सकता है । प्रमाद की ही परिचायिका के कारण पाठक को प्रारम्भिक कथाया में रहीम के दोहा से परिचय प्राप्त कर लेता है और जम भर उह दाहराना गाता एव गुणगुनाता रहता है । प्रसाद के हों कारण रहीम काव्य की पहुँच अपठ जनसमाज तक में है । तात्पर्य यह है कि सुधी समालोचना एव प्राध्यापना न लेकर अनपठ ग्रामीणों एव कामल मति बालकों तक पुस्तकों से लेकर हृदय तक महना से लेकर भोपडिया तक तथा काव्य गोठिया से लेकर खेत खनिहाना तक रहीम के काव्य की जो पहुँच है उनका अग्र प्रमुख कारण म स एक प्रसाद गुण पूणता भी है । नीति अंगार, वैराग्य तथा भक्ति किमी भी विषय व दाह को उठा नीति ए उसकी अजली प्रमाद के प्रमाद न आपरित मिनगी । उदाहरण के लिए, कुछ अपजाना को छोटा कर को भी छुड़ दिया जा सकता जमे—

रहिमन विषवा हू भलो, जो थोरे दिन होय ।

हित अनहित या जपत मे जान परत सब कोय ॥ २३ —पृ० २३

रहिमन तीन प्रकार तें हित अनहित पहिचानि ।

पर बस परे परीस बस परे मामिला जानि ॥ १८१—पृ० १६

निष्पत्त यह है कि रहीम के नीति काव्य म आज का अभाव माधुय की पर्याप्त विद्यमानता तथा प्रसाद का मक्त्र प्रभाव है ।

रहीम के नीति काव्य में वृत्ति एव रीति

वृत्ति एव रीति विवचन का य शास्त्र का एक प्रमुख अंग रहा है । वस्तुतः वृत्ति भिन्नाथक गान है जो स्वभाव आचरण, जीविका चक्रर (मूत्र एव प्रयाति की) व्याख्या तथा रचना गली आदि अनक अर्थों म प्रयुक्त होता है । काव्य गान्त्र म इसका विषय सम्बन्ध अन्तिम अर्थात् रचना गली स है । प्रायः यही अर्थ रीति का भा है । रीति-सम्प्रदाय के प्रतिस्थापन आचार्य वामन न तो रीति की परिभाषा ही 'विनिष्ठापन' रचना रीति कह कर दी है । इमोत्रिए रीति और वृत्ति को सामान्यतया एव ही माना जाना रहा है । आचार्य वामन वृत्ति या रीति का अर्थ मानत थे । प्रसिद्ध शिन्ने प्र य रस रहस्य के रचयिता बुनपति न रीति और वृत्ति का पर्याय के रूप म स्वीकार किया है । उह अंग पूर्वार्थाओं का सम्बन्ध भी प्राप्त है । मम्मट न काव्य प्रमाण के नवम समुल्लास म दोनों का एक ही घोषित किया है—'एतास्मिन्था वृत्तय वामनानीना मत यदर्भोगोही पाञ्चाल्यास्या रीतयो मता । मम्मट न तो वृत्ति और रीति का नाम भेद करन का गतानुगतिवा अथवा भेदधमान तक कह दिया था ।' यद्यपि वृत्ति और रीति का अन्तर अन्तः तपु म सपुनर होता हुआ आज समाप्तप्राय न गया है किन्तु

दोना म सूक्ष्म अन्तर अवश्य था। वृत्ति का सम्बन्ध मनाङ्गास अधिक था और रीति का विन्यास अथवा वणमघटनास। और चक्रिय दोनों ही तत्त्व गुण विवचन के आधार हैं। अतः वृत्ति और रीति की व्याख्या प्रायः गुणा के पदचात् ही हुई है। दबने परम्परास हटकर रीति और गुण का वणन एव ही रूप म विन्यास है। वस्तुतः गुणास आधार पर ही वृत्तियास एव रीतियास का विभाजन किया गया प्रतीत होता है जा अपन मूल म रस से सम्बद्ध हैं। आनन्दवधनाचाय न स्पष्ट ही कह दिया है—

रसाद्यनुगत्वेन व्यवहारोऽय गन्दयो ।

श्रीचित्यवान यस्ता एता वस्तयो द्विविधा (प्रिविधा) स्मृता ॥

—ध्वयालोक

अतः जा उदाहरण माधुय आज तथा प्रसाद के ह व ही वृत्तित्रय अथात् मधुरा (उपना गरिका) परपा और कोमला के भी हैं। नम रहीम का काव्य भी अपवाद नहीं है। अतः जसा कि उनका गुण विवचनस स्पष्ट है कि उनका काव्य म माधुय एव प्रसाद गुण अथवा मधुरा तथा कामला वृत्तियास की और विन्यासतया नामला वृत्ति की ही प्रधानता है।

या ता य ही उदाहरण रीतित्रय अथात् वदर्भी गौडी तथा पाचाली का भी है किन्तु फिर भी इह समास सकुलता का आधार पर वर्गीकृत माना जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि वदर्भी रानि का अर्थ है समास रहित गन्दावली गौडी का अर्थ है समास युक्त श्यावली और पाचाली का अर्थ है वही समस्त वही असमस्त गन्दावली। यद्यपि खोजने पर उदाहरण तीना ही रानियास का प्राप्त हो सकते हैं किन्तु रहीम का काव्य प्रधानतः वदर्भी अथात् समास रहित रीति का ही काव्य है जिसे आचार्यों न एक स्वरस सर्वोत्तम धापित किया है।^१ रहीम के काव्यस हम उसका मनमाने उदाहरण एकत्रिन कर सकते हैं—

रहिमन मनहि लगाय के देखि लउ किन कोय ।

नर को बसि करिबो कहा नारायण बसि होय ॥ २१८—पृ० १

यह न रहीम सराहिए देन लन की प्रीत ।

प्रानन बाजी राखिए हार होय का जीत ॥ ११८—पृ० ११

१ काव्यालकार सत्र वृत्ति १ ७ ११ साहित्य वणन ६

७ (क) नारायण बसि होय दीप की एक ललाव ।

भक्ति भाव दढ कर वही तमयता पाव ॥

कहै नीति कवि प्रीति सहित बारी तन मन धा ।

चातक ज्यों सौ लाय स्वातघन देखी रहिमन ॥ रहिमन गतक पृ० २८

(ख) हारि होय का जीत प्रीति परतीत नसाव ।

पहल देय उधार केरि मागन को आव ॥

कहै नीति रस राति नसावन जान लहु धन ।

लनवेन की बात मित्र सों कर न रहिमन ॥ रहिमन गतक पृ० १५

रहीम के नीति काव्य में दोष

मम्मटाचार्य ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'काव्य प्रदाय' के प्रथम सूत्र में काव्य का वर्णन देते हुए उक्त 'अदायी अर्थान् दाप रहित रचना माना है—तदापी गदायो सगुणावनलकृति पुन यदापि ॥ मम्मट से भी पूव भोजराज ने अपने काव्य-लक्षण में पहला गण 'निर्गोप रसा धा ।' केवल मिथ द्वारा उद्धृत किसी अन्य विद्वान ने निर्गोपना का ही सबसे बड़ा गुण माना है ।^१ माप का भी कुछ ऐसा ही क्या है—अपत्यापव विगुणस्य गुण ॥^२ पर तु सोचना यह है कि क्या वाक् रचना पूण रूपण 'अदायी हो सकती है ? मनुष्य की रचना तो क्या पूण परात्पर परमत्रह्य की मृष्टि में भी गदा की कभी नहीं है ।^३ कदाचित् शमीलिन आचार्य विश्वनाथ तथा पण्डितराज जगन्नाथ ने मम्मट के अदायी आदि की बुरी तरह से विचार की है । उक्तान उत्तम धनि काव्य के उदाहरण—'यमनारा ह्यमव म यदरय इत्यादि में भी विशेषाविमश दाप विद्यमान माना है । विश्वनाथ ही क्या आज भी विद्वान, ध्यान से लखन पर अच्छे से अच्छे काव्य में दापोद्भावना कर लेते हैं । बरुचन जी क मस्त होकर गान समय उनकी निम्नलिखित पंक्ति पर सभी रस विभार हाकर भूम उठते हैं । परन्तु ग० त्रिगुणायन ने अपने ग्रंथ के दोष वर्णन प्रसंग में इस पंक्ति में भी परिपथ सागपरिग्रह नामक रस-गोप गिनाया है ।^४ पंक्ति यह है—

इस पार प्रिये ! मधु है तुम हो

उम पार न जाने क्या होगा ?

अन स्पष्ट है कि कि बाल्मीकि हा अथवा कालिदास भारवि हा या भट्टि करलासी हा या हाफिज, गक्सपीयर हा या मिल्टन गूर हा या तुजसी ममी की रचानाओं में दाप न और रहीम भी उस नियम के अपवाद नहीं ।

शब्द दोष और रहीम

काव्य में गण का महत्त्व स्वतः सिद्ध है । गण ही वह साधन है जिस पर चत्वर अथ चमत्कार तथा आनन्द हम तक पहुँचते हैं । जहाँ काव्यान्वय में प्रतिराध

१ निर्दोष गुणवत् काव्य अलंकाररत्नकृतम् ।

रसवित् कवि कुचन कीर्ति प्रीति च विदति ॥ —सरस्वती कण्ठा १/२

२ दोष सवात्मना त्याग्यो रसहानिकरो हि स ।

अयो गुणोऽस्तु मा यास्तु महान निर्दोषता गुण ॥

—भारतीय साहित्य शास्त्र—प्रथम खण्ड उलदव उपाध्याय (द्वि० सं०)
पृ० ८२० पर उद्धृत

३ माप ६/१०

४ जाने फुरिसन कीट का कुसम में कोई नहीं काम था ।

काटे से कमनीय कज कृति में क्या है न कोई कमी ॥ —प्रियप्रवास ८ २०

५ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धांत—प्रथम भाग

—ग० गाविः त्रिगुणायन (प्र० सं०) ११०

विलम्बन अथवा विधान उत्पन्न है। वहाँ शब्द दाप माना जाता है। श्रुतिमत्त्व च्युत सस्कृति निरपेक्षता, 'पूनपन्त्व, अधिकपदत्व आदि अनन्यता का वाक्य नाम्प्र म गिनाए गए हैं—

१ श्रुति कटुत्व

वाक्य का प्रीतिकर हाना निश्चित ही उपयोगी है। इनके विरुद्ध तत्र नाम्य म शब्द प्रयोग अनावश्यक रूप से कण कटुता उत्पन्न करने वाला होता है तथा श्रुति कटुत्व दाप ही जाता है।

अड न बौड रहीम कहि देति सच्चिक्कन पान ।

हस्ती डक्का पुल्हडिन सहेँ ते तरधर आन ॥ ७ —प० ३

यहाँ 'कार' के अनावश्यक प्रयोग को सरलता से हटाया जा सकता था। उसकी अति शयता से 'यथ' ही कान फाड़ने वाली उच्च ध्वनि की भरमार है। अतः यहाँ श्रुति कटुत्व दाप है।

२ ग्राम्यत्व

ग्राम्यत्व का सम्बन्ध अपठ अशिक्षित तथा गवारा की बोली से है। असस्कृत गवारा शब्दों का साहित्यिक रचनाओं में प्रयोग ग्राम्यत्व दाप उत्पन्न करता है। रहीम की रचना में कहीं-कहीं एक-दो प्रयोग ऐसे भी दीख पड़ते हैं जिनमें ग्राम्यत्व है।

निम्नलिखित पंक्तियाँ में अररानी तथा भीत शब्दों का प्रयोग भी कुछ कुछ ऐसा ही है—

भीत गिरी पालान की अररानी वहि ठाम । १३६—पृ० १४

रहिमन जाके बाप को पानी पियत न कोय ॥ १८४—पृ० १८

छेद में डडा डाल के चहै नाद ल लेंड ॥ १७६—पृ० १८

३ असमयता

प्रसंगानुकूल शब्दों के प्रयुक्त न हान पर असमयता लोप होता है। इस दाप वाले शब्द में इतनी क्षमता नहीं होती कि वह अर्थ की आवश्यकता की पूर्ति कर सके। निम्नलिखित शब्दों में प्रयुक्त कूर (कूर) शब्द गण साहित्य अथवा योग्यता के अभाव का अर्थ प्रदान नहीं करता। अतः यहाँ असमयता दोष आ गया है—

करत निपुनई पुन बिना रहिमन निपुन हजूर ।

मानहुं देरत विटप चि मोहि समान को कूर ॥ २५—पृ० ३

इसी प्रकार उत्साह भी उत्पत्ति का अर्थ नहीं असमय है—

रहिमन अपने गोत को सब चहत उत्साह ॥ १६१—पृ० ६

४ च्युत सस्कृति

व्याकरण के सस्कार से च्युत शब्दों के प्रयोगों में च्युत सस्कृति दाप होता है। मीथ शब्दों में च्युत सस्कृति दाप का अर्थ है व्याकरणिक अशुद्धि। यह दाप लिंग वचन संधि आदि कई प्रकार का हो सकता है—

मवनाम विपत कसौटी ज कसे, सो ही साचे भीत ॥
 वचन यह रहीम निग सग ले, जनमत जगत न कोय ।
 वर प्रीत अम्पास जस, होत होत ही होय ॥ ११३--पृ० ११
 यहाँ प्रयुक्त एक वचन सा ही गण म च्युत सस्कृति है क्याकि इस जे के कारण बहू
 वचन अर्थान् त होना चाहिए था । उसी प्रकार वर, प्रीति अम्पास तथा यग आदि
 बहूत स तत्वा के लिए एक वचन 'यह भी अगुड है ।

५ अग्रयुक्तत्व

व्याकरणसिद्ध परन्तु अप्रचलित गण का प्रयोग अप्रयुक्तत्व दाप है । अन्य
 भाषाभाषा के अप्रचलित गण प्रयोग म उत्पन्न दाप भी अप्रयुक्तत्व क अन्तगत आना
 चाहिए । इसे अप्रचलित भी कहत हैं । रहीम के काव्य म सबप्रचलित गण का ही
 प्रयोग है किन्तु कही-कही अपवाद स्वरूप एक गण अप्रचलित गण भी दान म आत
 हैं । गय (सम्पत्ति के अर्थ म) तथा अजीम (अजीमुन्गान = महान) आदि अप्रचलित
 गण क प्रयोग म निम्नलिखित दाहा म यह शेष आ गया ह —

रहिमन जग जीवन बडे काटु न देखे मन ।

जाय दसानन अछत ही कपि लाग गय लेन ॥ १८ — पृ० १८

भावी या उनमान की पाडव बनहि रहीम ।

तदपि गौरि सुनि बरिभू हैं बरु हैं सभ अजीम ॥ ११५—पृ० १८

६ प्रतिकूलवणता

रम भावादि क प्रतिकूल वर्णों क प्रयोग से प्रतिकूलवणता दाप आ जाना है ।
 अगार के लिए कोमल तथा वीर के लिए कठार वर्णों का प्रयोग जाना चाहिए किन्तु
 जब इस नियम क विपरीत वण प्रयुक्त हो जात है तो उनम यह दाप स्वाभाविक ही
 है । अघर तथा नेत्रा के सौन्दर्य वणन के प्रसंग म रहीम न मृदु मधुर आदि का प्रयोग
 न करक 'मीठे का प्रयोग किया है । यहा ट ठ के प्रयोग ने प्रतिकूलवणता आ
 गई है—

नन सलीने अघर मृदु कहि रहीम घटि कौन ।

मीठी भाव लीन प अरु मीठे प लीन ॥ ११०—पृ० ११

अथ दाप और रहीम

अथ वभव म सम्बन्धित दोषा का अग्र-दाप कहा जाना ह । भरतमुनि ने
 अररम्भ म सुनाय भिन्नाय एकाय तथा अभिस्तुतायादि जा दम दाप गिनाए थे उनम
 से अथ शेष के रूप म पृथक्कन वर्गीकृत न हात अग भी अधिनाग दाप अथ सम्बन्धी
 थे । अनुताधिकता क बीच शौलायमान हाती हइ यह सभ्या कुन मिताकर मम्मट के
 काल तक सर्वस हा गई थी । नाम जी ने उनी का आधार बनाकर, अपन
 काव्य नियम के तदसर्वे समुदास क अग्रनिमित्त छापय म बाईम दापा का

उत्तरग गिया है-

अणुष्टाय कष्टाय व्याहृतत पुनरुक्तो जित ।
 बुद्धम प्राप्य सन्धि अवर निरहत अन्धोदृग ॥
 तियम अनियम प्रयत्त विमोम समान प्रवसि कति ।
 साक्षांक्षा पर अन्तुक्त सविधि अन्तुदाव अन्तुवाहि ॥
 जो विरुद्ध प्रगिद्ध प्रशानतन सत्वर भिन्ना अस्तमान पुनि ।
 है स्वयत पुन स्थोदृत-सहित अथ बोध साईम पुनि ॥

१ अणुष्टाय

जहाँ गान् विनाय की उपस्थिति से अथ की पुनरा अणुष्टाय का अन्त
 पर अथान् अन्तरी उपस्थिति अथ की महान मसाधन त हाता हा अथ अन्तस्थिति
 म काई बाधा उपस्थित त हाती हा वही अणुष्टाय था हाता है ।

रहिमन कुटिल कुटार ज्यों कर डारत ड टूक ।

चतुरा क पसावत रह समय घूब को हूक ॥ १७६--७० १७

यहाँ कुटार का निगपण कुटिल व्यव है । अथ हात त हात म अथकुटिल म का
 बाधा आती नहा । अन्त यहाँ अणुष्टाय था है ।

२ कष्टाय

अथ क नात की कठिनता म अणुष्टाय था हाता है । एम ए त म अथ
 क निजालन क लिए माथापच्ची करनी पन्ती है । रहीम क दाहा म प्रमापणता
 हात क कारण यह दाप अणुष्टाय स्वरूप ही मितता है । जत

रहिमन जा डर निति पर ता दिन डर सिर बोध ।

पल पल करके लागते बलु कहां धों होय ॥ १८५--७० १८

स्वासह तुरिय जो उच्चर तिय है निहचल चित्त ।

पूत परा घर जानिए रहिमन तीन पवित्त ॥ ५६--७० २५

३ पुनरुक्तत्व

भिन्न भिन्न ग । द्वारा एव हा अथ का आह्वय जाना पुनरुक्तत्व दाप हाता
 है । ग त की पुनरुक्ति न होत हुए भी जहाँ अथ की पुनरुक्ति हा जाती है वही यह
 दाप आता है । अजन देना और मुरमा देना गाना का अथ एव ही है । अत निम्ना
 द्रवत गह म पुनरुक्त व था है—

अजन दियो तो किरकिरी सरमा दियो न जाय ।

जिन आबिन सो हरि लख्यो रहिमन बलि बलि जाय ॥ १६--७० २

४ प्रसिद्धि विरुद्धत्व

प्रसिद्धि के विरुद्ध निम्ना अथ का प्रयाग प्रसिद्धि विरुद्धत्व कहलाता है । रहीम
 ने पारागर से लम्पण द्वारा नाज माँगन का उत्तरव किया है जो प्रसिद्धि नहीं है—

असमथ परे रहीम कहि माँगी जात तजि लाज ।

ज्यो लछमन मागन गए पारासर के नाज ॥ १०--७० २

५ विद्या विरुद्ध

मुप्रमिद्ध गान्धीय कथना अथवा नाना विद्याया की मिद्ध मायताया मे विरुद्ध बात कहना विद्या विरुद्ध दाप है। निम्नादधत दाहे म अवतार गान् परम्परागत मायताया से मन नही खाता। अन विद्या विरुद्धता का आभास दे रहा है—

रहिमन सुधि सब त भली लग जो बारम्बार।

बिछुरे मानुष फिर मिले यहै जान अवतार ॥ २३१—पृ० २०

६ सहचर भिन्नत्व

उत्कृष्ट के साथ निकृष्ट का अथवा निकृष्ट व माय उत्कृष्ट का वणन सहचर भिन्नत्व है। यह दम्प उन वणना म हाता है जिनमे अच्छी बुरी ऊची नीची छाटी बरी भभी वस्तुया का एक साथ वणन रहता है। रहीम ना दाहा लीजिए—

अरज गरज मान नहीं, रहिमन ये जन चारि।

राजा रिनिया मांगना, काम आतुरो नारि ॥ ६—प० ४

यहा भिन्नमगा तथा कुट्टाया आत्कि क साथ ही राजा का भी उपस्थित करन म सहचर भिन्नत्व रूप था गया है।

७ ग्राम्यत्व

काथ म शैवाण धान का कथन ग्राम्यत्व दोष है। रहीम न एक गाने म पटडे या भस तथा बल क साथ साथ जुतन की बात कही है—

पुरुष पूजे देवरा तिय पूजे रघुनाथ।

कहि रहीम दोउन बने पडे बल के माय ॥ ११८—पृ० १२

८ प्रकाशित विरुद्धता

कवि जिस अथ को प्रकाशित करना चाहता है उसका विरुद्ध अथ उपस्थित हा जाने पर प्रकाशित विरुद्धता होती है—

ओछे को सत्सग रहिमन तजो अगार ज्यो। ✓ / ×

भावी काहू ना दही भावी दह भगवान ॥ १२८—प० १८

यहा कवि कुमग त्याग पर बल दना चाहता है पर तु उसके लिए निषे गया है सत्सग जिसना त्याग नही जा सकता। अत प्रकाशित विरुद्धता दोष है। इसी प्रकार काहू ना दही का अथ हागा किसी का भी नहा जलाया (या जलाती) जबकि कवि का अभिप्राय इसके विपरीत है। अन यहाँ भी प्रकाशित भिन्नता रूप है।

९ साकाक्षा

आनाया का अथ है इच्छा। जहा अथ की पूति क लिए किसी पद विनाप की आकाक्षा बनी रहती है वहाँ साकाक्षा दाप हाता है। यच पूछिए ता यह कवि की ही आकाक्षा है। वन यह समझ नना है कि पाठक इस अथ तक स्वयं पहुँच जायगा। निम्ननिमित्त दाप म साकाक्षा रूप का अच्छा उदाहरण कहा जा सकता है। यहाँ

पारम्परिक अभिवादन (तमसा घ्राणि) के प्रयोग में रहीम ने गदास के साथ कथन राम राम का प्रयोग किया है। प्रायः यदि वह निरालस घ्राण ग्राम की घ्राणाँत में घनी रहती है। प्रायः यहाँ गाराँत ही था है।

सब को सब कोऊ कर के सनाम के राम ।

हित रहीम सब जानिए जय कहु छटक काम ॥ ५०—५० ८

दूसरी प्रकार निम्नलिखित दान के दूगर परणम—'तथा तथा तथा तथा के घ्राण में चाहिए अथवा 'उत्तिन घ्राणि' के प्रयोग की घ्राणाँत का दृष्ट है। प्रायः यहाँ भी गाराँत ही था है—

रहिमन उजना प्रवृत्ति को नहीं मोष को मग ।

करिया वासन कर गट कालिग सागत अग ॥ १०८—५० १०

रस दोष और रहीम

जिस प्रकार 'रस' मध्यमी थाप का 'रस' थाप और अथ मध्यमी थाप का अथ दाप कहते हैं उसी प्रकार रस मध्यमी थाप का रस थाप का जाना है। रस थाप की उपस्थिति में रस 'उपनाम' में बाधा पड़ती है। 'रस' के 'काप' में प्रायः प्रयोग रस थाप निम्नलिखित है

१ स्वशब्दवाच्य

किसी रस विषय के विभावादि की पूर्ण योजना करने की अपेक्षा उमर अथवा का स्वन कथन कर देना स्वशब्दवाच्य है। रहीम आहावनी के अतिम सोरठे में यही दोष है। कवि ने अद्भुत रस का पूर्ण परिपाक किए बिना अर्थवाच्य का उन्नयन मात्र कर दिया है—

बिन्दु भी सिंधु समान, को अचरज बातों कहें ।

हेरन हार हिरान रहिमन अयुने प्राप तें ॥

२७७—५० २७

२ विभावानुभाव कष्ट कल्पना

जहां भाव और विभाव अर्थ का निश्चय करने में कठिनाई पड़े वहाँ यह दोष माना जाता है—

सौदा करो सो करि चलो रहिमन याही घाट ।

किर सौदा पही नहीं दूरि जान है वाट ॥ २६१—५० २१

१ ५० नवनीत चतुर्वेदी की कुण्डली में सलाम और राम राम के साथ जुहार 'रस' का भी प्रयोग हुआ है और यह पाठ्यकार अस्मत्त भी नहीं जान पड़ता।

सब को सब कोई कर राम जुहार सलाम ।

हित अनहित सब जानिए, जा नि अटक काम ॥

जा दिन अटक काम पर मालूम सनेही ।

दहि बजत प सग रग के जानी तेहि ॥

कहे नीति कवि मित्र बन कितने मतलब कों ।

राम राम परनाम कर सब कोई सब कों ॥—रहिमन गतक—५० १६

यह आत्मबन्धन का निश्चय करना कठिन है। बश्यागार म सडा कामी तथा लोको-
पकार भाव म निमग्न सज्जन दोना ही इम कथन के आलम्बन हो सकन ह।

३ परिपथि साङ्गपरिग्रह

अभीष्ट रस की आवश्यकता के विपरीत सामग्री का उल्लेख परिपथि साङ्ग-
परिग्रह कहलाता है। रहीम के कुच सम्व धी नीति मोहा म यही दाप है। वहा शृगार
का सामग्री के साथ निर्वेग की व्यञ्जना की गइ है। इसीलिए रस परिपाक बाधित
है। दो उदाहरण प्रस्तुत हैं—

कुटिलन सग रहीम कहि, साधू बचते नाहि।

ज्यो बना सना कर उरज उमेठे जाहि ॥ ४०—पृ० ४

ये रहीम फीके कुचो, जानि महा सतापु।

ज्यो तिय कुच आपन गहे आप बडाई आपु ॥ १५६—पृ० १५

निष्कष

इम विवरण स स्पष्ट है कि गद शक्ति रीति-वृत्ति एव गुणादि काय शास्त्रीय
निकषा पर सरा उतरन वाला रहीम का नीति काव्य भी 'अज्ञापी नहीं है। किसी
भी अन्य कवि पुगव की भांति उनकी रचना भी अदोषा नहीं हो सकती। हाँ इतना
अवश्य है कि ऊपर गिनाए गए दापा म स अधिकांश दाप केवल दाप रशम की दृष्टि
से प्रेरित हान पर ही दिखाने देन ह सामान्यत नहीं। सामान्य पाठक तो सहज भाव
स पडता हुआ उनके काय मे आनन्द और प्रेरणा ही ग्रहण करता है। उसे दोष का
अभास तक नहीं होना। दाप दान तो समालावक के मायास प्रयत्न का फल ही
समझिए। क्याकि मुदरतम काय म भी डिद्रावपी दोष खोज ही लेता है। गरीर
कितना भी रमणीय क्या न हा मकिलया वही बठती है जहा धाव हा—

अतिरमणीये काव्ये पि पिगुनो दुपणम-वेपयति।

अतिरमणीये वपुषि व्रणमेव हि मक्षिकानिक्व ॥^१

नों चेतकथ निपततादनयोस्तदथ
मोह मुद च नितरा दधते पुवान ॥^१

अथान् मृगनयनी क नत्रो म विद्यमान इयामता स्वतता रग नही प्रत्युन विप और
अमृत हैं। यदि एसा नही तो क्या, जिन युवका पर उसकी दष्टि पडती है व एक
साथ ही मतवाने भी हा उठत है और आनन्द विभोर भी।

इस श्लोक का पढ़कर बहुत गिना तक बिहारी का ममभे जात रहन वाला
रसलीन का यह दोहा बरवम याद आ जाता है—

अमिय हलाहल मद भरे सेत स्याम रतनार।

जिपत मरत भुक् भुक् परत जेहि चितवत इक बार ॥

हिंदी का मामाय पाठन भी तुलसी के नाम पर मगव निम्नलिखित चौपाय उद्धत
करता है—

पर उपदेश बुगल बहुतेरे। जे आचरहि ते नर न घनेरे।

किन्तु वास्तव म यह भाव गकुक् का है—

परोपदेने पाण्डित्य सर्वेषा सुकर नणाम।

धर्म स्वीयमनुष्ठात कस्यचित्तुमहात्मन ॥^२

—मु० २० मा० ८५/०६

रमार चरितनायक रहीम न केवल सस्कृत भाषा के ज्ञाता वरन उसके समथ
कवि भी थ। अत उनके नीति-काव्य पर सस्कृत का प्रभाव पडना स्वाभाविक था।
आइए उनके काव्य पर सस्कृत प्रभाव का सनिप्त अध्ययन करें।

रहीम के नीति काव्य पर सस्कृत का प्रभाव

सस्कृत साहित्य इतना विगाल तथा व्यापक है कि उसम जीवन का प्राय
प्रायक परिस्थिति तथा सामारिक व्यवहार की प्राय प्रत्येक वस्तु का बणन प्राप्त है।
इस व्यापक साहित्य के जानाझा के काव्य म सस्कृत के भावा का समाहित हो जाना
अथवा उनकी मुद्रवर्ती छाया का पड जाना कोई अस्वाभाविक नही। उनका मवया
त्याग तो मानो मन्त्रिक म आय भावा के साथ अत्याचार करक मौलिकता की सनक
म अपनी अनुभूति के साथ गहारी करना है। हिन्दी म अधिकांश कविया न ऐसी
गहारी नही की है। रहीम नी उही म से हैं। अपन कुछ छंदा म उहान सस्कृत भावा
अथवा प्रणो की छाया ग्रहण का है तथा कुछ म उह अत्यधिक अथवा पूण रूप स
उनार दिया। छाया ग्रहण क कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

एक श्लोक म भावी का प्रभाव दगात हुए कहा गया है कि स्वण मृग का न
होना सभी जानत है कि तु फिर भी राम जस बुद्धिमान तथा बहूण महापुरुष नी उस

१ सस्कृत कवियों की अनोखी सूक्त जनापन भट्ट (दिल्ली १९६३) पृ० ११०/१६६

२ तुलसीय मया वर्सात का चाहो तो आ बठो इन श्रौलों मे।

सफेदी है सियाही है गफक है, असे बारां है ॥

३ सुभाषित रत्न भाण्डागारमम आ० रामनारायण (बम्बई १९१०) पृ० ६३/०६

देखकर ललचा गया। अतः नात होता है कि विपत्ति काल व आसन होन पर बुद्धि मलिन हा जाती है—

असम्भव हेम मगस्य जन्म तथापि रामो बुलुने मगाय ।
प्राय समापनविपत्तिकाले धियोऽपि पुसा मतिनी भवति ॥^१

दसी भाव की छाया लेकर रहीम ने लिखा है—

राम न जाते हिरन सग सीय न रावन साथ ।
जो रहीम भावी बतहूँ, होति आपने हाथ ॥

—रहीम रत्ना० २३/२३७

भावी अथवा भाग्य के सम्बन्ध में एक अर्थ श्लोक प्रसिद्ध है—

अरक्षित तिष्ठति दवरक्षित सुरभित दवहत विनिश्यति ।
जीवत्यनाथोऽपि बने विसर्जित कृतप्रयत्नोऽपि गृहे विनश्यति ॥

—शा० पद्धति ४४६

रहीम के निम्नलिखित दोह में दसी श्लोक की सुदूरवर्ती छाया है—

रहिमन बहु भेषज करत प्राधि न छाडत साथ ।
सग मग बसत अरोग बन हरि अनाथ के नाथ ॥ —२१/२१०

महाराज भत हरि (नी० श० ७६) ने मंत्री के लिए आत्मत्याग के आदेश का काव्यात्मक निम्नलिखित दुग्ध जल मिश्रण के उपानस किया है। दूध न जल को अपने में मिला लिया। इस मिश्रता का बदला जल न सबप्रथम अपने शरीर का जला कर दिया। मिश्र की आदृति पर दूध उफन पड़ा किन्तु ज्यादा ही उसे जल के छोटे मिले वह पुनः नात हा गया।^१ नात हाता है कि दसी भाव का ध्यान में रखकर रहीम ने निम्न नाहा दिया था—

जलहि मिलाय रहीम ज्यों, दियो आप सम छोर ।
अगवहि आपुहि आपु त्यों सकल आंच की भीर ॥

—रहीम रत्ना० ६/६६

रहीम के इस दाह में न वह विस्तार है और न वह गन्नावली ही। हाँ, श्लोक का अपूर्ण भाव अथवा उमकी छाया अवश्य है। इस प्रकार के बहुत से श्लोक हम आगे उद्धृत करेंगे। धन अथ एम उपाहरण प्रस्तुत करते हैं जिनमें रहीम ने न केवल भाव वरन मूल संस्कृत गन्नावली तक का ज्यादा-से-प्रहण कर लिया है। इस पूण प्रभाव या गन्तानुवाक बना जा सकता है।

गन्तानवाक याचना हि पुरणस्य महत्त्व नागमत्यन्वितमेव तथाहि ।
मद्य एव भगवानपि विष्णुर्दामनो भवति याचितुमिच्छत ॥

—प्रमगाभरणम् १७

इस श्लोक का यदि अर्थ लिखना चाहें या अनुवाद करना चाहें तो लगभग
 ऐसा ही होगा जैसा रहीम का निम्नलिखित दाहा—

रहिमन याचकता गहे घडे छोट हू जात ।
 नारायण हूँ को भयो चावन अगुर गान ॥

—रहीम रत्ना० २१ २४८

दा अर्थ उदाहरण लीजिए—

श्लोक विकृति नच गच्छति मगदोयण साधव ।
 प्रवेष्टिन महासर्वेश्वरान न विषायते ।
 दाहा जो रहीम उत्तम प्रकृति का धरि सकत बुसग ।
 चदन विष यापत नहीं लिपने रहत भुजग ॥

—रहीम रत्ना० ५ ७४

श्लोक दुजनेन सम सख्य प्रीति चापि न कारयेत ।
 उष्णो दहति चागार गीन कृष्णायते करम ॥

—म० क० अ० सूक्त १६३ २५५

दाहा जुजन का ससग रहिमन तजहु अगार ज्यों ।
 तातो जारे अग गीतल हूँ कारो करे ॥

—रहीम रत्ना० १६ २७०

इस प्रकार क उदाहरण नार ग्रहण की अन्तिम सीमा हैं । इसकी पूर्व सीमा का उल्लेख भी ऊपर ही चुका है । इन दाना सीमाओं के मध्यवर्ती भाग पर ही रहीम का भाव ग्रहण का शकट आग बढ़ा है । निम्नांकित दोह म रहीम न सस्कृत का भाव लेकर तथा अपनी धार म आवश्यकतानुसार कुछ घटा-बढ़ाकर उह हिन्दी जगत के सम्मुख रखा है ।

बुसगति क दुष्परिणाम को दिखाने वान एक श्लोक म अवध्य सागर वधन का कारण रावण का पडोस माना गया है—

दुव क्षसगतिरनयपरपराया हेतु सता भवति कि वचनीयमत्र ।
 लक्ष्मणो हरति दागरथे क्लत्र प्राप्नोति वधनमसौ किल सिंधुराज ॥

—हनुमन्नाटक ॥

इसी का रहीम क अनुवाद म सुनिए—

धरि बुसग चाहत कुसल यह रहीम जिय सोच ।
 महिमा घनी समुद्र की रावन यती परोस ॥

—रहीम रत्ना० १० १००

समुद्र क ही सम्बंध म एक मन्वृत अशक्ति प्रसिद्ध—

हेलोत्तासितकल्लोव ! विक्ते सागर ! गजितम ।
 तव तीर शृपाशान्त पाय पृच्छति कृपिकाम ॥

—म० क० अ० सूक्त १००-३०१

इस श्लोक में उत्ताल तरंगों वाला सागर का इगलिया धिक्कारा गया है कि उसके बिनारे आकर भी प्यागा पथिक वृण क गम्य व म पूछाछ करना है । इसी भाव पर रहीम का एन मोहा है—

धनि रहीम जल पक षो, लघु जिय विपत घषाय ।

उदधि वडाई फौन है जगत वियासो जाय ॥

—रहीम रत्ना० ११ १०५

कहन की आवश्यकता नहीं कि दोहे में जो मार्गितता है उसके स्थान स्थान में नहीं हान । एक अन्य श्लोक में कपना से काम लत हुआ कटा गया है—

को न याति यग लोके मुने विग्धेन पूरित ।

मृदगो मुखलेपेन करोति मपुरघ्यनिम ॥

—स० क० अ मूक २०६ ३६१

अर्थात् टुकड़ा मिलन पर सभी अनुकूल राग गान लगत है । रहीम ने इसी भाव को निम्न प्रकार कहा है—

चारा प्यारा जगत में, छाला हित कर लेय ।

ज्यों रहीम आटा लमे त्यों मृदग स्वर देय ॥

—रहीम रत्ना० ९-५३

दाह के प्रथम चरण में चारा प्यारा आति गंगा के संयोग से जा कलात्मकता आ गयी है श्लोक से उसका कोई सम्बन्ध नहीं ।

चाणक्य ने बंधुओं के बीच निधन जीवन की गहणा की है—

वर वन त्याघ्रगजेन्द्र सेवित, द्रुमालय पक्वफलाम्बुसेवनम् ।

तणपु शय्या शतजीणवल्कल न बधुमध्ये धनहीनजीवनम् ॥

—चा० नीति १० १२

इस भाव को रहीम ने अपने शब्दा में निम्न प्रकार कहा है—

बह रहीम धानन भलो, घास करिय फल भोग ।

बधु मध्य धनहीन हूँ, बसिबो उचित न योग ॥

—रहीम रत्न० २४ २४५

एक अन्य श्लोक प्रसिद्ध है—

उदये सविता रक्तो रक्तचक्रास्तमये तथा ।

सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकहृत्पता ॥ —पद्म न २ ६

रहीम ने इस भाव का इसी प्रसंग में अपनात हुए लिखा है—

यो रहीम सुख-दुख सहत, बड लोग सहि साति ।

उवत चढ जिहि भाति सो अयवत ताहि भाति ॥

—रहीम रत्ना० १६ १५८

यहाँ यह दंगनीय है कि रहीम ने सविता के स्थान पर चक्र का प्रयोग करके अपनी स्वतन्त्रता का परिचय दिया है ।

भन हरि तथा चाणक्य दाता के नीति पाव्या म प्राप्त मस्तक के निम्नलिखित श्लोक को तो रहीम न सामान्य के परिवर्तन के साथ यथास्थ स्वोक्त किया है—

ज्ञानं येषां न विद्या न तपो न ज्ञानं ज्ञानं न नीचं न गुणो न धर्मः ।

ते मत्पताके भुवि भारभूता मनुष्यत्वेण मृगाश्चरन्ति ॥^१

गदा रहिमत विद्या बुद्धि नहीं नहीं धर्म जग दान ।

भू पर जनम यथा धर पमु दिन पुछ विधान ॥ रहाम रत्ना० २३ २३२

बला की धारणाता नती कि दान म भाव तो गुण है ही, उमाती धर्मि व्यक्ति भी गुण गुमीनित गरम एव गरम गदभावनी म हू है । यहाँ यह तथ्य भी स्पष्ट है कि ज्ञान विद्या समय नीम के मण्डित म भन हरि का दूसरा प्रसिद्ध श्लोक 'सांख्य समीत कता विहीन इत्यादि भी या और उसी के धर्मिम वासना— 'भाभात् पनु पुच्छ विधान हा' को ता के चतुष प म स्थान दिया गया है । इस आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि भन हरि चाणक्यानि के एवाधिक श्लोकों की सामग्री का साथ मितानर रहीम न कही-कहा एक ही श्लोक म सजोने का प्रयास भी किया है ।

नीति कधि रहीम न नाति विपय पाणक्य के माहिय का भली भाति अध्ययन किया गया । पाणक्य नीति म सकलित श्लोक के साथ ही पाणक्य सूत्र भी रहीम की दृष्टि के सम्मुख रह प्रवीन हान हैं । हमार इस अनुमान का आधार निम्नलिखित दोहा है—

रहिमन नीचन सग वसि सपत वस्तक न बाहि ।

दूध क्तारिन हाय ललि, मद समभ्रहि सव ताहि ॥

—रहीम रत्ना० २० २०२

चाणक्य के दो सूत्र म ठीक यही भाव है—

न दुजनस्तह ससग वस्तव्य ।

शीण्डहस्तगत पषोष्यमयेत ॥

चा० सूत्र २१५ २१६

इस प्रकार के पचास स भी ऊपर सदभ विनाय जा सकते हैं । आधार भय स हम कुछ ही श्लोक उद्धृत कर रहे हैं—

श्लोक काक कृष्ण पिक कृष्ण की भेद पिककाकयो ।

वसत समये प्राप्ते वाक काक पिक पिक ॥

—सु० २० म० २०५ १२०

गदा दोनों रहिमत एकसे जो लो बोलत नाहि ।

जान परत हैं काक पिक, प्रतु वसत के भाहि ॥

—रहीम रत्ना० १० १०१

श्लोक चिता वहति निर्गोत्र चिन्ता जीव वहत्यहो ।

बिदुनवाधिका चिन्ता चितात्पत्पा हि भूतले ॥

—सु० २० मा० ३६८ ६७०

- दोहा रहिमन कठिन चितान ते, चित्ता को चित् चेत ।
चित्ता दहति निर्जोव को, चित्ता जीव समेत ॥
—रहीम रत्ना० १७ १६०
- श्लोक भद्र भद्र कृत मौन कोक्तिजसदागमे ।
वयतारो ददुरा यत्र, तत्र मौन हि गोभते ॥
—मु० २० मा० २३/ ११८
- दाहा पावसु देखि रहीम मन कोयल साथे मौन ।
अथ तो दादुर बोतिहै, हमे प्रछिहै कौन ॥
—रहीम रत्ना० १७ ११७
- श्लोक वजनीयो मतिमत्ता दुजन सत्यवरयो ।
श्या भवत्यपकाराय लिहन्निपि दगन्निपि ॥
—गा० पद्यति ३६७
- दोहा रहिमन ओछे नरन सौं घर भली न प्रीत ।
काटे चाटे स्वान के दुहैं भाति विपरीत ॥
—रहीम रत्ना० १७ १५६
- श्लोक उपक्तुम यथा स्वल्प समर्थो न तथा महान ।
प्राय कूपस्तथा हति सतत न तु वारिधि ॥
—मु० २० मा० १६८ ६७२
- दोहा धनि रहीम जल पक को लघु जिय पियत अघाय ।
उदधि बडाई कौन है जगत पियासो जाय ॥ ११-१०५
- श्लोक कुर्यान्नीचजनोभ्यस्ता न याचा मानहारिणीम ।
बलिप्रायनया प्राप लघुता पुरुषोत्तम ॥
—गा० धर १० १११६
- दोहा मगि घटे रहीम पद कितो करी बड काम ।
तोन पग बसुधा करी तऊ वावने नाम ॥ —१६ १४५

संस्कृत-भाषाओं का रहीम पर प्रभाव

संस्कृत कवियों के भाव साम्य के साथ ही कुछ दाह ऐस भी देखने में आते हैं जिनके भाव पाली प्राकृत तथा अपभ्रंश कवियों के साथ सादृश्य रखते हैं। हमारे ज्ञान में जो स्थल प्राप्त हैं उनमें एक-एक निम्नांकित हैं।

पालि से भाव साम्य

याचन सेदन आहु पचालान रथ सभ
यो याचन पच्चक्खति तमाहु पटि रोदन ॥ जातक ३
रहिमन वे मर मर चुके ज कहें मांगन जाहि
उनसे पहले वे भुए जिहि भुए निकसत नाहि ॥
उक्त दाना उपाहरणा म दान का भाव प्राय एक ही रीति से वर्णित है।

प्राकृत से भाव साम्य

नीति की दृष्टि से प्राकृत एक बहुत ही समृद्ध भाषा है। गाथा मत्स्यगीत की नीति गाथाओं की चर्चा भी की जा चुकी है। उनमें से कई भाषा का साम्य रहीम व साय देखने को मिलता है—

सा जाई त च जल पतविसेसण अंतर गच्छ ।

अहि मुह पडिअ गरल मिण्णिउहै मुत्तिय होइ ॥^१

वस्तु विशेष के ससग से एक ही स्वाति जल भिन्न रूप हो जाता है। अहिमुग्ध म पडन से गरन तथा सीपी म पडन म मोती। ठीक यही भाव रहीम के श्लोक म भी है—
मुक्ता कर करपूर कर चातक जीवन जोय ।

य तो बडो रहीम जल, ध्यात बदन विष होय ॥

—रहीम रत्ना० १/ १४७

बदली सीप भुजग मुख स्वाति एक गुण तीन ।

जसी सगति बडिये तसोई फल दीन ॥—२० रत्ना० ३ २२

स्पष्ट है कि इन भाव साम्य का मूल संस्कृत म स्थित है।

अपभ्रंश कवियों से भाव साम्य

वराह्य सम्बन्धी भावनाओं का क्षेत्र म अपभ्रंश की समृद्धि संस्कृत के ही समान है। जिहान उन ग्रंथों को पढ़ लिया है उनपर अमिट छाप का बन रहता कई आश्चर्य की बात नहीं। भावना सधि प्रकरण म एक स्थान पर कहा गया है—

पिय पुण मित्त घर घरणि जाय । इह लोक् प सच्च च सुहु सुहाय ।

नवि अस्तिय कोई तुह सरणि मुख्ण ॥^२

रहीम इसी तथ्य को कह रहे हैं—

घन दारा अरु मुत्तन सो लगे रहे नित चित्त ।

नाहि रहीम कोऊ लख्यो, गाये तिन को मित्त ॥

—रहीम रत्ना० १० १०३

१४वीं गीता उत्तरार्द्ध क आचार्य मनुग ने भाष्य की अवश्यम्भावी दुरभि सधिया स मज महाराजा को डाढस बगत हुए कहा था कि गुणपुजरत्नाकर ! घय धारण करो चित्त को चित्तित मत करा। विधि जिम प्रकार का ताल बजाना है मनुष्य को तो उसी प्रकार नाचना पडता है—

चित्त विसाड न चित्तियइ रयणायर गुण पुज ।

जिमि जिमि बायइ विहिपडहु तिमि नच्चि जड मुज ॥^३

१ प्राकृत सुभाषित संग्रह बी० एन० गाह (सूरत १९२५) पृ० ४ ०

२ अपभ्रंश साहित्य श्री हरिवंश कोठड पृ० २६० पर उद्धृत

३ श्री मेहत्तुगाचार्य विरचित प्रबंध चिंतामणि सम्पा० मुनि जिनविजय

—(मिथी जन प्रथमाता म० १८२३)

- दोहा रहिमन कठिन चितान त, चिंता को चित सेत ।
चिता दहति निर्जोय को, चिता जीव समेत ॥
—रगम रत्ना० १७ १६०
- श्लोक भद्र भद्र कृत मौन कोक्लिजलदागमे ।
वक्तारो ददुरा घत्र, तत्र मौन हि गोभते ॥
—मु० २० मा० २३५ ११८
- दोहा पावसु देखि रहीम मन, कोयल साथे मौन ।
अब तो दादुर बोहिहैं हमे पूछिहैं कौन ॥
—रहीम रत्ना० १२ ११७
- श्लोक वजनीयो मतिभता दुजन सत्यवरयो ।
शवा भवत्यपकाराय लिहनपि दगनपि ॥
—गा० पद्यति ३६७
- दोहा रहिमन ओछे नरन सौं घर भली न प्रीत ।
काटे चाटे स्वान के दुहें भाति विपरीत ॥
—रहीम रत्ना० १७ १६६
- श्लोक उपकृतुम यथा स्वल्प समर्था न तथा महान ।
प्राय कूपस्तथा हति सतत न तु वारिधि ॥
—मु० २० मा० १६८ ६७२
- दोहा धनि रहीम जल पक को लघु जिय पियत अघाय ।
उदधि बडाई कौन है जगत पियासो जाय ॥ ११ १०५
- श्लोक कुर्यान्नीचजनोभ्यस्ता न याचा मानहारिणीम ।
बलिप्रायनया प्राप लघुता पुरुषोत्तम ॥
—शाङ्ग धर ५० १५१४
- दोहा भागे घटे रहीम पद कितौ करी बड काम ।
तौन पग बमुधा करी तऊ बावने नाम ॥ —१८ १४५

सस्कृतेतर भाषाओं का रहीम पर प्रभाव

सस्कृत कविया के भाव साम्य के साथ ही कुछ दोह ऐस भी देखने में आत है जिनके भाव पाली प्राकृत तथा अपभ्रंश कविया के साथ सादर्य रखते हैं। हमारे देखने में वे सखल आए हैं उनमें एक-या निम्नांकित हैं।

पालि से भाव साम्य

याचन सेदन आहु पचालान रथ सभ
यो याचन पच्चक्खाति तमाहु पटि रोदन ॥ जातव ३
रहिमन वे नर मर चुके ज कहें मांगन जाहि
उन्से पहले वे मुए जिहि मुण निरसत नाहि ॥
उक्त दाना उदाहरणा में दान का भाव प्राय एक ही जसी रीति से वर्णित है।

प्राकृत से भाव साम्य

नीति की दृष्टि से प्राकृत एक बहुत ही समृद्ध भाषा है। गाथा मन्तव्य की नीति गाथाया की चर्चा भी की जा चुकी है। उनमें से कई भाषा का साम्य रहीम के साथ दान का मिनता है—

सा जाई त च जल पत्तबिसेसण अन्तर गहअ ।

अहिं मुह पडिअ गरल मिण्णिउहै मुत्तिय होइ ॥^१

कस्तु विगण के समग से एक ही स्वाति जल भिन्न रूप हो जाता है। अहिमुग म पडने से गरन तथा भीषी म पडन म मोनी। ठीक यी मात्र रहीम के रूप म भी है—

मुन्ता कर करपूर कर चातक जीवन जोय ।

य तो यडो रहीम जल, व्याल बदन विप होय ॥

—रहीम रत्ना० ११ १४७

कदली सीप भुजग मुख स्वाति एक गुण तीन ।

जसो म्यति बढिये तसोई फल दीन ॥—२० रत्ना० १ ०२

स्पष्ट है कि इन भाव साम्य का मूल समकृत म स्थित है।

अपभ्रंश कवियों से भाव साम्य

वराह्य सम्बन्धी भावनाया के क्षेत्र म अपभ्रंश की समृद्धि समकृत के ही समान है। जिन्होंने उन भाषा की पर लिया है उनपर अमित छाप का बन रहना का आदवय की बात नहीं। भावना संधि प्रकरण म एक स्थान पर कहा गया है—

विय पुण मित्त घर घरणि जाय । इह लोक प सव ब सुहु सुहाय ।

नवि अस्थि कीईं जुह सरणि पुवव ॥^२

रहीम इमी तथ्य का कह रह है—

धन दारा अरु सुतन सो लपो रहे नित चित्त ।

नहिं रहीम कीऊ तथ्यो गाड़े दिन को मित्त ॥

—रहीम रत्ना० १० १०३

१४वीं गती उत्तराद्ध के आचार्य मन्नुग न भाग्य की अवयम्भावी दुर्भिम मन्त्रिया से मज महाराजा को डांस व तत द्रुण कह। था कि गुणपु भरताकर। धय धारण करो चित्त को चिन्तित मत करो। विधि जिम प्रकार का ताल वजाया है, मनुष्य को ता उसी प्रकार नाचना पडता है—

चित्ति विसाड, न चित्तियइ रयणापर गुण पुज ।

जिमि जिमि वायइ विहिपबहु तिमि नच्चि जइ भुज ॥^३

१ प्राकृत सुभाषित सग्रह वी० एन० गाह (मूरत १६५१) पृ० ४ -

२ अपभ्रंश साहित्य श्री इरिवग कोछड पृ० २६० पर उद्धृत

३ श्री मेरुतगाचाय विरचित प्रबन्ध चिन्तामणि सम्पा० मुनि जिनविजय

—(मिनी जन प्रथमाना न० १६ ३)

भाग्य के बाग को रहीम ने करम तथा मनुष्य को कठपुतली बताते हुए भी यही भाव व्यक्त किया है—

ज्यो गच्छत कथपुतरी करम नचावत गात ।

अपने हाथ रहीम ज्यो नहीं आपुन हाथ ॥—रहीम रत्ना० ८ = ८

प्राकृत कवि ने लक्ष्मी चाचल्य का प्रतिपादन करते हुए उसे प्रत्येक घर में दोड़ता दियाया है और कहा है कि प्रिय विद्युत् गौरी भला निश्चित बट भी बरा सकती है—

एतहे तेत्तहे वारि परि लच्छि मिसुठुल धाड ।

पिन्न पवभटठ व गोरडी निच्छन कर्हि वि न टाड ॥

—प्राकृत यावरण ४४३६ १

कमला प्रस्थय के लिए कहा गया रहीम का लोहा भी इसी सम्भ्रम में उद्धत किया जा सकता है। हाँ पुरुष पुरातन के माध्यम में इस तथ्य की अभिव्यक्ति न उक्ति का मौलिकता प्रदान करते हुए नार चीन लगा दिए हैं—

कमला थिर न रहीम कहि इहि जानत सब लोण ।

पुरुष पुरातन को बधू क्यो न चखला होण ॥

—रहीम रत्ना० २ = २३

रहीम पर फारसी का प्रभाव

रहीम फारसी के उत्कृष्ट विद्वान और उत्तम कवि थे। वे फारसी में कविता करने थे और कविनाएँ उस समय के उत्तमान्तम कवियों का स्वर का होता थी।^१ उनका नीति-नाय्य पर बहुत फारसी साहित्य का प्रभाव पटना प्रत्येक प्रकार से सम्भव था किन्तु हम यह दगाकर ध्यान देना है कि रहीम ने एक भी उपमा एक भाषण एक भाषा फारसी के बिना कविता नहीं की। उनका काव्य मनुष्य का श्रेणी है फारसी का नहीं। वेग यति भाव साम्य याज्ञाना हाँ चार ताँ घाँ-बहुत मित्त जुनत एक ताँ ताँ यात्र ताँ गहत है। गग गाता न गुगामन व मन्त्रय म एक यती उपयोगी ताँ वहाँ ३—

घगर गहराठ रा गोयन गय घस्त १ ।

वपायन गुरत ईनक माता परयो ॥

एक भाव में रहीम के निम्नलिखित शब्द का तुलना का जा सकते हैं—

रहिमन जो रहिजा चहे चहे घाहि व दाव ।

जा वागर की निमि कइ तो कचपघा रियाव ॥

एक प्रकार घमीर गुगता तथा रहीम का निम्नाद्धत श्लोक भी तुलनाय ३—

घन्त्रम बन् भी घपरगइ रात्र दरम पन्त्र रा ।

घार निरापन हा बुवद मन्मान बन् कइ रा ॥ —गुगता

रहीमत ब्रह्मवा नयन हरि जिम दुख प्रकट करेय ।

जाहि निरन्तरी नेह तें, बस न भेद कहि देय ॥

—रहीम रत्ना० १६ १६५

किसी फारसी कवि न कहा है—पर सरे फज द आदम हरचे आयद बे गुजरद ।
रहीम क गदा म यह भाव निम्न प्रकार है—

जसे परे सो सहि रहे कहि रहीम यह देह ।

धरतो ही पर परत है सीत धाम अरु मेह ॥ रहीम रत्ना० ७ ६८

फारसी काव्य क विंगान भण्डार स प्रौर भी ऐसे छत्र उद्धत करना, जिनसे रहीम का भाव साम्य हो कोई बहुत कठिन काम नहीं । किन्तु इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है वह भाव साम्य अधिक मात्रा तथा प्रत्यक्ष रूप में प्राप्त नहीं जाता । रहीम ही जहाँ अथ ही कवि भी यहाँ तक कि सूफी भी विदे ही परम्परा तथा फारसी काव्य स इतन प्रभावित नहीं जितन भारतीय परम्परा तथा ससृष्ट काव्य में । हिंदी साहित्य की परम्परा गार्गा द तामी मृत्यु की जो धारणा बनी थी वह आगिन रूप स ही सत्य ही सजनी है और वह भी विघेपत संस्कृत के सम्बंध में । उनका कथन निम्नादृत है— मुझे कहना पड़ता है कि हिन्दुस्तानी साहित्य का एक बहुत बड़ा भाग ससृष्ट और धरती स अभूति है ।^१

सांग यह है कि पानी प्राकृत तथा अपभ्रंश के अनक छत्रे स मिलत जुगत भाव रहीम क काव्य में वतमान है । किन्तु इसमें हम यह निष्कर्ष नहीं निकाल लेना चाहिए कि रहीम इन सभी भाषाओं क पणित व अथवा उद्धान उन सभी अथा का पडा था । बस रहीम जस विद्या यसनी तथा उदार महापुरुष के लिए यह अममभव ता नहा है किन्तु फिर भी हमारा विचार है कि उक्त प्रभाव अपभ्रंश आदि में भी न आकर संस्कृत साध्य स आए हैं । निम्न उदाहरण इसके लिए पर्याप्त है—

सम्पत् उदये सविता रक्नो रक्तदवास्तमये तथा ।

सम्पत्तो च विपतो च महतामेवरूपता ॥ पचनत्र २ ७

प्राकृत उदयमि वि अत्यमरो वि धरइ रत्तत्तण दिवस नाहो ।

रोडिमु आयईस अ तूल्लच्चिय पूरण सप्पुरिस्ता ॥

—प्राकृत सुभाषित २

रहीम या रहीम सुख दुख सहत बडे लोग सहि साति ।

जवत चन्द जिहि भाति सा अयवत ताही भाति ॥

—रहीम रत्ना० १६ १५८

इसके अनिश्चित यह भी मत्व है कि भाव साम्य क लिए सदैव एक दूसरे का अध्ययन ही अनिवार्य नहीं होता । इस अनक भाव हैं जो प्राचीन भारतीय कविता तथा मूरग आदि दगा के अथ रत्ना म आश्चर्यजनक साम्य रखत हैं । गग सन्निा का एक श्राव है—

दुजना गिल्पिना दाता अति दुष्टास्तया स्थिय ।

सात्तिता भादव याति नते सात्कार भाजिन ॥

१ हिन्दुई साहित्य का इतिहास गार्गा द तामी (धनु० स० सा० बाणेश) पृ० ६३

कोवहम बूझर का कथन भी यही है—

ए घोमन ए स्परनियल एड ए बालाट टी ।

द मोर पू बोट द बटर दे बी ॥

अतः हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि रहीम ने सस्कृत का यम बहुत सभ्य, रुढ़िया तथा अयोग्यताओं ग्रहण की। उनमें से अधिकांश की अभिव्यक्ति में अपनी वाक्य प्रतिभा का पूरा पूरा उपयोग भी किया। यही कारण है कि उनके दोहा में बासी पन नहीं है। उनके द्वारा व्यक्त भाव जनमानस पर आज भी उतना ही गहरा प्रभाव अक्षिप्त करते हैं जितना वे अपने नव निर्माण के समय करते होंगे। इस यम का श्रेय अकेले रहीम को नहीं वरन उन समस्त अरबी फारसी प्राकृत अपभ्रंश तथा सस्कृत आदि के कवियों को भी जानना चाहिए जिनसे रहीम का भाव साम्य सिद्ध है अथवा सिद्ध किया जा सकता है। हमारा निवेदन केवल इतना है कि मन्वत व अतिरिक्त अर्थ सभी भाषाओं से भाव साम्य केवल संयोग की बात है और जो है भी वह केवल सस्कृत के माध्यम से। इसी माध्यम के कारण भारत की भिन्न भिन्न भाषाओं में एक विचित्र साम्य स्थापित हुआ है। एक ही भाषा में कवियों में जो भाव सादृश्य दृष्टिगोचर होता है उसमें भी एक बहुत बड़ा हाथ सस्कृत की मध्यस्थता का है। इस अध्ययन के आधार पर हम कह सकते हैं कि आज के युग में किसी नविकृत का उद्घाटन कर यह समझ लेना कि इसे कभी कभी किसी प्रकार, किसी के द्वारा व्यक्त नहीं किया गया कोरा दम्भ है। मौलिकता का अर्थ है किसी नये पुराने तथ्य का अधिक न अधिक प्रभावशाली भाषा में मौलिक रूप से कहना। रहीम ने अधिकांश तथ्यों का उद्घाटन मौलिक रूप में किया था। उनके विचारों की तुलना सस्कृत प्राकृत पालि अपभ्रंश तथा फारसी आदि अनेक भाषाओं के कवियों से की जा सकती है किन्तु प्रभाव उन पर सस्कृत का ही है जो उन जैसे सस्कृत प्रिय व्यक्ति के लिए स्वाभाविक है। सस्कृत का प्रभाव न केवल रहीम पर परन्तु उनके सभी भाषाओं के अनेक कवियों पर है। रहीम ने दो चार दोहा का सस्त्रन से अनुवाद भी किया है किन्तु अधिकतर उन्होंने सस्कृत श्लोकों के भाव अपने भाषा में व्यक्त किए हैं। भाषा के अभिव्यक्तिकरण में कभी कभी तो वे मूल श्लोक में प्रभविष्णता तथा निगार में निश्चिन्त वाजी मार गये हैं। एमा का उदाहरण प्राप्त नया जाना जहाँ उन्होंने मन्वत भाषा की हत्या का हा अर्थात् मन्वत भाषा के विचारों का मूल की धन में निम्न स्तर पर व्यक्त किया है। रहीम के नीति-वाक्य में मन्वत के वाक्य अधिकांश रूप में दृष्टिगोचर होते हैं जो अधिक व्यवहार में जाय जान के कारण एक प्रकार में वाक्य रूप या कवि गमया का स्थिति में आ गये थे। वाक्य चार स्वान के रूप में विपरीत, उन्धि बड़ा चीन है जगत् पियामो जाय स्वानि एक गुण तीन परकात्र तिन सम्मति मुचरि मुजान धारि एग ही भाव है जो कवि समय नाना परन्तु उन जम ही वाक्य चतुर्थ। इनका प्रयोग रहीम के अतिरिक्त अन्य सभी कवियों ने निरन्तर रूप में किया है।

अंतिम तथ्य विस्तृत विवेचन की अपेक्षा रखता है। रहीम काव्य व सदम म उक्त तथ्य की सिद्धि हिंदी के विभिन्न कथना से स्वयमेव हां जायगी। अतः अब हम प्रमुख हिंदी कविया से रहीम का भाव साम्य दिखाने की चष्टा करग। काव्य के इस अध्ययन को कबीर ने आरम्भ किया जा रहा है।

कबीर और रहीम का भाव सादश्य

कबीर का जन्म रहीम से १५७ वर्ष पूर्व हुआ था। उस समय समाज में उनका साहित्य आज की अपेक्षा कहीं गुंथ रूप में प्रचलित रहा होगा। मग्राट अकबर सेता साधु-संन्यासिया तथा उनकी वाणिया का बहुत आदर करता था। अतः सम्भव है रहीम ने कबीर की वाणी को पढ़ा भी हो (तब तक वह सग्रहित हो चकी होगी) और कबीर पथिया से सुना भी हा। यह अनुमान अतः माध्यक आधार पर पुष्ट नहीं हाता। रहीम का काव्य सत कबीर का अनुकरण ता क्या उसमें प्रभावित भी प्रनीत नहीं होता। प० मायागकर याचिक^१ और उही के अनुकरण पर बाबू वृजरत्नदास ने तुनना के लिए कबीर के जिन दाहा को उद्धृत किया है उनमें न एक दो के अतिरिक्त गेप सभी अप्रामाणिक है।^२ याचिक जी ने ता अपने द्वारा उद्धृत दाहा के श्रोत (ग्रंथ) का भी उल्लेख नहीं किया है। बाबू वृजरत्नदास ने कबीर कचनावली का नाम निर्देश किया है परन्तु आधुनिक लोजा के आधार पर व दाह कबीर के सिद्ध नहीं हात। किन्तु हमारा आशय यह नहीं है कि रहीम और कबीर में भाव साम्य के स्थल आज ही नहीं जा सकत। हमारा तात्पर्य ता केवल इतना है कि रहीम के नीति काव्य पर कबीर साहित्य का कोई स्पष्ट या उल्लेखनीय प्रभाव परितक्षित नहीं होता— या एक दो दाह दन्य अवश्य जा सकते हैं—

मात्ता के प्रति अपना स्वाभाविक रूप अभिव्यक्त करते हुए कबीर ने कहा—

मारी मरे कुसग की बेरा काइ बेर ।

वह हाले वह चीरई, सास्त सग निबेर ॥^३

रहीम ने इसका अनुरूप ही सगति के परिणाम चित्रण में इही उपपाना का प्रयाग किया है—

कहु रहीम कस निभ बेर बेर का सग ।

वे डोलत रम आपने उनके फाटत अग ॥

—रहीम रत्ना० / ३३

१ रहीम रत्नावली प० मायागकर याचिक (तृतीय सम्स्करण) पृ० ८२, ८८

२ हमने इस कथन तथा कबीर सम्बन्धी प्रपन अध्ययन का आधार डा० पारमनाथ तिवारी की 'कबीर अध्यावली' को बनाया है। हमारे विचार में यह सर्वाधिक प्रामाणिक पुस्तक है।

३ कबीर अध्यावली पृ० २१८०

उपमाना का यह एक्य भी कबीर का प्रभाय नहीं क्याकि विगत पृष्ठा म हम
 इसी भाव व सम्भृत श्लाक उद्धृत कर चुके हैं। ध्यान दान पर दोनों की उक्तिया म
 अंतर भी स्पष्ट दिखाए पड जायगा। कबीर व दाहा म साक्षात् भी संगति की गहणा
 है जय कि रहीम की पक्तिया म मरस नीरस समग का अनौचित्य है। किन्तु एव विचित्र
 स्थिति भी विचारणीय है। रहीम न 'उनक रस म डोलन पर उनक अग फटन'
 का उल्लेख किया है। क्याकि अग कन क फग करत है अत अग फ न वात्रा केला
 हुमा और दूसरा पथ बर रस म डालन वाला' हुआ। वाग्मव म ऐसा नहीं हाता।
 पर व वक्ष म काटि है कठारता है अत उसका 'रस म डानना' नहीं दिखाया
 जाना चाहिए था। अस्तु दा गौह और दगिए—

जालीं इहे बडापना यू सरत पेड खजूरि ।

पथी छांह न बीसव फल लाग ते डूरि ॥

—कबीर ग्रंथा० १८५३

होय न जाकी छाह दिग फन रहीम अति डूरि ।

यदिह सो विनु काज ही जस तार खजूरि ॥

—रहीम रत्ना० २६ २७०

हेरत हेरत हे सखी रहा कबीर हिराइ ।

समुद समाना बूद म सा बत हेरा जाइ ॥

—कबीर ग्रंथा० २१५१

विन्दु भी सिंधु समान को अचरज कासी कहै ।

हेरन हार हरान, रहिमान अपुन आपत ॥

—रहीम रत्ना० २७ २७७

जसा कि हम ऊपर क् चुके हैं इस प्रकार क दा चार अथ दाह श्री याचित
 तथा यात्र अजरत्नस न उद्धृत किय है किन्तु व सय प्रकार क नहा है। कबीर व
 नाम पर ना हम श् भी प्रचलित है जिनम तम्बाकू की निगा की गर् है। जब कि
 तम्बाकू भारत म सक्षम पहन यूरोपीय व्यापारिया न अक्षर का निगण म भट किया
 था। अत उन जाना गहा क आधार पर रहाम वा कबार म प्रभावित सिद्ध नहा
 किया जा सकता। किन्तु एव गहा गगिए—

एक साथ सब सथे सब साथ सब जाइ ।

उत्तटि जा सौंवे घून को फूल फल अयाइ ॥

१ भाग तमायू छतरा अरयू और सराय ।

कह कबीर इनरो तने तथ पाय दीगार ॥

—रहीम र नावनी पृ० ८३ पर उद्धृत

२ हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास धाचाय चतुरमन पृ० २६।

यह दाहा श्री तिवारी ने अपनी पुस्तक कबीर ग्र थावली में दिया है। उन्होंने दा चार पक्तियाँ में उनके पाठांतर का संकेत भी किया है। यह छोटा रहीम के नाम पर भी प्राप्त होना है—

एक साथ सब सघ सब साथ सब जाय।

रहिमन पूनहि सौंचिबो फूलहि फलहि अघाय ॥ रहीम रत्ना० २ १६

इस प्रकार और भी दो एक छंद हाँ संकेत हैं। मसूत नीति काय में तथा मध्ययुगीन अन्याय कवियों में अपने पूर्ववर्ती कवियों के कुछ सुंदर नीति वाक्यों का क्या का त्याग ग्रहण करने की परम्परा रही है। अतः हाँ संकेत है कि कबीर के कुछ अत्यन्त प्रचलित छंद रहीम के काय में घुल मिल गए हैं। किन्तु सामान्यतः हम रहीम का कबीर में प्रभावित नहीं पाते।

महाकवि सूरदास और रहीम

सूर अपने क्षत्र के समाप्त हैं। हिन्दी को वात्मन्य भाव से भरना उही का काम था। कृष्ण काय पर उनकी छाप अमिट है। उनके नाम पर ही श्री माहित्य के एक युग को कहते ही सौर काल हैं। परन्तु स्वयं सूरदास का जन्म सम्भवतः निश्चित नहीं है। वक्तव्य अवश्य है कि उनकी मृत्यु विठ्ठलनाथ जी की मृत्यु (म० ११८८ ई०) से पहले हुई थी। उस समय तक रहीम अपनी वह आयु अवश्य समाप्त कर चुके होंगे जिसे लिए अंग्रेजी १८८० ई० तीन एकर प्रसिद्ध है। सूर की प्रतिष्ठा भी अपने जीवन काल में ही हाँ चकी थी। अतः कृष्णभक्ति से प्रभावित रहीम ने सूर के पदाँ का रस अवश्य लिया होगा। परन्तु रहीम और सूर दोनों के प्रमुख क्षत्र पृथक् पृथक् थे।

संस्कृत कवियों में स्वाति वृद्ध के विभिन्न संसर्गों का भाव प्रसिद्ध है। सूर ने उसी भावता के अनुसार किया है—

सौप गयो मुक्ता भयो, कदली भयो कपूर।

अहिंसेन गयो तो विष भया सगत के फल सूर ॥—सूर

यही भाव रहीम का भी है परन्तु निश्चित ही दोनों कवियों के भाव्य भाव्य का आधार संस्कृत है परस्पर कथन नहीं बरकर सम्बन्धी दोनों के कथनों का कारण भी यही है।

चागी और निधि के हाँध न रंगन पर एक भाव भाव्य दृष्टि—

यों भूली ज्यों चोर भरे घर चारी निधि न लई।

बदलत भोरे भयो पछतानी कर तें छाड़ बई ॥—सूर

करम हीन रहिमन लटयो धरयो बडे घर घोर।

चिन्तन ही बडे लाभ के जागत ह्वै गो भोर ॥—रहीम

कमल तथा रवि के प्रेम का आधार तबकर कुण्डल तथा मित्रता का वणन करने हुए सूर ने कहा है—

कुण्डल मोत जाके कथन।

परमत्त को रवि परम हित है कहन श्रुति अत बचन ।

घटत वारिधि भयो दाखण करत कमवन बहन ॥—मूर

रहीम मुगमय को और स्पष्ट परत हुए धनहीन प्रसम्भा व निग दगी प्रभाव
रा प्रयोग करत हैं—

जब सगि बिसत न थापुने तब सगि मित्र न होय ।

रहिमन अद्युज अद्यु बिन रवि नाहिन हित होय ॥ —रहीम

भाव एक हात हुए भी रहीम व दाग म समावत है । मूर न हिंदू हात हुए
भी छापी-सी बात व बीच म श्रुतिया का यय हा पगोटा है रहीम न मुगनमान हात
हुए भी बसा नही किया । अन्तुन मूर का बला का सम्पन्न जान न था ।

बस दोना दाहा व भावा तथा प्रसंगा म कोद अन्तर नहा है । ही रहीम व
दोह म सधनता अवश्य है । यही कारण है कि मूर को नीन पक्षिया का भाव दाह
की दा पक्षिया म सफलतापूर्वक भरा जा गया है । बला बला दगगा उन्ना भी ऐगन
का मिलना है—

हरद चून रग, पय पानी ज्यो दुविधा दुहु की भागी ॥ —मूर

एक्य प्रतिपादन म मूर न एक ही पक्षि म था उपमाया का प्रयाग किया है ।
किन्तु रहीम मूर दोह म केवन हली चून की ही गाथा गा पाए हैं—

रहिमन प्रीति सराहिए मिले होत रग दून ।

ज्यों जरदो हरदो तज तज सफरी चून ॥ —०१००८

भावसाम्य हात हुए भी जरदो हरदो और सफरी तथा तज दाग के प्रयोग मे
रहीम की पक्षि म एक प्रकार का ध्वयात्मक सौन्दर्य आ गया है जो मूरदास की
पक्षि म नहीं है । इसी प्रकार मूर की पक्षि— जो छिपा छरद करि सकत सननि
तजो तामु मति मूढ रस ठानी—जसा भाव निम्नलिखित दाहे स मिलता है—

जो विषया सतन तजो गू ताहि लगटात ।

ज्यों नर डारत वमन करि स्थान स्वाद सो छात ॥ —रहीम

रहीम न भी जहा कृष्ण का रूपमाधुरी का वणन किया है वहाँ मूर की सी वण
याचना उही की सी शब्द रचना वाक्य विन्यास तथा वणन गली आदि को अपनाया
है । उह पढकर पहला विचार यही बनता है कि वे मूर क पद है । पदा व भाव सौन्दर्य
आदि की चर्चा हम विस्तार से पहले ही कर चुके हैं । अतः तना कहना ही अर्थात्
हागा कि रहीम लिखित नीति व दाहा और मूर के पदा म यद्यपि तही-वहाँ भाव
साम्य दृष्टिगोचर हाता है किन्तु इस आधार पर उह मूर साहित्य से प्रभावित सिद्ध
नहीं किया जा सकता । दाना व काय म साम्य सामान्यतः सस्कृत काव्य की प्रसिद्ध
उक्तिया अपनाने व कारण आया है ।

तुलसीदास और रहीम

गोस्वामी तुलसीदास के जन्म सबत के सम्बन्ध म ता बहुत अधिक मतभेद है,
परन्तु रहीम तथा उनकी समसामयिकता म किसी की रचनाय भी मदेह नहीं ।

रहीम तथा तुलसी का पत्र व्यवहार तथा बरवों के आधार पर बरव रामायण की रचना भी जगत् प्रसिद्ध है। डा० मानाप्रसाद गुप्त तथा डा० रामकुमार वमान इतिहास की आड लेकर रहीम तुलसी बरव सम्प्रेषण पर बरव प्रकट किया है उसका उत्तर अब्दुरहीम खानखाना के इतिहास पर गाज करत समय डा० समरवहादुर सिंह भली भाँति दे चुके हैं।^१ अतः रहीम की प्रेरणा से बरव रामायण की रचना सदिग्ध नहीं। मानस के मगलाचरण के आधार पर रहीम के फूटकर बरवों का मगलाचरण हम पहले ही सिद्ध कर चुके हैं। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि कोई किस से कितना प्रभावित हुआ था। इतना निश्चित है कि रहीम और तुलसी दाना परस्पर प्रेम भाव रखते थे और दाना एक-दूसरे के व्यक्तित्व से प्रभावित थे। इतना ही नहीं दाना म पत्र-व्यवहार भी होता रहता था। इतिहासकार भी यह तथ्य स्वीकार करते हैं।^२ नीति-व्ययना में भाव साम्य लिखाने के लिए कुछ दोह उद्धृत हैं—

नीच निचाई नहीं तज सज्जनहूँ के सग।

तुलसी चदन चिटप बसि विष बिनु भये न भुजग ॥ दाहावली २३७
तुलसी ने इस दाह में सप पर चदन का प्रभाव न पड़ना दिखाकर नीच के लिए सत्सग की व्ययता सिद्ध की है। इसी भाव के विपरीत पत्र का लेकर रहीम ने सज्जना के लिए कुसगति प्रभाव का उच्छेदन किया है—

जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसग।

चदन विष यापत नहीं लिपटे रहत भुजग ॥

—रहीम रत्ना० ८ ७४

यह भाव साम्य एक दूसरे के सम्पर्क के कारण नहीं बरन दाना के सस्वृत श्लोक से प्रभावित हान के कारण है—

घर कीहे घर जात है, घर छाडे घर जाइ।

तुलसी घर घन बीच ही राम प्रेम पुर छाइ ॥—दोहावली २१६

तुलसी ने इस दाह में घर घर की रट लगाकर जा भाव व्यक्त किया है वही भाव रहीम के आत्म चरितात्मक धनना के आधार पर इस प्रकार प्रकट हुआ है—

अब रहीम मुसकित पड़ी गाडे बोळ काम।

साचे से तो जग नहीं झूठे मिले म राम ॥ १६

कहने की आवश्यकता नहीं कि भाव एक सा हात हुए भी कोई किसी का ऋणी नहीं है। रहिमान विलास में तुलसी का एक दाहा उद्धृत किया गया है। दाहा भाव साम्य की दृष्टि से तो अप्रत्यक्ष रूप से ही उपयोग है किन्तु है इतना मुश्किल कि उम उद्धृत करने का लाभ मरण करना कठिन है। दाह का हम शरणागत बसलता का आत्म मानत है। मानस के राम विभीषण मिलन प्रसंग का दाहा इस प्रकार है—

१ अब्दुरहीम खानखाना पृ० २१८

२ He (Rahim Khanekhanan) was a great friend of Tulsidas and has correspondence with him

जो सनति सिय राधादि दीति निरु दगमाय ।

सा सपदा विभीषनि सपुषि शेर रघुमाय ॥ —गुणराज

रहीम श्रीराम व इमी अरु रूय ता विप्रण दगा प्रतीन ता १ —

मांग मुजरिन का गयो कति त स्यादियो साय ।

मांगत आगे मुय सटयो त रहीम रघुमाय ॥

राम गी० १/१६६

तुलसी और रहीम नाम का अन्वयार्थिता का साम्य भी प्रतीत है—

तुलसी पापत व गमय घरी कोरिला मोन ।

अब तो दादुर बोलिहें हमहि पूछिहैं कौन ॥ —गुणराज

पावत देवि रहीम मन कोइन साय मोन ।

अब दादुर वक्ता भये हम वी पूछत कौन ॥—रहीम गीतवली

परन्तु यह भाव न रहीम का है और न तुलसी का नाम न मस्मृत स प्रहण किया है । मस्मृत स सप्रहण एत वर्ड भाव दाना व काव्य म प्राप्त हान १ । मस्मृत प्रसंग म व भाव दक्ष जा गवत हैं । वर्ड मुहावरा तथा लोकार्थिता का प्रयोग नामा कविया म समान रूप स लग्ने म आता है—

पात पात को सींचबो घरी घरी को लीन

तुलसी छोटे चतुरपन, कलि डहक वी कौन । —दोहावली

पात पात को सींचबो घरी घरी को लीन ।

रहिमन ऐसी बुद्धि को पटो बरगो कौन ॥ १२ ११६

विवाह व सम्प व म यत्त विचारा म भी अन्तर नहीं प्रतीत होता—

फूले फूले फिरत हैं आज हमारी व्याव ।

तुलसी गाय बजाय क देत दाउ म पाव ॥ —तुलसी

रहिमन याह विप्राधि है सबहु तो जाहु बचाय ।

पावन बेडो पडत है डोल बजाय बजाय ॥ —रहीम

यह दाना कविया द्वारा पृथक् पृथक् मुहावरो का प्रयोग ध्यान देने योग्य है । विश्वास महिमा का बणन तुलसी न वर्ड स्थाना पर किया है । एव दाहा है—

राम भरोसे जे रहें, परवत प हरिवाय ।

तुलसी बिरवा बाग के सींचे हू मुरझाय ॥ —तुलसी

प्रभु पर ऐसा ही विश्वास रहीम का भी था । उहान उना भाव को अपन गद्या म और अधिन सुतरना के साथ यक्त किया है—

रहिमन बहु भेषज करत व्याधि न छाडत साय ।

खग मग वसत अरोग वन, हरि अनाथ के नाथ ॥ २१ २१०

खग मग-वन धाति गद्या से वातावरण का जसा विवेक रहीम न उतार दिया है वसा तुलसी नहा उतार पाय ह । हरि अनाथ के नाथ स ता भक्त रहीम का दीन भाव भी यक्त है ।

चन्द्रमा और नशना के कपनात्मक भाव पर तुलसी न निम्नलिखित दाहा लिखा है—

होत बड लघु समय सह तो लघु सखि न काडि ।

चन्द्र दूबरो कूबरो तऊ नखत तें बाहि ॥—तुलसी

जम जान बडप्पन मिद्ध करने क लिए रहीम न भी यह तक दिया है—

जे रहीम विधि घड किए को कहि दूपन काडि ।

चन्द्र दूबरो कूबरो तऊ नखत तें बाहि ॥ ७ ६५

दाना दाहा का तृतीय चतुर्थ चरण एकदम एक है ।

तुलसीदास न एक दाहे की वस्तु परिकथन शली म नारी नपति आदि क प्रति सावधान रहने का सबत किया है—

उरग तुरग नारी नपति, नीच जानि हथियार ।

तुलसी परखत रहत नित इनहि न पलटति धार ॥

किंचित परिवर्तित रूप म यही दाहा रहीम क नाम पर भी प्राप्त हाना ह—

उरग तुरग नारी नपति नीच जात हथियार ।

रहिमन इह सभारिए पलटत लगे न धार ।

नहीं कहा जा सकता कि यह दाहा वास्तव म इसका है ? उक्त दाना ही कविया का मत्री भाव यहा तत्र प्रसिद्ध है कि व एक दूसर क वचना का अपना निधा करत ५ । कहन है कि अपन मत्री भाव क फलस्वरूप ही गोस्वामी जी न दाहावली का अन्त रहीम के दाह से किया था । दोहा इस प्रकार है—

मनि-मानिक मेंहगो किगो सहगो तृन जल नाज ।

तुलसी एके जानिए राम गरीब निबाज ॥—दाहावली १७३

लाक प्रसिद्धि का दुहरान की आवश्यकता नहा कि वरक छन्द को राम मय करन का गुभ प्रयत्न तुलसीदास न रहीम के आग्रह पर ही किया था ।

स्वर्गीय श्री याज्ञिक न रहीम तुलसी क भाव माम्भ पर कुछ अर्थ छ ८ भी उद्धत किये ।^१ क अविक्ल रूप स उद्धत है—

रहीम परि रहियो मरिबो भयो सहिबो कठिन कलेस ।

बामन हू बलि को छलो भलो दियो उपदेस ॥

तुलसी बिनु प्रपच छल भीख भलि लहिये न लिए कलेस ।

बामन हू बलि को छलो भलो दियो उपदेस ॥

रहीम कहू रहीम कस निभ बेर केर को सग ।

वे डोलत रस आपुने उनके फाटत अग ॥

तुलसी नाच निरादर ही सुखद आदर दुखद विसाल ।

कदलो बदरी बिटप गति पेलहु पनस रसाल ॥

रहीम जब लगि वित्त न आपने तय लगि मित्र न कोय ।

रहिमन अबुज अबु बिनु रवि नाहिन हित होय ॥

१ रहीम रत्नावली, प० मायागकर याज्ञिक (भूमिका), पृ० ४८

तुलसी आपन छोड़ो साय सब तादिन हितू न कोय ।
 तुलसी अयुज अयु धिनु तरनि तासु रिपु होय ॥

रहीम रहिमन धोल भाय स मुग तें निरसे राम ।
 पावन पूरन परम गनि कामादिक को धाम ।

तुलसी तुलसी जिनके मुणनत धोलहु निरसत राम ।
 तिनक पगकी पगतरी मेरे तनको चाम ॥

अन्तिम पाहा का दगन स तुलसी और रहीम की भगवान राम क प्रति एन समान श्रद्धा व्यक्त हानी है । हम पुनः बरबो क प्रसंग म स्पष्ट कर चके हैं कि गणग गारगादि देवा क प्रति असीम श्रद्धा भरे कई बरब गहाम न रच थ । श्री धार्मिक न दाहा की टिप्पणी म समानार्थी और अनन दाह भी इतमन उद्धत किए हैं । उनम कई की ता गगवली रहीम जसी ही है । पराशा करन पर हम जान हुआ है कि व दाह तुलसी सनसई क है जाकि एन सन्धि रचना है । जात कुछ एमा हाता है कि तुलसी क नाम पर अपन काय का प्रचलित करन वात किसी व्यक्ति न (चाह वह कायस्य तुलसी हा या और काई) रहीम क अनक प्रचलित दाहा का तुलसी की छाप देकर बीच म सकलित कर लिया है । हम उनक उद्धत करन की आवश्यकता अनुभव नहीं करत । कारण तुलसी और रहीम मित्र थ उनका पारस्परिक साहित्यिक सम्बन्ध रहा था । जा लोग यह कहत है कि सुन्दर दक्षिण म होन क कारण रहीम तुलसी का बरब इत्यादि नहीं भेज सकत थ व यह भूल जात थ कि रहीम बहुत ही बल इफाम ड रहत थे । उहाने अपनी व्यक्तिगत डाक का इतना उलम प्रब थ किया था कि राज दर बार म जा भी कुछ हाता था उसकी सूचना उनके पास निरन्तर तथा नियमित रूप स पहुँचती रहती थी और रहीम निरन्तर रात्रि के एकान्त म उन आगत पत्रा एव सूचनापत्रा का पत्रे तथा तदुपरात दीए की ली म लगाकर जला डालते थ । यह उनके जीवन का दैनिक कायक्रम था । जा राजनतिक आदान प्रदान का इतना उत्तम प्रब थ कर सकता है वह क्या अपनी रचि एव मित्रता क पत्र बवहार अथवा आदान प्रदान का प्रबन्ध नहीं कर सकता ? कहन का तात्पर्य यह है कि तुलसी और रहाम के सम्बन्ध म सन्धि करन की गुजाइश नहीं है । एक बात और है तुलसी केवल साहित्यिक या लगीनी मार भस्त ही नहीं थ व समय गुफ रामदास की भाँति राजनतिक नातिदष्टा भी थे । रहीम जस प्रभावशाली राज्याधिकारी की मित्रता उह अपेक्षित भी थी । उधर रहीम जम सस्कृत व्यक्ति का भी अपनी मानसिक एव आध्यात्मिक अभितप्ति के लिए तुलसी स बन्ध कर बोइ कवि उन दिना त्वाजन पर भी न मित्रा हागा । आधुनिक नातिदर्शी महर्षि दयानन्द की भाँति प्रात स्मरणीय तुलसीनास भी विन्शी राज्य का चाह वह कितना सुखकर क्या न हा अचछा नहीं समझने थ । उधर यह आश्चर्य की बात है कि रहाम भी राजनतिक सुख की अपेक्षा धर्म की अधिक महत्त्व देत थ । महाराणा अमरसिंह तथा रहीम म दोहा का आदान प्रदान इस तथ्य का प्रमाण है ।

कहन का तात्पर्य यह है कि तुलसी और रहीम के स्वभाव भी एक दूसरे क अनुमूल थ । उनकी बपम्प म भी साम्य था । एक बाहा स्थिति से राजा तथा अदर

म उदार एव निद्वन्द्व था दूसरा बाह्य दृष्टि से निद्वन्द्व और फनकड तथा आंतरिक प्रतिभा के कारण काटि काटि जन मानसा का राजा था। अत एक दूसरे की मित्रता के माथ माथ विचारा और साहित्यिक भावा का भी आत्मान प्रगट हुआ तथा वे दोनों युगपुरुष एक दूसरे से परस्पर प्रभावित हुए हा ता इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। सत्य भी यही है कि रहीम और तुलसी दोनों ही नीलि काव्य के क्षेत्र में एक दूसरे से प्रभावित थ। उनका पारस्परिक प्रभाव न केवल साहित्यिक चरन सामाजिक तथा व्यक्तिगत क्षेत्रों में भी रहा था। खद है कि उनकी पारस्परिक भेट के सम्बन्ध में अधिक एतिहासिक एवं निश्चित तथ्य आज तक प्राप्त नहीं हा सक हैं।

रहीम और श्री व्यास जी

व्यासजी भारत कवि थ। इनका रचनाकाल स० १६०० स १६६६ तक माना जाता है। अत य भी गोस्वामी जी के समान ही रहीम के समकालीन थ। रहीम तथा व्यास जी के दादा म कटो कटी भाव तथा कही कही भाषा साम्य दृष्टिगोचर हाता है। मुख्य बात यह है कि एक ही शब्दावली का प्रयोग एक ने किसी अन्य विषय के प्रतिपादन के लिए किया ह तो उसी शब्दावली (विशेषत मुहावरों) का प्रयोग दूसरे ने किसी दूसरे विषय के लिए। अत हम किसी को किसी का प्रभावित नहीं कह सकत। साम्यसाथे न कुछ छ द निम्नांकित हैं। व्यास जी के य दोठे, श्री प्रभुदयाल मीतल के ग्रन्थ भक्तकवि व्यास जी से उद्धृत हैं—

सता सूरमा सत जन, इन समान नाह और।

अगम पथ को पग धर डिंग न पाव ठौर ॥

रहीम ने इसी से मिलता जुलता चित्रण प्रेम पथ का किया है। उनके विचार में भी प्रेम पथ से डगमगान वाले का कही स्थान नहीं रहता—

रहिमन मारग प्रेम की, मत मनिहीन मभाव।

जो डिंगिहें तो फिर कट्टे नहीं धरन को पाव ॥

दीन और दीनबध के सम्बन्ध में रहीम तथा व्यास जी के कथना में पर्याप्त साम्य है—

व्यास दीनता के सुखहि कह जान जग मद।

दीन भये ते मिलत हैं दीन बधु सुख-कद ॥ —व्यास जी

दिव्य दीनता के रसहि का जान जग अधु।

भली विचारी दीनता दीन बधु से बधु ॥ —रहीम

यहा अवलोकनीय रहीम द्वारा प्रयुक्त दीनता का दिव्य विनोपण है। दीनता में यदि दियता है तब तो वास्तव में वहाँ भी अचूका रस है और यदि टुकड़ा मांगन की दीनता है तब वह सा गत नरक है। व्यास जी तथा रहीम के अर्थ दोहा में गद्द साम्य देखिए—

श्री राधावर ध्यान के, और ध्याहिये कौन।

ध्यास हि देन उन नहीं बरी बरी प्रति लौन ॥

पात पात को सोचिबों बरो बरो को सोन ।
 रहिमन ऐगो बुद्धि को बगो बरगो सोन ॥
 व्याम घसत मीठ बट्टे, गरबूजा की भांनि ।
 ऊपर देगो एक तो भीतर तीयो पांनि ॥
 रहिमन प्रीति न कीजिए जस गीरा न कीन ।
 ऊपर स तो निल मिला भीतर पांन सोन ॥

एसी प्रकार ककर की पचना का भी राजा कजिया न मरुत का साधारण उन हुए समान प्रयोग किया है । भाव ही रही गन्धर्वनी भी एष्यम एष ही है । एत मोर गन्धर्व परिवर्तन विषय महत्वपूर्ण नहीं । गन्धर्व ही है कवल नाम की छाप का धनर है—

ध्यात घडाई सोच की कूबर की पहचानि ॥
 प्रीति कर मुग घाटहों बर बर तनु हानि ॥^१
 रहिमन जगत घडाई की कूबर की पहचानि ।
 प्रीति कर मुग घाटई बर बर तन हानि ॥

एन उदाहरणा से स्पष्ट है कि रहीम तथा व्याम जी के वाक्य में धनर गन्धर्व लोकोक्तिया तथा भावा का समान रूप से प्रयोग हुआ है ।

रसखान तथा रहीम

रमयान का नाम चाहे जो भी हो परन्तु इनका वाक्य वास्तव में रम की खान है । मुसलमान हान के नाते यदि इन्हें 'रस खा' कहा जाय तो वाक्य रम तथा खा साहब दोनों के साथ 'याय' होगा । रसखान भी रहीम के समसामयिक ही थे । विद्वाना का अनुमान है कि रसखान न जिस एकमात्र एतिहासिक तथा अपने जीवन काल की घटनाओं की ओर सकेत किया है, उसका सम्बन्ध ग़ाह मसूर की फासी से है । ग़ाह मसूर को फासी रहीम के चौबीसवें वष में लगी थी । इस दृष्टि से सबसे बड़ा साम्य दोनों का व्यक्तित्व है । मुसलमान होत हुए भी भगवान कृष्ण पर इतनी प्रगाढ़ श्रद्धा और इतना अधिक विश्वास, धार्मिक सकीणता के लिए एक चुनौती है । श्रीकृष्ण विश्वास सम्बन्धी छत्रा को देखने से दोनों का भाव साम्य स्वतः स्पष्ट हो जाता है—

रहिमन को कोऊ का करे, ज्वारी चोर लबार ।

जो पत राखन हार है, माखन चाखन हार ॥ १७ १७५

काहे को सोच करे रसखानि, कहा करि हे रविनन्द विचारो ।

साखन जाखन राखय माखन चाखन हारो जो राखन हारो ॥

कहा करे रसखानि को, कोऊ चगल लबार ।

जो प राखन हार है माखन चाखन हार ॥

१ भक्त कवि व्यासजी प० प्रभुदयाल मीतल (प्र० स० मथुरा), पृ० ४१५ १२

२ रसखान जी के सभी दोहे रमयानि ग्रन्थावली (सुजान रसखानि) सम्पा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र (वनारस स० २०१०) से उद्धृत हैं ।

वन्दावन म नाथद्वारा म प्रवेश न पान पर रहीम द्वारा निम्नलिखित दोहा कहा जाना प्रसिद्ध है—

हरि रहीम एभी करी ज्यों कमान सर पूर ।

सखि आपनी भोर को डारि दयो पुनि दूर ॥

धनुष बाण क भाव का एसा ही एक प्रयोग रसखान न भी किया है—

मोहन छवि रसखानि सखि अब दग आपनि नाहि ।

छेके भावन धनुष से, छूटे सर से जाहि ॥

वस्तुतः रसखान सौम्य और भक्ति के कवि हैं जबकि रहीम सौन्दर्य तथा नीति के । रहीम के वाक्य म भक्ति आनुपमिष है । अतः रहीम और रसखान क भाव सादृश्य की सम्भावना सौम्य क ही क्षेत्र म है और उस क्षेत्र म रसखान और रहीम म भाव सादृश्य अधिक माना मे देखा भी जाता है । श्री यादव ने रसखान की बहुत मुदर तथा सटीक पक्तिया उद्धृत की हैं—

नाहि तो जो रस सो रस तहें जो गोरस बेचन फेरि न जहौं । × ×

जानत हौं जिय की रसखानि सु काहे को ऐतक बाल बढहौं ।

गोरस के मिसि जो रस चाहत सो रस काहू जू नकु न पहो ॥

ये पक्तिया नगरगोभा के गूजरनी वंश म एकलम अभिन्न भी प्रतीत होती है—

परम ऊजरी गूजरी दह्यो सोस प लेइ ।

गोरस के मिसि डोलही सा रस नकु न देइ ॥

दोना की ग्वालिन गोरस देन का ता समुच्चन है किन्तु सा ? रस देन का नाम तब नहीं लती । दाना कविया न किस कमाल का सयोग-सलाप कराया है, परम प्रत्यक्ष हात टुए भी परम गुह्य । —मरहट्टनधूकुचाभ

कवि आगर अरु तिय मुकुच अध उधरे मुख बेत ।

अधिक टेक हू मुख नहि उधरे महा अहेत ॥

इस प्रकार शृंगारिक सद्काय म रहीम तथा रसखान का भाव साम्य अनक स्थला पर दखन म आता है । प्रसंगान्तर क भय म केवल एक ही उदाहरण और प्रस्तुत किया जा रहा है—

पलटि चलो मुमुकाय दुति रहीम उपजाय अति ।

बाती सा उसकाय मानो दीनी दीप की ॥

—ग ० सो ० ८० ८

कितना मुदर भाव है कमी अछूती उपमा तथा अनूठी उत्प्रेक्षा । रसखान का भी यह भाव बहुत अधिक भाया था । उन्होंने एकाधिक पक्तिया म इस अपन प्रकार स सजाया है—

सा हैं तरंग अनग की अगनि ओप उरोज उठी छतिया की ।

जोवन जोति सो यों दमके उसकाय दई मानो बाती दिया की ॥

एहो में आधत बाह्य सुन हुलसे तरकी जु तनी अगिया की ।

यों जग जोति उठी तन की उमकाय दई मानो बाती दिया की ॥

दोना व क्षेत्र नीति की दृष्टि से मूल नहीं खात। फिर भी प्रेम भक्त में दाना का विचारसाम्य स्पष्ट है। वही कही तो वण-योजना शब्द चयन भी एक सा है। किम पर किसका प्रभाव है यह निर्भ्रान्त न होते हुए भी दोना का भाव साम्य स्पष्ट है।

रहीम और बिहारी

रहीम और बिहारी का परस्पर सम्बन्ध कहा तक रहा था, अथवा रहा भी था या नहीं यह निश्चित कहना सरल नहीं है। हाँ इतना अवश्य है कि बिहारी रहीम के जीवन काल में ही अपना काव्य जीवन आरम्भ कर चुके थे। बिहारी का जन्म अकबर के राज्य-बाल के अंतिम वर्षों में हुआ था और मृत्यु औरगजेब के राज्या-रोटण के कुछ वर्षों पश्चात्।^१ वृत्तान्त में शाहजहाँ के साथ स्वामी चिरमुखानन्द के दगावा के समय बिहारी की गाहजहाँ से प्रथम भेंट (स० १६५७) में हुई। उसके पश्चात् जब गाहजहाँ ने बिहारी को आगरा बुलाया तब रहीम ने उनकी कविता की सराहना भी की थी।^२ रहीम की सिफारिश तथा उनके काव्य की सरसता ने ही बिहारी गाहजहाँ सम्पर्क को दृढतर किया होगा। रहीम से प्रभावित भाव निम्न लिखित दोहा में दगे जा सकते हैं—

ज्या नना सना करे उरज उमेठे जाये । —रहीम
लगा लगे लोयन करे, नाहक मन बधि जाहि ॥

—वि० रत्ना० ४०७

किन्तु सहृदय स्वयं निणय कर सकते हैं कि महा-लोचना की समालोचनी अधिक आनन्दप्रद है कि उरज उमेठन।

प्रमी हृदय रहीम ने प्रमिया को प्रत्यक्ष बतावनी दी है कि वे इस भ्रम में न रहें कि उनका प्रेम छिप छिप चलता रहेगा। प्रेम ऐसी वस्तु नहीं जा छिप सक—

बहि रहीम इक दीप ते प्रगट सब दुति होय ।

तब सनेह कसे दुरे दग दीपक जरु दीय ॥ रहीम रत्ना० ६२७

प्रेम पय के परम पारखी बिहारी ने यही भाव एक दाहे में अपनाया है—

प्रेम अडोलु डुले नहीं मुह बोले अनखाइ ।

चित्त उनका मूरनि बसा चित्तबनि माहि स्याइ ॥

—वि० रत्ना० प० ६२१

चित्त में प्रमा की मूर्ति का इस प्रकार बना जाना कि उसकी स्पष्ट भवत्-पुनरिया में दगा जाय—वाग्द्वय में गुण-वन्द्या है किन्तु रहीम का भाति मारापा-गीता का महामता में दा दण्य-पीपका की विद्यमानता के कारण अन्ततः के मार भाव

१ बिहारी मामासा टा० रामगान्धर्व त्रिपाठी (मगाव प्रकाशन दिल्ली १९६०)

प्रकाशित कर देने में कुछ और ही स्वाभाविकता है जिसके दग्ध विहारी की सगम किन्तु सुदूरवर्ती कल्पना में नहीं हात। फिर भी विहारी को अक्लान्त था। उनका काव्य साध पर उतरा हुआ काव्य है जबकि उचारे रहीम का उतना अक्लान्त कहा ? उनकी कविता तो हृदय का स्वाभाविक उच्छवास है। रहीम के काव्य में ग्राम की सम्म गह वधू का सहज स्वाभाविक एक अकृत्रिम सौन्दर्य है तो विहारी की कविता में आगरा दिल्ली की सजी सेंवरी नायिका के नृगार की चमत्काम—

बरो कुवत जगु कुटिलता तजौं न दीन दयाल ।

दुखा होउगे सरल चित्त घसत त्रिभगी लाल ॥

—विहारी रत्ना० ८२५

टढी चुभी वस्तु आसानी से बाहर नहीं जा सकती इस दोह का आधारभूत भाव यह है किन्तु विहारीलाल वृष्ण की त्रिभगी मुद्रा तक ऐसे पहुँचे हैं कि शायद श्रीकृष्ण को भी उनका भाव समझने में देर लग। दूसरी ओर वन भाव का प्रयोग रहीम अपने एक दोह में पहले ही कर गये—

बाकी चितवन चित्त चो, सूधो तो कछु धीम ।

गासी तें बढि होत दुख काडि न सकत रहीम ॥

—रहीम रत्ना० १३ १२८

एक भाव और लीजिए—

कहा बरौ बकुण्ठ ल, कल्पवक्ष को छाह ।

रहिमन ढाक सुहावना जो प्रीतम गल बाह ॥ —रहीम

जो न जुगति पिय मिलन की धूरि मुक्ति मुह दीन ।

जो लहिय सग सजन तो धरक नरक हूँ बीन ॥

—विहारी रत्ना० ७१

रहीम उस बकुण्ठ तथा कल्पवक्ष को भी प्रेम नहीं करना चाहत जहाँ प्रिय उपलब्ध न हा। यदि उनके गल में बाह डालने का अवसर प्राप्त हा तो (केवल तीन पात वाला) ढाक भी सब विधि सुगम है। इसी प्रकार विहारी प्रियतम के साथ निधडक नरक में प्रवण करना उत्तम समझते हैं और प्रिय विषुक्त मुक्ति के मुह पर व्रि फेंकते हैं। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि जसी धूरधपार भरी गन्दावली का प्रयोग हमारे विहारीलाल जी मुक्ति के लिए करते हैं वसी बात रहीम मुमलमान होते हुए भी कही नहीं करत। हमारे प्रिय के साहचर्य का कामप्रद कल्पवक्ष एक सुख सम्पन्न बकुण्ठ के साथ बणन जितना तरन है उतना मुक्ति के साथ नहीं। अत स्पष्ट है कि मजमून चुराने में कुगन विहारी रहीम का भाव लेत हुए भी यहा मून की सी विदग्धता नहीं ला पाय है।

कुछ भी हा दमम इतना ता स्पष्ट है ही कि नीति के क्षेत्र में विहारी और रहीम के छंदा में भाव साम्य है अवश्य।

रहीम और बिहारी के क्षेत्रों में भिन्नता है। रहीम प्रधानतः नीति के कवि हैं और बिहारी शृंगार के। बिहारी में नीति गौण है और रहीम में शृंगार। बिहारी यदि नीति के क्षेत्र में रहीम का अनुसरण करते हैं तो कोई विघ्न वात नहीं आश्चर्य तो तब होता है जब हम बिहारी को रहीम के शृंगार वर्णन का अनुसरण करते हुए देखते हैं। त्रिया चतुर नायक के वर्णन से यह तथ्य स्पष्ट हो जायगा—

खेतत जानेसि रोलिया नद बिगोर ।

छई बधभानु कुमरिआ मगा चोर ॥ १०० भेद १०८

दोऊ चोर मिहीचनी खेतु न खेलि अघात ।

दुरत हिये लपटाइ के छुवत हिये लपटात ॥

—बिहारी रत्ना० ३३०

रहीम तथा बिहारी दोनों का भाव एक है प्रसन्न भी दोनों का एक ही है। ही बिहारी अपनी स्वाभाविक रीति के अनुसार जान को और अधिक मासत तथा रोमांटिक बना गये हैं। यहाँ तब कि उमर अस्वाभाविकता की भी गद्य ध्यान नहीं है क्योंकि साथ साथ अन्य मिथोनी मन्ता वात लडक तर्कियाँ (यदि तर्कियाँ भी मन्तन में बजित न हों तो) चार बनाने के लिए एक दूसरे को हान भर है का प्रगाड अतिशय करत चोर गहा बना बनाता। साथिया के सम्मुख तो यह और भी असम्भव है। अतः छुई बधभानु कुमरिया मगा चार में जो मन्त्र स्वाभाविकता एक प्रच्छन्न मुतामक अनुसारा का भावना मप्रतिष्ठित है यह दुःख निय तपता के शयन निय तपता मन्ता है। अर्थात् मन्ता करिया की प्रकृति का अतमान लगाया जा सकता है परन्तु यहाँ हमारा विवेक भाव माध्य तथा भाव लक्षण है जो कि नीति के अनिश्चित शृंगार के धार में भाँ सुझाता है।

बिहारी और रहीम में जोय माध्य का तथा भाषा माध्य भाँ कर्त्तव्यता एक प्रतिष्ठित होता है। बिहारी अम तप्य विद्या का र म की का तप्यता अरण करता म्ग बना का प्रमाण है कि तप्य विद्या के अतमान र म की अतमान तथा अतिशय का का की अतमान म तप्यता म्ग का। भाषा माध्य विद्या—

कतिमत हात तरत गो हात बरा नहि काम ।

म, १ इमाना का बन तो अत क काम ॥

अपनी सतसई की नीव रहीम ही क दोहा पर डाली । ' अभी तो यह कथन अत्युक्ति ही है । सम्भव है रहीम सतसई के शृंगार सम्बन्धी दाह मिलन पर यह कथन सत्य सिद्ध हो जाय ।

रहीम और मतिराम

मतिराम की गणना रीति कालीन आचार्य कवियों में होती है । वस्तुतः रीति की प्रवृत्ति अग्रिम काल में भी साथ साथ अप्रमुख रूप से चलती रही थी । नददास तथा रहीम क नायिका भेद विषयक काव्या का उत्प्रेषण किया ही जा चुका है । गत पृष्ठा में बिहारी और रहीम के साक्षात्कार का उल्लेख भी हो चुका है । बिहारी रीति काल क शीपस्थ कवि है । अतः स्पष्ट है कि रीति काल रहीम क जीवन में ही आ चुका था । विद्याना क विभिन्न उद्धरणों तथा तर्कों ने यह सिद्ध भी कर दिया है कि मतिराम महाकवि बिहारी से पर्याप्त रूपेण प्रभावित थे । उधर 'रसरज के नायिका लक्षणों में यह रहीम के पूरी तरह श्रृणो है । इस सम्बन्ध में हम पहले ही समीक्षात्मक विवरण प्रस्तुत कर चुके हैं । अतः मतिराम पर रहीम के प्रभाव के प्रसंग में अपनी आर स और अधिक न कहकर उनके विषय अच्युता डा० त्रिभुवनसिंह के शब्द उद्धृत करके हम प्रसंग को समाप्त करते हैं— मतिराम का मार्मिक ढंग रहीम में दृष्टना व्यक्त है किन्तु जहाँ तक उनके (रहीम के) कवारे भावा तथा अछूती उक्तिया का सम्बन्ध है मतिराम का उनका श्रृणो मानना ही पड़ेगा । इस प्रकार के एक नही उनके दाह है जो मतिराम सतसई से उद्धृत किया जा सकता है जिन पर रहीम की रचनाओं का प्रभाव है ।

रसनिधि और रहीम

रौनी (दतिया) के जागीरदार पृथ्वीसिंह जी रसनिधि वास्तव में रस की अपार निधि थे । उनके काव्य में प्रेम का सागर उमड़ता दिखाई पड़ता है । नीति कवि रहीम से उनके काव्य प्रत्यक्ष सम्बन्ध तो नहीं है परन्तु प्रमगानुसार आई उक्तियाँ म रहीम के साथ विषय साम्य अवश्य देखा जा सकता है । वस भी य बिहारी एवं मतिराम क समान रहीम के मामल उदीयमान कवि रहे होंगे । डा० श्यामसुन्दरदास ने इनका रचना काल स० १६६० से १७१७ वि० तक माना है । अग प्रत्यग सम्बन्धी वणना में यह रहीम से प्रभावित जान पड़ता है । नत्र सम्बन्धी भाव दक्षिण—

जा कछु उपजत आइ उर सो के आख देत ।

रसनिधि आखें नाम इन पायो अरथ समेत ॥

—सत० सप्तक १६६ ३४४

यहाँ आख शब्द में श्लेष है । नत्रों क अतिरिक्त पजाबी भाषा में आख का अर्थ बनाना या कहना भी होता है । स्पष्ट है कि इस दाह में श्लेष का प्रयोग तो रसनिधि

१ नागरा प्रचारिणी पत्रिका ग्यारहवाँ भाग—प० सूयनारायण दीक्षित का शब्द—
अक्षर के राजत काल में हिन्दी लम्बक, पृ० ६८

का अपना है और मूल भावना रहीम के निम्नलिखित दाह की—

कहि रहीम इकनीप तें प्रकट सब दुति होय ।
तन सनेह कसे दुरे, दग दीपक जरु दोय ॥

—रहीम रत्ना० २ २७

यह भी ध्यान देने योग्य है कि दीपक के सम्मुख किसी वस्तु का न छिपना आखने के दलघ की अपेक्षा रम्यतर है। रसलील का निम्नलिखित दोहा ता रहीम का मात्र अनुमरण ही है—

रहिमन यों मुख होत है चडत देख निज गोत ।
ज्यों बडरी अलिषां निरम अलिषन को मुख होत ॥

—रहीम रत्ना० २० २२०

बन्त आपुने गोत क और सब अनलाय ।
सुहृद नन नना बड देगत हृदय सिहाय ॥

—सतसई सप्तक १८० ६०

अनुकरण करत हुए भी रसनिधि रहीम की भी भावामन सरनना नहा ना पाय है। रत्नाम का बन्गी गन् बहूत ही गुन्र है। यन् गन् बडा प्यारा तथा वन्ग पारिवारिक है जा गान के प्रमग म और भी सगीक है। बडी लडकी का आज भी मानाण बढेनिया कहकर पुकारती है। बन्गी गन् म वन्ग स्वनि है। भाव साम्य के गानक अय उगायण भी तीजिए—

जलहि मिनरई रत्नाम ज्यों जियो आप सम छोर ।
आगवहि आपहि आप ज्यों सकल आंच की भीर ॥

—रहीम रत्ना० ६ १६

तोप मान म देत हो छीरही मतिग बडाइ ।
आंच न लागन इन बह आप पहिल जरि जाइ ॥

—सतसई सप्तक २ १६१

अनुचित उचित रत्नाम सय करहि बहन क जोर ॥
ज्यों मनि क मय ग न पचयन आगि चरोर ॥—रत्नाम
याह [दम बह मन है पावक बिनगी नाय ।
बहहि क। पारन तग ता बहार दिन जाय ॥

—सतसई सप्तक २ १६१

अनम छिदि नवन वना पर छिदि बह गमाय ।

अन रत्नाम रत्नाम मनि अय पहिल जरि जाय ॥—रत्नाम

अधिक है जा रहीम के मौलिक है, सम्बृत्त प्रभावापन्न नहीं। अतः परिणाम निकलता है कि रहीम न नीति के क्षेत्र में ही नहीं शृंगारादि के क्षेत्र में भी कविया को प्रभावित किया था।

अहमद कवि और रहीम

अहमद कवि रहीम की छोटी पीढ़ी के समकालीन है। प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इनका रचनाकाल स० १६७० वि० स्वीकृत किया है।^१ खोज रिपोर्ट १९२० के अनुसार इनका गुनसागर ग्रंथ का रचना काल स० १६७८ वि० प्राप्त होता है। साहित्य में अत्यन्त प्रसिद्ध भवने ही न हो किन्तु नीति की दृष्टि से इनका काव्य की उपाधि नहीं दी जा सकती। अहमद रहीम के नीति काव्य में बहुत अधिक प्रभावित जान पड़ता है। इस प्रसंग में प० यासिन न दाहासारमग्रह तथा गुणगजनामा के आधार पर रहीम ग्लावनी में इनके कुछ ऐसे दाहा का भी उद्धृत किया है (जो रहीम के होते हुए भी) इनके नाम पर प्रसिद्ध हैं। जस—

अहमद दाहे प्रेम के बूझि बूझि के सिलगाहि ।
जो सिलगे ते फिर बुझे बुझे ते सिलग नाहि ॥
अहमद तजौ अगार ज्यो छोटे को सग साथ ।
सीरो पर कारो करे तातो जारे हाथ ॥

कही-कही पर अहमद न नाममात्र के परिवर्तन कर रहीम के दाह ज्यों-के-या अपना लिए हैं। यथा—

अहमद गति अबतार की सब कहत ससार ।

बिछुरे साथी फिर मिल यहै जान अबतार ॥—गुणगजनामा

यहाँ नीचे की पंक्ति पूरी की पूरी रहीम की है। वसी प्रकार रहीम और रीवा नरेश का प्रस्तोत्तर 'जाके सिर अस भार छाति लोहा प्रसिद्ध ही है। उमी के आधार पर अहमद का दाहा देखिए—

यकजि रहे उरवार, जिन सिर भारी भार ५ ।

अहमद उतरे पार भार भवो के भार मे ।—गुणगजनामा

यहाँ गंगा में थोड़ा-सी फेर फार है अथवा पूरा का पूरा दाहा रहीम का ही है। स्पष्ट है कि अहमद रहीम से अधिक प्रभावित थे।

वृद्ध और रहीम

रहीम के पश्चात् नीति-काव्य के निमाताओं में उनकी श्रेष्ठता का एक ही कवि माना जाता है अतः यह है वृद्ध। वृद्ध का जीवन काल स० १७०० स १७८० वि० तक है। कविता में वृद्ध की मिला थी। उनके पिता श्री कविरूप जा सिंग के कवि थे। य अनेक राजा महाराजाओं के दरबार में रत्थ। इनमें श्रीगजब तथा कृष्णग नरेश

१ हिंदी साहित्य का अतीत (शृंगार धार) भा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र (वाराणसी २०१७ वि०) पृ० ८२३

दण्ड और सप स्वभाव के बणन म भी व द रहीम से प्रभावित हैं—

रहिमन लाख भली करो अगुनी अगुन न जाय ।

राम सुनत पय पिअत हूँ साप सट्ज धरि लाय ॥

—रहीम रत्ना० २२२ ६

दुष्ट न छाड दुष्टता पौखे राखे ओट ।

सरपहि केतो हित करो चप चलाव चोट ॥

—सतसई सप्तक २०६ ४१

दाना दाहा पर ध्यान देने स पात होता है कि व द वह विप्यवता नहीं ला सने है जो रहीम के दोहा म है । वृद्ध द्वारा किय गए रहीम के अनुकरण का और भी स्पष्ट प्रमाण लिखिए—

रहिमन प्रीति न कीजिए, जस खीरा ने की ह ।

ऊपर से तो दिल मिला भोतर फाँक तीन ॥

—रहीम रत्ना० २० २०७

ऊपर दर से सुमिल सी अतर अनमिल आक ।

बपटीजन की प्रीति है, खीरा की सी फाँक ॥

—सतसई सप्तक ३२२ ४७०

कसे निबहै निबल जन कर मवलन सों घर ।

जसे वस सागर विप करत भगर सों घर ॥

—रहीम रत्ना० २ ४१

अनिम लान तो अ तरश रहीम क दाँ म मिलता है । पात हाता है कि व न इम न्या नाभ्या रहीम म ग्रहण कर लिया है । इसी प्रकार का एक अय उदाहरण नीजिए—

दोनों रहिमन एक मे जो सों बोलत नाहि ।

जान परत हैं काक विष श्नु बसत क माहि ॥

—रत्ना रत्ना० १० १०१

भले बुरे सब एक मे जो सों बोलत नाहि ।

जान परत है काक विष श्नु बसत क माहि ॥

—गनमई गनन ४६० ४१

रहीम पूर्वापर प्रभाव

छन्दोबद्ध किया था। इस प्रकार निर्भ्रान्त रूप से यह कर्तव्य का अन्वय ही है।
काव्य रहीम के नीति काव्य से बहुत अधिक प्रभावित है। बाद पर रहीम का ऋण
ठीक उसी प्रकार अम्बीकार नहीं किया जा सकता जिस प्रकार रहीम पर सस्त्रत का।

रसलीन और रहीम

शृंगार के क्षेत्र में सम्यद गुलाब नबी 'रसलीन' जिनग्रामी रहीम के ममान
ही आदर का पात्र है। इनका जन्म अनुमानतः स० १७६५ वि० के लगभग माना
जाता है। सरोजकार न इन्हें अरबी फारसी का आलम और ब्रज भाषा का निपुण
कवि बताया था। ये शृंगारिक कवि थे। अग्रदण्ड तथा रसवाच इनकी काव्य
शैली के स्पष्ट प्रमाण हैं। इनका दाह एक न एक बढकर है—

चल चलि स्रवन मिल्पो चहत कुच बाडि छुवन छवानि ।

कटि निज दरब धरयो चहत वक्षस्थल मे आनि ॥

यदि उनकी प्रतिभा कही नीति की आरंभ लगी तो महान उपकार कर सकती थी।
नीति रचना की सामर्थ्य का प्रमाण निम्नलिखित दाह में मिलता है—

धरति न चौकी भग जरि यातें उर मे लाइ ।

छाह परे पर पुरप की, जनि तिय धम नसाइ ॥

—क० कौमुदी पृ० ८६८

सहृदय जन दाह की जिनकी सराहना कर धाड़ी है। उनके और बरब नायिका भेद का
उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। यहाँ हम भाव साम्य का केवल एक उदाहरण
प्रस्तुत करते हैं—

रहीम मनसिज माली की उपज, कही रहीम नहि जाय ।

फल न्यामा के उर लग फूल न्याम उर आय ॥ १४ १२६

रसलीन लिखि विरचि राह्यो हुतौ यह सयोग इक अग ।

कुच उतुग तिय उर चडे, पिय उर चड अनग ॥

—क० कौमुदी पृ० ८८

गिरधर कविराय और रहीम

गिरधर कविराय का जन्म स० १७७० वि० में हुआ था। ये नीति कुण्डलिया
का महारथी थे। कही कहा रहीम का भावा की छाप गिरधर पर भी दिखाई देती है।
एक दा उदाहरण ही पर्याप्त हाग—

रहीम जो पुछपारथ ते कहें सपति मिलत रहीम ।

पेट लागि बराट घर तपत रसोई भीम ॥

—रहीम रत्ना० ७ ७१

इसी भाव पर गिरधर की कुण्डला दविए—

साई अचर के पडे, फीन सह दुख द्वन्द ।

जाय बिकान डोम घर के राजा हरिचन्द ॥

वह गिरधर बविराय, तपे वह भीम रसोई ।

को न करे घटि काज, परे अघसर के साई ।।

—२० कीमुदी ४८६ १४

चिन्ता व मन्त्र व म रहीम का विचार है—

रहिमन कठिा चितान ते चिन्ता को चित चेत ।

चिता वहति निर्जोव कह चिता जीव समेत ॥—२० रत्ना० १७ १७०

श्री भाव का विस्तार न हूण गिरधर न लिखा है—

चिन्ता ज्वाल शरीर बन, दावा लगि लगि जाय ।

प्रगट धुवा नहि दत है उर अतर धुधियाय ॥

उर अतर धुधियाय जर ज्यों काच की भट्टी ।

जर गयो लोहू मास, रह गई हाड की तट्टी ॥

कह गिरधर बविराय सुनो हो मन व मित्त ।

वे नर कस जिर्मे जाहि तन घ्याप चिन्ता ॥

अनुभव सिद्ध तथ्य है कि उड आशमी सामान्य स्तर से यदि तनिक ऊंचा वाय कर न ता उनका यग चारा भार फल जाता है यदि छात्र आशमी उससे कई गुना वाय कर जान तब भा उत्र बाद नही पूछता । रहीम न हनुमान तथा धाट्टण का उदाहरण न्त हूण लिखा है—

धोरो स्थि बडन की बडी बडाई होय ।

ज्यों रहीम हनुमत को गिरधर कहत न कोय ॥ २० रत्ना० ६ ६२

गिरधरनाम न श्मा भाव का अपनी कुण्ठली म व्यक्त किया है—

साई एक गिरधरयो गिरधर गिरधर होय ।

हनुमान बट्ट गिरि घरे गिरधर कहत न कोय ॥ × × ×

घारे हा जस होय जसो पुण्या को साई ॥—गिरधरनाम

कृष्णचिन्ता व अनिरिक्त गिरधर व शूद्र भा राम म विचार माम्य रमन है । विपत्ति म साथ नन व प्रमग म राम न क शूद्र विप है । राम म मित्रता जूतना भाव श्लिष—

गुण दुग अर विप्रह विपत्ति या में तज न भग ।

गिरधरनाम बन्नाश्रिय मित्र सोई घर दग ॥

- रहीम जब लागि जीवन जगत मे सुख दुख मिलन भ्रगोट ।
रहिमन फटे गोठ ज्यो परत दुहुन सिर चोट ॥
- गा फूटे ते नरद उडिजात बाजी चौसर की,
आपुस के फूट कहे कीन को भली भयो ।
- रहीम कहा करिय बकुपठ बसि कल्प तरु की छाह ।
रहिमन टाक सराहियो जो पीतम गल बाह ।
- रहीम रहिमन नीच प्रसंग त नित प्रति लाभ विचार ।
नीर चुरावत सपुटी मार सहतु धरियार ॥
- द्विजदब पीहे घटे रस कोली लला भ्रम धात तहे धरियार विचारी ।
- रहीम रहिमन इय दिन वे रहे बीच न सोहत हार ।
बापु जो एसी वही, बीचन पडे पहार ॥
- घनानन्द तब हार पहार से लागत ये, भ्रम बीचन आय पहार परे ॥
- रहीम हरि रहीम ऐमी करि ज्यो कमान सर पूर ।
खचि आपनी शीर को डारि बियो पुनि दूर ॥
- चीनदयाल गिरि सरल सरल ते होय हित नहीं सरल अरु बरु ।
ज्या सर सुधहि कुटिल धनु डोरे दूर निसक ॥
- रहीम ते रहीम पशु त अधिक् रोम्भू कछु न देत ॥
- श्रीपति भ्राज के जमाने बीच राजा, राव जान सब,
रोम्भि के पाइव को वाह वा डकार है ॥
- रहीम बडे पेट के भरन को है रहीम दुख बाग्नि ।
याते हायहि हहरि के, दिये दात द्व काढि ॥
- निहाल बडे पेट को दुख कर मन सतोय 'निहाल ।
दात बाढि हायिन दये, बडे पेट के हाल ॥
- रहीम मयत मयत मावन रहे, दही मही बिलगाय ।
रहिमन सोई भीत है भीर पडे ठहराय ॥
- शकर मयत मयत मावन रह्यो, मह्यो गयो महराय ।
शकर सो बहु मोल जो भीर परे ठहराय ॥
- रहीम रहिमन ओछे नरन सो बर भली ना प्रीत ।
काटे चाटे स्वान के दुर्हो भौति विपरीत ।
- वाजिन् बिरचे काटे पाव को राचे चाटे मुखल ।
वाजिद स्वान की दोस्ती दुहु परे है दुखल ॥
- रहीम 'रहिमन घडिया रहट की त्या ओछे की बीठ ।
रोतहि समुल होत है भरे दिराव पीठ ॥

हरिवंश हरिवंश अरहट की धरी ज्या कुमोत की ईठ ॥
जब खाली तब समुली, जब सभार तब पीठ ॥
रहीम मनसिज माली की उपज कही रहीम नहि जाय ।
फल श्यामा के उर लगे, फूल श्याम उर आय ॥
जसवन्तमिह रोमावलि कोमल लता लागी सिय के गात ।
जावपुर महाराज कुच फल देखत पीय के, अग अग फूलत जात ॥

आधुनिक कवि और रहीम

रहीम अपने क्षत्र में सर्वोत्तम शिखर पर आसीन है । पूर्व मध्ययुग तथा उत्तर मध्ययुग के कवि ही नहीं आधुनिक काल के कवि भी उनके नीति काव्य से प्रेरणा ग्रहण करते आये हैं । भारत-दु हरिश्चन्द्र ने गृहव्यवस्था पर भाव प्रकट करते हुए कहा है—

खसम जो पूजें देहरा, भूत पूजनी जोय ।

एक घर में द्वै मता कुशल कहां ते होय ॥—भारत-दु

कहने की आवश्यकता नहीं कि दोहों की प्रेरणा भारत-दु जी का रहीम से ही मिली होगी । रहीम का भाव इस प्रकार है—

पुरुष पूजें देवरा, तिय पूजें रघुनाथ ।

कहि रहीम दोउन बन पडौ बल को साथ ॥—रहीम

उनका एक अर्थ उदाहरण लीजिए । जो आनीतानतव मया आदि पर आधारित है—

धनु लख चौरासी सजे नट सम रिभवत तोहि ।

निरखि रीझ गति देहु खीझ निबरहु मोहि ॥ —भारत-दु

लाला भगवानदीन ने लिखा है—

राजी होय न जगत में को जन भोजन पाय ।

मरदगहु मुप लेप लहि मधुर सुरन बताय ।

कहने की आवश्यकता नहीं कि संस्कृत आधारित यह भाव रहीम का ही है ।

इस प्रकार अनन्यतः उदाहरण आधुनिक काल और विशेषतः द्विवेदी युगीन कविता के काव्य में ग्राह्य जा सकता है । आकार वृद्धि के भय से यहाँ उद्धृत नया किया जा रहा है । किन्तु इतना अवश्य है कि आधुनिक कवि रहीम के नीति काव्य का जान-अज्ञान उपयोग अवश्य करते रहे हैं । मयुरा के श्री नवनीतजी चतुर्वेदा का कुण्डलियाँ तो हम यथास्थान उद्धृत कर ही चुके हैं—दृष्टान्त का नाम भी लिया जा सकता है । रहीम के दाहा पर उन्होंने उसी प्रकार कुण्डलियाँ लिखा जिस प्रकार बिहारा के दाहा पर कुठ लाता लिखते थे । उदाहरण के लिए उनकी दाचार कुण्डली निम्नादि—

१ निज कर किया कहि मुधि भावा के हाय ।

पासे अपने हाय में ताय न अपने हाय ॥

- दाव न अपने हाथ जदपि है हाथ पराये ।
 प बिनु कर्मन किये गुनागुन फल नाहि पाये ॥
 भाग्य भरोसे भूलि समय जनि चूके रे नर ।
 हानी होय सु होय करो कसव्य जु निज कर ॥^१
- २ दुदिन पर रहीम प्रभु दुरथल जये माय ।
 जसे जयत धूर पर जब घर लागत आग ॥
 जब घर लागन आग सब मरजाद भुलाव ।
 समुक्ति समय की फेर सभी सहत बनिआवे ॥
 जसो समयो दख रहें तसो ह्वै तू किन ।
 मौन होइ सह दास पर जो करहुं दुदिन ॥^२
- ३ कमला थिर न रहीम कहि साच कहत सब कोय ।
 पुष्प पुगतन की बधू क्या न चबला होय ॥
 बयो न चबला होय सिंधु तनया चबल मति ।
 एसन की करि तुष्ट वेग तजि सहज चपल गति ॥
 बडन गिराव दास घर छोटन सिर समला ।
 फोटि जतन स्नि करो रहै नाहिन थिर कमला ॥^३
- ४ हित अतहित सब कोउ कहै की सलाम की राम ।
 हिन रहीम जय जानिये जेहि दिन अटके काम ॥
 जहि स्नि अटक काम ता दिना मुखहि छिपाये ।
 आप सहे दुख फोटि मित्र के काम बनावे ॥
 विपति बेह जो साय मोत जानिय तेहि नित चित ।
 सम्पद मे तो धाइ वनत सहज ही सब हित ॥^४

प्रभाव की विशेषताएँ

भाव साम्य का दृष्टि से रहीम तथा रहीमेतर मध्य युगीन साहित्य का अध्ययन कर लन के पश्चात् हम दखत है कि रहीम द्विती कविया की अपना अपन पूर्ववर्ती ससृष्ट साहित्यकारा से कहा अधिक प्रभावित दीप्त हैं । समकालीना^५ से उनका

- १ मेरी भय बाधा हरी राधा नागरि साय ।
 जा तन की भाइ परे स्याम हरित दुति होय ॥
 स्याम हरित दुति होय, कटे सब कतुस बनसा ।
 मिट चित्त को भरम रह नाहि कछव अदमा ॥
 कट 'पठान गुनतान' बाणि मो दुख की बेरी ।

राधा बाधा हरी हरा त्रिनती मुनि मेरी ॥—पठान सुलतान

- २ से ४ सरस्वती हीरक जयन्ती अक गम्भा० श्रीनारायण चतुर्वेदी

(दत्तात्रेय १६६१) कविता मठ पृ० ८

- ५ रहीम के समकालीन कवियों के लिए देखिए—नवम्बर १८८६ के विज्ञान भाग
 में श्री दम्भूप्रसाद बहुगुणा का रमणानु जीवन प्रवधि सम्बन्धी लेख ।

सर्वाधिक भाव साम्य तुलसी से है। साथ ही उन्होंने अपने समसामयिक तथा उत्तरवर्ती कवियों की प्रभावित भी बहुत दूर तक किया है। बिहारी हा या मतिराम वगैरे हा या गिरधर सभी रीति-कालीन कवि उनके काव्य से प्रभावित हैं। अतः हमारे निष्कर्ष हैं कि—

- १ रहीम साहित्य के प्रभाव की सीमाएं विस्तृत हैं।
- २ उनका प्रभाव न केवल बाद गिरधरादि नीति के कवियों पर वरन मतिराम बिहारी रसनिधि आदि शृंगारिक कवियों पर भी है।
- ३ व्यापक प्रभाव के अतिरिक्त यदि कवल भाव साम्य की दृष्टि से अध्ययन किया जाय तब तो शायद ही कोई कवि ऐसा निकलगा जिसके साथ उनके विचारों की समता स्थापित न हो सकती हो।
- ४ विचार साम्य का एक प्रमुख आधार सृष्ट है। सृष्ट में पसिद्ध कुछ सामान्य भावताओं को जब कवि प्रयुक्त करते हैं, तब उनमें स्वाभाविक रूप से भावक्य आ जाता है।
- ५ भावों के साथ ही रहीम की शब्द रचना तथा वर्णन शली का भी अनेक उत्तरवर्ती कवियों ने ज्यों-का-त्यों अपना लिया है। भाव साम्य की यही स्थिति उनका प्रभाव है।
- ६ रहीम के सृष्ट मूलक भावों को तो कवियों ने अपनाया ही है उनके मौलिक भावों का भी परवर्ती साहित्य में जमकर अपनाया गया है।
- ७ किसी किसी कवि ने रहीम के छंदा का सामान्य परिवर्तित रूप तथा किसी ने उन्हें एकदम अपरिवर्तित रूप में ज्यों का त्यों ग्रहण कर लिया है।
- ८ व न केवल समसामयिक तथा उत्तर मध्यकालीन कवियों के प्रेरणा स्रोत हैं वरन आधुनिक कवि भी उनसे प्रेरणा लेते रहे हैं।
- ९ साहित्य जगत् से उन्होंने जितना लिया उसे कई गुना करके लौटाया है।

नीति, नीति-काव्य तथा परम्परा

नी घातु तथा चित्तन प्रत्यय के संयोग से बना नीति शब्द भारतीय वाङ्मय में अत्यन्त प्राचीन काल से प्रयुक्त होता चला आ रहा है। प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में नीति का प्रयोग सु ऋजु, 'वामानि विनोपणा व माय वर्द्ध वार हुद्या है। वेद तथा उसके अनुवर्ती साहित्य से लेकर लौकिक मन्वृत्त पालि तथा प्राकृतादि प्राचीन भाषाओं में होता हुआ यह शब्द भारत की आधुनिक भाषाओं तक आ गया है और हिन्दी, मराठी आदि वर्तमान भारतीय भाषाओं के साहित्य में अपन अविच्छिन्न रूप में प्रयुक्त हो रहा है। श्रुतियाँ स्मृतियाँ महाकाव्याँ चरकाव्याँ मुनिकों तथा सप्रह प्रथो के विभिन्न प्रयोगों तथा कौशाँ व आधार पर नीति व अनक अर्थ किय जाते हैं जिनका साम्प्रतिक तात्पर्य उस माँग से है जिस पर चलकर हम बिना किसी अर्थ प्राणी का अहित किए अपना हित साधन कर सकते हैं।

इस प्रकार नीति में एक पक्ष तो माँग निर्धारण या चित्तन का है तथा दूसरा आचरण अथवा अभ्यास का। चिन्तन-पक्ष नीति का धर्म दान, मनाविज्ञानानि से सम्बद्ध करना है तथा आचरण पक्ष करता स। इस प्रकार नीति का विज्ञान भी कहा जा सकता है तथा कला भी। विद्वानों का इस विषय में मतभेद नहीं है। हम नीति का व्यवहार मानने हैं। अतः हमारे विचार से नीति सफल जीवन-यापन की चित्तन प्रधान कला है। इसका व्यावहारिक स्वरूप तथा अर्थ स्वभावाँ का दण हम हम विज्ञान-धारित कला कह सकते हैं। चिन्तन-गीत प्राणी जब अपने अनुभवों का शब्दों के माध्यम से व्यक्त करता है तब वह साहित्य का अंग बन जाते हैं। यदि अभिप्रेत कर्ता की वाणी में कविजनाचित विव्यथता हुई तो वही कथन नीति काव्य का एक अङ्ग बन जाता है। सफल तथा सशम कवि उसी को कहा जा सकता है जो नीति जैसे गुण तथा अप्रिय विषय का भी सरस तथा प्रियकर दण में छटावद्ध करने में समर्थ हो। कवि जिनका ही प्रतिभावान् हाथ उमका नीति-काव्य भी उतना ही उपयोगी तथा प्रभावशाली सिद्ध हो सकता। अतः जिस प्रकार कवी की दृष्टि में कथ का कुशल कवि की कवी को माना जाता है उसी प्रकार विषय की दृष्टि में नीति को काव्य कौशल भी कवी को माना जाना चाहिए।

नीति-काव्य का सृजन भारतीय कविता की अपनी विशेषता है। वह इस दृष्टि से विश्व साहित्य में अद्वितीय है। इस प्रकार की कविता का आरम्भ वेदा से ही हो जाता है। भारतीय चिन्तन की अथ धाराया के समान ही नीति के अध्ययन के लिए ब्रह्म वाङ्मय का अध्ययन अत्यन्त उपयोगी है।^१ पुनीत आरण्यका तथा भ्रष्ट तन्त्रा में नीति-तत्त्व अत्यन्त गौण उपनिषद् तथा स्तोत्रा में सामान्य तथा (वष्णवी एवं अवष्णवी) पुराणा एवं स्मृतियाँ में सर्वाधिक है। उत्तरकालीन प्राचीन संस्कृत ग्रंथा में नीति नाय की दृष्टि से महाभारत सर्वोपरि है। वह भारतीय नीति का प्रतिनिधि विश्वकाव्य है। ध्यानव्य तथा धर्मद्रादि का साहित्य इस दृष्टि से विशेष इत्याय है। महाकाव्य खण्डकाव्य मुक्तक नाटक आदि समस्त काव्य विधाओं में गसा का भी प्रय नहीं गोजा जा सकता जिसमें यूनाधिक मात्रा में नीति तत्व विद्यमान न हो। केवल नीति निर्माण की दृष्टि से एक ऐसी पृथक् तथा समृद्ध काव्य धारा भारत में प्राकृत रही है जिस नीति काव्य अथवा उपदेशात्मक कविता की सजा दी जा सकती है। इस प्रकार से संस्कृत काव्य विश्व वाङ्मय में अद्वितीय है। इस साहित्य धारा में जितनी अधिक प्रमिद्धि तथा काव्यात्मकता भवतु हरि के तीना गतवा में है उनही अग्र्य नहीं। अतः हम भवतु हरि को प्राचीन भारतीय नीति काव्य का सम्यक्त समझते हैं।

हिन्दी नीति काव्य पूर्व पीठिका तथा रहीम

संस्कृतनर साहित्य में भी नीति काव्य की परम्परा अविच्छिन्न रूप से विद्यमान रही है। पाणिन के धम्मपत्र प्राकृत के वज्जानस्य तथा अपभ्रंश के चरित्र काव्य इस युगात्ता का महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। इन ग्रंथा में बराबर नीति की प्रधानता है। हिन्दी की पूर्व पीठिका में बराबर काव्य स्वर प्रधान था। रम का सर्वाधिक सुपरित रूप मिद्ध गहरपा तथा गारगनाय का वाणी में प्राप्त होता है। अतः ता गारग अपन युग के महाधिर प्रभावगानी नाय साधु धर्मि तु भक्ति के प्रचार के कारण उनका प्रभाव गन गन पूर से यूननर होना गया। निन्दा के मता ग इस स्वर का अपन ही प्रचार से मुगगित किया। अतः ता गन गाहि य रमा की १ की गताग्नी ग ही रचा जात गगा था किन्तु कबीर के समय तक उगकी का म्ज्यवस्थित काय-व्यक्ति नहा थी। गारग के स्वर का मगण भा मराधिर रूप में कबीर के ही नीति-नायक में दृष्टा है। यद्यपि नागी निन्दा गुग्भक्ति विषय अग गन काव्य के अगिताग नीति विषय नाय गाहिय ग ही गिल गण ध किन्तु कबीर कहा कता तथा ग पूर के मिद्ध

१ अतः नर क्रमवत् का पृष्ठभूमि में स्थाकार की जाय तत्र तत्र वाचिनाग का परिष्कृत गाना कविता के गानिक गति जयत्य की आनन्दमयी रहस्यात्मक प्रवृत्ति अयाम तथा वाचिनी की प्रमाण गुण पूरा गता, य मय जा वि अपन में धर्मि गन्वपूरा ३ रगिमान का इरा नरा दुकटिया के रूप में गिरर जागम।
—विन्तनित्य टा० रामगार विपदा की मुनान काव्य परम्परा धोरिगरी के पृष्ठ ८ पर उदधन।

सरहपा से भी प्रभावित प्रतीत हात हैं। सामान्यतः सम्पूर्ण मत साहित्य वराग्य नीति का ही आग्यान है किन्तु फिर भी सिद्ध सरहपा व सहज भाव और सामान्य जनोचित नीति के दशन भी सत काव्य म किए जा सकत हैं।^१ उन त्तिना जन मामान्य म सामान्य प्रचार प्रसार सगुण वेषुणवी भवित का था किन्तु कबीर न निगुण भवित व प्रचार म विरोध योग दिया। डा० सरनार्मासिंह जी का अभिमत है कि कबीर न वेषुणवी भवित की शृखला का सुरक्षित रखत हुए भी एक कडी का वल्ल कर दूसरी को लगा त्तिना और वह है निराकार और निगुण की उपासना।^२ यद्यपि उनका कविता म डा० फटकार, खडन मन्न तथा चानोपेय का स्वर प्रधान है किन्तु फिर भी कबीर की वाणी अपने मूल म कविता न हात हुए भी कविता से बहुत दूर नहीं है।^३ नीति के लिए तो यह कथन एकलम सत्य है। कहीं कहीं नीति-काव्य के ऐसे सुन्दर छन्द कबीर के काव्य म प्राप्त हात है कि उनकी प्रतिभा व सम्मुख भुक्तते ही बनता है—

माली आवत दलिक, कलियन करी पुकार ।
फूले फूल चुन लिये काल हमारी वार ॥
भूठे सुख को सुख कहें मानत हैं मा मोद ।
जगत चबना काल का, कुछ सुख मे कुछ गोद ॥

य दाह विश्व की भगुरता पर कहीं गई वराग्य-नीति का अत्यन्त सरस उदाहरण है। उनका तथा उनके परवर्ती सता का साहित्य भारतीय नीति तथा हिन्दी नीति-काव्य की दृष्टि से किसी प्रकार भी उपेक्षणीय नहीं है। हिन्दी नीति काव्य म निगुण सत साहित्य का अध्ययन उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि भारतीय ग्रथ तथा राज्य व्यवस्था म कौटिल्य के ग्रथशास्त्र का। यद्यपि इसी प्रकार क नतिक सिद्धान्तो का आकलन सूफी काव्य म भी हुआ है किन्तु निगुण नीति काव्य के सम्मुख उसका महत्व नगण्य-मा है। कारण यह है कि उन कविया की अधिकांश शक्ति लौकिक प्रेम कथाया के माध्यम से सूफी दशन को प्रगट करन म ही लगी रही थी। कृष्ण भक्ति के सगुण कविया म यद्यपि आध्यात्मिक नीति प्रचुर मात्रा म है किन्तु फिर भी व्यावहारिक नीति की दृष्टि से कृष्ण भक्ति-काव्य का महत्व उल्लेखनीय नहीं है। कहीं-कहीं ता उहनि अत्यधिक कृष्णनिष्ठता क प्रचाराय सामाजिक तथा पारिवारिक मर्यादाया एव आरज (आय)—पथ त्याग तक का भी पतवा दे त्तिना है। राम भक्ति शाखा क कविया विरोध तुलसी न यह कभी पूरी की है। तुलसी के काल ही म कविता के

१ भूछे भगति न कीज यह अपनी माला लीज ।
दुई सेर मांगडें चुन पाउ धौड सागे लन ।
आभा सेर मांगड दालें मोकू दोऊ बलत जिवाले ।
छाट मांगडें छउपाई सिरहावना अवर दुलाई ॥

—कबीर प्रयावली पारसनाथ तिवारी पृ० २०/३४

२ तथा ३ 'कबीर एक विवेचन

—डा० सरनार्मासिंह पृ० ४१७ २११

विषयों में एक नातिरारी विख्यात प्राया था। जब तक हिन्दी काव्य का माधुरी, यान् छवि तथा का गन्ध भाव का मग्नता पात्र (मग्नता साधुता) बन चुका था। अतः कविता का अन्वय विषय भागान्त जात प्रायः यथा यथा। अतः परिवर्तन में नरहरि का प्रथम अत्यान्त अन्वय दूरवाक्य का साहित्य गृह्यता न अन्वयधिन यान् श्रिया। इम दृष्टि स मध्य युगीन साहित्य की तीव्र प्रेरणा (भूमिदा) मानी जाती है—राज्य धर्म और शासन।^१ उक्त मुमनमान नामका १२वीं शताब्दी में ही हिन्दी का प्रथम अन्वय धर्म प्रारम्भ कर श्रिया था, यत् न केवल भाषा कविता का आश्रय अतः वरन न्यय भी कविता करत तथा अपन शिखा पर हिन्दी अन्वय म नाम सुन्वाया करत थ।^२ उसम से नीति कविता म उक्त तीव्रता का हाथ हान् हृण भी राज्य का याग कुछ अधिक है। नीति-काव्य की ओर तो कविता का अन्वय ध्यान आश्रय हान लगा था कि न केवल मग्न नरहरि इत्यान्त दरवारी तथा बीरबल (अन्वय) टोन्मन एव रहीम आदि उन्वा धिवारी अपितु स्वयं सम्राट अन्वय तत्र नीति विषयक कविता करन लग थ -

जाको जस है जगत मे, जगत सराहै जाहि ।

ताको जीवन सकत है बहत अन्वय साहि ॥^३

इस प्रकार की कविता करने वालों में सर्वाधिक समादर रहीम का था। आ० चतुरस्रन ने लिखा है—तुलसी बाल म सौर बाल स भी अधिक साहित्य उत्पन्न हो रहा था और धार्मिक विषयों को छोड़कर लोग विविध विषयों की कविता करने लगे थ जिनमें रहीम सर्वोपरि है जिन्होंने नीति के अन्वय दोहे बह है।^४ विद्वान् लेखक क इस उद्धरण में तीव्रता बहुत ही महत्वपूर्ण है—(१) विविध विषय (२) सर्वोपरि तथा (३) अन्वय दोहे। विविध विषय तथा अन्वय दोहों का ही अन्वय परिणाम सर्वोपरि स्थान है।

विविध विषयों पर लिखने वाला कवि उस युग में थोड़े ही थे। यद्यपि तुलसी का साहित्य नाम का महाणव है किन्तु उन्वय प्रमुखतया एक ही विषय पर रचना की है और वह है राम भक्ति। जिस प्रकार सूर ने कृष्ण के वारसत्य भाव को पूणता की सीमा तक पहुँचाया, उसी प्रकार तुलसी ने राम की मर्यादा नीलता को अन्वय अभिव्यक्ति प्रदान की। तुलसी की एक अन्वय विशेषता यह है कि उन्वय गली की विविधता का अन्वय था। अपने युग की ऐसी कोई भी प्रचलित काव्य गली नहीं जिसे तुलसी ने राममयी न किया हा। किन्तु विषय की विविधता वहाँ भी इतनी नहीं है। यह यदि कही मिलती है तो थोड़ी बहुत नदगास म। उन्वय व्याकरण

१ मध्ययुगीन काव्य साधना ले० रामचन्द्र तिवारी (प्र० स० १९६२), पृ० ३

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास, रा० च० शुक्ल (१४वाँ संस्करण) पृ० १६० पर उद्धृत

३ विविध विवरण के लिए दक्षिण हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के द्वितीय काव्य विवरण (द्वि० स० १९०१) में छपा अमीर अलीमीर का सख्त हिन्दी और मुमनमान पृ० ७०

४ हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास, आचार्य चतुरस्रन, पृ० २६८

नायिका वरण, भक्ति प्रेम आदि विविध विषया पर लिखा किन्तु नीति का क्षेत्र वहा भी रिक्त था। कुछ कवि स्वतन्त्र धारा के रूप में भी नीति की कविता कर रहे थे। इन में अकबर की दरवार के कविया का योगदान महत्वपूर्ण है किन्तु रहीम के अतिरिक्त और कोई भी कवि उसे सुगमतापूर्वक ग्रहण नहीं कर सका था। सच तो यह है कि जिम प्रकार तुलसी ने अपने युग की सभी गलियाँ पर विधिवत् काव्य सज्जन किया उसी प्रकार रहीम ने अपने युग के समस्त प्रचलित विषयों पर रचना की। ज्योतिष राम भक्ति कृष्ण भक्ति संयोग शृंगार, वियोग शृंगार नायिका भेद तथा नीति आदि में ऐसा कोई विषय नहीं जिसे उन्होंने पूरे दक्षता तथा महत्ता के साथ संक्षेप में वर्णित न किया हो।

रहीम के व्यक्तित्व कृतिव तथा सूर तुलसी एवं बिहारी आदि के उस महत्वपूर्ण युग का अध्ययन करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उनकी सी वृत्तता तथा मवता मुखी प्रतिभा तुलसी को छोड़ उस युग के किसी अन्य कवि में नहीं थी। काँग सम्राट अकबर उस महान प्रतिभा सम्पन्न सुधी साहित्यिक एवं भाषाविद् का राजनीति एवं युद्ध के पचड़ा से मुक्त रख केवल काव्य-सृजन में ही लग रहने दत्त। यदि ऐसा हो जाना तो यह सुनिश्चित था कि सूर सागर रामचरित-मानस तथा बिहारी सतसई जसी कोई चौथी काव्य निधि हिन्दी ससार में अवश्य विद्यमान हानी। अपने सीमित अवकाश में उन्होंने जितना भी लिखा वह अतिशय महान है। हम नीति के उस क्षेत्र की चर्चा नहीं करत जा रहीम का अपना है वरन शृंगार भक्ति आदि की दृष्टि से भी रहीम की प्रतिभा का लोहा मानना ही पडता है। समय से समय परवर्ती कवि भी रहीम का अनुकरण करत प्रतीत होते हैं।^१ कतिपय क्षत्रों में तो न केवल रहीम के भावों का वरन 'गदो तक का अनुसरण किया गया है। शृंगार की मयूर अभिनयकिन के लिए सुप्रसिद्ध, महाकवि मतिराम^२ तो हम अपने रसरज के बहुत बड़े भाग के पग पग पर रहीम के वरवनायिका भेद के उदाहरणों के गान्प्रतिशत ऋणी गान पडते हैं।^३ अन्य शृंगारी कवियों के लिए भी

१ रहीम सूक्तियाँ के सम्राट है इनकी सूक्तियाँ इतनी महत्वपूर्ण हैं कि परवर्ती बड़े-बड़े कवियों ने भी भावों के लिए इनकी और हाथ पसारा है। इनकी गहावली या सतसई सूक्ति साहित्य का सिरमौर है।

—भारतीय मुक्तक काव्य परम्परा टा० रामसागर त्रिपाठी पृ० १७६

२ हिन्दी में सबसे सम्पन्न में माधुय और लालित्य गुण प्रधान है। इन सद्गुणों की नाव मतिराम के द्वारा पनी। —हिन्दी नवरत्न (द्वि० म०), पृ० ३६६

३ 'रसरज में शृंगार रसान्तगत नायिका भेद का वर्णन है। रसरज का नायिका भेद रहीम के वरव नायिका भेद पडने के पश्चात् वरन यह कहना उचित होगा कि उसका आधार पर रचा गया है। हमारा ऐसा कहने का कारण यह है कि रसरज में जो उदाहरण नायिका भेद के लिए दिये हैं, उनमें से बहुतों के भाव वरव नायिका भेद से लिए गये हैं। कहीं-कहीं तो मुख्य मुख्य शब्द भी रहीम के ही प्रयोग किये हैं।' —रहीम रत्नावली पृ० ५२

यह बात बहुत कुछ सत्य है। भक्ति के क्षय में भी शक्ति एक ही मंत्रिणी है। मा० तुलसीदास जी का सामान्यतः दृष्ट्य भवन और गूरुत्तम का राम भवन श्रोतार नहीं मिया जाता किन्तु रहीम की गणना उभय पक्षा में गमान होती है। राम भक्ति परम्परा में भी उनका विवेचन आवश्यक माना जाता है तथा दृष्ट्य भक्ति परम्परा में भी।^१ मिश्र बंधु तो यहाँ तक स्वीकार करते हैं कि उ० द० दृष्ट्य भगवान का दृष्ट या^२ मुसलमान कवि के लिए इसमें बड़ी सफलता और क्या हो सकती है ?

हमारे विचार में इस सफलता तथा प्रतिष्ठा का रहस्य उनका हिन्दुत्व प्रम है। उनके समस्त काव्य में एक ही भाव अथवा एक ही गान्धर्वा नहीं पाया जा सकता जिससे उनके मुसलमान होने का अनुमान लग सके। वे नूर तूर के जलब पर फिदा नहीं मोहनलाल की सलीनी सावरी छवि पर आसक्त हैं। उन्हें गुनोगुलबुन नहीं चंद्र चकोर कोयल शमल और भ्रमर याद आते हैं। हनीस और कुरान से उदाहरण न दूकर वे रामायण महाभारत और पुराणा की अतकथाएँ उद्धृत करते हैं। न हजरत सुलेमान याद किय जाते हैं और न तनवार जुल्फिकार या करवला का युद्ध। उन्हें भात हैं गाड़ीव मुत्तशन तथा धनुष। वे काफना के गदार खजूरा की गीरी तथा ऊटनी के दूध की नहीं धरन वासन्ती मनयज आम्र मजरी तथा सुर तर छाया की प्रशंसा करते हैं। कहा तक गिनाया जाय। केवल इतना ही कथन पर्याप्त है कि अदुरहीम यानखाना हिंदू हिंदी तथा हिंदुस्तान की परम्पराओं के सच्चे निष्ठावान कवि हैं। प्रत्येक हिंदी भाषी उनका ऋणी है। उसे रहीम के शृंगार बगन भक्ति निरूपण तथा नीति निदर्शन पर गव है। मुसलमान रहीम का हिंदी काव्य भारत की कोटि काटि हिंदू जनता का कण्ठहार है। हिंदुओं की वाणी पर रहीम के दोह उसी प्रकार चढ़े हुए हैं जिस प्रकार सूर के पद तथा तुलसी की चौपाइया। धमनिर्पेक्ष स्वतंत्र भारत के लिए रहीम एक आदर्श साहित्यकार हैं। उन्हें यथोचित राष्ट्रीय गौरव मिलना ही चाहिए।

उनका काव्य इस बात का प्रमाण है कि तलवार के जोर पर इस्लाम फलाने मंदिर तोड़ने तथा कत्लेआम कराने के लिए इतिहास में बदनाम तथाकथित मुसलमान जाति के कुछ सदस्य भी उचित शिक्षा मिलने पर आजीवन मुसलमान रहते हुए भी अत्यंत उत्तम महान तथा सवनाभावन राष्ट्रज्जाचिन आचरण कर मा भारती की सेवा करसकते हैं। सोहादपूण धानावरण में दी हुई उचित तथा उदार शिक्षा बह जादू है जो प्रेमनारायण चकवस्त जस ब्राह्मणा से ऐसा कविता लिखा सकती है जो उदू तथा उदू प्रिय मुसलमाना का कण्ठहार है तथा रहीम और रसखान से बह सत्काय मृजन करा सकती है जिस पर हिंदू तथा हिंदुत्व से जान से कुरान हो।

रहीम उस युग के कवि हैं जो राजनतिक दृष्टि से मुगल-गौरव का तथा साहित्यिक दृष्टि से हिंदी का स्वर्ण युग था। उन्हें सन १५५६ से १६२७ ई० तक क

१ दक्षिण, राम भक्ति गायिका राम निरजनपाठेय (हैरवादा १९६०) पृ० ४३०

२ मिश्रबंधु विनोद (पंचम मस्क०) म० २०१२ वि० पृ० २८५

७१ वर्षीय दीर्घजीवन म हिंदी के महानतम एवं दिव्यतम कविया म भट वरन मित्रता प्राप्त करन का तथा आश्रय देन का मौभाग्य प्राप्त हुआ था। निजी दरबार के कविया क अतिरिक्त मूर, तुलसी रामदास राममान व्यामजी आनम मान, हानाराय, नरहरि ब्रह्म कणवदास गग विहारी, मतिराम आदि सभी कवि उनका काल म 'यूनाधिक' समय के लिए विद्यमान थ। इनक अधिकांश म से किसी स उनकी मिनता, किसी से परिचय किसी से निकट सम्पर्क तथा किसी स आश्रयताता का सम्बन्ध था। आश्रयदायित्व का तो कहना ही क्या? कलयुगी कण रहाम, हिंदी फारसी कविया क कल्पतरू थ।

रहीम ने अपने जीवन म न केवल राय तथा राजाआ का उत्थान्त दत्ता वरन साहित्यिक युगा की उत्पत्ति तथा प्रगथ भी देखी थी। मूर कान तथा तुलसी-काल के मुप्रसिद्ध लेखान्तर ही नहीं साहित्य क पूण युग परिवर्तन भी उनक जीवन काल म ही हुए अथवा हाना निश्चित हा गये थ। मूरसागर और मानस क अविन भाव भरे छंदा के अतिरिक्त रसिकप्रिया तथा सनमदया क छन्द भी उनके काना म पड चुक थ। अत एक अर भक्ति युग का जीवन रहीम के जीवन काल म व्यतीत हुआ था तो 'सरी और रीति युग का शक्य। साहित्य क स्तन अधिक उतार चलावा का अपनी आया से दफने वाले महाकवि हिन्दी म उगली पर ही गिन जा सकत ह। हम ता राष्ट्रकवि स्वर्गीय श्री मैथिलीशरण गुप्त के अतिरिक्त दूसरा नाम ही याद नही आता।

भक्तिकालीन काव्य स आगे बढकर यदि हम रीतिकालीन कविता की बातें सोच ता जात होता है कि पश्चात्कर्ती रीतिकाल म पल्लवित पुष्पित एवं फलित रीति बद्ध (नायिका भेद) तथा रीति मुक्त (नगर शोभा) आदि काव्य के बीज भी मूल रूप स आनिदानी रहीम के द्वारा ही बाए गए थे। इनके अतिरिक्त व हिन्दी की कई साहित्य रूढिया क सस्थापक उन्नायक तथा उद्धारक भी थ। सतसई परम्परा, नायिका भेद नीति के दाह्रमग इसक उदाहरण ह। नगर शोभा के समान जाति परक ढंग स शृंगार वणन की प्रकृति के जन्मदाता, वरक छन्द के साहित्यिक पिता, अथवा म रीति अथ के आदि सृष्टा हान का श्रेय भी रहीम का ही है। शृंगार के कणधार द्वय—मतिराम विहारी आदि द्वारा किय गय उनके अनुकरण भी किसी स छिप नही हैं। 'कुवल जी के शब्द म उनकी उमिनया इतनी सुभावनो है कि विहारी आदि परवर्ती कवि भी बहुतो के अपहरण करने का लोभ न 'रोक सक'।' नीति का क्षेत्र ता उनका अपना था ही। आग चलकर बृद्ध तथा गिरधरादि न जा विपुल नीति नाय निर्मित किया उसके आधार रहीम के गृह ही हैं। य हिन्दी नीति काव्य क प्रेरणा-श्रोत ही नहीं वरन अद्वितीय आग्य भी हैं।

कहा जा सकता है कि नीति काव्य की अविच्छिन्न परम्परा हिन्दी क प्रारम्भिक काल स ही चली आ रही थी। सत कविया न ता नीति मुक्तका की पृथक्क रचना भी की थी। अत नीति काव्य प्रणयन की प्रेरणा का श्रेय कबीर नानक तथा गुरू आदि

सत कवियों को मिलना चाहिए। इस तथ्य को हम अस्वीकार नहीं करते कि गत कवियां न नीति के दोहा की स्वतंत्र सजना रहीम से बहुत पहले ही की थीं किन्तु हमारा विनम्र निवेदन है कि सता तथा रहीम के नीति काव्य में मौलिक अंतर भावना का है। सता का प्रधान स्वर उपदेश और भक्ति है नीति नहीं है, जबकि रहीम का उद्देश्य ही नीति काव्य सृजन था। कबीर, दादू आदि ने समाज सुधार गुरु-गोविन्द महिमा गान तथा सम्प्रदाय सम्बन्धी प्रचार के लिए अपना साहित्य रचा था। उनका उद्देश्य काव्य सृजन नहीं था राम (निगुण) का स्मरण था—

सफल कवित्त का अर्थ है सकल बात की बात।

दरिया सुमिरन राम का कर लना दिन रात ॥

अन मना की वाणी का नीति से अपूरित मानते हुए भी उक्त मूलतः नीति का कवि स्वीकार नहीं किया जा सकता। सत कवि होने में ही उसका गौरव है मात्र नीति का कवि हान में नहीं। वे नीति के लौकिक कवियां से कुछ ऊपर थे कुछ अधिक थे और यही कुछ उनके काव्य का सत्य कुछ है। अतः स्पष्ट है कबीर अथवा अन्य गत रहीम की भांति कथल नीति कवि नहीं थे। रहीम ही हिन्दी नीति काव्य के मुष्टि प्रतिस्थापक थे। वृष्ण भक्ति में जो योगदान गुरुदास जी का राम भक्ति में जो योगदान तुलसीदास का है वही योगदान नीति काव्य में रहीम का है।

नाति काव्य परम्परा में उनके दोहा का साथ वृत्त का अध्ययन किया जाता है किन्तु यह कुछ-कुछ बसा ही हागा जमा कि मुरसरि की तुलना में यमुना का। कारण स्पष्ट है। यद्यपि वृत्त-मनमई के अनेक दोहा में भी उच्च काव्यत्व है किन्तु मूलतः वृत्त सूचिकार हैं जब कि रहीम कवि। छायाय सुजन न परवर्ती वात के नाति गृष्टाभा के साथ तुलना करते हुए लिखा है 'रहीम के दोहा' वृत्त और गिरधर के पद्य के समान बोरी नाति के पद्य नहीं हैं। उनमें सामंजस्य है उनके भीतर में एक मात्रा ह्रास भीत रहा है। वृत्तानि नीति-कवियां तथा रहीम में कुछ कम प्रकार का अंतर है जग साधक और मिद्ध में। एक जग काव्यत्व प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा था दूसरा जग पा रहा था।

एक ही युग के दो युग-गुरुद

कवित्त उन सामर्थ्य का एक-कवि छ—रहीम तथा तत्परी। शिवा के समस्त

काव्य में 'नो' तत्त्वा का पूरा पूरा स्थान मिला है। जना ही भारत तथा भारतीयता पर प्राणपण से योछावर हैं। दोना का धवधी और वृज पर समान अधिकार प्राप्त है। दोना का टुनिव कविता धामिनी का सफन शृगार तथा माँ भारती का उज्वल-बट-हार है। उत्तर भारत की कुटिया से लकर महला तथा प्रारम्भिक विद्याधिया म नकर महान साहित्यका तव म दाना का माहित्य समान भावन समाप्त है। दाना की वाणी गमान म स जनता के कण्ठ म विराजमान रहती है। हिन्दी का दोना महाकविता पर गव है।

एतना होन हुए भी तुलसी, तुसी ही हैं और रहीम, रहीम ही। दोना का व्यक्तित्व और स्थिति पृथक् पृथक् है। एक धीनरागी साधु है तो दूसरा गहस्थ तथा राजनीति की पनिलता म ध्यापन मस्तक आश्रणित सासागिक जीव। एक का राज-दरबार की गध भी नहीं भाती किन्तु दूसरे का सम्पूर्ण जीवन राजा और नवाबा व साय व्यतान हुआ था। एक निपट अकिचन है ता दूसरा सबथा सबसम्पन। एक साक्षात्-धार है और दूसरा धम घुरीण। एक सबथा भार मुक्त है तो दूसरा अनवानेन सनिक। सनाया दुर्गो तथा प्राता के सतत प्रगामन म दबा हुआ सासक। एक केवल हिन्दी-सकृत का पठित है ता दूसरा हिन्दी सकृत अरबी फारसी तुर्की पस्तो तथा अग्रजी आदि का भाषासिन्। एक अपनी कुटिया की निजनता म माहित्य मजन करता है तो दूसरे का वानाकरण रसिका रसना तथा कलाविणे व जन्धट से भरा है। एक व पास काव्य मजन के लिए अवकाश ही अवकाश है तो दूसरे व पास इम अवकाश का नितान्त अभाव है। काव्य सान म एक पर धामिकता का कोई बचन नही ता दूसरे के लिए सस्कार समाज तथा सम्बन्धिया की एसी टोक सबथा विद्यमान है जिसकी उसन कभी चिन्ता नहीं की।

वात को अधिक न बलात हुए इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि एक ही गुण म उ पन इन दो युग पुण्या तथा महारविता के व्यक्तित्व एव काय म पर्याप्त साम्य-वपम्य है। दोना ही अपन अपन क्षेत्र म अतिशय महान् हैं। न तुलसी के विना उत्तरी भारत की राम भक्ति गाला पल्लवित एव पुष्पित हो सकती थी और न रहीम के विना नीति-काव्य की परम्परा ही चल सजती थी। तुलसी व विना बनारस के पुनीत घाट सून थे तो रहीम के विना भारत सम्राट का दरवार। तुलसी ने घर घर म राम का परमोद्धारक गीत गा सुनाया उधर रहास न परम कल्याणकारी नीति का सदेग जन जन व द्वार तक पहुँचा दिया। वसे ता दाना महाकवि सवसत्तम तथा महान् प्रतिभा सम्पन थ किन्तु फिर भी तुलसी न ता नगरगोभा का सा शृगार तथा सतसई का सा धमाग्रह मुक्त नीति का य लिख सकत थे और न रहीम मानस का सा महाकाव्य। रहीम तुलसीदास के समान भग्नहृदय हिन्दू समाज म आगा का मन नहीं फूक सकत थे और तुलसा रहीम के समान कवि याचका व कलतर नहीं बन सकत थे। सकृत प्रमी कासी के उदभट पठिता के बीच गम्भीर धामिक क्षेत्र म हिन्दी स्थापना करना रहीम के वस की वात नहीं थी, उधर बभवगाला अकबरी दरवार म नीति काव्य की गौरव स्थापना तुलसी भी नहीं कर सकते थ। उस वातावरण म

। ही तुलसी वं स्वभाय एव सस्कार व विरट था । रहीम उगम किंगी प्रसार भी पथक नही हो सकत थ । यस्तता पत् भार तथा मम्भार व कारण ही रहीम नीति को प्रवध काय के माध्यम स व्यक्त करत म नूय रह तिनु धर्मग्रह मुक्त सायदगिन एव साजकालिन नीति का मुनरत व माध्यम स ग्राम्याय करत म व तुलसी से वही ग्राम बढ गय है ।

का व क्षेत्रीय वदृत सी वाता म तुलसी और रहीम एक-दूसरे व परिपूरक हैं । यदि कोई यचित लौकिक हित पर आघात आय जिना परलोन मुधारन की कामना करता है तो उस तुलसी का अध्ययन करना होगा और यदि कोई पारलौकिक हित म याधा पहुँचाय दिना लौकिक हित साधन अथवा सपन सामारिक जीवन की कला म दक्ष होना चाहता है तो उस रहीम व नीति काय का चितक बनना होगा । यदि कोई सदा के लिए लौकिक वभव तथा पारलौकिक सुख समान रूप स मुर्गत रगन तथा धर्मार्थानि पुरपाथ व तुष्टय की सम्प्राप्ति का माग हिन काव्य व कलित माध्यम से जानना चाहता है तो उसे तुलसी तथा रहीम शोना के नीति काव्या का समान रूप मे अध्ययन करना होगा । स्पष्ट है दोना के का व का समान अध्ययन पाठक व नान म सतुलन तथा पूणता लाता है ।

मध्य युगीन नीति-काव्य परम्परा मे रहीम का स्थान

तुलसी और रहीम की अपनी अपनी महत्ता के समान ही मध्य युग के अ य महाकवि भी अपने अपने क्षेत्र के गौरव ह । जायसी निगुण प्रेममार्गी धारा और सूफी काव्य परम्परा व सिरमौर है आर कबीर निगुण मार्गी नान शाखा तथा सत काय परम्परा के अद्वितीय अधिनायक । सगुण मार्गी वृष्णभवत कविया म मूर सबश्रष्ठ है और रामभक्त कविया म तुलसी । प्रारम्भिक रीति आचार्यों म कवय सर्वोन्नत हैं और रीति सिद्ध शृंगारिक काय रचना म विहारी । जिस प्रकार य सब महाकवि अपने अपने क्षेत्र म अद्वितीय है उसी प्रकार नीति काय के क्षेत्र म रहीम का स्थान सर्वोपरि है । रहीम हिन्दी नीति काय क सम्राट हैं । जिस प्रकार प्रमथ द को हिन्दी का उपयोग सम्राट तथा प्रसाद को नाटक सम्राट कहकर पुकारा जाता है उसी प्रकार रहीम को यदि हिन्दी-नीति काव्य का सम्राट कहा जाय तो किसी प्रकार की अत्युक्ति न होगी । जो स्थान ससृष्ट म महाराज भतृ हरि का है वही हिन्दी नीति काव्य म नबाव अदुरहीम खानखाना को प्राप्त है । रहीम हिन्दी के भतृ हरि हैं । अइए इमी निष्पप के साथ हम इस प्रवध का रहीम के दो दोह गते हुए समाप्त करें—

रहिमन रिस को छांडि क करो गरीबी भेस ।

मीठी बोली नय चलो सब तुम्हारी देस ॥ रहीम रत्ना० २२ २२६

रीति प्रीति सब सा भली बर न हित मित गीत ।

रहिमन पाही जनम की बहुरि म सगति होत ॥ रहीम रत्ना० २३ २४०

परिशिष्ट

अकबर का शासनकाल (१४ फरवरी, सन १५५६ म १६०८ तक) साहित्य काल का सफल आयु केन्द्र था। उसके दरबार म अनन्यमान फारसी कवि थे। वस भी (बाबर का छोड) हुमायूँ अकबर जहाँगीर की मानभाषा भत ही तुर्की ही पर राजभाषा उन सभी के काल म फारसी ही थी। जहाँगीर क बाद तो तुर्की का चिराग ही गुल हा गया था। भारत के फारसीदाँ ही नहीं फारस के प्रसिद्ध विद्वान तथा कवि भी मुगल दरबार की गोभा बन्त थे। सौभाग्य से ईरानी शाह अब्बास सफवी (१५८७ १६२८) का दरबार भी फारसी रससिद्ध कविया तथा विद्वान का अखाडा था। मुगल शासनकाल म कविया का इतना सम्मान इतना प्रथय तथा धन मिला कि प्राय उच्चतम काय मघा आर्कषित हाकर भारत चली आई और फारसी काव्य का केन्द्र स्थल फारिस नहीं भारत हा गया। सफवी राजाशा के शासन का आचार इस्लाम धम (गिया) पर निर्भर था। अन उहाँन धमनाय को ही प्रथय दिया गुद्ध काव्य को नहीं। इसलिए उस समय ईरान म उच्चकाटि के कविया का अकाल सा पड गया था। इमक दूसरी आर अकबर और अकबर ही कयो रहीम क दरबार म एक स एन महान कवि विद्यमान थ। बुयारा के गीतकार मुक्षिकी (मृ० १७८६) गीराज क महान कवि उर्फी (म० १५६८) तुर्गीन के मगान मस्नवीकार जहूरी (म० १६१६) इत्यादि महान कविया के ससग म रहने वाले अदुरहीम खानखाना पर फारसी काव्य का प्रभाव होने की सभावनाया मे इकार नहीं किया जा सकता। अन फारसी की कृतिया और विगपन उसन नीति काय का मामाय एतिहासिक विहगावलावन महा असगत न हागा।

फारसी काव्य सभी प्राचीन दगा क काव्य की भाति वम स विशेषत प्रभावित रहा ह। फारिस का धार्मिक इतिहास (भारत से भिन्न) राजनीति क साथ बन्लता रहा है। इस दष्टि स बहा क धार्मिक साहित्य के दा विगोप विभाग दिय जा सकत है

- (१) पूव इस्लामी साहित्य
- (२) पश्चात इस्लामी साहित्य

इहा को प्रकारान्तर स साहित्यिक इतिहास के दष्टिकोण से तीन भागा म विभाजित किया गया है

- (१) सबक सुरामानी
- (२) सबके इराना
- (३) सबके हिन्दी।

पूय इस्लामी साहित्य

फारसी धर्म फारस या फारस नाम से सम्बन्धित है। फारस या फारस ईरान के एक प्रदेश विभाग का नाम है। अतिसम समुद्र मर्मरिया का फारसीक कहा जाता था। यम रंगर और फारस भी भाषा नाम की शक्ति में बहने मान्य है। अभी की मूनानिया त फारिस कहकर पारस है। इसी फारिस का माहि नाम रियासत यथवा फारिया है। इसी फारिया की भाषा का अक्षरी म फारिया कहा गया था।

अतः नाम से भी भारत के साथ नाम ही का सम्बन्ध स्पष्ट है। यम फारिस का प्राचीनतम ग्रन्थ है जो अरिस्ता। इस ग्रन्थ के अन्वय में स्पष्ट प्रमाण मिलता है कि उमरी भाषा, हमारे फारस की ही भाषा की एक अन्वय ही है। भाषा वज्ञानिका त नाम से म कुछ नाम भी फारस नाम निकलते हैं जो अरबों की श्रुचाप्रा के सामान्य अन्वय या परिवर्तित रूप हैं। अतः स्पष्ट है कि फारिया के माहि पुरातन तथा भारत के माहि पुरातन का कभी अन्वय सम्बन्ध अतः पता चला। श्रुत तथा जो दाना के यम अरिस्ता नाम प्रधान है यम तथ्य भी उक्त यथ की पुष्टि करता है।

जो भी हो यह निश्चित है कि फारस का प्राचीनतम ग्रन्थ जो है। यकी उनका माहि नाम भी है। अविस्ता भाषा में—जरदुस्त द्वारा विजित अतः यम ही पास का अदि धम था जिस राजवत भारत में फारसी कहकर पुकारते हैं।

ईरान में युगा युगा तः अविस्ता और उसके द्वारा विजित साहित्य मजित हुआ रहा था। मिकन्दर महान्जर अपनी विजय की विजय तः उसने ३३१ ई० पू० में ईरान के महाराज दारा तृतीय को परास्त किया। उक्त तः ही यम फारस तः ईरान साम्राज्य सर न उठा सता। अतः अतः सातानी कुल के समय में अविनि कुछ सुधरी। इस बीच उसकी अदि भाषा समाप्त हो गयी थी और उसका स्थान पहलवी ले चुकी थी। अविस्ता की व्याख्या जो फारस कहलाती है इसी पहलवी भाषा में है। अतः म इस सातानी कुल को भी अरबों ने परास्त कर दिया और उनकी सबभस्मी प्रवृत्ति तः उस काल के साहित्य का भी समाप्त सा कर दिया। आज हम निश्चित रूप से उस काल अर्थात् पूव इस्लामी पास साहित्य के सम्बन्ध में कुछ अधिक नहीं कह सकते।

ईरान पर इस्लाम विजय से वहाँ के इतिहास का दूसरा युग आरम्भ होता है। अतः अत्यन्त विजय अपनी भाषा को अपनी विजित प्रजा पर लागू करा करता है। अरबों ने यह कार्य और भी कटोरता से किया और चूँकि अरबी इस्लाम की मजहबी जवान थी। अतः ईरान के बुद्धिजीवियों की भाषा भी अरबी हो गई। और चूँकि ईरानी मेधावी थे अतः उ होने आश्चर्यजनक गीघ्रता के साथ अरबी साहित्य पर भी अधिकार कर लिया और व अरबी के मूल कवियों एवं ललका से कई अर्थों में आगे निकल गये। उस युग के अनेक महत्वपूर्ण अरब ग्रन्थ अरबों द्वारा

नहीं ईरानिया द्वारा लिए गये थे।¹ इन ग्रन्थों में भी अरबी के साथ फारसी शब्दों का सम्मिश्रण अवश्य उपलब्ध होता है। वस्तुस्थिति यह थी कि फारसी मन्त्रों के घोषण के कारण ही फारसी विद्वान, अरबी पढ़ने निरस्त थे। उन्हें अनुराग फारसी ही था। वे मन ही मन घुटने अनुभव करते थे। ई० बरखत्स महोदय लिखते हैं कि वे अरबी ही नहीं अरब राज्य का शत्रु अपने सर से उतार फेंकने के चक्कर में थे।² परन्तु पराधीन थे। कट्टर अरबी खिलाफत' शासन की शृङ्खलाओं में जकड़ी ईरानी मध्या अपनी भाषा के लिए कुछ न कर सकी और यही कारण है कि ईरानी विजय के बाद गताग्नीपत्तात् का फारसी साहित्य प्रायः अधवारमय है। आत्मविस्मरण के लिए वचारे फारसी कवि छुट्टे पुट कविता रचने लगे। हा इनका अर्थ है कि इस काल में कनिफ इस्लाम पूर्व अतिप्राचीन ईरानी कथाओं को सुरक्षित रखने की दृष्टि से कविता में अवश्य उतारा जाता रहा था।

धीरे धीरे परिस्थिति बदली। अरबों में फट पड़ी। खलीफा की शरमाती शरमाती शरमाती ईरानिया को भटकवा दिया। वगावत हुई और सफल होकर रही। अरब खलीफाओं का शक्ति मिली और मुस्लिम साम्राज्य की राजधानी अब दमिश्क से बगदाद में आ गई। बगदाद दमिश्क का अपक्षा ईरान के अधिक निकट है। आराम प्रदान का अवसर मिला। खलीफा हारुन रशीद की शासन में सफ़र ईरानी भी थी और बगदाद में बरमकी बग के एक सदस्य जाफर बरमकी का हारुन रशीद के जमान में महामंत्री, बनने का अवसर भी प्राप्त हुआ। जाफर पहला ईरानी मुस्लिम था जो अरबों के शासन में इतने ऊँचे पद पर पहुँचा था। यही से ईरानिया का बदन का मौका मिला। जाफर का खलीफा के खानदान से दूना गहरा सम्पर्क था कि खलीफा की बहन अबासा उसने साथ प्रणय-मूत्र में बंध गई। उसमें भी ईरान शासन-नीति में परिवर्तन आया। उधर हारुन रशीद का एक पुत्र मामून ईरानी बीबी से था। इसका शासन काल में ईरानिया का वृद्धि का और भी अवसर प्राप्त हुआ। उधर बगदाद के खलीफाओं का भी अनुशासन डीला हुआ और उनके दूरवर्ती सरकार स्वतंत्र होने लगे। ताहिर बिन हुसैन ने मौके का फायदा उठाकर ८२० ई० में ताहिरि कुल के नाम एक स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया। ताहिरिया के पश्चात् मफफारा (नवी गता गी का अन्त) और पुन सफफारियों को खुरामान विजेता समानी कुल वाला ने परास्त किया। इन्हीं समानी राजाओं के शासन में फारसी भाषा के कविता को अभूतपूर्व सुरक्षण मिला।

1 The conquerors imposed their language and literary conventions on the vanquished alongwith their religion the subject people proved themselves complacent to conform and quick to learn and many of the most eminent Arabic scholars and authors during the first centuries of Islam were men of Persian blood and birth A J Arberry

Classical Persian Literature (London 1968) P 8

2 E Berthels quoted by Arberry *Ibid* P 8

फारसी काव्य का जनक बहलाय जान वाला जग्राथ कवि अबू अदुल्ना जाफर इन मुत्तम्म रत्की (म० ६८० व लगभग) नव्य दिन अहमद (६१८—६४३ ई०) का दरबारा कवि था। अपनी गुरामान विजय की पश्चात जय अमीर नव्य को हिरान क्षत्रक पत्र फूज (अगूर) इनन मुत्तर लग जि वह चार वष तर अपनी राजधानी बुजारा न गीत तत्र दरबारी तग आ गय और उह कुठ न गृभा। अन्न म सब न मिलतर रत्की स प्राथना की कि यन्नि वह राजा क हृत्प्य म घर का यान जगा दे और उस वापस ग चलन म सफ्त हो जाय ता व उसका पाँच हजार दीनार इनाम म देग। रदकी न एसा कोमल-वर्णित जादू भरा कगीत राजा के सम्मुख उपस्थित किया जि वह त्रिना जीन कम तथा त्रिना जूत पहन ही बुगार्ट को भागता नजर आया। दम कसीन म बुजारे का आकाश तथा नव्य त्रिन अहमद को च द्रमणि की उपमाया स विभूषित किया गया था।

भीर माहस्ती बुजारा आसेमान

माह सूए आसेमान आयद हमी।

भीर सब अस तो बुजारा बूस्तान

सब सूए बूस्तान आयद हमी।^१

दरबारिया न प्रमन होकर रत्की को पाँच हजार दीनारा के स्थान पर उसके दुगने अयात् दस हजार दीनार दिय। एसा प्रभावशाली था यह कवि। शराव पर भी इसने काफी सिखा है। कहते हैं कि इसकी उपमाया इत्यादि का उमर खय्याम तक ने उडापा है और (५०० वष पश्चात्) उसके जरावणन का अनुकरण 'जामी जस महाकवि न भी किया है। इ हाने तीन एनिहासिन का या का सजन किया था। दुर्भाग्य से व अब अप्राप्य है। हाँ उनके पद्यास बहुत स फारसी नौवाना म सुरक्षित अवश्य है।

सामानिया न अपन दग फारस म राष्ट्रीय चेतना का भी विकास किया। काय को ता इतान बहुत ही प्रथय किया। फन्नत रत्की क आशयदाताया की सरक्षता म ही दूसर प्रख्यात कवि 'दकीकी न भी अम्ना काय सजन किया। गुरा मुत्तरी सगीत तथा जरदुस्त म विश्वास^२ करने बाल इस कवि ने ही सवप्रथम गाननाम का नमारम्भ किया था। मुप्रसिद्ध कवि फिरत्नीसी ने अपन गाननामे की नीत्र दकीकी क गाननाम (जाति प्राचीन पृथ्वी से सामग्री लेकर लिया गया था और केवल १००० गर त्रिय पादा था कि एक गुलाम न उमरी हत्या कर दी) के आधार पर ही रग्यी की। उमकी (फिरत्नीसी) और दकारी की रचना की क्षत्री तथा गान चयन म कोई अन्तर न था। यन्नि उसन दकीकी की रचना अपन गाननाम मे मिला लन की बात स्वय न लिन दा हानी ता हम उमका गुमान भी न होना।^३ इन सामानी राजाया क

१ चहार मजाला तहरा प्रकाशन (१८६०) प० ५३

२ *Classical Persian Literature* (London) 1958 P 41

३ त्रिव साहित्य की स्वरता श्री भगवतागरण उपाध्याय (त्रिनी द्वितीय स० १६५६) प० ३५०

ही, अली (८६८—९० ई०) तथा जयारी (९२८—१०४२ ई०) धराना ने तथा महमूद गजनवी ने जम्मूरी (लगभग १०५० ई०) को आश्रय देकर फारसी साहित्य की पर्याप्त श्रीवृद्धि की और इसके पश्चात् ता यह पुष्ट फारसी साहित्य वृक्ष अधिकाधिक विस्तृत, अधिकाधिक पुष्पित एवं अधिकाधिक पल्लवित होता गया और (हमार चरित नायक अ-दुरहीम खानखाना के जीवनात् के समय तक) फारसी शाह अ-बास सफवी महान (सिंहानाहद १५८७ तथा म० १६२६) तक अगणित कवि फारसी को ही नहीं अपितु विश्व साहित्य को बहुत कुछ प्रदान कर चुके थे। उनकी रचनाओं के उल्लेख का अवसर यहाँ नहीं है।

जिस प्रकार मध्यकाल तक की प्रमुख हिंदी काव्य धाराओं को हम वीरगाथा भक्तिगान इत्यादि प्रमुख शीषका में विभाजित करते हैं उसी प्रकार शाह अ-बास (जिसका सम्बन्ध भारतीय तथा यूरोपीय से बहुत ही घनिष्ठ था और जिसके मनिया में से एक अश्रेय सर एथेनी शरली भी था) के काल तक फारसी काव्य की प्रमुख प्रमुख धाराओं को बहुत ही मोट तौर पर निम्नलिखित शीषों में विभाजित कर सकत हैं—

- १ आश्रयताओं के प्रगति-गान
- २ वीर काव्य तथा ऐतिहासिक चरित काव्य
- ३ सूफी काव्य धारा
- ४ प्रेम परक प्रवचन काव्य धारा
- ५ गीति काव्य
- ६ नीति काव्य
- ७ फुटवर काव्य

इन समस्त काव्य धाराओं को आगे बढ़ाने में अगणित महान कविया ने योगदान दिया। श्री उपाध्याय जी ने जामी की प्रशंसा करत हुए फारसी के सात प्रतिनिधि कविया का उल्लेख बड़े सतुलित रूप में इस प्रकार किया है— ईरानिया के प्रधान सात कविया में वह (जामी) गिना जाता है। ईरानिया के दानिस्त में फिरदौसी वीर काव्य में खेजाड है निजामी रोमांस में, रुमी रहस्यवादी काव्यकर्म में, सादी नीति आचार के प्रसंग में हाफिज लिपि में, पर जामी की महारत इन सारी विशेषताओं में एक सी है।^१

फारसी का नीति काव्य

यो तो फारसी में नीति काव्य आरम्भ से ही लिखा जाने लगा था। लिखा भी क्या न जाय? प्रत्येक जाति अपने जीवनोन्नति प्रदान करने वाले जीवन सम्बन्धी नियमों तथा महान जीवनानुभवों को काव्य की सरस भाषा में चित्रित करने की उप योगिता समझती ही है। यही कारण है कि फारसी काव्य के जनक रूदकी के भी

१ विश्व साहित्य की रूपरेखा भगवत चरण उपाध्याय (दिल्ली १९५६) पृ० ३६४

पूर्व पुरुषों के नीति सम्बन्धी काव्य-कथन खोजने पर प्राप्त हो सकते हैं। अब्दुल्लाह इब्न ताहिर (म० ८४४ ई०) के राज्यकालीन कवि 'हनुजला' की आदर तथा आत्म सम्मान पर लिखी पक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

“यदि महत्ता शेर के मुख में भी मिले तो भी उसे प्राप्त करने में चूको मत, वहाँ भी उसे प्राप्त करने के लिए जाओ। आत्मसम्मान, ऐश्वर्य आराम प्रशंसा आदि प्राप्त करने के लिए या तो सधप करो या फिर काल सक्क का सम्मुख होकर सामना करो।” अरबी और फारसी पर समान अधिकार रखने वाले बलख निवासी महाकवि शहीद (६०० ई०) की भारतीय सरस्वती एवं लक्ष्मी सम्बन्धी धारणाओं से मेल खाती निम्न पक्तियाँ भी उल्लेखनीय हैं—

‘ज्ञान और धन नरगिस तथा गुलाब के समान हैं। वे दोनों एक स्थान पर तथा एक साथ विकसित नहीं होते। पानवाना के पास धन नहीं होता और धनवाना के पास ज्ञान अत्यल्प रहता है।’^२

‘यदि वही कपटो से भी अग्नि (शिव) के समान घुसा निकला करता तो समार सदब अधकारपूण रहा करता। यदि तुम ससार के एक कोने से दूसरे कोने तक बंधी गये हो तो तुम्हें एक (भी) बुद्धिमान व्यक्ति सुखी नहीं मिला होगा।’^३

हिरात के बादशाह ग़ाहरेन के राज्याधीन कि-तु शाह से भी अधिक समादृत कवि कासिम अन्वार हाफिज के भाग्य के सम्बन्ध में कहे गये कितने सटीक हैं—

भाग्य हाथ के पज के समान, पाँच उँगलियाँ रखता है। जब वह किसी स अपना हुकम मनवाना चाहता है तब वह दो उगली तो आया पर रख लेता है और दो बाना पर एक छोड़ा पर और फिर कहता है—खामोश।^४

इसी प्रकार स प्रायः अगणित कवियों के काव्य में नीति-काव्य विषयक अगणित उदाहरण संकलित किए जा सकते हैं।

जहाँ तक नीति-कवियों का सम्बन्ध है फारसी में ससृष्ट नीति-काव्य के समान ऐसी कोई अलग काव्य धारा तो नहीं रहा परन्तु जीवनोपयोगी नीति सिखाने वाले ग़र फारसी काव्य में अगम्य हैं। इस प्रकार के ग़र रचयिताओं में निम्नलिखित कवियों के नाम निःसंकोच लिखे जा सकते हैं—

१ नागिर गुमरा (हमारे अमीर गुमरो में भिन)

२ ग़म गानी

१ महतरी गर बजामे गेर दर अस्त।

दर गो सतर कुन ज बामे गेर येनुद

यो कुजुगोप्र अरखो नमतो जह

या धु मनी मु मग रोयाई ॥ पारमनावा ५०—६२

२ तथा ३ क्तामिशन पर० निट० आप इगिया एण्ड ईरान, ९० ज० धागरी (मार्च १८५८) पृ० ३१ में उद्धृत।

४ काट पोइन्त आर ईरान एण्ड इगिया धार० पी० मगाना (सन् १६३८), पृ० ११८

३ इने यामीन

४ हाफिज

इनमें भी सम्भवतः शेख सादी सर्वाधिक प्रसिद्ध है। शेख सादी की तीन अमर कृतियाँ हैं

१ गुलिस्ता

२ वास्ता

३ दीवान (काव्य सफलन)

गुलिस्ता को समस्त फारसी साहित्य में महोच्च स्थान प्राप्त है। यह गद्य की पुस्तक है जिसके बीच-बीच में पद्य भी व्यवहार में लाया गया है। फारसी के साथ-साथ अरबी भाषा और अरबी गैरा का भी प्रयोग किया गया है। सारे ग्रंथ के अध्यायों के नाम को देखने में ही पता हो जाता है कि पुस्तक नीति-व्याख्य के विद्यार्थी के लिए कितनी उपयोगी है। पहला अध्याय है 'राजाशा का स्वभाव दूसरा सत्ता का स्वभाव', तीसरा 'सत्ताप का महत्व', चौथा 'मौन के लाभ' पाचवा 'यौवन और प्रेम छटा है जरावस्था के कष्ट सातवाँ जीवन व्यवहार और आठवाँ है पारम्परिक सम्भक के ढंग। राजनीति के सम्बन्ध में गुलिस्ता के दो मुद्दे गैर इस प्रकार हैं

न फुनद जौर पेशा मुलतानो
के नयापद जगुग चौपानी ॥
पावगाही के तरेहे जुल्म फिगनद
पाए दीवारे मुल्के खेग बेकनद^१

अर्थात् किसी राजा को अपना राज-बाज जुल्म पर आधारित होकर नहीं करना चाहिए। भेदिया कभी भी रेवड का खवाला नहीं बन सकता। जो राजा जुल्म करता है वह अपने राज्य की बुनियाद को खोलता करता है। विद्वद् मानवता के धरातल पर पहुँचते हुए एक अग्र शर में कवि कहता है—

बनी आदम आजाए थक दिगरन,
कं दर आफरीनिग ज थक जौहर अद ।
बु अजूये घदद आवरद रोज़पार,
दिगर अजूहारा न मानद करार ।
तो कज मेहनते दीगरा बे घमो
न गायद कि नामत निहद आदमी ॥^२

'अर्थात् सब मनुष्य गरीर के अंग की भाँति हैं क्याकि अपने जन्म के मूल में सबके अन्दर एक ही प्राण विद्यमान है। जब एक अंग में दर्द होता है तब दूसरे अंग भी बेचन हो उठते हैं। अतः दूसरों के दुःख में स बख़्तर रहने वाला तू ! मनुष्य कहलान का अधिकारी कदापि नहीं है।

१ गुलिस्ता (मुफ़ीदे ग्राम प्रेस लौहार १९१० इ०) पृ० ५३

२ वही पृ० ५३

सत्य की प्रशंसा में कवि का कथन है कि, सच्चाई भगवान के निकट होने का साधन है। मैंने कभी ऐसा नहीं देखा कि, सीधे रास्ते पर चलने वाला मनुष्य कभी भटका हो।^१ मंत्री के प्रसंग में एक सुन्दर कथन इस प्रकार है—

दोस्त मगुमार आके दरनेमत जनद,
लाफे धारी व बिरादर खादगी।
दोस्त आं दानम कि गीरद दस्ते दोस्त
दर परेगा हालीओ दर मांदगी ॥

अर्थात् उसको मित्र न समझा जो गुप्तहाली में ही दोस्ती और भाईचारे का दम भरता हो। मेरे अनुसार दोस्त वह है जो दोस्त का हाथ विपत्तिया के समय में पकड़ता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि ये भाव सस्कृत श्लोकों में प्रतिष्ठित हैं।

शख न सस्कृत ग्रंथा का चाहे न देखा हो पर उसने जीवन को निकट से अवश्य देखा था—

बस कामते खुश कि जेरे चादर बागद
चुन बाजकुनी मादरे मा दर बागद।^२

अर्थात् चादर के अंदर छुपा हुआ स्वरूप सुंदर प्रतीत हुआ करता है। शायद चादर हटाकर देखने पर वह हमारी मां ही न निकले कितनी बड़ी व्यंजना है ?

सस्कृत साहित्य की चिर परिचित एक उपमा द्वारा कवि विद्या को व्यवहार में लाने की शिक्षा देते हुए बड़े कायात्मक ढंग से कहता है कि—

इल्म चंदा के बेश्तर खानी
चुन अमल बरतो नीस्त नादानी।
न मोहबिकक बूबद न दानिशमद,
चारपाये बर कितबे चंद ॥
आं तही मगद राव च इल्म व हुनर
के बरु हेजोमस्तो या दपतर ॥^३

अर्थात् विद्या जितनी चाहा प्राप्त कर लो परन्तु यदि वह व्यवहार में नहीं लाई जाती तो सब व्यर्थ है। न तो तुम बहुत बड़े विद्वान और न बुद्धिमान हो पाओगे वरन् जस जानवर पर कुछ पुस्तकें लगी हों, उस ही हो जाओगे। उस कूटमगज को इस बात की क्या खबर कि उस पर किताने लदी हैं या इधन। इस प्रकार और कितने ही गेर प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

बास्ता उनका अपना पद्यमय जीवन चरित्र है जिसमें उस महाकवि के जीवन सम्बन्धी अनुभव तथा तत्कालीन रीति नीति का वर्णन करने वाली सुन्दर मसनविया हैं। या तो गज गान्दी न गद्य भी लिखा और पद्य भी, परन्तु मूलतः व कवि ही है। जस जयगार प्रसाद चाह नादन लिखें चाह निबंध चाह आलोचना या उपमास

१ तथा २ गुलिस्ता (मुफ्तीद आम प्रेस, लाहौर १९१२ ई०) पृ० १५३

३ वही, पृ० ४२४

उनका कवि छिपाये नहीं छिपता। ठीक यही स्थिति सादी की भी है। एक और बात जस कि प्रसाद के काव्य में कुछ ऐसे रत्न विद्यमान हैं जो अयन समस्त हिन्दी-साहित्य में दुर्लभ हैं। ठीक उसी प्रकार के उत्कृष्टतम काव्यांग सादी के काव्य में विद्यमान हैं। मसानी महोदय लिखते हैं कि जो व्यक्ति काव्य के रत्न की खोज करना चाहत हैं उनके लिए तो सादी अगाध खान है। काव्य के साथ साथ गद्य में भी फारसी के किसी अन्य कवि के गद्य आज उतने यात्र नहीं किये जात जितने कि इस (सादी) मुकवि के। वस्तुतः सादी उस युग के ही नहीं अपितु सम्पूर्ण फारसी काव्य के अद्वितीय रत्न थे।¹ इस कथा में एक दो स अधिक अपवाद नहीं है।

इस विवचन से स्पष्ट है कि फारसी साहित्य नीति-काव्य की दृष्टि में बहुत ही सम्पन्न एवं उपयोगी है। हाँ इतना अवश्य है कि अभिव्यजना-शली और विषय-विवचन का क्षेत्र उसका अपना है। रहीम के नीति-काव्य से पूरा परिचित हाँ जान के पश्चात्, हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि रहीम का नीति-काव्य अनुभूति एवं अभिव्यक्ति आदि किसी भी क्षेत्र में फारसी काव्य से प्रभावित नहीं है। हाँ मस्हत नीति-काव्य के प्रभाव से इनकार नहीं किया जा सकता।

1 In this short introduction Faruqi writes "Perhaps one can say that this Book has no parallel either in Persian or any other language in history of persian literature with the exception of Firdausi's Shahnama and Masnawi of Maulana Jalal ul Din"

Quoted by A J Arberry in this *Classical Persian Literature* London 1958 Page 1967

नामानुक्रमणिका

- अकबर—२ ५ १३, १५, १७ १८, २१,
 २८—३४, ३८, ४३, ४५ ४६ ५०,
 ५३—६३, ६६ ६२, १५६, १६६,
 २२०, ३३०, ३५८ ३५९ ३६५
 अकबरनामा—२—६ १७, १७ ३३
 अकबर द ग्रेट मुगल—८, ९
 अग्नि पुराण—१३४, १३५, १८९,
 २५७, २६३
 अजमेर—३ ८ २७
 अनूप शर्मा—२४६
 अबुल फजल—६ ८ १२, १३ १६ १७
 ३८ ४९, ५१ ५४ ५६ ६२, ६४
 अब्बासा—३६७
 अ दुल गनी—४९
 अब्दुल कादिर वदायूनी—५६
 अ दुल बाकी नहाव दी—१६, ५४
 अ दुल्ला इब्न ताहिर—३६९
 अनफोले अकबर—२६
 अभिषा वृत्तिमात्रिका—२८५
 अभिनव गुप्त—१४७ २०१
 अभिनव भारती—१४७
 अमरसिंह—२२९
 अमरूला—२०
 अयोध्या—६२, २१५,
 अरब—२९ ३६६
 अरस्तू—१८७
 अलकारगोवर—२६४
 अली—३६९
 अलीखाना—१५
 अलवरूनी—६, ५०
 अहमद—३४५
 अहमदाबाद—५ ९—१२, २५०
 अहिल्या—५२
 आइने अकबरी—२—४, ८—११, १४,
 १७, ४३
 आगरा—६२, २१६
 आजाद, मुहम्मद हुसन—५, २४, ३३
 आदिलशाह—२०
 आन दवघन—२००—२०२ ३१०
 आरण्यक—३५६
 आरवरी जे० आर०—१११, ३६७
 आलम—२१४, ३६१
 आप्टी—१५ १६ ३८, ४३ ६३
 आसकरण जड्डा—४७, ४८
 आसफ खा—२६
 इफ्बाल नामा जहागीरी—२७, ३५
 इने यासीन—३७१
 ईरान—४३ ३६६
 उज्ज्वलनीलमणि—७६, १६४
 उडीसा—१५
 उद्व गतक—१०५
 उम्राव—२१५,
 उन्सूरी—३६९
 उपनिषद्—१४० १७२ १८१ २१२
 ३५६
 उमरखय्याम—३६८
 उर्फ—३६५
 उस्मान—२१४

- ऋक प्रतिशाख्य—२३६
 ऋग्वेद—१५२ १७२, १७३ २३६
 २५७, ३५५ ३५६ ३६६
 एकावली—२८३
 एटा—२१६
 एयीनी गरली सर—३६६
 एबीसीनिया—१८
 एलीजेवेथ—४३
 एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका—१५६
 ओम प्रकाश गारुडी (टा०)—२०२, २५८
 औरगजेव—६३ ३४५
 कधार—१३
 क्षमेत्र (आचार्य)—१८० ३५६
 कन्नोज—१६
 कपिल मुनि—१७४ ३५६
 कवीर—८० २१४ २४६ ३२६ ३५६
 ३६१ ३६२
 कवीर प्रधावली—३२६, ३३१ ३५७
 काल्याणन—२५५
 कवितावली—२४३ २४५
 कानुल—३ १२ ३१
 काली—१६ ३०
 काम सूत्र—७६ ८१ १३६ १५७
 कामायनी—६३ १८३—१८५
 काव्य कौमुदी—१०० ३६६ ३५०
 काव्य निगम—२६४ २७६
 काव्य प्रकाश—२०० २०३ २०७
 २०८ २०९ २७३ २७८ २८३
 ३०८
 काव्य रूपन—८१
 काव्य प्रभाकर—२७६
 काव्य मामागा—१६१ १६२
 काव्याण्य—१६१ २६६
 काव्यानुगामन—१६२
 काव्यालकार—१६१
 काव्यालकार सूत्र—२५६
 काव्याथ कौमुदी—२७६
 काव्यावोचन—२४१ २५६ २६४
 कालरिज—१८७ १८८
 कालीदास (महाकवि) १७८ ३११
 कादमीर—११ १४, २१, २६, २६
 ३१ ३५६, २१४
 खम्भात—१०
 खानखाना चरितम—३२ ३६
 खानग्याना नामा—४ १० २५ २६
 खानदेश—१७
 खाने आजम—२१
 खुसरो (अमीर)—५३ ६६ २१६
 २६२ ३२६
 खेट कौतुकम—५१ ५२ ६५ ६७
 ६६ १५५, २६२
 गग कवि—३४, ४० ८६ ६६ १५६
 १६६ ३५१, ३५८, ३६१
 गक्कर—३
 गणपति २३५
 गम्मे महोत्सव—१५७
 गग सहिता—३२७
 गाधी—१४
 गाथा सप्तगती—२५६ ३२५
 गार्गाचार्य—२५७
 गार्गान्तासी—२५२, ३२७
 गिरिघरनाम—१२७ ३६६ ३५० ३६१
 गीता—१७२ २१२ २६७
 गीतावना—२६७
 गुजरात—७ ६, ११, १५ २६ ३६
 ६१ ६६ ८८ २५०
 गुणगजनामा—२६५
 गुनाधराय—१६८ १६६ १६० २००
 २५८
 गुनिम्ना—२८, ३७ ३७०

गटे—१८७
 गोगवरी—१६ ६४
 गोरखवानी—२४६
 गोरखनाथ—३५६
 गालकुडा—१५ १६, २०
 गौश्वाना—२०
 ग्वालियर—३
 घनानन्द—३५१
 चद्रगुप्त—३७
 चन्द्रवरदार्द—१७८, १६० २८६
 चण्णन—२५३
 चद्रलाक—२५७
 चक्रतावग परम्परा—६१
 चनुरसन (आचाय)—७३ ७७ ३५८
 चहार मकाला—३६८ ३७०
 चाँदबीबी—१५ १७ ६३,
 चाणक्य—३७ २३४, ३२७ ३२३, ३५६
 चाणक्य नीति—११३ ११६ १२२,
 १३४, १८२ ३२३
 चिन्तामणि—२५२
 छद्म प्रभाकर—२४१
 छत्तार सग्रह—२४१
 छदामजरी—२४१
 छात्राण्य उपनिषद्—२३६
 जैष्वन्ता—२६६
 जगन्नाथ—१६ ७३५
 जगन्नाथ पण्डितराज—२०१ २००
 २१० २७१ २८४
 जगन्नाथ त्रिभूती—५१
 जहा कवि—२०१ २५५,
 जवनदुमवारिण—६
 जमान—३६१
 जमान गौ मवानी—३
 जयश्व—२५७ ३५६
 जयशकर प्रगा—७ २४६, २६६,
 ३७२ ३७३

जयसिंह सिद्धराज—५
 जमन—११७ २१६
 जवाहरलाल नेहरू—२८
 जहागीर (सलीम)—१८ १६, २०, २१
 २७ २३, २५ ७७, ३१ ३८ ४५
 ५३ ५८ ६३, ६७ १५६ ३८५
 जहागीर चद्रिका—६२
 जहागीर चरिन—५३ १८, १६ ७०
 २१ २७
 जहागीर नामा—१८, ७१, ७२, २०
 जहूरी—३६५
 जातक—३७६
 जानसन (डा०)—१८७
 जाती—३६८ ३६६
 जायमी मलिक मोहम्मद—१८५ २१४,
 २१५
 जाज प्रियमन—७६ ७१७
 जितद्र विमल चौधरी—३२
 जुलफिकार—३६०
 जूलिम प्रो०—७१७
 जीनपुर—३१७
 टाड वृत्त राजस्थान—७२०
 टलर—१५६
 टारमल—७ ११ १२ ७८ ५६
 १७५ ३५८
 टट्टा—१३ १६
 टाकुर—२१६
 द्विकानरी घाफ घाण्ण—१६१
 द्विकानरी घाफ कुटान्ण—१८६
 दानामारुग ब्रह्मा—७५६
 तव—२५८
 तडी (मोहम्मद)—७
 तख्तियरे पुरजाण—५०
 तख्तियरे हुमायी—६१
 तवाकान नागिरी—६७
 तख्तियरे—३४८

तारीखे फरिश्ता—२५
 ताहिर हुसैन—३६७
 तुगरल—२१
 तुजके जहागीरी—५०
 तुजके बाबरी—१२
 तुकिस्तान—३१
 तुलसीदास—४८ ५३ ६० ६४, ८७,
 ८८ ८९ ९२, १०३ १०५ १२०
 १५१ १६५ १६६ १७४ १८१,
 १८३ २१४ २१७ २२५ २२७
 २३३ २४३ २४७ २४८ २४९
 २५४ २५५ २५६ ३३२ ३३३
 ३३४ ३३५ ३३६ ३३७ ३५४
 ३५८ ३५९ ३६० ३६१ ३६२
 ३६३, ३६४
 तुलसी सतसई—३३६
 तुर्गीज—३६५
 तृतीरीय उपनिषद्—१४०
 त्रिगुणयत (डा०)—२२९ ३११
 त्रिभुवनसिंह—३६३
 धामम दृष्ट्यु० ज०—१५६
 दण्डी—२२९ २६६
 द मुगल एम्पायर—३३३
 दक्षीणी—३६८
 दमिन्व—६७
 दयानन्द मरम्बनी स्वामी—२५७
 दरबार घबबरा—५ ९ १२ १९ २६,
 २५ २६ २७ ५५
 दगम्पक—१६६
 दादू—३६१ ३६२
 दानन्ग—१७
 दानिदान—५ १७ ९२
 दारा—३६६
 दागव—२१ ३०
 दिन्दर रामधारीसिंह जा—६ ६६
 ७७ ८७

द्विज देव—३५१
 दीनदयालगिरि (बाबा)—१८३, २३५,
 ३५१
 दीनदरवेदा—१५५
 दुर्गासिंह—१६
 देव—१४५, १५३
 देवीप्रसाद मु०—१०, २५, २८
 दोहा सारसग्रह—३४५
 घजनय तथा घनिक—७६, १४७
 घम्नपद—२५६
 घमबीर भारती—३५२
 घोलपुर—२१
 घ्वयालोक—१९९ ३१०
 नगरगोभा—६५ ७०—७४ ८६ २५४
 २५५ ३३९ ३६१
 नगद्र (डॉ०)—१४० १४१, २०१
 नजीरी—४५ ६४
 नन्ददास—६० ६८ ७१ ८७ १७४
 १८१ २२५ २२६ ३४३ ३५९,
 ३६१
 नन्ददास प्रयागली—२०६
 नरहरि—६६ १५७ २६२ ३६१
 नवनीत चतुर्वती—३०६ ३०७ ३५२,
 नमीरी—५०
 नवग—२२
 नाडी—४५
 नाट्यशास्त्र—७६ १६७ २६३, २५७
 ३०५ ३०८
 नागौत—१० २६३
 नागव—२१६ ३६१
 नर मुनि—१६४
 नागयग पण्डित—१५३
 निब्रामउद्दीन बग्गा—६२
 निपञ्चु—२३९
 निगान्ग मूत्र—२३९
 निम्बार्जावाय—१६६

- निरुक्त—२३६, २५७
 निहाल—३५१
 नीति शतक—१२४, १२५, १३४
 नीलकण्ठ—२६, २३५
 नूरजहाँ—२१, २२, २५, २६
 नैपथ—१२२
 पञ्चतन्त्र—१२०
 पजाब—३, १५
 पतञ्जलि—२५७ २७४ २७८
 पद्माकर—२१५, २४८
 पद्मावत—२५३
 परवेज (शाहजादा)—१६, २३, ५४, २५
 पद्मसिद्ध कवि—३४ ३७, ७६
 परलव—२५८
 पाटन—५ १०
 पाणिनी—२१८, २३६ २५७
 पाणिनीय शिक्षा—२३६
 पारसनाथ तिवारी—३३१
 पावती—११८
 पिगलाचाय—२४०, २४१ २४२ २४३
 पुराण—५७ ५९ ११६ १६८ १६९
 २३० ३५६ ३६०
 प्रतापगढ—२१५
 प्रतापसिंह—२७६
 प्रभुदयाल—३३७
 प्रसगाभरणम्—३२०
 प्रियप्रवास—१७६, १८२
 प्रेमचन्द्र—३६४
 प्रेमनारायण चक्रवर्त्त (प)—३६०
 प्लेटो—२२८
 पतहपुर सीकरी—७ ११ २१
 फरदौसी—३११ ३६८ ३६९
 फहीम मिया—४०
 फरिदता—१६
 फय, जे० झार०—३१३
 फारस—२८, ३६५
 फारूख (शहशाह)—११८
 फौजी—२८, ५१, ६४
 फाइड—१४२
 फ्रेजर—१५६
 बगाल—१४, १५,
 बगदाद—३६७
 बदरीनाथ चौधरी—२६२
 बदायूनी—७ ५४
 बरथैल्स ई०—३६७
 बरवै रामायण—८८, ३३३
 बरवनायिका भेद—६५ ७५, ७७, ८५
 ८७ ८८, ९६, ९८, २१५ २४२
 २५४, ३६१
 बरार—१५, ३१
 बक दाजखाँ—२२
 ब्रज—२१६
 बलदेव उपाध्याय—१६६
 बल्लभाचाय—१६५
 बाण कवि—५३
 बाबर—१२ ४६
 बाबा जम्नूर—५
 बाबूराम सक्सेना—२१५
 बारहमूना—१४
 बाराबकी—२१५
 बायोग्राफिका लिटेरिया—१८८
 बाल्मीकि—१७८ २४०, ३११ ३५६
 बिठलाचाय—१६५
 बिहारी—३३ ८५, ९२, ९६ १५१
 २१४ २४६ २५०, ३१६, ३४०
 ३४१ ३४३ ३५२ ३६१
 बिहारी रत्नाकर—३४१, ३४२
 बिहारी सतसई—२५४, २५६ ३५६
 ३६१
 बीजापुर—१५ १६ २०, ३१

बीदर—१५
 वीरबल—२६, ६, ५६, ६४ १५६
 ३५८, ३६१
 विहारी मीमासा—३४०
 बुधवार—३६५
 बु देलखण्ड—७८
 बुरहानपुर—१८ २१, २३, ४५
 बुल-दराय—२३
 बजामिन ली हुफ—२१४
 धरमसा खानखाना—३, ४, ५ ६, १६
 धरमयग—२३
 बोधा—२१८
 वास्ता—२६ ३७१
 ब्लूम फील्ड—१४, १५, २१४
 ब्रजरत्नदास—२२ ६५, २११, २६२,
 ३३०
 भवनमाल—८८ १७० २४७
 भगवानदास—११
 भगवानदीन—(लाला)—३५२
 भट्टनाथन—१४७ २००
 भट्ट लोल्लट—२७५
 भट्टि—३११
 भरत—१००
 भरत मुनि—७६ १८० १४७ २५७
 भवृ हरि—१२४ १२५, १८० १६६
 २१२ २७४ ३२० ३०२ ३२३,
 २५६, ३६४
 भागवत—६६ १२० १६५, १७० १७२
 १७४ २१६
 भागीरथ मिश्र (डा०)—२५६
 भानु—२७८
 भानु-ल—७६ ७६ ८७
 भामह—१८६ २५८ ३६५
 भारत-दु हरिचन्द्र—२४६, २४६ ३५२
 भारवि—३११

भित्तारोदास—१४६, २००, २०६, २७५,
 २७६, २७६ २८३ २८६
 भूषण—२०, २४८, २६५
 भोजराज—७६ ३११
 मडन कवि—३५
 मग्रासिर उल उमरा—१० ११ १३
 १४ १६, २१, २४ २५ ५५
 मग्रासिरे रहीमी—१५ ३५ ४५ ५० ६१
 मक्का—५ ५६
 मतिराम—७८ ८४, ६६, १५० २१४
 ३४३ ३५०
 मधुरा—२१६
 मदनपट्ट—५२ १५४ ६५ ६७ ६८,
 ६९ २३६ २४३ २५२
 म-वाचाय—१६४
 मनुस्मृति—१३३, २२८
 मनोचहर—२१
 मम्मट—७६ ०३ २७६, २८०, २८२
 २८३ ३०५ ३०८ ३०६, ३१०
 ३११ ३१३
 मतिव अम्बर—१८ २० २१ ३७ ६३
 महमूद गजनवी—३६६
 महमूद नगर—३५
 महानवी वर्मा—१८५
 महाभारत—५७, ५६, १६८ २३०
 ३५६ ३६०
 महाभाष्य—२५७, २७८
 महावतला—२२ २३ २४ २५, २६,
 २७ ३०, ६३, १५५
 महावीर प्रसाद द्विवेदी (आचार्य)—२८
 महिम भट्ट—२०१, २७५
 माछीवाडा—५
 माताप्रसाद गुप्त—८८ ३३३
 मानमिह—८ ५१, ५६, ६०, ६३ २५५,
 ३४६

भायादाकर यानिक, (प) ७०, ७८, ८८,
९४, १०० १९२ २१५, ३३५,
३३६, ३३९, ३४५

माह्वानो—६

मिजा अनीज कोका—६

मिडा इरीच बहुरुर—१८

मिजा जानी—३७, ६३, ९३, २१४

मिर्जापुर—२१५

मिजा पाइदा हसन गजनी—४९

मिल्टन—३११

मिश्रवधु—३६०

मीमासादशन—२७४

मीर गमगेर दौलतखा लोदी—१६

मीरा—२४६

मुज—३२५

मुटकोपनिषद्—२१३, २३५

मुतम्बीवृत्तवारीख—४९

मुशी देवीप्रमाद—१२ २७, ३५ ५५,

मुक्द कवि—१०

मुकुल मट्ट—२२८, २७५

मुगलकालीन भारत—१२

मुजफ्फर—८ १०, ११, ३५

मुद्राराक्षस—२४९

मुबारकखा—५

मुरा—१७

मुलतान—१३

मुन्ना दाऊद—२५३

मुन्ना गजवी—१४ ४४ ६४

मुन्नागीरा—३४

मुहम्मद दादी मुगी—२७

मृगावती—२५३

मरुतु ग आचाय—३२५

मवात—३

मघिलीगरण मुज—१६४ २४६ २४९

३६१

मनपुरी—२१६

मौतमिदौला—१५

मोहम्मद अली मिलावर—६१

मौतमिदखा—२७

मौलाना ग्रनो—५३

मौलाना शिवली—४५ ४७ ५०

यजुर्वेद—१७३

यजुर्वेद प्रतिगाह्य—२७५

यास्वाचाय—२५७

योगवाशिष्ठ—११५

रणयम्भोर—३८

रघुवग (डा०)—१६० १७४

रत्नाकर जगन्नायदाम—१०५, २४६

२५०

रमई पाठक—५३

रसखानि—६४ २१४ २१७ २४३,

२४५ ३३८, ३३९ ३६१

रसगगाधर—२७६ २७७ २८४

रसनिधि—३४३ ३४४

रसपीयूष—२७९ २८७

रसमजरी—७१ ७६ ७७ ७९ ८१

८७

रसराज—७८ ३५९ ३६०

रसलीन—३१९ ३४९

रसिकप्रिया—३६१

रसिक विनाद—२८८

रहमनदाद—२१

रहिमन चन्द्रिका—६८

रहिमन विलास—२२, ५४ ६५ ८४

२४८ २५१ ३३३

रहिमन विनाद—६५

रहीम दाहावली—१०० १४९, १६७,

२२४

रहीम रत्नावली—१० ६५ तथा भाग

प्रायः सवत्र

रहीम सतमर्द—६५, २५४, ३४३

राजगेर—१६१ १६२

- राजा भोज — २३
 राजू दक्षिणी — १८
 राजशव प्रसाद चतुर्वेदी — ७७
 राणा प्रताप — ७, २६ ४७, २२०
 रामकुमार वर्मा (डा०) — ८७, ६३,
 १८५ ३३३
 रामचन्द्र तिवारी (डा०) — ६०
 रामचन्द्र शुक्ल (आचार्य) — ४० ५६,
 ६३ १६० २५६ २७५ ३६१
 रामचरितमानस — ६२ १०१ ११४
 १३० १७२, २१५ ३५६ ३६१
 रामदत्त भारद्वाज (डा०) — २१७
 रामनरण त्रिपाठी — १७८
 रामनिरजन त्रिपाठी — ११०
 राममूर्ति त्रिपाठी — २७६
 रामानुजाचार्य — १६४
 रामायण — ५६ १०१, १३३, १६८
 २३० २४०
 रामयन्त्रा — १६० १५० २१५
 रामायणध्यायी — ६५ ६८ ६६
 रामानुजाचार्य — १
 रिचर्ड म — १८७
 रिपान्त — २०७
 रानी — ३६८ ३६६
 रत्न कवि — ३२
 रूट — ७६
 रूट — ७७
 रूट — २१५
 मातंग — १ २६ २७ ६०
 मन्त्रि — ८
 मन्त्रि — ५९
 मन्त्रि — १ १८१ १८७ १८६
 मन्त्रि — १६
 मन्त्रि — १८६ १९० २०६ २०६
 मन्त्रि — ७६
 मन्त्रि — ५१
 मन्त्रि — ५१
- वात्स्यायन मुनि — ७६, ८०, १३६
 वामन आचार्य — १६१, २२७, ३०६
 वातिक — २५७
 वासुदेवशरण अग्रवाल — २५३
 वाल्टर रले — २२८
 विटनिटस — ३५६
 विसट स्मिथ — ८
 विनमोवशी — २५२
 विजय गणि — २३५
 विजय द्र स्नातन (डा०) — १०६ २१६
 विद्यापति — २१५ २४७
 विनय पत्रिका — २४७
 विन्वनाथ — ७६, ७६ ८७ १४७ १५३,
 २७६ २८२, २८३ २८८, ३०५,
 ३११ ३४५
 विश्वनाथ प्रसाद (आचार्य) — २१०,
 २५२ ३४५
 विश्वनाथ गारुडी — २३६
 विश्वनाथ आचार्य — ३०८
 वीरेदवर — २३५,
 वृद्ध — १२३ २१८ ३४५ ३४८, ३६१
 ३६०
 वृद्धा — १८२
 वनगीपिता — २६१
 वननाथ — २६१
 वनामहा — १६
 वन — १६० १७० १८१ २१०, २५७
 व्यास — ३०७ ५६ ३६१
 वन — ५१
 वन — २०१
 वन — ५ ७६
 वन — १९५
 वनधर पट्टनि — ६८ ३६
 वनधर पट्टनि — ७६
 वनधर पट्टनि — १६ ६० ६५
 ३९५ ३६६

- शाहजहाँ (खुरम)—२०, २२, २३, २४,
२५ ६३, ६४, १५६ ३४०
- शाहनवाज खाँ—२०, २१, २३
- शाहवाजखाँ—७, २०
- शाहख्व—३७०
- शाहि—१११
- शुक रम्भा-सवाद—१३७
- शिवभूपाल—७६
- शिवराज भूषण—२६५
- शिवसिंह सगर—३७
- शीराज—३६५
- शृंगार प्रकाश—१४२
- शृंगार सोरठ—६५, ६३ ६८ ६६
- शेख जेद—४६
- शेख सादी—२८ ५० ३७०, ३७१
३७२, ३७३
- शेखसलीम चिश्ती—८
- शेर कवि—२८३
- शेर ग्रहमद—८
- शेरिल अजम—४५, ४७, ५०, ३५६
- शकसपीयर—१८६ ३११
- श्यामसुन्दरदास (डा०)—८७ १७८
१८८, २२७ २२६, २५६, २८२,
३१८, ३४३
- श्रुतबोध—२४१
- श्रीपति—३५१
- श्रीरामस्वामी शास्त्री—१४७
- श्रोत सूत्र—२३६
- सत कवि—३२
- सदेशरासक—२५६
- सफीखाँ—१६
- सफपारी—३६७
- सतसई सप्तक—३४० ३४३, ३८४,
३४६, ६४७ ३४८,
- सतसइया—६२
- सत्यद्व (डा०)—१५७
- समर बहादुरसिंह, (डा०)—७, २७, ६८
३३३
- समथ गुर रामदास—३३६
- सरमेज—३५
- सरनामसिंह (डा०)—३५७
- सरस्वती कण्ठाभरण—३११
- सलीम—१८
- सलीमा बेगम—८, ३१
- सहस्रलिग सरोवर—५
- साख्य दगन—१७४ १६५ २४०
- साकत—२४६
- सागर नदी—७६
- साहित्य दपण—८० १८६, १५०, १५३
२०२, २८० २८३ २८४, ३०५,
- साहित्य लहरी—८७
- साहित्यलोचन—१७४
- सिध—१५, ३०, ३७
- सिक्कर सूर—३
- सीतापुर—२१५
- सुदरी तिलक—२८
- सुखदेव मिश्र—२४१
- सुमित्रानन्दन पत—१८१, २५८
- सुत्तान वगम—६, ५
- सुलतान सलीम—८
- सुहेलखाँ—१६
- सूरजमल कवि—५७
- सूरजसिंह राजा—१६
- सूरदास—५३ ५७ ६०, ६४, ८७,
६६ १४४ १५१ १६४ १६६,
१७०, १८३ २१४ २१७ २२५,
२२६ २४७ २४६ ३११ ३६१
३६२
- सनापति—२१४
- सेयूकस—३७
- सयद गुलामनवी रसलीन—७६
- सोफिया—१५७

सामाज्य—२३५ ३७६	हरिवंश पुराण—२१६
गौराष्ट्र—२५०	हृत्नाथ अगस्त—६३
राजभू रामायण—२४६	हृत्पानी—७
रानीवाट—१८६	हारिज भागिमुल भनवर—११८
रविपट—२२६	३६६, ६७१
हजूरत गुलगाज—३६०	हामन रमा—३६७
हजारीप्रसाद द्विवेदी (टा०)—८७ ६३	हिन्दी नवरत्न—३५६
६६, १५७	हिन्दी विद्वत्नाथ—२४०
हडसन—१८७	हिततरंगिणी—८७
हनजला—३७०	हितोपदेश—३२०
हनुमन्नाटक—२३२	हिरात—३७०
हपनमक्लीम—५०	हीगल—१८७
समीदा बानो—८	हुमायू—३ ५, १२, २७, ३६५
हयाती—४५	हेमू—३१
हरफी—४५	हैजलिट—१८७
हरिस्रीध—१६४ २६६	हैदरी—१७
हरिवंश—३५२	होलाराय—३६१



सहायक ग्रथ

- १ अकबर—राहुल सांकृत्यायन (इलाहाबाद, प्र० स)
- २ अकबर—लॉरन्स वियन, अनु० राजेन्द्र यादव, (१९३३, दिल्ली)
- ३ अकबर द ग्रेट मुगल—विन्सेंट स्मिथ (१९५८)
- ४ अकबरी दरबार—मोहम्मद हुमैन आजाद, अनु० रामचन्द्र वर्मा (१९६३)
- ५ अकबरी दरबार के हिंदी कवि—डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल (लखनऊ, २००७ वि०)
- ६ अकबरनामा—अबुल फजल अल्लामी (अग्रेजी अनुवाद, १९०७)
- ७ अग्नि पुराण—(काव्य शास्त्र भाग) रामलाल चमा (दिल्ली, प्र० स)
- ८ अन्दुरहोम खानखाना—डॉ० समर बहादुर सिंह (आसी, २०१८ वि०)
- ९ अमीर ख़ुसरो की हिंदी कविता—डा० ब्रजरत्नदास (ना० प्र० सभा वाराणसी)
- १० अलबस्तो कृत भारत—(प्रथम भाग) अनु० सतराम (द्वि० स०)
- ११ अष्टछाप और बल्लभ मन्प्रदाय—डॉ० दीनदयाल गुप्त (प्र० स०)
- १२ आइने अकबरी—अबुल फजल अल्लामी (लाकमन कृत अग्रजी अनुवाद १९२७)
- १३ इकबालनामा जहांगीरी—मातमिद खा (रा० ए० मुसायटी अवाल)
- ४ इन्प्लूएस आफ इस्लाम आर्न इण्डियन कल्चर—डा० ताराचंद (प्र० स)
- १ उदू कवियों की कविताएँ—विश्वनाथ गण्डित्य (मरठ १९२८)
- १६ ऋग्वेद (खण्ड ४) मस्कृति सरयान बरेलो
- १७ एसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका—भाग ९
- १८ एसाइक्लोपीडिया आफ इस्लाम—भाग १
- १९ एन्प्लूस्ड हिस्ट्री आफ इण्डिया (लंदन १९०५)
- २० ए लिटरी हिस्ट्री आफ परगिया—इ० जी० ब्रान—(१९२५ तहान)
- २१ ए हिस्ट्री आफ परगियन लिटरेचर अण्डर टक डौमीनियन
- २२ ए हिस्ट्री आफ परगियन लंग्वेज एण्ड लिटरेचर एट द मुगल काट—मौ० रानी
- २३ कबीर प्रयावली—डा० पारसनाथ (प्र० स०)
- २४ कन्टी प्रान आफ मुस्लिमस टु मस्कृत लनिंग (भाग २)—जतीन्द्र विमल चौधरी
- २५ कल्याण - भक्ति विनोयाक - गी० प्रे० गारखपुर
- २६ कविता कौमुदी—(भाग १)—गमनरश त्रिपाठी (१९४६)
- २७ कविवर बिहारी—जगन्नाथदास रत्नाकर (प्र० स०)
- २८ कहावत कोश—डा० माधव (प्र० स०)
- २९ कामायनी—जयगकर प्रसाद (इलाहाबाद)
- ३० काव्य प्रकाश—मम्मट आ० विवेकेश्वर-व्याख्या मम्पा० डा० नगद (त० स०)
- ३१ काव्य धीमासा—डा० गगनागर राटा (प्र० स०)
- ३२ काव्य निणय—आ० भिगारीदास मम्पादक जवाहरनाल चतुर्वेदी (द्वि० स०)
- ३३ काव्यालोचन—डा० शोमप्रकाश शास्त्री (प्र० स०, दिल्ली)
- ३४ कम्पिज हिस्ट्री आफ इण्डिया (खण्ड ६), मम्पा० रिचड वन (१९३९)

- ३५ कमिन्ज शाटर हिस्ट्री आफ इण्डिया—जे० एलन, (द्वि० स०)
- ३६ कोट पोइटस आफ इण्डिया एण्ड ईरान—ग्रार० पी० मसानी (१९३८, बम्बई)
- ३७ खानखानामा—मु० देवीप्रसाद (ना० प्र० स० काशी-पुस्तकालय की प्रति)
- ३८ खोज रिपोर्ट—ना० प्र० स० वाराणसी
- ३९ गग कवित्त—सम्पा० बटेवृष्ण - (ना० प्र० सभा वाराणसी, प्र० स०)
- ४० गोरखयानी—डा० बढव्याल (हि० सा० सम्मेलन प्रयाग)
- ४१ गोस्वामी तुलसीदास—डा० रामदत्त भारद्वाज (प्र० स०)
- ४२ घ-दायन—सम्पा० परमेश्वरीलाल गुप्त (प्र० स०)
- ४३ चन्द्रबरदायी और उनका काव्य—डा० त्रिवेदी (प्र० स०)
- ४४ चहारमकाला—(तेहरान, १९६२)
- ४५ चिंतामणि (भाग २)—ग्रा० रामचन्द्र गुक्ल (इलाहाबाद प्र० स०)
- ४६ चाणक्य नीति—कालीचरण अग्रवाल (मथुरा)
- ४७ जुस्तदुस्तवारीख—मूलक हुक (इलिटट भाग ६)
- ४८ जहागीर का आत्मचरित—अनुवादक अजरतनदास (प्र० स०)
- ४९ तारीखे फरिस्ता—जान श्रिंगस कृत अंग्रेजी अनुवाद (प्र० स०)
- ५० तुलसीदास—डा० माता प्रसाद (प्रयाग १९४८)
- ५१ तुलसीदास प्रयावली—ना० प्र० सभा वाराणसी
- ५२ तुलसी साहित्य रत्नाकर—प० रामचन्द्र द्विवेदी (१९८६, वि०)
- ५३ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र (ने० प० हा० दिल्ली)
- ५४ ध्व-यालोक—ग्रा० विश्वेश्वर याख्या (ज्ञा० म० वाराणसी)
- ५५ ध्वनि सम्प्रदाय और उसके सिद्धांत (भाग १) डा० भोलाशंकर व्यास (प्र० स०)
- ५६ नन्ददास प्रयावली—स० अजरतनदास (ना० प्र० स० काशी, २०१४ वि०)
- ५७ नीति काव्य का विकास—डा० रामस्वरूप रसिकेश (दिल्ली, प्र० स०)
- ५८ पञ्चतंत्र—सम्पादक मोतीचन्द्र (राजकमल प्रकाशन)
- ५९ पदमावत—सम्पा० वामुदवशरण अग्रवाल (प्र० स०)
- ६० पल्लव—सुमित्रानन्दन पंत (राजकमल प्रकाशन)
- ६१ प्रिय प्रवास—अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिप्रौढ (११ वा सस्व०)
- ६२ बिहारो रत्नाकर—जगन्नाथदास रत्नाकर
- ६३ अजतोष साहित्य का अध्ययन—डा० सत्यद्व (प्र० स०)
- ६४ भक्तमाल-नामानस, सम्पादक—रूपकला (लखनऊ, प्र० स०)
- ६५ भारताय काव्याग—डा० सत्यदेव चौधरी, (दिल्ली प्र० स०)
- ६६ भारतीय दान—वाचस्पति गरोडा (इलाहाबाद १९६२)
- ६७ भारतीय संस्कृति के द्वार अध्याय—डा० रामधारी सिंह त्रिणकर (प्र० स०)
- ६८ भारताय साहित्य शास्त्र (प्रथम खंड)—बलरव उपाध्याय (वाराणसी १९६३)
- ६९ भाषा विज्ञान—डा० दयामुन्दरदास (त० स०)
- ७० मघासिर उल उमरा (भाग २)—गहनवाजसो, (अनु० अजरतनदास १९६५ वि०)

- ७१ मन्नासिरे रहीमी—अन्दुल बाकी नहाबदी (रा० एशिया० सु० आफ बगाल)
- ७२ मध्यकालीन हिंदी काव्य मे भारतीय सस्कृति—डा० भदनगोपाल गुप्त (१९६४)
- ७३ मनुस्मृति—स० स्वामी दशनानन्द (लखनऊ)
- ७४ मनोविश्लेषण—सर एडमंड फ्राइड अनु० देवेन्द्र वदालकार (प्र० स०)
- ७५ महाभारत (शांति पर्व)—गीता प्रेस गोरखपुर (हिंदी अनुवाद)
- ७६ मिश्रबधु विनोद (भाग १२)—(स० १९१४)
- ७७ मुक्तक काव्य परम्परा—डा० रामसागर त्रिपाठी (१९६०, दिल्ली)
- ७८ मेडोवियल इण्डिया—डा० ईश्वरी प्रसाद (१९४२ ई०)
- ७९ मुगल साम्राज्य का उत्थान पतन—डा० रामप्रसाद त्रिपाठी (अनु० कालिदास कपूर)
- ८० मुगल बादशाहों की हिंदी—प० चंद्रवाल पाठे (१९६७ वि०)
- ८१ मुगल कालीन भारत—तुजुक बाबरी का स० अतहर अब्बास रिजवी कृत अनुवाद
- ८२ मुण्डकोपनिषद—शांकर भाष्य (गीता प्रेस गोरखपुर)
- ८३ यजुर्वेद—स्वा० दयानन्द भाष्य (भारतीय प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान)
- ८४ योग वाशिष्ठ (ख २) सम्पा० श्यामलाल
- ८५ रहिमान चंद्रिका—रामनाथ सुभन (प्र० स०)
- ८६ रहीम रत्नावली—प० मायाशंकर यादव (त० स०)
- ८७ रहीम गतक—प० सूर्यनारायण दीक्षित (प्र० स०)
- ८८ रहीम रत्नाकर—उमराव सिंह त्रिपाठी (प्र० स०)
- ८९ रहिमान विलास—सम्पा० बाबू ब्रजरत्नरास (इलाहाबाद, द्वि० स०)
- ९० रहिमान शतक—सा० भगवान दीन (प्र० स०)
- ९१ रीति कालीन कवियों की प्रेम व्यजना—डा० बच्चन सिंह (प्र० स०)
- ९२ रीति कालीन अलंकार साहित्य का शास्त्रीय विश्लेषण—डा० श्रीमप्रकाश शास्त्री
- ९३ रीति काव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र (दिल्ली १९५३)
- ९४ राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य—डा० विजयेन्द्र स्नातक (द्वि० स०)
- ९५ रघुवंग—कालिदास, व्याख्या देवदत्त शास्त्री (विताबमहल इलाहाबाद)
- ९६ रस सिद्धान्त—डा० नगेन्द्र (दिल्ली, प्र० स०)
- ९७ रस सिद्धान्त की दार्शनिक और नैतिक व्याख्या, डा० तारकनाथ वाली (१९६४)
- ९८ राधाकृष्ण प्रथावली—सम्पादक डा० श्यामसुन्दरदास (१९३०)
- ९९ रामचरितमानस (मझला साइड) गीता प्रेस गोरखपुर
- १०० धाल्मोकोय रामायण—आचार्य विश्वबधु व्याख्या (खंड ६)
- १०१ बाङ्गमय विमर्ग—प्रा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र (छटा स०, वाराणसी)
- १०२ गतकत्रयम्—(मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद)
- १०३ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त (भाग १) डा० गोविन्दि त्रिगुणायन (प्र० स०)
- १०४ गिर्वसिंह सरोज—श्री सेंगर (१९२३ ई०)
- १०५ गुरु राजनीति—श्यामलाल पाठेय (लखनऊ, प्र० स०)
- १०६ गेरस अष्टम—मौ० शिवली (अलीगढ़, १९२०)

